श्रीः ।

शुक्रनीति

श्रीमच्छुक्राचार्यविनिर्मित

लाँखग्रामनिवासिपंडितमिहिरचंद्रजी

द्वारा विरचित

भाषाटीकासमेत ।

जिसको

खेमराज श्रीकृष्णदासनें

मुंबई

स्वकीय "श्रीवेंकटेश्वर" छापाखानेमें

छापके प्रसिद्ध किया ।

संवत् १९५२ शके १८१७

प्रस्तावना.

सर्व लोगोंको विदित करनेमें आनंद होताहै. कि, "धर्माधारं हि जीवितम्" अर्थात् आयुष्य धर्मके आधार है. इस उक्तीका विचार करनेसे अपने पूर्वज लोग कैसे २पूज्य होगये कि, जिन्होंके पश्चात् अपने लोगोंकी आचार पद्धती, तथा राजालोगोंकी व्यवहारपद्धती अखंडित चलरहीहै. यह उन्होंका अपने ऊपर ऐसा उपकार है कि प्रत्येक मनुष्य मात्रसे अपने आयुष्यभर तक उनकी प्रशंसा की जाय, उतनी थोडीहै. धर्मशास्त्रमें प्रायः आचार, व्यवहार और प्रायश्चित्त ऐसे तीन विभाग रहतेहैं. उन्होंमेंसे कितनेक महर्षि लोग आचारका, कितनेक व्यवहार नीतिका और कितनेक प्रायश्चित्तका विस्तारसे उपदेश करते हैं. कितनेक सर्वोका उपदेश करतेहैं. जिसे अधिकारी पुरुषोंको ऐहिक और पारलौकिक सुखप्राप्तीके साधनका ज्ञान होके वे अपने कर्तव्यमें तत्पर रहते हैं. यह सर्व सुज्ञ पुरुषोंकूं विदितही है.

अब प्रस्तुतमें शुक्राचार्य महर्षिजीने राजधर्मोका जो उपदेश कियाहै. वह सर्व अर्थशास्त्रका समुद्र है. इसके प्रत्येक पद विचार करने योग्यहैं. यह ग्रंथ राजकीय नीतिमें तथा नित्य आचारमें अत्यंत उपयोगीहै. इसके अनुसार आचरण करनेवाले महान् महान् राजालोग तथा राजकीय सर्व लोग अपरंपार सुख पाकर अपना यश इस भूमंडलपर फैलागयेहैं. इससे इन शुक्राचार्यजीने जो नीतिशास्त्र निर्माण किया- है. यह सर्व सुज्ञोंको शिरसा मान्यहै. इसमें संदेह नहीं.

इस शुक्राचार्यविरचित शुक्रनीति ग्रंथका सांप्रतकालमें प्रकाश होनेसे जगत्के ऊपर बडा उपकार होगा. ऐसी अनेक देशाभिमानी लोगोंकी सूचना होनेपर हमनें इस ग्रंथका पंडितवर्य महामहोपाध्याय लांखग्राम निवासी श्रीमिहिरचंद्रजीके द्वारा इसकी भाषाटीका कराके स्वकीय "श्रीवेङ्कटेश्वर" मुद्रणालयमें छापके प्रसिद्ध कियाहै.

सर्व सभाजनोंको विज्ञापना है कि, इस ग्रंथको अपने संग्रहमें रखके उक्त पंडितजीके परिश्रम सफल करें, इतनाही नहीं, तो इसमें कहे आचारोंके सेवनसे अपने जन्मकोभी सफल करें ॥

आपका कृपाभिलाषी-

खेमराज-श्रीकृष्णदास

"श्रीवेङ्कटेश्वर" छापाखाना-मुम्बई.

श्रीः ।

भाषाटीकासहित शुक्रनीति.

अनुक्रमणिका.

इति युवराजादिकृत्यकथननामक द्वितीयोऽध्यायः ॥

अध्याय ३

साधारणनीतिशास्त्रकथन.

विषय.	पृष्ठ.	श्लो०

तृतीयोऽध्यायः ॥ ३ ॥

अध्याय ४

मिश्रप्रकरणकथन

॥ इति शुक्रनीति समाप्ता ॥

श्रीः ।

शुक्रनीति

(भाषाटीका सहिता)

आध्याय १ ला

प्रणम्यजगदाधारंसर्गस्थित्यंतकारणम् ॥
संपूज्यभार्गवःपृष्टोवंदितःपूजितःस्तुतः १॥
पूर्वदेवैर्यथान्यायंनीतिसारमुवाचतान् ।
शतलक्षश्लोकमितंनीतिशास्त्रमथोक्तवान् ॥

भापार्थ–रचने और पालने और नाशके कारण जगत्के आधार (आश्रय) भगवान्को नमस्कार करिके पूर्वदेवताओंने सत्कार-पूर्वक नमस्कार और पूजा और स्तुति की जिनकी ऐसे शुक्राचार्यके न्यायके अनुसार प्रश्न किया वे शुक्राचार्य देवताओंके प्रति नीतिका सार कहते भये शुक्र कहते हैं एक कोटी नीतिशास्त्र ब्रह्माने वर्णन किया ॥ १ ॥ २ ॥

स्वयंभूर्भगवाँल्लोकहितार्थंसंग्रहेणवै ॥
तत्सारंतुवसिष्ठाद्यैरस्माभिर्वृद्धिहेतवे ॥ ३ ॥

भापार्थ–जगत्के कल्याणके अर्थ संक्षेपसे उसका सार वसिष्ठ आदि हम संपूर्ण ऋषियोंने वढनेके अर्थ वर्णन किया ॥३॥

अल्पायुर्भूभृताद्यर्थंसंक्षिप्तंतर्कविस्तृतम् ॥
क्रियैकदेशबोधीनिशास्त्राण्यन्यानिसंतिहि ।

भापार्थ–तर्कोंसे किया है विस्तार जिसका ऐसा नीतिशास्त्र अल्प है अवस्था जिनकी ऐसे राजाओंके लिये. वसिष्ठ आदिकोंने संक्षेपसे किया इतर जो शास्त्र सो एक२ कार्यके बोधक हैं ॥ ४ ॥

सर्वोपजीवकंलोकस्थितिकृन्नीतिशास्त्रकं
धर्मार्थकाममूलंहिस्मृतंमोक्षप्रदंयतः ॥५॥

भापार्थ–जिससे धर्म अर्थ, काम, इनका कारण और मोक्षका दाता कहा है इससे नीतिशास्त्र संपूर्ण जगत्का उपकारक और मर्यादा पालक है ॥ ५ ॥

अतःसदानीतिशास्त्रमभ्यसेद्यत्नतोनृपः ।
यद्विज्ञानान्नृपाद्याश्चशत्रुजिल्लोकरंजकाः ॥

भाषार्थ–इससे राजा नीतिशास्त्रका यत्नसे अभ्यास करे जिसके ज्ञानसे राजा और मंत्री आदि शत्रुओंके जेता और जगत्के प्रिय होते हे ॥ ६ ॥

सुनीतिकुशलानित्यंप्रभवंतिचभूमिपाः ।
शब्दार्थानांनकिंज्ञानंविनाव्याकरणतोभवेत्

भापार्थ–राजा इस शास्त्रके ज्ञानसे सुंदर-नीतिमें कुशल होते हैं शब्द और अर्थका ज्ञान विना व्याकरण नही होता ॥ ७ ॥

प्राकृतानांपदार्थानांन्यायतर्कैर्विनानाकिम् ।
विधिक्रियाव्यवस्थानांनकिंमीमांसयाविना

भापार्थ–प्राकृत अर्थात् जगत्के पदार्थोंका ज्ञान न्याय और तर्कके विना और कर्म-कांडकी व्यवस्थाओंका ज्ञान मीमांसाके विना नही होता ॥ ८ ॥

देहादिनश्वरत्वंवेदांतैर्नविनाहिकिम् ।
स्वस्वाभिमतबोधीनिशास्त्राण्येतानिसंतिहि

भाषार्थ- शरीर आदि जगत् नाशवान् है यहज्ञान वेदांतके विना नही होसकता अपने२ वांछित एक २ वस्तुके बोधक वे पूर्वोक्तसंपूर्ण शास्त्र हैं ॥ ९ ॥

तत्तन्मतानुगैःसर्वैर्विधृतानिजनैःसदा ॥
बुद्धिकौशलमेतद्धितैःकिंस्याद्व्यवहारिणाम्

भाषार्थ-जिस २ मतके अनुयायी संपूर्ण जनोंने सदैव रचे है परंतु वे संपूर्ण शास्त्र बुद्धिकी चतुराईरूप है इससे व्यवहारियोंका कुछ प्रयोजन सिद्ध नही होता ॥ १० ॥

सर्वलोकव्यवहारस्थितिर्नीत्याविनानहि ।
यथाशनैर्विनादेहस्थितिर्नस्याद्धिदेहिनां ॥

भाषार्थ-संपूर्ण लोकके व्यवहारकी स्थिति नीतिके विना इस प्रकार नही हो सकती जैसे देह धारियोंके देहकी स्थिति भोजनके विना असंभव है ॥ ११ ॥

सर्वाभीष्टकरंनीतिशास्त्रंस्यात्सर्वसंमतम् ।
अत्यावश्यंनृपस्यापिससर्वेषांप्रभुर्यतः १२

भाषार्थ-सबके वांछितका कारक नीतिशास्त्र सपूर्ण मनुष्योंको संमत है और राजाकोभी अत्यंत अवश्य युक्त है क्योंकि यह सम्पूर्णका संमतहै ॥ १२ ॥

शत्रवोनीतिहीनानांयथापथ्याशिनांगदाः ।
सद्यः केचिच्चकालेनभवंतिनभवंतिच ॥ १३

भाषार्थ-जिस प्रकार अपथ्य भोजन करनेवाले मनुष्योंके रोग इसी प्रकार नीतिसे हीन राजाओंके शत्रु कोई शीघ्र-और-कोई कालांतरमें होते हैं फिर वे नीतिहीनोंका तिरस्कार करते हैं ॥ १३ ॥

नृपस्यपरमोधर्मःप्रजानांपरिपालनम् ।
दुष्टनिग्रहणंनित्यंननीत्यातौविनाह्युभे १४ ॥

भाषार्थ-प्रजाओंका पालन और दुष्टोंका नाश ये दो २ राजाओके परमधर्म हैं ये दोनों नीतिके विना नहीं हो सकते ॥ १४ ॥

अनीतिरेवसंछिद्रंराज्ञांनित्यंभयावहम् ॥
शत्रुसंवर्धनंप्रोक्तंबलहासकरंमहत् ॥ १५ ॥

भाषार्थ-राजाका अन्याय महान् छिद्र(दोष) है और भयदायक-शत्रुओंका बढानेवाला और सेनाकी हानिकरनेवाला होता है १५

नीतिंत्यक्त्वावर्ततेयःस्वतत्रःसहिदुःखभाक्
स्वतंत्रप्रभुसेवातुह्यसिधारावलेहनम् ॥ १६ ॥

भाषार्थ-नीतिका परित्याग करके जो राजा स्वतंत्र वर्त्ताव करता है वह दुःखका भागी होताहै और स्वतंत्र राजाकी सेवा तलवारकी धाराके चाटनेके तुल्य है ॥ १६ ॥

स्वाराध्योनीतिमान्राजादुराराध्यस्त्वनीतिमान्
यत्रनीतिबलेचोभेतत्रश्रीस्सर्वतोमुखी । १७

भाषार्थ-नीतिमान् राजा सुखसे आराधना करनेके योग्य हैं-और-अनीतिमान् राजा दुःखसे आराधना करनेके योग्य हैं. जिस राजाके नीति और बल दोनों हैं उसको चारों ओरसे लक्ष्मी प्राप्त होती है ॥ १७ ॥

अप्रेरितहितकरंसर्वराष्ट्रंभवेद्यथा ॥
तथानीतिस्तुसंधार्यानृपेणात्महितायवै । १८ ।

भाषार्थ-जिस प्रकार विना आज्ञाके हितकारी संपूर्ण देश हों इस प्रकार अपने कल्याणके अर्थ राजा नीतिको धारण करै ॥ १८ ॥

भिन्नंराष्ट्रंबलंभिन्नंभिन्नोमात्यादिकोगणः ।
अकौशल्यंनृपस्यैतदनीतेर्यस्यसर्वदा ॥ १९

भाषार्थ-जिस राजाके देश-सेना-मंत्री आदिकों- में परस्पर भेद है-यह सर्वकाल नीतिहीन राजाओंकी अकुशलता है ॥ १९ ॥

तपसातेजआदत्तेशास्त्रीपाताचरंजकः ॥
नृपःस्वप्राक्तनाद्धत्तेतपसाचमहीमिमाम् ॥

भाषार्थ–तपसे राजा तेजधारी और शास्त्र-का ज्ञाता और रक्षाका कर्त्ता–सबका प्रिय होता है और राजा अपने पूर्वजन्मके तपसे इस पृथ्वीकी पालना करता है ॥ २० ॥

वृष्टिशीतोष्णनक्षत्रगतिरूपस्वभावतः ॥
इष्टानिष्टाधिकंन्यूनाचारैःकालस्तुभिद्यते॥

भाषार्थ–वर्षा–शीत–उष्ण–नक्षत्रोंकी गति आदिके स्वभावसे इष्ट–अनिष्ट अधिक और न्यून आचरणसे कालका भेद होता है अर्थात् एकही काल अनेकप्रकारका प्रतीत होता है ॥ २१ ॥

आचारप्रेरकोराजाह्येतत्कालस्यकारणम् ॥
यदिकालःप्रमाणंहिकस्माद्धर्मोस्तिकर्तृषु ॥

भाषार्थ–आचरणका प्रेरक राजा है इससे कालका कारण है–जो केवल कालही प्रमाण हो तो देहधारियोंमें धर्म कहांसे हो–अर्थात् राजाके विना कालसेभी धर्मकी प्रवृत्ति नहीं हो सकती ॥ २२ ॥

राजदंडभयाल्लोकःस्वस्वधर्मपरोभवेत् ।
योहिस्वधर्मनिरतःसतेजस्वीभवेदिह ॥२३

भाषार्थ–राजदंडके भयसे जगत् अपने २धर्ममें तत्पर होता है और जो अपने धर्ममें स्थित है वही इस लोकमें तेजधारी होता है ॥ २३ ॥

विनास्वधर्मान्नसुखंस्वधर्मोहिपरंतपः ।
तपःस्वधर्मरूपंयद्वर्धितंयेनवैसदा ॥२४ ॥

भाषार्थ–अपने धर्मके विना सुख नहीं होता और अपना धर्म ही परमतप है जिससे तप स्वधर्मरूप हैं इससे वह स्वधर्मकी सदा वृद्धि करता है ॥ २४ ॥

देवास्तुकिंकरास्तस्यकिंपुनर्मनुजाभुवि।
सुदंडैर्धर्मनिरतःप्रजाःकुर्यान्महाभयैः॥२५॥

भाषार्थ–धर्मज्ञ मनुष्यके देवताभी सेवक होते हैं पृथिवीपर मनुष्य तो क्यों न होंगे धर्ममें स्थित राजा उत्तम और भयानक दंडोंसे प्रजाओंको धर्ममें तत्पर करता है ॥२५॥

नृपःस्वधर्मनिरतोभूत्वा तेजःक्षयोन्यथा ॥
अभिषिक्तोनभिषिक्तोनृपत्वंतुयदाप्नुयात् ॥

भाषार्थ–राजाको अभिषेक (पिता आदिके उपदेशद्वारा शास्त्रोक्त (विधि) अथवा स्वयं जब राजपदवीको प्राप्त हो तब राजा धर्ममें तत्पर रहै जो धर्ममें स्थित नहीं उसके तेजका क्षय (नाश) होता है ॥ २६ ॥

बुद्ध्यावलेनशौर्येणततोनीत्यानुपालयन् ।
प्रजाःसर्वाःप्रतिदिनमच्छिद्रोदंडधृक्सदा॥

भाषार्थ–बुद्धि-बल-शूरवीरता-और नीतिसे संपूर्ण प्रजाका पालन-करता हुआ राजा अच्छिद्र(दोषरहित) होकर दंडको सदा धारण करै॥ २७ ॥

नित्यवुद्धिमतोप्यर्थःस्वल्पकोपिविवर्धते ।
तिर्यञ्चोपिवशंयांतिशौर्यनीतिबलैर्धनैः ॥

भाषार्थ–बुद्धिमान् राजाका अत्यंत अल्पभी अर्थ नित्य वृद्धिको प्राप्त होता है सर्प आदिभीशूरता-नीति-बल-धनसे वश हो जाते हैं ॥ २८॥

सात्विकंतामसंचैवराजसंत्रिविधंतपः ।
यादृक्तपतियोत्यर्थंतादृग्भवतिसोनृपः॥२९॥

भाषार्थ–सत्वगुणी-रजोगुणी-तमोगुणी-तीन प्रकारका तप होता है-जो राजा सात्त्विकगुणी होकर तपता है वह वैसाही होता है॥ २९ ॥

योहिस्वधर्मनिरतःप्रजानांपरिपालकः ।
यष्टाचसर्वयज्ञानांनेताशत्रुगणस्यच ॥ ३०॥

दानशौंडःक्षमीशूरोनिस्पृहोविषयेष्वपि ॥
विरक्तःसात्विकःसोहिनृपोंतेमोक्षमन्वियात्

भाषार्थ-जो राजा धर्मनिष्ठ होकर प्रजाका पालक होता है-और संपूर्ण यज्ञोका कर्ता है शत्रुओंका जेता है और-दानी है और क्षमावान् है-शूरवीर है-निर्लोभी है-विषयोंसे विरक्त है-वह सात्विक राजा अंतसमयमें मोक्षको प्राप्त होता है ॥ ३० । ३१ ।

विपरीतस्तामसःस्यात्सोंतेनरकभाजनः ।
निघृणश्चमदोन्मत्तोहिंसकः सत्यवर्जितः॥

भाषार्थ-पूर्वोक्त लक्षणोंसे विपरीत है लक्षण जिसमें ऐसा राजा तामसी और निर्दयी-मदोन्मत्त -हिंसाप्रिय-सत्यहीन-अंतमें नरकगामी होता है ॥ ३२ ॥

राजसोदांभिकोलोभीविषयीवंचकश्शठः ।
मनसान्यश्चवचसाकर्मणाकलहप्रियः ॥ ३३

नीचप्रियः स्वतंत्रश्चनीतिहीनश्छलांतरः ।
सतिर्यक्त्वंस्थावरत्वंभावितांतेनृपाधमः ३४

भाषार्थ-दंभी-लोभी-विषयी-वंचक-शठ-मनसा अन्य (मनमें कपटी) वाणी और कर्मसे कलहकारी-नीचोंमें प्रेमी-स्वतंत्र-नीतिहीन-मनस छली ऐसा राजाओंमें अधम राजा-रजोगुणी होता है-वह अंतमें तिरछी-अथवा स्थावरयोनिको प्राप्त होता है ३३३४

देवांशान्सात्विकोभुंक्तेराक्षसांशांस्तुतामसः
राजसोमानवांशांस्तुसत्त्वेधार्यंमनोयतः ॥

भाषार्थ-सत्वगुणी देवांशोंको-तमोगुणी-राक्षसांशोको-रजोगुणी-मनुष्यांशोको भोगता है इससे सत्त्वगुणहीमें मनकी धारणा करै॥३५॥

सत्त्वस्यतमसःसाम्यान्मानुषंजन्मजायते ।
यंयदाश्रयतेमर्त्यस्तत्तुल्योदिष्टतोभवेत् ॥

भाषार्थ-सत्वगुण-और तमोगुणकी साम्यतासे मनुष्यजन्म होता है-तिस २ गुणका आश्रय करता है अपने प्रारब्धके अनुसार-तिसकेही तुल्य होता है ॥ ३६ ॥

कर्मैवकारणंचात्रसुगतिंदुर्गतिंप्रति ।
कर्मैवप्राक्तनमपिक्षणंकिंकोस्तिचाक्रियः॥

भाषार्थ-इस जगत्में सुगति-और दुर्गतिके प्रति कर्म ही कारण है-पूर्वकर्महीको प्रारब्ध कहते हैं क्या कोई जीव क्षणमात्र भी कर्मरहित रह सकता है अर्थात् नही रह सकता ॥ ३७ ॥

नजात्याब्राह्मणश्चात्रक्षत्रियोवैश्यएवन ।
नशूद्रोनचवैम्लेच्छोभेदितागुणकर्मभिः ३८

भाषार्थ-इस जगत्में जन्मसे ब्राह्मण-वैश्य-क्षत्रिय-शूद्र-म्लेच्छ नहीं होतेहैं किंतु गुण और कर्मके भेदसे होते हैं ॥ ३८ ॥

ब्रह्मणस्तुसमुत्पन्नाःसर्वेतेकिंनुब्राह्मणाः ।
नवर्णतोनजनकाद्ब्राह्मंतेजःप्रपद्यते ३९ ॥

भाषार्थ-संपूर्ण-जीव ब्रह्मासे उत्पन्न होनेसे क्या ब्राह्मण होसक्ते हैं-अर्थात् नही वर्णसे और पितासे ब्रह्मतेजकी प्राप्ति नही होसकती३९॥

ज्ञानकर्मोपासनाभिर्देवताराधनेरतः ।
शांतोदांतोदयालुश्चब्राह्मणश्चगुणैःकृतः ॥

भाषार्थ-ज्ञान-कर्म-देवता-आदिकी उपासना देवताके आराधनमे जो तत्पर-और-शांत-दांत-और-दयालु-ऐसा जो मनुष्य-वही गुणोंसे ब्राह्मण होता है ॥ ४० ॥

लोकसंरक्षणेदक्षश्शूरोदांतःपराक्रमी ।
दुष्टनिग्रहशीलोयः सवैक्षत्रियउच्यते॥ ४१

भाषार्थ-लोककी रक्षा करनेमें चतुर-शूरवीर दांत और पराक्रमी-दुष्टोंको दंडका दाता एसा जो मनुष्य उसे क्षत्रिय कहते हैं॥४१॥

क्रयविक्रयकुशलायेनित्यंपण्यजीविनः ॥
पशुरक्षाकृषिकरास्तेवैश्याः कीर्तिताभुवि ॥

भाषार्थ–लेन देनमें चतुर व्यवहार है जीवन जिनका और पशुओंकी रक्षा–और खेतीके करनेहारे जीव वे पृथ्वीमें वैश्य कहाते हैं ॥ ४२ ॥

द्विजसेवार्चनरताःशूराः शांताजितेंद्रियाः।
सीरकाष्ठतृणवहास्तेनीचाःशूद्रसंज्ञकाः ४३

भाषार्थ–ब्राह्मणकी सेवा और पूजनमें तत्पर-शूर–वीर–शांत–और–जितेंद्रिय–हल काष्ठ औरतृण–इनको लेजानेहारे जो नीच जीव वे शूद्र कहाते हैं ॥ ४३ ॥

त्यक्तस्वधर्माचरणानिर्घृणाःपरपीडकाः ।
चंडाश्चहिंसकानित्यंम्लेच्छास्तेह्यविवेकिनः

भाषार्थ–त्याग दियाहै अपने धर्मका आचरण जिन्होंने ऐसे निर्दयी परको पीडा देनेहारे चंड और नित्य हिंसक जो अविवेकी मनुष्य वे म्लेच्छ हैं ॥ ४४ ॥

प्राक्कर्मफलभोगार्हाबुद्धिःसंजायतेनृणाम् ।
पापकर्मणिपुण्येवाकर्तुंशक्तोनचान्यथा ४५

भाषार्थ–पूर्वकर्मके फल भोगने योग्य मनुष्यकी बुद्धि पापकर्म अथवा पुण्यमें जब होती है तब ही बुद्धिके अनुसार कर्म कर सकता है अन्यथा नही ॥ ४५ ॥

बुद्धिरुत्पद्यतेतादृग्यादृक्कर्मफलोदयः ॥
सहायास्तादृशाएवयादृशीभावितव्यता ४६

भाषार्थ–जैसे कर्मके फलका उदय होता है वैसी ही बुद्धि उत्पन्न होति है–और जैसी भावितव्यता (होनी) होती है वैसेही सहायक होते है ॥ ४६ ॥

प्राक्कर्मवशतःसर्वंभवत्येवेतिनिश्चितम् ।
तदोपदेशाव्यर्थाःस्युःकार्याकार्यप्रबोधकाः

भाषार्थ–जो यह निश्चय है कि पूर्वकर्मके आधीनही संपूर्ण होता है तो कार्यके जतानेहारे उपदेश व्यर्थ हो जायगे ॥ ४७ ॥

धीमंतोवंद्यचरितामन्यंतेपौरुषंमहत् ।
अशक्तपौरुषंकर्तुंक्लीबादैवमुपासते॥ ४८ ॥

भाषार्थ–बुद्धिमान् और माननीयचरित्र मनुष्य पुरुषार्थको वड़ा मानते हैं और जो नपुंसक पुरुषार्थ करनेको असमर्थ हैं वे दैव (प्रारब्ध) की उपासना करते हैं ॥ ४८ ॥

दैवेपुरुषकारेचखलुसर्वंप्रतिष्ठितम् ।
पूर्वजन्मकृतंकर्मैहार्जितंतद्द्विधाकृतम् ४९॥

भाषार्थ–प्रारब्ध और पुरुषार्थमेंही निश्चयसे संपूर्ण जगत् विद्यमान है पूर्वजन्मका कर्म प्रारब्ध और इस जन्मका कर्म पुरुषार्थ होनेसे एकही कर्मसे दो प्रकारका होता है ॥ ४९॥

बलवत्प्रतिकारिस्याद्दुर्बलस्यसदैवहि ॥
सबलाबलयोर्ज्ञानंफलप्राप्त्यान्यथानहि ॥

भाषार्थ–दुर्बलका प्रतिकार करनेवाला उपकारी बलवान् कर्म सर्वदा होता है और प्रबल और दुर्बलके ज्ञान फलप्राप्तिसे है अन्यथा नही होते ॥ ५० ॥

फलोपलब्धिःप्रत्यक्षहेतुनानैवदृश्यते॥
प्राक्कर्महैतुकीसातुनान्यथैवेतिनिश्चयः ५१

भाषार्थ–फलकी प्राप्तिका हेतु कोई प्रत्यक्ष नही दीखता क्योंकि यह निश्चय है कि फलकी प्राप्ति पूर्वकर्मके अनुसार होती है अन्यथा नहीं हो सकती ॥ ५१ ॥

यज्जायतेल्पक्रियया नृणांवापिमहत्फलम्
तदपिप्राक्तनादेवकेचित्प्रागिहकर्मजम् ५२

भाषार्थ– जो मनुष्यको अल्प कर्मसे महान् फल होता है वह भी पूर्वकर्मसे ही होता है क्योंकि इस जन्मके कर्मसे पूर्व किंचित् भी नही हो सकता ॥ ५२ ॥

वदंतीदैवक्रियया जायते पौरुषं नृणाम् ॥
सस्नेहवर्तिदीपस्य रक्षा वातात्प्रयत्नतः ५३

भाषार्थ-कोई मतवादी कहते हैं कि इस जन्मके ही कर्मसे मनुष्योंका पुरुषार्थ होता है जैसे तेलवत्ती सहित दीपककी रक्षा पवनसे और यत्नसे करते हैं ॥५३॥

अवश्यंभाविभावानां प्रतीकारो न चेद्यदि ।
दुष्टानां क्षपणं श्रेयं यावद्बुद्धिवलोदयम् ५४॥

भाषार्थ-अवश्य होनेवाली वस्तुका जो प्रतिकार न होता तौ अपने बुद्धि और वलके अनुसार दुष्टोंके नाशसे कुशल कैसे होती अर्थात् पुरुषार्थसे भावी भी अन्यथा होशकती है ॥ ५४ ॥

प्रतिकूलानुकूलाभ्यां फलाभ्यां च नृपोऽप्यतः
ईषन्मध्याधिकाभ्यां च त्रिधा दैवं विचिंतयेत्

भाषार्थ-इनसे राजाभी अपने प्रतिकूल अनुकूल और अल्प-मध्यम-उत्तम-फलोंसे तीन प्रकारके दैवका विचार करै ॥ ५५ ॥

रावणस्य च भीष्माद्वैवनभंगे च गोगृहे ॥
प्रातिकूल्यं तु विज्ञातमेकस्मान्वानरान्नरात्॥

भाषार्थ-रावणके वनका भंग एक वानर (हनुमान) से हुआ और भीष्मका गोगृहमें एकनर (अर्जुन) से भंग भया इससे कर्मकी प्रतिकूलताभी ज्ञात होती है ॥ ५६ ॥

कालानुकूल्यं विस्पष्टं राघवस्यार्जुनस्य च
अनुकूले यदा दैवे क्रियाल्पा सुफला भवेत् ॥

भाषार्थ-रामचंद्र-और अर्जुनकी काल संवंधी अनुकूलता स्पष्टतर है क्योंकि जव दैव, अनुकूल होता है तव स्वल्पक्रिया भी सफल होती है ॥५७ ॥

महती सत्क्रिया निष्फला स्यात्प्रतीकूलके ।
वलिर्दानेन संवद्धो हरिश्चंद्रस्तथैव च॥५८ ॥

भाषार्थ-प्रारब्धकी प्रतिकूलतामें महान्भी सत्कर्म अनिष्ट फलदायक होता है वलि और राजा हरिश्चंद्र दानसेभी वंधनको प्राप्त हुये ॥ ५८ ॥

भवतीष्टं सत्क्रियया निष्टं तद्विपरीतया ॥
शास्त्रतः सदसज्ज्ञात्वा त्यक्त्वाऽसत्सत्समाचरेत् ॥ ५९ ॥

भाषार्थ-सत्कर्मसे इष्ट और असत्कर्मसे अनिष्ट होता है इससे शास्त्रद्वारा सत् और असत्का ज्ञान और असत्का परित्याग करके सत् (श्रेष्ठ) कर्महीका आचरण करै ॥५९॥

कालस्य कारणं राजा सदसत्कर्मणस्त्वतः ।
स्वक्रौर्योद्यतदंडाभ्यां स्वधर्मे स्थापयेत्प्रजाः

भाषार्थ-कालका कारण राजा है सत् और असत् कर्मके प्रभावसे अपनी क्रूरता और दंडसे अपने २ कर्ममें प्रजाका स्थापन राजा करै ॥ ६० ॥

स्वाम्यमात्यसुहृत्कोशराष्ट्रदुर्गवलानि च
सप्तांगमुच्यते राज्यं तत्र मूर्धा नृपः स्मृतः॥६१

भाषार्थ-राजा-मंत्री-मित्र-कोश-देश-दुर्ग किला सेना ये सात अंग राज्यके हैं तिन सातोमें राजा प्रधान है ॥६१॥

दृगमात्या सुहृच्छ्रोत्रं मुखं कोशो वलं मनः ॥
हस्तौ पादौ दुर्गराष्ट्रौ राज्यांगानि स्मृतानि हि ।

भाषार्थ-मंत्री, नेत्र, मित्र-कर्ण, कोश-मुख सेना मन, दुर्ग-हात, देश-पाद, ये राज्यके अंग कहे हैं ॥ ६२ ॥

अंगानां क्रमशो वक्ष्ये गुणान्भूतिप्रदान्सदा॥
यैर्गुणैस्तु सुसंयुक्ता वृद्धिमंतो भवंति हि ६३॥

भाषार्थ-भूतिके देनेवाले अंगोंके गुण-क्रमसे कहते हैं जिन गुणोंसे संयुक्त मनुष्य वृद्धि को प्राप्त होते हैं ॥ ६३ ॥

राजास्यजगतोहेतुर्वृद्धेर्वृद्धाभिसंमतः ।
नयनानंदजनकःशशांकइवतोयधेः॥ ६४॥

भाषार्थ–राजा इस जगत्की वृद्धिका हेतु है और वृद्धोंका मान्य है नेत्रोंको इस प्रकार आनंद देता है जैसे चंद्रमा समुद्रको॥६४॥

यदिनस्यान्नरपतिःसम्यङ्नेताततःप्रजाः
अकर्णधाराजलधौ विप्लवेतेहनौरिव ॥ ६५॥

भाषार्थ–जो उत्तम नीतिमान् राजा न हो तो प्रजा इस प्रकार नष्ट हो जाय जैसे मलाहके विना समुद्रमें नाव ॥ ६५ ॥

नतिष्ठंतिस्वस्वधर्मेविनापालनंप्रजाः ।
प्रजयातुविनास्वामीपृथिव्यांनैवशोभते६६

भाषार्थ–पालकके विना प्रजा अपने२धर्ममें नहीं टिकती और पृथिवीपर प्रजाके विना स्वामीभी शोभाको प्राप्त नहीं होता ॥ ६६॥

न्यायप्रवृत्तोनृपतिरात्मानमथचप्रजाः ।
त्रिवर्गेणोपसंधत्तेनिहंतिध्रुवमन्यथा ॥६७॥

भाषार्थ– न्यायमें प्रवृत्त राजा अपनी और प्रजाको धर्म अर्थ काममें धारणा करता है और अन्यथा पूर्वोक्तोंको नष्ट करता है ॥ ६७ ॥

धर्माद्वैपवनोराजाविधायबुभुजेभुवम् ।
अधर्माच्चैवनहुषःप्रतिपेदेरसातलम् ॥ ६८॥

भाषार्थ–धर्मसे पवन राजा पृथ्वीको जीतकर भोगता भया और राजा नहुष अधर्मसे पातालमें प्राप्त हुआ ॥ ६८ ॥

वेनोनष्टस्त्वधर्मेणपृथुर्वृद्धस्तुधर्मतः।
तस्माद्धर्मंपुरस्कृत्ययतेतार्थायपार्थिवः ६९

भाषार्थ–राजा वेन अधर्मसे नष्ट हुआ-और राजा पृथु धर्मसे वृद्धिको प्राप्त हुआ तिससे राजा धर्मको प्रधान रखकर द्रव्यके संचयमें यत्न करे ॥ ६९ ॥

योहिधर्मपरोराजादेवांशोन्यश्चरक्षसम् ।
अंशभूतोधर्मलोपीप्रजापीडाकरोभवेत् ७०

भाषार्थ–जो राजा धर्ममें तत्पर हैं वह देवताओंका अंश हैं और इतर राजा राक्षसोंके अंश हैं राक्षसोंका अंश धर्मका लोप कर्त्ता प्रजाका पीड़ा करनेहारा होताहै ॥ ७० ॥

इंद्रानिलयमार्काणामग्नेश्चवरुणस्यच ।
चंद्रवित्तेशयोश्चापिमात्रानिर्हृत्यशाश्वतीः ॥

जंगमस्थावराणांचहीशःस्वतपसाभवेत् ।
भागभाग्रक्षणेदक्षोयथेंद्रोनृपतिस्तथा ७२॥

भाषार्थ–इंद्र-पवन-यम-सूर्य-अग्नि-वरुण-चंद्र-कुबेर-इनके स्वाभाविक अंशोंसे और अपने तपके प्रतापसे जंगम और स्थावरोंका स्वामी–राजा होता है-राजा अपने अंश (कर) का भोगनेहारा रक्षा करनेमें चतुर इस प्रकार होता है जैसा स्वर्गका रक्षक इंद्र ॥ ७१ ॥ ७२ ॥

वायुर्गंधस्यसदसत्कर्मणःप्रेरकोनृपः
धर्मप्रवर्त्तकोऽधर्मनाशकस्तमसोरविः ७३॥

भाषार्थ–पवन सुगंधका जैसे प्रेरक है-तैसे सत् और असत् कर्मका प्रेरक राजा होता है धर्मका प्रवर्त्तक और अधर्मका नाशक राजा इस प्रकार होता है जैसे अंधकारका नाशक सूर्य होता है ॥ ७३ ॥

दुष्कर्मदंडकोराजायमःस्याद्दंडकृद्यमः ।
अग्निश्शुचिस्तथाराजारक्षार्थंसर्वभागभुक् ॥

भाषार्थ–दुष्टकर्मके दंडका दाता होनेसे यमराजके समान दंडका कारक होता है राजा अग्निके समान शुद्ध होता है और रक्षाके अर्थ अपने भाग (कर) को भोगता है ॥ ७४ ॥

पुष्यत्यपांरसैःसर्ववरुणःस्वधनैर्नृपः ।
करैश्चंद्रोल्हादयतिराजास्वगुणकर्मभिः ॥

भाषार्थ-जलोंसे सबका पोषक राजा जलरूप और अपने धनोंसे पुष्ट करनेसे वरुण रूप है चंद्रमाकी किरणोंके समान अपने गुण और कर्मोंसे सबको प्रसन्न रखता है॥७५॥

कोशानांरक्षणेदक्षःस्यान्निधीनांधनाधिपः ।
चंद्रांशेनविनासर्वैरंशैर्नोभातिभूपतिः ७६॥

भाषार्थ-धनकी रक्षा करनेमें चतुर और कोशमें कुबेरके समान सर्वगुणी भी राजा चद्रमांश (प्रकाश) के विना शोभित नही होता ॥ ७६ ॥

पितामातागुरुर्भ्राताबंधुर्वैश्रवणोयमः ।
नित्यंसप्तगुणैरेषांयुक्तोराजानचान्यथा ॥

भाषार्थ- पिता,माता,गुरु,भ्राता,बंधु,कुबेर, यम,इनके सात गुणोंसे युक्त ही राजा होताहै अन्यथा नही होता ॥ ७७ ॥

गुणसाधनसंदक्षःस्वप्रजायाःपितायथा ।
क्षमयित्र्यपराधानांमातापुष्टिविधायिनी ॥

भाषार्थ-पिताके समान अपनी प्रजाके गुणोंकी सिद्धिमें तत्पर रहै और प्रजाके अपराधोंको क्षमा करिके पुष्टि इस प्रकार करै जैसे माता पुत्रके अपराधोंको क्षमा करिके पुष्टि करतीहै ॥ ७८ ॥

हितोपदेष्टाशिष्यस्यसुविद्याध्यापकोगुरुः ।
स्वभागोद्धारकृद्भ्रातायथाशास्त्रंपितुर्धनात्

भाषार्थ-जिस प्रकार गुरु शिष्यको उत्तम विद्याध्ययन कराताहै और उसके हितोंको उपदेशभी कराता है जिस प्रकार भ्राताके धनमेंसे शास्त्रके अनुसार अपने भागको ग्रहण करताहै इस प्रकार राजाभी हितोपदेशपूर्वक शास्त्रके अनुसारही कर (दंड) का ग्रहण करै ॥ ७९ ॥

आत्मस्त्रीधनगुह्यानांगोप्ताबंधुस्तुमित्रवत् ।
धनदस्तुकुबेरःस्याद्यमःस्याच्चसुदंडकृत् ॥

भाषार्थ-बंधु जिस प्रकार मित्रके समान अपने स्त्री धन गोप्य वस्तु इनकी रक्षा करता है इसी प्रकार राजाभी करै और प्रजाकी विपत्तिमें धनके देनेसे कुवेर और अपराधके अनुसार दंड देनेसे यम यमरूप राजा होताहै ॥ ८० ॥

प्रवृद्धिमतिसंराज्ञिनिवसंतिगुणाअमी ।
एतेसप्तगुणाराज्ञानहातव्याः कदाचन८१ ॥

भाषार्थ-श्रेष्ठ बुद्धिमान् उत्तमराजामे ये पूर्वोक्त सातों गुण वसते हैं इससे राजा इन सातों गुणोंका कदाचित् भी परित्याग न करै

क्षमतेयोपराधंसः शक्तः सदमनेक्षमी ।
क्षमयातुविनाभूपोनभात्यखिलसद्गुणैः ८२

भाषार्थ-जो अपराधोंकी क्षमा करै वह राजा क्षमावान् है और जो दमन दंड देनेमे समर्थ है वह शक्त है क्षमाके विना राजासम्पूर्णभी उत्तम गुणोंसे शोभित नही होताहै८२॥

स्वान्दुर्गुणान्परित्यज्यह्यतिवादांस्तितिक्षते
दानैर्मानैश्चसत्कारैः स्वप्रजारंजकः सदा ॥

भाषार्थ-अपने निन्दित गुणोंका परित्याग करिके निंदाका सहन करै दान मान सत्कारसे अपनी प्रजाको सदा प्रसन्न रक्खै

दांतः शूरश्चशस्त्रास्त्रकुशलोरिनिषूदनः ।
अस्वतंत्रश्चमेधावीज्ञानविज्ञानसंयुतः८४ ॥

भाषार्थ- दमनशील शूरवीर शस्त्र और अस्त्रमें कुशल शत्रुओंका नाशक शास्त्रके अनुसार आचरण करनेहारा बुद्धिमान् ज्ञान और विज्ञान संयुक्त राजा सदा रहै८४

नीचहीनोदीर्घदर्शीवृद्धसेवीसुनीतियुक्
गुणिजुष्टस्तुयोराजासज्ञेयोदेवतांशकः ८५

भावार्थ-नीचोंसे रहित दीर्घदर्शी वृद्धोंका सेवक उत्तम नीतिमान् गुणियोंसे युक्त ऐसा जो राजा वह देवताओंका अंश है ॥ ८५ ॥

विपरीतस्तुरक्षोंशः सवैनरकभोजनः ॥
नृपांशसदृशोनित्यंतत्सहायगणः किल ८६

भावार्थ-पूर्वोक्त गुणोंसे विपरीत हैं गुण जिसमें वह राजा राक्षसोंका अंशहै और जिस अंशका राजा होताहै उसके सहायकोंका समूहभी उसी अंशका होता है ॥ ८६ ॥

तत्कृतंमन्यतेराजासंतुष्यतिचमोदते ॥
तेषामाचरणैर्नित्यंनान्यथानियतेर्बलात् ८७

भावार्थ-सहायकोंके किये कार्यको उनके आचरणोंसे राजा मानताहै और संतोष करताहै और दैवके अनुसार प्रसन्न होताहै अन्यथा नहीं ॥ ८७ ॥

अवश्यमेवभोक्तव्यंकृतकर्मफलंनरैः ॥
प्रतिकारैर्विनानैवप्रातिकारेकृतेसति ॥८८॥

भावार्थ-किये हुए कर्मोंका फल मनुष्यको अवश्यही भोगना पडताहै प्रतिकारके विना प्रतिकार (निवृत्तिका उपाय) किये पीछेभी अवश्य भोगने योग्य है ॥ ८८ ॥

तथाभोगायभवतिचिकित्सितगदोयथा
उपदिष्टेनिष्टहेतौतत्तत्कर्तुंयतेतकः ॥ ८९॥

भावार्थ-जिस प्रकार रोगका चिकित्सा होगी उसी प्रकारके भोगोंकी प्राप्तिहोगी जो अनिष्ट फलके हेतुका उपदेश करताहै उसके करनेमें कोईभी यत्न नहीं करता८९

रज्यतेसत्फलेस्वांतंदुष्फलेनहिकस्यचित्॥
सदसद्बोधकान्येवदृष्ट्वाशास्त्राणिचाचरेत्९०

भावार्थ-मनुष्यका मन उत्तम हैं फल जिसका ऐसे कर्ममें लगता है और अनिष्ट है फल जिसका उसमें किसीकाभी मन नहीं लगता है इससे सत् और असत्के बोधक शास्त्रोंको देखकरही राजा आचरण करै ॥ ९० ॥

नयस्यविनयोमूलंविनयः शास्त्रनिश्चयात्
विनयस्येंद्रियजयस्तद्युक्तःशास्त्रमृच्छति॥

भावार्थ-नीतिका कारण विनय है विनय-शास्त्रके निश्चयसे होता है विनयका हेतु इं-द्रियोंका जय है इंद्रियोंके जयसें ही शास्त्रकी प्राप्ति होती है ॥ ९१ ॥

आत्मानंप्रथमंराजाविनयेनोपपादयेत् ।
ततःपुत्रांस्ततोमात्यांस्ततोभृत्यांस्ततःप्रजा

भावार्थ-इससे राजा प्रथम अपने आ-त्माको निरंतर विनययुक्त करै फिर पुत्रोंको फिर अमात्योंको फिर सेवककी फिर प्रजाको विनययुक्त करै ॥ ९२ ॥

परोपदेशकुशलः केवलोनभवेन्नृपः ॥
प्रजाधिकारहीनःस्यात्सगुणोपिनृपः क्वचित्

भावार्थ-दूसरेके उपदेशमेंही केवल राजा कुशल न रहै किंतु आप भी विनयशील रहै क्योंकि विनयहीन सगुणभी राजा प्रजा के अधिकारसे कदाचित् हीन होजाताहै ॥९३॥

नतुनृपविहीनास्युर्दुर्गुणाह्यपितुप्रजा ॥
यथानविधवेंद्राणीसर्वदातुतथाप्रजा ॥९४॥

भावार्थ-दुर्गुण भी प्रजा राजासे हीन सर्वदा इस प्रकार नहीं होती जैसे इंद्रकी स्त्री कभी विधवा नहीं होती है ॥ ९४ ॥

भ्रष्टश्रीः स्वामिताराज्ञोनृपएवनमंत्रिणः ॥
तथाविनीतदायादोदांताः पुत्रादयोपिच ॥

भावार्थ-जैसे राजा की भ्रष्टश्रीका कारण राजाही है मंत्री नहीं तिसी प्रकार जिस रा-जाके पुत्र आदि अविनीत होते हैं वही राजा भ्रष्टश्री अर्थात् राज्येस हीन होजाता है ९५

सदानुरक्तप्रकृतिः प्रजापालनतत्परः ॥
विनीतात्माहिनृपतिर्भूयसींश्रियमश्नुते॥९६

भावार्थ-जिस राजामें प्रजाका अनुराग होता है और जो प्रजाके पालनमें तत्पर है और

विपरीत है वह राजा अत्यंत श्रीको भोगता है ॥ ९६ ॥

प्रकीर्णविषयारण्येधावंतंविप्रमाथिनम् ।
ज्ञानांकुशेनकुर्वीतवशमिंद्रियदंतिनम् ॥ ९७ ॥

भाषार्थ-राजा गहनविषयरूपी वनमें मदसे दौडते हुए इंद्रियरूपी हस्तीको ज्ञानरूपी अंकुशसे वशमें करै ॥ ९७ ॥

विषयामिषलोभेनमनः प्रेरयतींद्रियम् ।
तन्निरुंध्यात्प्रयत्नेनजितेतस्मिञ्जितेंद्रियः ॥

भाषार्थ-विषयरूप मासके लोभसे इंद्रियोंको मन प्रेरता है तिसके प्रयत्नसे मनको रोके क्यों कि मनके जीतेसे राजा जितेंद्रिय होता है ॥९८॥

एकस्यैवहियोशक्तोमनसः सन्निवर्हणे ।
महींसागरपर्यंतांसकथंह्यवजेष्यति ॥ ९९ ॥

भाषार्थ-जो राजा एक मनके वश करनेमें असमर्थ है वह राजा सागरपर्यंत पृथ्वीको किस प्रकार जीतेगा ॥ ९९ ॥

क्रियावसानविरसैर्विषयैरपहारिभिः ।
गच्छत्याक्षिप्तहृदयः करीवन्नृपतिर्ग्रहम् ॥

भाषार्थ-नाशमान और अंतमें विरस विषयासे आक्षिप्त (वशीभूत) मन जिसका ऐसा राजा हस्तिके समान बंधनको प्राप्त होता है ॥ १०० ॥

शब्दः स्पर्शश्चरूपंचरसोगंधश्चपंचमः ।
एकैकस्त्वलमेतेषांविनाशप्रतिपत्तये ॥ १ ॥

शब्द -स्पर्श - रूप - रस - गंध- इनमेंसे एक २ भी विषय विनाश करनेको समर्थ हैं ॥ १ ॥

शुचिदर्भांकुराहारोविदूरभ्रमणेक्षमः ।
लुब्धकोद्गीतमोहेनमृगोमृगयतेवधम् ॥ २ ॥

भाषार्थ-शुद्ध-और कुशाओंकेअंकुरोंका भक्षक- और अत्यंत दूरदेशमें भ्रमणशील मृग लुब्धक के गीतसे मोहित होकर वधको प्राप्त होताहै अर्थात् एकश्रवणाइंद्रियकेहि वश होकरमृत्युको प्राप्त होजाताहै- ॥ २ ॥

गिरींद्रशिखराकारोलीलयोन्मूलितद्रुमः ।
करिणीस्पर्शसंमोहाद्बंधनंयातिवारणः ॥ ३ ॥

भाषार्थ-पर्वतकी शिखरके समान है आकार जिसका और लीलासे उखाडेहैं वृक्ष जिसने ऐसा हस्ती हस्तिनीके भोगके संमोहसे बंधनको प्राप्त होता है अर्थात् लिंगइंद्रियकेही वशीभूत होकर बंधनको भोगता है ॥ ३ ॥

स्निग्धदीपशिखालोकविलोलितविलोचनः ।
मृत्युमृच्छतिसंमोहात्पतंगः सहसापतन् ४

भाषार्थ-स्निध (रमणीय) दीपककी शिखाके देखनेसे चंचल हैं नेत्र जिसके ऐसा पतंग दीप शिखापर गिरताहुआ मृत्युको प्राप्त होता है अर्थात् नेत्रइंद्रिय ही इसके वधका हेतु हो जाता है ॥ ४ ॥

अगाधसलिलेमग्नोदूरोपिवसतोवसन् ।
मीनस्तुसामिषंलोहमास्वादयातिमृत्यवे ५॥

भाषार्थ-अगाधजलमें डूबा हुआ और दूर वसता हुआ भी मीन अपनी मृत्युके अर्थ मांस सहित लोहेको ग्रहण करता है अर्थात् एक जिह्वा इंद्रियसे ही मर जाता है ॥ ५ ॥

उत्कर्तितुंसमर्थोपिगंतुंचैवसपक्षकः ।
द्विरेफोगंधलोभेनकमलेयातिबंधनम् ॥ ६ ॥

कमलके कतरनेमें समर्थ और अपने पंखोंसे गमन करनेमें संपन्न भी भ्रमर गंधके लोभसे कमलकेविषे बंध जाता है अर्थात् घ्राण इंद्रियसे मरणको प्राप्त होता है ॥ ६ ॥

एकैकशोविनिघ्नन्तिविषयाविषसन्निभाः ॥
किंपुनः पंचामिलिताः नकथंनाशयंतिहि ७

भाषार्थ–विषके तुल्य विषय एक २ भी हतते हैं तो पाचों मिलकर नाश क्यों नही करेंगे अर्थात् अवश्य करेंगे ॥ ७ ॥

द्यूतंस्त्रीमद्यंप्रवेतात्रितयंबह्वनर्थकृत् ॥
अयुक्तंयुक्तियुक्तांहधनपुत्रमतिप्रदम्॥८ ॥

भाषार्थ–अयोग्य द्यूत-स्त्री.–मदिरा–अत्यंत अनर्थ-के कर्त्ता हैं–यदि युक्त अर्थात्–इनका सेवन योग्यतापूर्वक होय तो क्रमसे धन–पुत्र–मति इनके दायक होते हैं ॥ ८ ॥

नलधर्मप्रभृतयः सुद्यूतेनाविनाशिताः ॥
सकापट्यंधनायालंद्यूतंभवतितद्विदाम्॥९॥

भाषार्थ–नल और युधिष्ठिर आदि राजा द्यूतने नष्ट कर दिये द्यूतके जाननेवालोंको कपट सहित द्यूत धनके देनेमें समर्थ है॥९॥

स्त्रीणांनामापिसंल्हादिविकरोत्येवमानसम्।
किंपुनर्दशनंतासांविलासोल्लासितभ्रुवाम्१०

भाषार्थ–आनंदका दाता स्त्रियोंका नाम भी मनको विकारी करता है और विलासकरिके उल्लास (शोभा) को प्राप्त हुई है भ्रकुटी जिनकी उनका दर्शन तो क्यों नहीं विकारको करैगा अर्थात् अवश्य करेगा ॥ १० ॥

रहःप्रचारकुशलामृदुगद्गदभाषिणी ।
कंननारीवशीकुर्यान्नरंरक्तांतलोचना ११॥

भाषार्थ–एकांत कार्यमें कुशल-और कोमल गद्गद बोलनेमें तत्पर लालहै नेत्रोंका समीप जिसका ऐसी स्त्री किस मनुष्यको वशमें न करैगी अपितु सबकोही वश कर शकती है११

मुनेरपिमनोवश्यंसरागंकुरुतेंगना॥
जितेंद्रियस्यकावार्ताकिंपुनश्चाजितात्मनाम्

भाषार्थ–जितेंद्रियमुनिके मनकोभी वशीभूत और सराग (विषयाभिलाषी) स्त्री करती है, अजिताओंके मनको तौ वशीभूत क्यों नहीं करैगी ॥ १२ ॥

न्यायच्छंतश्चवहवःस्त्रीपुनाशंगताअमी ॥
इंद्रदंडक्यनहुषरावणाद्याःसदाह्यतः१३ ॥

भाषार्थ–परस्त्रियोंकी इच्छा करनेहारे ये राजा नाशको प्राप्त हुए इंद्र–दंडक्य–नहुष–और रावण आदि–१३

अतत्परनरस्यैवस्त्रीसुखायभवेत्सदा ॥
साह्यिनीगृह्यकृत्येतांविनान्यानविद्यते ॥

भाषार्थ–जो मनुष्य स्त्रीके विषे तत्पर (आधीन)नही उसीको स्त्री सुखदायक होती है क्योंकि गृहके कार्यमें उसके विना और कोई भी सहायक नहीं है ॥ १४ ॥

अतिमद्यंहिपिबतोबुद्धिलोपोभवेत्किल ॥
प्रतिभांबुद्धिमैश्वर्यंधैर्यंचित्तविनिश्चयं १५

तनोतिम त्रयापीतंमद्यमन्याद्विनाशकृत्
कामक्रोधौमद्यतमौनियोक्तव्यौयथोचितं

भाषार्थ–अत्यंत मदिरा पीनेवाले मनुष्यकी बुद्धिका लोप होता है, और परिमित पिईहुई मदिरा बुद्धिकी स्फुरणा और श्रेष्ठता–धीरता–चित्तको निश्चय इनको विस्तार करती है–अधिक मदिरा विनाश करती है और मदिरासे भी काम–क्रोध–होता है इनको यथोचित रोके ॥ १५ ॥ १६ ॥

कामःप्रजापालनेचक्रोधःशत्रुनिबर्हणे ॥
सेनासंधारणेलोभोयोज्योराज्ञाजयार्थिना ॥

भाषार्थ–विषयकी इच्छावाला राजा प्रजाके पालनमें कामना और शत्रुओंके नष्ट करनेमें क्रोध और सेनाकी धारणामें लोभको क्रमसे नियुक्त करै अन्यत्र नहीं ॥ १७ ॥

परस्त्रीसंगमेकामोलोभोनान्यधनेषुच ।
स्वप्रजादंडनेक्रोधोनैवधार्योनृपैःकदा१८॥

भाषार्थ-परस्त्रीके संगममें काम और अन्यके धनमें लोभ और अपनी प्रजाके दंडमें क्रोधका धारण राजा कदापि न करै ॥१८॥

किमुच्यतेकुटुंबीतिपरस्त्रीसंगमान्नरः ।
स्वप्रजादंडनाच्छूरोधनिकोन्यधनैश्चकिम्॥

भाषार्थ-परस्त्रीके संगसे कुटुंबी और अपनी प्रजाको दंडदेनेसे शूरवीर और अन्यके धनोंसे धनिक क्या मनुष्य कहा जाता है अपितु कदाचित् भी नहीं कहाता ॥ १९ ॥

अरक्षितारंनृपतिंब्राह्मणंचातपस्विनम् ।
धनिकंचाप्रदातारंदेवाघ्नंतित्यजंत्यधः२०॥

भाषार्थ-रक्षाके नकरने हारे राजाको और अतपस्वी ब्राह्मणको और अदाता धनिको देवता हतते हैं और नरकमें गेरते हैं॥२०॥

स्वामित्वंचैवदातृत्वंधनिकत्वंतपःफलम् ।
एनसः फलमर्थित्वंदास्यत्वंचदारिद्रता २१

भाषार्थ-स्वामिता दातृता धनिकता ये तपकाफल है और याचकता दासता दरिद्रता ये पापका फलहै ॥ २१ ॥

दृष्ट्वाशास्त्राण्यतोत्मानंसन्नियम्ययथोचितं ।
कुर्यान्नृपःस्ववृत्तंतुपरत्रेहसुखायच ॥२२॥

भाषार्थ-इससे राजा शास्त्रोंको देख और मनको रोक कर यथोचित अपने आचरणको इसलोक और परलोकके सुखके अर्थ करै२२

दुष्टनिग्रहणंदानंप्रजायाःपरिपालनम् ।
यजनंराजसूयादेःकोशानांन्यायतोर्जनम्॥
करदीकरणंराज्ञांरिपूणांपरिमर्दनम् ।
भूमेरुपार्जनंभूयोराजवृत्तंतुचाष्टधा २४ ॥

भाषार्थ-दुष्टोंको दंड और प्रजाका पालन और राजसूय आदि यज्ञोंका करना और न्यायसे कोश खजानाका बढाना और राजाओंको करका दाता करना शत्रुओंका मर्दन करना और भुमिका वारंवार सम्पादन करना यह आठप्रकारका राजाओंका वृत्त आचरणहै ॥ २३ ॥ ॥ २४ ॥

नवर्धितंबलंयैस्तुनभूपाःकरदीकृताः ।
नप्रजाःपालिताःसम्यक्तेवैषंढतिलानृपाः॥

भाषार्थ-जिन राजाओंने सेनाकी वृद्धि न की और अन्य राजाओंको करके दाता न किये और प्रजाओंकी सम्यक् पालना न की वेराजा निष्फलतिलके समानहैं॥२५॥

प्रजासूद्विजतेयस्माद्यत्कर्मपारिनिंदति ।
त्यज्यतेधनिकैर्यस्तुगुणिभिस्तुनृपाधमः ॥

भाषार्थ-जिस राजासे प्रजा कांपती है और प्रजा जिसराजके कार्यकी निंदा करती हैं तिस राजाको धनी और गुणी त्यागते है वह राजा अधम है ॥ २६॥

नटगायकगणिकामल्लषंढाल्पजातिषु ।
योतिशक्तोनृपोनिंद्यःसहिशत्रुमुखेस्थितः॥

भाषार्थ-नट गायक वेश्या नपुंसक और नीचजातियोंमें जो राजा अत्यन्त आसक्तहै वह राजा निंद्यहै और शत्रुके मुखमें विद्यमानहै ॥ २७ ॥

बुद्धिमंतंसदाद्वेष्टिमोदतेवंचकैःसह ॥
स्वदुर्गुणंनैववेत्तिस्वात्मनाशायसोनृपः २८

भाषार्थ-जो राजा बुद्धिमान्‌से सदा द्वेषकरै वंचकोंसे सदा प्रसन्न और अपने दुर्गुणको न जानें वह राजा अपने नाशका कारण होताहै

नापराधंहिक्षमतेप्रदंडोधनहारकः
स्वदुर्गुणःश्रवणतोलोकानांपरिपीडकः २९

नृपोयदातदालोकःक्षुभ्यतेभिद्यतेयतः
गूढचारैःश्रावयित्वास्ववृत्तंदूषयंतिके ॥ ३०

भाषार्थ–जो राजा अपराधको क्षमा नकरै उत्तम दण्डको दे धनको हरे और अपने दुर्गुणोंको श्रवण करिके लोकोंको राजा जब पीडित करताहै तब लोक क्षोभ और भेदको प्राप्त होता है इससे गुप्त दूतोंके द्वारा अपने वृत्त (आचरण) को कौन दूषित करताहै यह श्रवण करावे ॥ २९ ॥ ३० ॥

भूषयंतिचकैर्भावैरमात्याद्याश्चताद्विदः
मयिकीदृक्चसंप्रीतिःकेषामप्रीतिरेववा ॥

भाषार्थ–और कौन२वृत्तके ज्ञाता मंत्री आदि मेरे वृत्तकी प्रशंसा करते हैं और मेरे विषे किस२की उत्तम प्रीति और अप्रीतिहै॥३१॥

मम गुणैर्गुणैर्वापिगूढंसंश्रुत्यचाखिलम्
चारैःस्वदुर्गुणंज्ञात्वालोकतःसर्वदानृपः ३२

सुकीर्त्यैसंत्यजेन्नित्यंनावमन्येतवैप्रजाः
लोकोनिंदतिराजंस्त्वांचारैःसंश्रावितोयदि

भाषार्थ–मेरे गुण और दुर्गुणोंसे कौन२प्रसन्न और अप्रसन्न है इस प्रकार संपूर्ण गुप्तव्यवहार श्रवण करके संपूर्ण कालमें लोकसे अपने दुर्गुणोंको राजा जानकर अपनी सुकीर्तिके अर्थ प्रजाको त्याग (छोड) दे अर्थात् दंड नदे और प्रजाका अपमान न करे जिस राजाने लोकोंसे यह श्रवण किया हो कि हे राजन् लोक तेरी निंदा करते हैं ॥३२॥३३॥

कोपंकरोतिदौरात्म्यादात्मदुर्गुणलोपकः ।
सीतांसाध्व्यपिरामेणत्यक्तालोकापवादतः

भाषार्थ–जो राजा अपने दुर्गुणोंके छिपानेके निमित्त कोप करता है वह दुरात्माहै साधुस्वभावभी सीताजीको लोकके अपवादसे रामचंद्रजीने त्यागदी ॥ ३४ ॥

शक्तेनापिहिनधृतोदंडोल्पोरजकेकांचित् ·
ज्ञानविज्ञानसंपन्नेराजदत्ताभयोपिच ।३५॥

भाषार्थ–समर्थ होकरभी ज्ञानविज्ञानयुक्त राजाने दियाहै,अभयदान जिसको ऐसे रजक (धोबि)को अल्पभी दंड न दिया॥ ३५ ॥

समक्षंवक्तिनभयाद्राज्ञोगुर्वपिदूषणम्
स्तुतिप्रियाहिवैदेवाविष्णुमुख्याइतिश्रुतिः।

भाषार्थ–राजाके अधिक दूषण कोई नहीं कहता है विष्णु आदि देवताभी स्तुतिके प्रिय मानते हैं यह श्रुति है ॥ ३६ ॥

किंपुनर्मनुजानित्यंनिंदाजःक्रोधइत्यतः
राजासुभागदंडीस्यात्सुक्षमीरंजकःसदा ॥

भाषार्थ–मनुष्य तो नित्य स्तुतिप्रिय क्यों न होंगे जिससे क्रोध निंदासे उत्पन्न होता है इससे राजा सुभाग (सूक्ष्म) दंड दाता और उत्तम क्षमाशील और प्रजाका रंजक (प्रसन्न कारक) सदा रहै ॥ ३७ ॥

यौवनंजीवितंवित्तंछायालक्ष्मीश्चस्वामिता
चंचलानिषडेतानिज्ञात्वाधर्मरतोभवेत् ३८

भाषार्थ–यौवन–जीवन–वित्त–छाया–लक्ष्मी स्वामिता ये छे ६ चंचल हैं यह जानकर राजा धर्ममें तत्पर रहै ॥ ३८ ॥

अदानेनापमानेनछलाच्चकटुवाक्यतः ॥
राज्ञःप्रबलदंडेननृपंमुंचतिवैप्रजा ॥ ३९॥

भाषार्थ–कृपणता–तिरस्कार–छल–कटुवचन• राजाका प्रबलदंड–इनसे राजाको प्रजा त्यागदेती है ॥ ३९ ॥

विपरीतगुणैरेभिःसान्वयारज्यतेप्रजा
एकस्तनोविदुष्कीर्तिंदुर्गुणःसंघशोनकिम्॥

भाषार्थ–और पूर्वोक्तगुणोंके विपरीत गुणोंसे प्रजा सदा प्रसन्न रहती है–एकभी दुर्गुण कुकीर्ति करता है तौ दुर्गुणोंका समूह दुष्कीर्त्ति क्यों नहीं करैगा ॥ ४० ॥

मृगयाक्षास्तथापानंगर्हितानिमहीभुजाम्
दृष्टास्तेभ्यस्तुविपदोपांडुनैषधवृष्णिषु ४१

भाषार्थ–मृगया– द्यूत– मदिरा–ये तीनों राजाओंको निंदित हैं–क्योंकि इन तीनोंसे ही नैषध पांडु यादवोंमें विपत्ति देखी है॥४१॥

कामक्रोधस्तथामोहोलोभोमानोमदस्तथा
षड्वर्गमुत्सृजेदेनमस्मिंस्त्यक्तेसुखीनृपः ॥

भाषार्थ–काम–क्रोध–मोह–लोभ–मान–मद– इन छःओंको राजा त्यागदे क्योंकि इनके त्यागनेसे राजा सुखी होता है ॥४२॥

दंडक्योनृपतिः कामात्क्रोधाच्चजनमेजयः
लोभादैलस्तुराजर्षिर्मोहाद्वातापिरासुरः ॥
पौलस्त्योराक्षसोमानान्मदाद्दंभोद्भवोनृपः॥
प्रयातानिधनंह्येतेशत्रुषड्वर्गमाश्रिताः ४४॥

भाषार्थ–दंडक्य कामसे जन्मेजय क्रोधसे ऐलराजर्षि लोभसे–वातापि असुर मोहसे, रावण राक्षस मानसे–दंभसे उत्पन्न राजा मदसे ये पूर्वोक्त राजा षड्वर्ग रूप शत्रुओं के आश्रयसे मरणको प्राप्त हुए ॥४३॥४४

शत्रुषड्वर्गमुत्सृज्य जामदग्न्यः प्रतापवान्
अंबरीषोमहाभागोबुभुजातेचिरंमहीम्॥४५॥

भाषार्थ–और शत्रुओंके षड्वर्गको त्यागकर प्रतापी परशुराम और महाभाग–अंबरीष–चिरकालतक पृथ्वीको भोगते भये ॥४५॥

वर्धयन्निहधर्मार्थौसेवितौसद्भिरादरात्
निगृहीतेंद्रियग्रामोकुर्वीतगुरुसेवनम् ४६॥

भाषार्थ–सज्जनोंने किया है सेवन जिनका ऐसे धर्म और अर्थकी वृद्धि की अर्थ इंद्रियोंको वशीभूत (जीत) कर गुरुका सेवन करै ॥ ४६ ॥

शास्त्रायगुरुसंयोगःशास्त्रंविनयवृद्धये॥
विद्याविनीतोनृपतिःसतांभवतिसंमतः४७॥

भाषार्थ–गुरूका संयोगशास्त्रके अर्थ और शास्त्र विनय (नम्रता) की वृद्धिके अर्थ–विद्या और विनयसे युक्त राजा सत्पुरुषोंको संमत होता है॥ ४७ ॥

प्रेर्यमाणोप्यसद्वृत्तैर्नाकार्येषुप्रवर्तते ॥
श्रुत्यास्मृत्यालोकतश्चमनसासाधुनिश्चितम्
यत्कर्मधर्मसंज्ञंतद्व्यवस्यतिचपंडितः॥
आददानप्रतिदानकलासम्यक्महीपतिः

भाषार्थ–असत् है आचरण जिनका तिनकी प्रेरणासे भी जो निंदितकर्म कर्ममें प्रवृत्त नहींहोता और वेद और स्मृति (धर्मशास्त्र) और लोकसे मनकेद्वारा साधु निश्चित किया जो कर्मसम्बंधीकर्म उसे जो करता है वह राजा पंडित है समयके अनुसार धनलेने और देनेसे राजा साधु होता है ॥ ४८ ॥ ४९ ॥

जितेंद्रियस्यनृपतेर्नीतिशास्त्रानुसारिणः
भवंत्युच्चलितालक्ष्म्यः कीर्तयश्चनभस्पृशः

भाषार्थ–जितेंद्रिय–और नीतिशास्त्रके अनुसारी राजाको लक्ष्मी अधिक और कीर्त्ति स्वर्गगामिनी होती है ॥ ५०

आन्वीक्षिकीत्रयीवार्तादंडनीतिश्चशाश्वती
विद्याश्चतस्त्रएवैता अभ्यसन्नृपातः सदा५१

भाषार्थ-ब्रह्मविद्या (वेदान्त) वेदत्रयी (३ वेद) व र्त्ता-दंडनीति-ये चारोंविद्याओं-का राजा सदा अभ्यास करै ॥५१॥

आन्वीक्षिक्यांतर्कशास्त्रंवेदांताद्यंप्रतिष्ठितम्
त्रय्यांधर्मोह्यधर्मश्चकामोकामः प्रतिष्ठितः॥

भाषार्थ-आन्वीक्षिकीमें न्यायशास्त्र और वेदांत आदि हैं और वेदत्रयीमें धर्म अधर्म-कामना-और-मोक्ष हैं ॥५२॥

अर्थानर्थौतुवार्तायांदंडनीत्यांनयानयौ।
वर्णाःसर्वाश्रमाश्चैवविद्यास्वासुप्रतिष्ठिताः॥

भाषार्थ-अर्थ और अनर्थ वार्त्तामें-न्याय-और अन्याय दंडनीतिमें वर्ण और आश्रम इन संपूर्ण विद्याओंमें विद्यमान हैं ॥ ५३ ॥

अंगानिवेदाश्चत्वारोमीमांसान्यायविस्तरः।
धर्मशास्त्रपुराणानित्रयीदंसर्वमुच्यते॥५४॥

भाषार्थ-शिक्षा-कल्प-व्याकरण-निरुक्त-ज्योतिष्-छंद ये वेदके ६ अंग हैं-और-४ वेद-मीमांसा-न्यायका विस्तार-धर्म-शास्त्र-पुराण इन संपूर्णोंको त्रयी कहते हैं५४

कुसीदकृषिवाणिज्यंगोरक्षावार्तयोच्यते
संपन्नोवार्तयासाधुर्नवृत्तेभयमृच्छति॥ ५५

भाषार्थ-सूतलेना खेती व्यापार गोरक्षा इन्हें वार्त्ता कहते हैं वार्तासे संपन्न जो साधु राजा वह आचरणसे भयको प्राप्त नहीं हो-ता ॥५५॥

दमोदंडइतिख्यातस्तस्माद्दंडोमहीपतिः।
तस्यनीतिर्दंडनीतिर्नयनान्नीतिरुच्यते ५६

भाषार्थ-दमको दंड कहते हैं इससे राजा दंडरूपहै तिस राजाकी नीतिको दंडनीति कहते हैं और नय (न्याय) को नीति कहते हैं ॥५६॥

आन्वीक्षिक्यात्मविज्ञानाद्धर्षशोकौ
व्युदस्यति॥उभौलोकाववाप्नोतित्रय्यां
तिष्ठन्यथाविधि ॥ ५७ ॥

भाषार्थ-आन्वीक्षिकी विद्या आत्माके ज्ञा-नसे आनंद और शोकको नष्ट करती है त्रयीमें टिकता हुआ राजा दोनों लोकोंको प्राप्त होता है ॥ ५७ ॥

आनृशंस्यंपरोधर्मस्सर्वप्राणभृतांयतः।
तस्माद्राजानृशंस्येनपालयेत्कृपणंजनम् ॥

भाषार्थ-जिससे संपूर्ण जीवोंका आनृशंस्य (अहिंसा) परमधर्म है तिससे राजा अ-हिंसासे दुःखी जनकी रक्षा करै ॥५८॥

नहिस्वसुखमन्विच्छन्पीडयेत्कृपणंजनम्।
कृपणःपीड्यमानःस्वमृत्युनाहंतिपार्थिवम्

भाषार्थ-अपने सुखकी इच्छा करता हु-आ राजा कृपण (दीन) मनुष्यको दुःख न दे क्यों कि पीड्यमान कृपण मृत्युसे रा-जाको हतता है ॥ ५९ ॥

सुजनैःसंगमंकुर्याद्धर्मायचसुखायच ।
सेव्यमानस्तुसुजनैर्महानतिविराजते ६०

भाषार्थ-उत्तम जनोंके साथ-धर्म और सुखके अर्थ-संग करै-सुजनोंसे सेवित रा-जा अत्यंत महत्त्वको प्राप्त होता है ॥ ६०॥

हिमांशुमालीवतथानवोत्फुल्लोत्पलंसरः॥
आनंदयतिचेतांसियथासुजनचेष्टितम् ६१

भाषार्थ-सुजनकी चेष्टा इस प्रकार चित्त-को आनंद करती है जैसे चन्द्रमा नवे खि-ले है कमल जिसमें ऐसे तलावको ॥६१॥

ग्रीष्मसूर्यांशुसंतप्तमुद्वेजनमनाश्रयम्।
मरुत्स्थलमिवोदग्रंत्यजेद्दुर्जनसंगतम् ६२॥

भाषार्थ-ग्रीष्मकालके सूर्यकी किरणोंसे संतप्त और कंपनका हेतु और आश्रय रहित मरुदेशके समान उद्दंड दुर्जनके समागमको त्याग करै॥६२॥

निःश्वासोद्गीर्णहुतभुग्धूमधूम्रीकृताननैः।
वरमाशीविषैःसंगंकुर्यान्नत्वेवदुर्जनैः॥६३॥

भाषार्थ-श्वाससे उत्पन्न अग्निके धूयेसे श्यामहै मुख जिनका ऐसे सर्पोंका संग तौ उत्तम है परंतु दुर्जनका संग कदापि उत्तम नही है॥ ६३ ॥

क्रियतेभ्यर्हणीयायसुजनाययथांजलिः
ततःसाधुतरःकार्योदुर्जनायहितार्थिना ६४

भाषार्थ-जिस प्रकार सुजनके प्रतिपूजाके अर्थ-अंजलि-की जाती है उससे अच्छी तरह दुर्जनकी पूजाके अर्थ-अंजली-अपने हितका आभिलाषी करै ६४

नित्यंमनोपहारिण्यावाचाप्रल्हादयेज्जगत्
उद्वेजयतिभूतानिक्रूरवाग्धनदोपिसन् ६५

भाषार्थ-मनोहरवाणीसे सदा जगत्को प्रसन्न रक्खे क्योंकि कुवेरके समानभी कठोर वाणि पुरुष भूतोंको कंपित करता है-६५

हृदिविद्धइवात्यर्थंयथासंतप्यतेजनः॥
पीडितोपिहिमेधावीनतांवाचमुदीरयेत् ६६

भाषार्थ-जिस वाणीसे हृदयमें तपायमानके समान जन दुःखी हो उस वाणीको पीडित हुआभी बुद्धिमान् न कहै ॥ ६६ ॥

प्रियमेवाभिधातव्यंनित्यंसत्सुद्विषत्सुवा ।
शिखीवकेकांमधुरांवाचंब्रूतेजनप्रियः ६७॥

भाषार्थ-सुजन और दुर्जनोंके प्रति नित्य जो प्रियवचनही कहता है वह मनुष्य मधुरवाणी कहनेहारे मयूरके समान सबको प्रिय होता है ६७

मदरक्तस्यहंसस्यकोकिलस्यशिखंडिनः
हरंतिनतथावाचोयथावाचोविपश्चिताम् ६८

भाषार्थ-मदसे संयुक्त हंस और कोकिल और मयूर इनकी वाणी ऐसा मनको नहीं हरती जैसी पंडितोंकी वाणी मनको हरती है ॥ ६८ ॥

येप्रियाणिप्रभाषंतेप्रियमिच्छंतिसत्कृतम् ।
श्रीमंतोवंद्यचरितादेवास्तेनरविग्रहाः ६९॥

भाषार्थ-जो मनुष्य प्रिय वचन वोलते हैं-और प्रियके सत्कारकी इच्छा करते हैं वे श्रीमान् नमस्कारके योग्य हैं चरित्र जिनक मनुष्यके शरीरका भारी देवता है ॥ ६९ ॥

नहीदृशंसंवननंत्रिपुलोकेपुविद्यते ।
दयामैत्रीचभूतेपुदानंचमधुराचवाक् ७०॥

भाषार्थ-सव भूतोंपर दया और मित्रता और दान और मधुरवाणी ऐसा वशीकरण और कोई तीनों लोकोंमें नही है ॥ ७० ॥

श्रुतिरास्तिक्यपूतात्मापूजयेद्देवतांसदा ।
देवतावद्गुरुजनमात्मवच्चसुहृज्जनान् ७१

भाषार्थ-वेदकी आस्तिकता (सत्य बुद्धिसे पवित्र) है आत्मा जिसका ऐसा राजा देवताओंका सदा पूजन करै देवताओंके समान गुरुजनोंका और आत्माके समान मित्रजनोंका पूजन करै ॥ ७१ ॥

प्रणिपातेनहिगुरून्संतोनचानवेष्टितः ।
कुर्वीताभिमुखान्देवान्भूत्यैसुकृतकर्मणाम्॥

भाषार्थ- वेदपाठी संयुक्त होकर राजा अपनी कीर्तिके अर्थ प्रमाणसे गुरु और सत्पुरुषोंको और उत्तम कर्मसे देवताओंको अपने अभिमुख (अनुकूल) करै॥७२॥

सद्भावेनहरेन्मित्रंसद्भावेनचबांधवान् ।
स्त्रीभृत्यौप्रेममानाभ्यांदाक्षिण्येनेतरंजनम्

भाषार्थ- श्रेष्ठभाव (प्रीति) से मित्रको और बंधुओंको प्रेमसे स्त्रीको मानसे भृत्य (सेवक) को चतुरतासे इतर जनों को वश करै ॥ ७३ ॥

बलवान्बुद्धिमान्शूरोयोहियुक्तपराक्रमी
वित्तपूर्णामहींभुंक्तेसभूपोभूपतिर्भवेत् ७४ ॥

भाषार्थ-जो राजा बलवान् और बुद्धिमान् और शूरवीर और युक्त पराक्रमी है वह राजा द्रव्यसे पूर्ण पृथ्वीको भोगता है और वही राजा भूमिका पति होता है ॥ ७४ ॥

पराक्रमोबलंबुद्धिःशौर्यमेतेवरागुणाः ।
एभिर्हीनोन्यगुणयुग्महीभुक्सधनोपिच ७५

भाषार्थ-पराक्रम-बल-बुद्धि शूरता ये गुण उत्तम हैं इन गुणोंसे हीन और इतर गुणोंसे युक्त राजा बहुत धनवाला होय तो भी ७५॥

महींस्वल्पांनैवभुंक्तेद्रुतंराज्याद्विनश्यति ।
महाधनाच्चनृपतेर्विभात्यल्पोपिपार्थिवः ७६

भाषार्थ- पूर्वोक्त राजा स्वल्पभी मही (भूमि) को नही भोगता और शीघ्र राज्यसे भ्रष्ट होता है और महाधनी राजा अल्पही शोभाको प्राप्त होता है ॥ ७६ ॥

अव्याहताज्ञस्तेजस्वीएभिरेवगुणैर्भवेत् ।
राज्ञःसाधारणास्त्वन्येनशक्ताभूप्रसाधने ॥

भाषार्थ-पूर्वोक्त गुणोंसेयुक्त राजा अनाहताज्ञ (जिसकी आज्ञाका कोईभी अवलंघन न करै) और तेजस्वी होता है और राजाके साधारण गुण पृथ्वीके वश करनेमें समर्थ नही हैं७७॥

खनिः सर्वधनस्येयंदेवदैत्यविमर्दिनी ।
भूम्यर्थेभूमिपतयःस्वात्मानंनाशयंत्यपि ॥

भाषार्थ-यह पृथ्वी संपूर्ण धनोंकी खानि है और देव दैत्योंकी नाशक है क्योंकि भूमिके अर्थ भूमिपति (राजा) अपने आत्मा कोभी नष्ट करदेते हैं ॥ ७८॥

उपभोगायचधनंजीवितंयेनरक्षितम् ।
नरक्षितातुभूर्येनकिंतस्यधनजीवितैः ७९॥

भाषार्थ-जीवितकी रक्षाकारक धन उपभोगके अर्थ है जिस राजाने भूमिकी रक्षा नही की उसके धन और जीवनसे क्या है ॥७९॥

नयथेष्टव्ययायालंसंचितंतुधनंभवेत् ।
सदागमाद्विनाकस्यकुबेरस्यापिनांजसा ॥

भाषार्थ-सदा प्राप्तिके विना कुबेरकाभी धन सुख पूर्वक इच्छाके अनुसार व्यय (खर्च) करनेको समर्थ नहीं होता और तो किसका संचितधन समर्थ होगा ॥८०॥

पूज्यस्त्वेभिर्गुणैर्भूपोनभूपःकुलसंभवः ।
नकुलेपूज्यतेयादृग्बलशौर्यपराक्रमैः ॥८१

भाषार्थ-इन गुणोंसेही राजा पूजाके योग्य होता है और उत्तम कुलके उत्पन्न होनेसे पूज्य नही होता क्योंकि जैसा बलबुद्धि पराक्रमसे पूजित होता है ऐसा कुलसे नही होता ॥ ८१ ॥

लक्षकर्षमितोभागोराजतोयस्यजायते ।
वत्सरेवत्सरेनित्यंप्रजानांत्वविपीडनैः॥८२

सामंतःसनृपःप्रोक्तोयावल्लक्षत्रयावधि ।
तदूर्ध्वंदशलक्षांतोनृपोमांडलिकःस्मृतः८३

तदूर्ध्वंतुभवेद्राजायाद्विंशतिलक्षकः ।
पंचाशल्लक्षपर्यंतोमहाराजःप्रकीर्तितः ॥८४

भाषार्थ-जिस राजाके राज्यमें वर्ष वर्षमें प्रजाकी पीडाकी पीडाके भी एक लक्षराजा-

का भाग संचित होता है उसे सामन्त कहते हैं उससे अधिक तीन लक्षपर्यंत जिसका भाग संचित हो वह राजा मांडलिक कहाता है और दश १० लक्षसे बीसलक्ष पर्यंतका भागी राजा और बीसलक्षसे पचासलक्ष पर्यंत-का भागी महाराजा होता है॥८२॥८३॥८४॥

ततस्तुकोटिपर्यंतःस्वराट्संम्राट्ततःपरम् ।
दशकोटिमितोयावद्विराट्तुतदनंतरं ।८५॥

पंचाशत्कोटिपर्यंतंसार्वभौमस्ततःपरं
सप्तद्वीपाचपृथिवीयस्यवश्याभवेत्सदा ८६

भाषार्थ-दशलक्षसे कोटि पर्यंतका भागी स्वराट् और एककोटिसे दशकोटिपर्यंतका भागी सम्राट् और दशकोटिसे पचास कोटि पर्यंतका भागी विराट् और जिसके सप्तद्वीपा पृथ्वी वशमें हो वह राजा सार्वभौम होता है ॥८५॥८६॥

स्वभागभृत्यादास्यत्वेप्रजानांचनृपःकृतः
ब्रह्मणास्वामिरूपस्तुपालनार्थंहिसर्वदा ॥

भाषार्थ-राजाके भागरूप भृति (वेतन)के देनेसे प्रजाओंका दासरूप और प्रजाओंके पालनसे स्वामिरूप राजा ब्रह्माने किया है ८७

सामंतादिसमायेतुभृत्याअधिकृताभुवि
तेनुसामंतसंज्ञास्यूराजभागहराःक्रमात् ॥

भाषार्थ-जो भूमिमें अधिकृत भृत्य (नौक-र) सामंतादिक तुल्य है और राजाके भागको ग्रहण करते हैं वे अनुसामंतक होते हैं ८८

सामंतादिपदभ्रष्टास्तत्तुल्यंभृतिपोषिताः
महाराजादिभिस्तेतुहीनसामंतसंज्ञकाः ॥

भाषार्थ-जो सामंत आदि पदवीसे तौ महाराजादिकोंने भ्रष्ट करदिये हैं परंतु सामंतों-के समान भृति (नौकरी)को भोगते हैं वे हीन सामंत कहाते हैं ॥ ८९ ॥

शतग्रामाधिपोयस्तुसोपिसामंतसंज्ञकः ॥
शतग्रामेचाधिकृतोनुसामंतोनृपेणसः॥९०।

भाषार्थ-शत ग्रामोंका जो अधिपति वहभी सामंत कहाता है और ग्रामोंपर जो राजाका अधिकारी (नियमित) है वह अनु-सामंत कहाता है ॥ ९० ॥

अधिकृतोदशग्रामेनायकःसचकीर्तितः ॥
आशापालोयुतग्रामभागभाक्चस्वराडपि

भाषार्थ-दश ग्रामोंमें जो अधिकृत वह नायक कहाता है दशसहस्रग्रामोंके भागोंका जो भागी वह आशापाल और सुराट्भी कहाता है ॥ ९१ ॥

भवेत्क्रोशात्मकोग्रामोरूप्यकर्षसहस्रकः ।
ग्रामार्धकपल्लिसंज्ञंपल्ल्यर्धकुंभसंज्ञकम् ९२॥

भाषार्थ-एक कोशका जिसका प्रमाण और एकहजार रुपयेका जिसमें राजाका भाग हो उसे ग्राम कहते हैं और ग्रामका आधापल्ली और पल्लीका आधा कुंभ होता है ॥ ९२ ॥

करैः पंचसहस्रैर्वाक्रोशः प्रोक्तः प्रजापतेः
हस्तैश्चतुःसहस्रैर्वा मनोः क्रोशस्यविस्तरः

भाषार्थ-पांच हजार हाथका कोशविधि ब्रह्माका होता है और चार हजारका मनुका होता है ॥ ९३ ॥

सार्धद्विकोटिहस्तैश्चक्षेत्रंक्रोशस्यब्रह्मणः॥
पंचविंशशतैःप्रोक्तंक्षेत्रताद्विनिवर्तनैः॥९४॥

भाषार्थ-अढ़ाईकोटि क्रोशका ब्रह्माका क्षेत्र पच्चीशसे क्रोशका क्षेत्र विनिवर्त्तनोंसे मनु आदिकोंने कहा है ॥ ९४ ॥

मध्यमामध्यमंपर्वदैर्ध्यंयच्चतदंगुलम् ।
यवोदरैरष्टभिस्तद्दैर्घ्यंस्थौल्यंतुपंचभिः ९५

भापार्थ–मध्यमा बीचकी अंगुलीके मध्यम पूर्व अर्थात् मध्यमरेखाओंके बीचके भागकी तुल्य और आठ जौ लंबा और पांच जौ मोटा उसे अंगुल कहते हैं ॥ १५ ॥

चतुर्विंशत्यंगुलैस्तैः प्राजापत्यः करः स्मृतः
सश्रेष्ठोभूमिमानेतुतदन्यास्त्वधमामताः ॥

भापार्थ–चौबीस २४ अंगुलोंका कर प्रजापाति कहाता है वही कर पृथिवी प्रमाणों में श्रेष्ठ है और इतर कर अधम है ॥ १६ ॥

चतुःकरात्मकोदंडोलघुः पंचकरात्मकः ।
तदंगुलंपंचयवैर्मानवंमानमेवतत् ॥ १७॥

भापार्थ–चार हाथका दंड लघु और पांच हाथका दंड दीर्घ होता है इस करके अंगुल पांच यवके होते हैं क्योंकि ये पूर्वोक्त दंड मनुके मानसे हैं ॥ १७ ॥

वसुपण्मुनिसंख्याकैर्यवैर्दंडः प्रजापतेः ।
यवोदरैः षट्शतैस्तुमानवोदंडउच्यते १८

भापार्थ–सातसौ अड्सठ ७६८ यवोंका प्रजापतिका और ६०० छसे यवोंका मनुका दंड होता है ॥ १८ ॥

पंचविंशतिभिर्दंडैरुभयोस्तुनिवर्तनम् ।
त्रिंशच्छतैरंगुलैर्यवैस्त्रिपंचसहस्रकैः ॥ १९

भापार्थ–पचीशसे २५०० दंडोंका दोनोंका निवर्त्तन होताहै अथवा तीससे ३००० अंगुलोंका अथवा तीन सहस्रयवोंका अथवा पांच सहस्रयवोंका दोनोंका दंड क्रमसे होता है१९

सपादशतहस्तैश्चमानवंतुनिवर्तनम् ।
ऊनविंशतिसाहस्रैर्द्विशतैश्चयवोदरैः १००

भापार्थ–सवासै १२५ हाथका मानव (मनुका) निवर्त्तन अथवा उन्नीशहजार दोसौ १९२००यवोंका पूर्वोक्त निवर्त्तन होता है१००

चतुर्विंशशतैरेवह्यंगुलैश्चनिवर्तने ।
प्राजापत्यंतुकथितंशतैश्चैवकरैःसदा ॥१॥

भापार्थ–चौवीशसौ २४०० अंगुलोंका अथवा सौ १०० करोंका प्रजापतिका निवर्त्तन कहा है॥ १ ॥

सपादषट्शतंदंडाउभयोश्चनिवर्तने ।
निवर्तनान्यपिसदोभयोर्वैपंचविंशतिः ॥२॥

भापार्थ–सवाछेसे ६२५ दंड दोनौके निवर्तनमें होते हैं निवर्त्तनभी दोनौके सदा पचीश होते हैं ॥ २ ॥

पंचसप्ततिसाहस्रैरंगुलैः परिवर्तनं ।
मानवंषष्ठिसाहस्रैः प्राजापत्यंतथांगुलैः ३॥

भापार्थ– पंचहत्तर हजार ७५००० अंगुलोंका मानव और साठहजार ६०००० अंगुलोंका प्रजापतिका परिवर्तन होता है ॥ ३ ॥

पंचविंशाधिकैर्हस्तैरेकत्रिंशच्छतैर्मनोः ।
परिवर्तनमाख्यातंपंचविंशशतैःकरैः ॥ ४॥

भापार्थ–सत्राइकत्तीश३१२५ शत हस्तोंका मनुका और पचीशसै२५०० हस्तोंका प्रजापतिका परिवर्त्तन कहा है ॥ ४॥

प्राजापत्यंपादहीनचतुर्लक्षयवैर्मनोः ।
अशीत्यधिकसाहस्रचतुर्लक्षयवैःपरम्॥५॥

भापार्थ–तीनलाख यवोंका प्रजापतिका और चारलाख अस्सीहजार ४८०००० यवोंका मनुका निवर्तन होता है ॥ ५ ॥

निवर्तनानिद्वात्रिंशन्मनुमानेनतस्यवै ।
चतुःसहस्रहस्ताःस्युर्दंडाश्चाष्टशतानिहि ॥

भापार्थ–मनुके मानसे वत्तीस निवर्त्तनोंके चार हजार हाथ और आठसे दंड होते हैं ॥ ६ ॥

पंचविंशतिभिर्दंडैर्भुजःस्यात्परिवर्तने ।
करैरयुतसंख्याकैःक्षेत्रं तस्यप्रकीर्तितं ७ ॥

भाषार्थ—पच्चीसदंडोंकी परिवर्त्तनकी भुज होती है दश हजार हाथोंका परिवर्त्तनका क्षेत्र होताहै ॥ ७ ॥

चतुर्भुजैःसमंप्रोक्तंकष्टभूपरिवर्तनम् ।
प्राजापत्येनमानेनभूभागहरणंनृपः ॥ ८ ॥

सदाकुर्याच्चस्वापत्तौमनुमानेननान्यथा ।
लोभात्संकर्षयेद्यस्तुहीयतेसप्रजोनृपः ९

भाषार्थ—भूमिका परिवर्त्तन चतुर्भुजके सम कहा है राजा पृथिवीके भागका ग्रहण प्रजापतिके प्रमाणसे करै और अपनी आपत्तिके समय मनुके मानसे करै अन्यथा नही जो राजा लोभसे प्रजाको संकर्षित अर्थात् प्रजासे अधिक कर लेता है वह प्रजासहित हीनताको प्राप्त होता है ॥ ८ ॥ ९॥

नदद्याद्व्यंगुलमपिभूमेःस्वत्वानिवर्तनं ।
वृत्त्यर्थंकल्पयेद्वापियावद्ग्राहस्तुजीवति १०

भाषार्थ—दो अंगुलकी भूमिको भी कर-(भाग)के विना न छोडै अथवा अपनी आजीविकाके अर्थ भागका ग्रहण करै—क्यों कि इतनकर करका ग्रहण करैगा तबतकही जीवैगा ॥ १० ॥

गुणीतावद्देवतार्थंविसृजेच्चसदैवहि ।
आरामार्थंगृहार्थंवादद्याद्दृष्ट्वाकुटुंबिनम् ११

भाषार्थ—गुणवान् राजा देवताओंके मंदिर बगीचेके निमित्त और कुटुंबवारे मनुष्यको देखकर गृहके निमित्त पृथ्वीको देदे ११॥

नानावृक्षलताकीर्णेपशुपक्षिगणावृते ।
सुबहूदकधान्येचतृणकाष्ठसुखंसदा १२ ॥

आसिंधुनौगमाकूलेनातिदूरमहीधरे ।
सुरम्यसमभूदेशेराजधानींप्रकल्पयेत्॥ १३

भाषार्थ—अपनी राजधानी राजा ऐसी जगह बनावे जहां नानाप्रकारके वृक्ष और लता हों और पशु और पक्षियोंके गणसे युक्त देश हो और जिसमें अधिक अन्न और जल हो और जिसमें काष्ठ और तृणका सुख हो और समुद्रपर्यन्त नावके गमनका जहां अनुकूल हो और जहां पर्वत समीपहो रमणीक और समभूमि जहां हो ॥१२॥ ॥१३॥

अर्धचंद्रांवर्तुलांवाचतुरस्रांसुशोभनाम् ।
सप्राकारांसपरिखांग्रामादीनांनिवेशिनीं १४

भाषार्थ—अर्धचंद्रके आकार हो और गोल अथवा चौकोर हो शोभायमान हो आकार रहित हो परिखा (खाई) युक्तहो ग्राम और पुर जिसके मध्य वसते हो ऐसी राजधानी जा बनावै ॥ १४ ॥

सभामध्यांकूपवापीतडागादियुतांसदा ।
चतुर्दिक्षुचतुर्द्वारांसुमार्गारामवीथिकाम् १५

भाषार्थ—और सभा जिसके मध्यमें हो कूप-वापी (बावडी)तलाव इनसे सदा युक्त हों और चारों ओर दिशामें जिसके चार द्वार हो और मार्ग बगीचे-गली जिसमें सुंदर हों ॥ १५ ॥

दृढसुरालयमठपांथशालाविराजिताम् ।
कल्पयित्वावसेत्तत्रसुगुप्तःसप्रजोनृपः १६

भाषार्थ—दृढ है देवस्थान-मठ-धर्मशाला इनसे शोभित ऐसी पूर्वोक्तराजधानीको रचकरि गुप्त होकर प्रजासहित राजा उसमें वसै—१६

राजगृहंसभामध्यंगवाश्वगजशालिकम् ।
प्रशस्तवापीकूपादिजलयंत्रैःसुशोभितम् १७

भाषार्थ–सभा जिसके मध्यमें हो, गौ –अश्व–हस्ती इनकी शाला जिसमें हो और उत्तम–बावड़ी कूप आदि जलयंत्रोंसे शोभित राजा गृहको बनावे ॥१७॥

सर्वतःस्यात्समभुजंदक्षिणोच्चमुदङ्नतं ।
शालांविनानैकभुजंतथाविषमबाहुकम् १८॥

भाषार्थ–जिसकी चारों भुजासम हों दक्षिणकी ओर ऊंचा और उत्तरको नीचा हो और शालाके विना एक भुज (पाखा) विषम भुज न हो ॥१८ ॥

प्रायःशालानैकभुजाचतुःशालंविनाशुभा ।
शस्त्रास्त्रधारिसंयुक्तंप्राकारंसुष्टुयंत्रकं १९

भाषार्थ–बहुधा शाला एकभुज नहीं होती चौकोरके विनाभी शुभहै शस्त्र और अस्त्र धारियोंसे संयुक्त और उत्तम यंत्रोंसे संयुक्त प्राकार (परकोटा) बनावे ॥ १९ ॥

सत्रिकक्षचतुर्द्वारंचतुर्दिक्षुसुशोभनम् ।
दिवारात्रौसशस्त्रास्त्रैःप्रतिकक्षासुगोपितं२०

चतुर्भिःपंचभिःषड्भिर्यामिकैःपरिवर्तकैः ।
नानागृहोपकार्याट्टसंयुतंकल्पयेत्सदा २१

भाषार्थ–तीन कक्षा (श्रेणी) से युक्त–चारों दिशाओंसे चार शोभायमान द्वार हों रात्रि दिन शस्त्र और अस्त्रों संपूर्ण कक्षाओंमें गुप्त हो ॥२०॥ चार पांच छ परिवर्त्तक (चौकीदार) प्रहर २ में घूमनेवाले हों जिसमें और नाना प्रकार की सामग्रीसहित अट्टाअटारी संयुक्त गृहको बनावे ॥ २१ ॥

वस्त्रादिमार्जनार्थंचस्नानार्थंयजनार्थकम् ।
भोजनार्थंचपाकार्थंपूर्वस्यांकल्पयेद्गृहान्

भाषार्थ–वस्त्रोंका धोना–स्नान–पूजन–भोजन और पाकके अर्थ पूर्वदिशामें घर बनावे ॥ २२ ॥

निद्रार्थंचविहारार्थंपानार्थंरोदनार्थकं ।
धान्यार्थंघरट्टार्थंदासीदासार्थमेवच ॥२३

उत्सर्गार्थंगृहान्कुर्याद्दक्षिणस्यामनुक्रमात् ।
गोमृगोष्ट्रगजाद्यर्थंगृहान्प्रत्यक्प्रकल्पयेत् ॥

भाषार्थ– शयनक्रीडाके–पीनेके–रोनेके अन्नके घरट (पीसना) के–दासीके दासके और मलमूत्रके त्यागके अर्थ दक्षिणदिशामें गृहबनावे और गौ–मृग–ऊंट–हस्ती इनके अर्थ पश्चिममें गृह बनावे ॥२३॥२४॥

रथवाज्यस्त्रशस्त्रार्थंव्यायामायामिकार्थकम्।
वस्त्रार्थकंतुद्रव्यार्थंविद्याभ्यासार्थमेवच२५

उदग्गृहान्प्रकुर्वीतसुगुप्तान्सुमनोहरान् ।
यथासुखानिवाकुर्याद्गृहाण्येतानिवैनृपः २६

भाषार्थ–अश्व–अस्त्र–शस्त्र–व्यायाम (कसरत) आयाम (घूमना) वस्त्र–द्रव्य–विद्याके अभ्यासके अर्थ उत्तरदिशामें गृहोंकी रचना करावे अथवा अपने सुखके अनुसार राजा पूर्वोक्त गृहोंको बनावे ॥२५॥२६॥

धर्माधिकरणंशिल्पशालांकुर्यादुदग्गृहात् ।
पंचमांशाधिकोच्छ्रायाभित्तिर्विस्तारतोगृहे

भाषार्थ–धर्माधिकार (कचहरी) शिल्पशाला इन्द गृहसे उत्तरदिशामें बनावे गृहके भागसे पंचम भाग ऊंची भित्ति (दिवाल) बनावे ॥ २७ ॥

कोष्ठविस्तारषष्ठांशस्थूलासाचप्रकीर्तिता ।
एकभूमेरिदंमानमूर्ध्वमूर्ध्वंसमततः ॥२८॥

भाषार्थ–कोठके विस्तारसे षष्ठांश (छठा भाग) स्थूल भित्ती कही है–यह प्रमाण एक भूमि (एक मनले) स्थानका है इसके आगे इसी प्रकार वृद्धि कही है ॥ २८ ॥

स्तंभैश्चभित्तिभिर्वापिपृथक्कोष्ठानिसंन्यसेत्।
त्रिकोष्ठंपंचकोष्ठंवासप्तकोष्ठंगृहंस्मृतम् २९॥

भाषार्थ-स्तंभ और भित्तियोंके पृथक् २ कोठे बनावै तीन पांच अथवा सात हैं कोठे जिसमें ऐसा गृह कहा है ॥ २९ ॥

द्वारार्थमष्टधाभक्तंद्वारस्यांशौतुमध्यमौ ।
द्वौद्वौज्ञेयौचतुर्दिक्षुधनपुत्रप्रदौनृणाम् ३०॥

भाषार्थ-द्वारके वास्ते आठ भाग घरके करै और द्वारके भाग मध्यमहों चारों दिशाओंमें द्वारके अर्थ दो दो धन-पुत्रके दाता हैं ॥ ३० ॥

तत्रैवकल्पयेद्द्वारंनान्यथातुकदाचन ।
वातायनंपृथक्कोष्ठेकुर्याद्याद्दक्सुखावहम् ३१

भाषार्थ-उन्ही मध्यभागोंमें द्वार बनावे अन्यथा कदापि न बनावे सब कोठोंमें जैसे सुखके दाता हों इस प्रकार पृथक् २ वातायन (झरोखे) बनावै ॥ ३१ ॥

अन्यगृहद्वारविद्धंगृहद्वारंनचिंतयेत्।
वृक्षकोणस्तंभमार्गपीठकूपैश्चवेधितम्॥ ३२।

भाषार्थ-इतरगृहोंके द्वार-और वृक्ष कोणस्तंभ मार्ग चौंतरा कूप इनसे विंधा अर्थात् इनके सामने गृहका द्वार न बनावै ॥ ३२॥

प्रासादमंडपद्वारेमार्गवेधोनविद्यते ।
गृहपीठंचतुर्थांशमुद्रायस्यप्रकल्पयेत् ॥ ३३

भाषार्थ-मंदिर और मंडपके द्वारमें मार्गका वेध नही है गृहपीठके चतुर्थांशका जिस मंडपका प्रमाण हो ॥ ३३ ॥

प्रासादानांमंडपानामर्धांशंवापरेजगुः ।
परवातायनैर्विद्धंनापिवातायनंस्मृतं॥ ३४॥

भाषार्थ-कोई ऋषि प्रासाद और मंडपका अर्द्ध भागके प्रमाणसे द्वारको कहतेहैं दूसरेके गवाक्ष (झरोखे) से विंधा गवाक्ष न हो ॥ ३४ ॥

विस्तारार्धांशमूलोच्चाछादिःखर्परसंभवा ।
पतितंतुजलंतस्यांसुखंगच्छतिवाप्यधः ३५

भाषार्थ-विस्तारके भागसे अर्द्ध है मूलोच्चभाग जिसका ऐसी खपरोंकी छाल बनावै जिसमें गिरा जल सुखसे नीचे गिरै॥३५॥

हीनानिम्नाछदिर्नस्यात्ताहक्कोष्ठस्यविस्तरः
स्वोच्छ्रायस्यार्धमूलोवाप्राकारःसममूलकः

भाषार्थ-जैसा कोष्ठका विस्तार हो उससे हीन और नीचा न हो अथवा अपनी उंचाईसे आधा हो अथवा सम हो विस्तार जिसका ऐसा प्राकार (परकोटा)हो॥३६॥

तृतीयांशकमूलोवाह्युच्छ्रायार्धप्रविस्तरः ।
उच्छ्रितस्तुतथाकार्योदस्युभिर्नावलंघ्यते ॥

भाषार्थ-तृतीय भाग है मूल जिसका ऐसा ऊंचाईसे आधा विस्तार हो और ऊंचा ऐसा हो जो चोरोंसे न लंघा जाय ॥ ३७ ॥

यामिकैरक्षितोनित्यंनालिकास्त्रैश्चसंयुतः ।
सुबहुदृढगुल्मश्चसुगवाक्षप्रणालिकः॥३८॥

भाषार्थ-चौकीदारोंसे नित्य रक्षित नालिकास्त्रों (तोपों) से संयुक्त और अच्छीतरह दृढहै गुल्म और गवाक्षोंकी प्रणाली जिसमें ऐसा घर बनावै ॥ ३८ ॥

स्वहीनप्रतिप्राकारोह्यसमीपमहीधरः ।
परिखाचततःकार्याखाताद्द्विगुणविस्तरा ३९

भाषार्थ-परकोटेसे हीन प्रति प्राकार ऐसा हो जिसके समीप पर्वत न हो और खातसे द्विगुणित है विस्तार जिसका ऐसी परिखा हो ॥ ३९ ॥

नातिसमीपप्राकाराह्यगाधसलिलाशुभा
युद्धसाधनसंभारैःसुयुद्धकुशलैर्विना ४० ॥

भाषार्थ–नहीं है अत्यंत समीप प्राकार जिसके और अगाध है जल जिसमें ऐसी परिखा हो और युद्धकी सामग्री और युद्ध करने में कुशल पुरुषोंके विना दुर्ग श्रेष्ठ नहीं ४०

नश्रेयसेदुर्गवासोराज्ञःस्याद्बंधनायसः ।
राज्ञाराजसभाकार्यासुगुप्तासुमनोरमा ४१

भाषार्थ–पूर्वोक्त दुर्ग (किला) राजाका कल्याण कारी नहीं प्रत्युत बंधनका हेतु है और राजा ऐसी राजसभा बनावे जो अत्यंत गुप्त और मनोहर हो ॥ ४१ ॥

त्रिकोष्ठैःपंचकोष्ठैर्वासप्तकोष्ठैःसुविस्तृता ॥
दक्षिणोदक्तयादीर्घाप्राक्प्रत्यगृद्विगुणाथवा

भाषार्थ–जो सभा तीन-पांच-सात-कोठोंसे सुविस्तृत हो और दक्षिण उत्तर लंबी अथवा पूर्वपश्चिम द्विगुण हो ॥४२॥

त्रिगुणावायथाकाममेकभूमिर्द्विभूमिका ।
त्रिभूमिकावाकर्तव्यासोपकार्याशिरोगृहा ॥

भाषार्थ–अथवा अपनी इच्छानुसार त्रिगुणा हो और एक मंजली अथवा द्वि मंजली अथवा त्रिमंजली हो और जिसके ऊपरका गृह संपूर्ण युद्ध आदिकी सामग्री सहित हो ॥ ४३ ॥

परितःप्रतिकोष्ठेतुवातायनविराजिता ।
पार्श्वकोष्ठात्तुद्विगुणोमध्यकोष्ठस्यविस्तरः

भाषार्थ–चारों ओर प्रति कोष्ठमें गवाक्षोंसे विराजमानहो और पार्श्व कोठेसे मध्यकोठेका द्विगुण विस्तार हो ॥ ४४ ॥

पंचमांशाधिकंत्वौच्चंमध्यकोष्ठस्यविस्तरात्।
विस्तारेणसमंत्वौच्चंपंचमांशाधिकंतुवा ४५

भाषार्थ–विस्तारसे पंचम भाग उंचाई मध्य कोष्ठकी हो अथवा विस्तारके समान ऊंची हो ऐसी सभा राजा बनावै ॥ ४५ ॥

कोष्ठकानांचभूमिर्वाछदिर्वातत्रकारयेत् ।
द्विभूमिकेपार्श्वकोष्ठेमध्यमंत्वेकभूमिकम्४६

भाषार्थ–कोठेकी छत पृथिवीकी हो अथवा खपरैलकी हो पार्श्वके कोठे दुमंजले और मध्यमका कोष्ठ (कमरा) इकमंजला हो ॥ ४६ ॥

पृथक्स्तंभांतसत्कोष्ठाचतुर्मार्गगमाशुभा ।
जलोर्ध्वपातियंत्रैश्चयुतासुस्वरयंत्रकैः४७॥

भाषार्थ–पृथक् २ हैं स्तंभ जिनमें ऐसे उत्तम कोष्ठ चारों भागोंमें जिसके दरवाजे हों और फुवारे और बाजोंसे सुशोभित हो ॥ ४७ ॥

वातप्रेरकयंत्रैश्चयंत्रैःकालप्रबोधकैः ।
प्रतिष्ठिताचस्वादर्शैस्तथाचप्रतिरूपकैः ४८

भाषार्थ–वायुके प्रेरक और समयके बोधक यंत्रोंसे और उत्तम २ आदर्श (सीसे) और प्रतिरूप (तसवीर) इनसे शोभित हो ॥४८॥

एवंविधाराजसभामंत्रार्थाकार्यदर्शने ।
तथाविधामात्यलेख्यसभ्याधिकृतशालिका

भाषार्थ–ऐसी राजसभा कार्यके देखने और मंत्रके अर्थ हो और ऐसी ही मंत्री (सेवक) और सभाओंके अधिकारियोंकी हो ॥ ४९ ॥

कर्तव्याश्चपृथक्त्वेतास्तदर्थाश्चपृथक्पृथक्
शतहस्तमितांभूमिंत्यक्त्वाराजगृहात्सदा ॥

भाषार्थ–इन राजसभा आदिको पृथक् २ और इनके कार्यभी पृथक् २ हों और राजाके घरसे शतहस्त भूमिको छोडकर पूर्वोक्त सभाओंको बनावे ॥ ५० ॥

उदग्द्विशतहस्तांप्राक्सेनासंवेशनार्थिकाम्।
आराद्राजगृहस्यैवप्रजानांनिलयानिच ५१

भाषार्थ-पूर्व अथवा उत्तरदिशामें दोसै२०० हाथ गृहके अंतरसे सेनानिवास-और राजाके घरके समीप प्रजाके स्थान बनवावे ॥ ५१॥

सधनश्रेष्ठजात्यानुक्रमतश्चसदाबुधः।
समंताच्चचतुर्दिक्षुविन्यसेच्चततःपरम् ५२॥

भाषार्थ-धनी और उत्तम जाति इनके क्रमसे चारों तरफ और चारों दिशाओंमें गृहोंका विन्यास करावे ॥ ५२ ॥

प्रकृत्यनुप्रकृतयोह्याधिकारिगणस्ततः।
सेनाधिपाःपदातीनांगणःसादिगणस्ततः॥

भाषार्थ-प्रकृति(दिवान आदि)अनुप्रकृति (उत्तम सेवक) फिर अधिकारियोंके गण फिर सेनाके अधिपति-फिर पदाति (सिपाई) फिर सवार इस क्रमसे गृह बनावे ॥ ५३ ॥

साश्वश्चसगजश्चापिगजपालगणस्ततः।
बृहन्नालिकयंत्राणिततःस्वतुरगीगणः ५४

भाषार्थ-असवार-हाथिवान्-हस्तिके रक्षकोंका समूह-और बडे नालियोंका यंत्र-और उसके अनंतर-घोडियोंके समूह ॥ ५४ ॥

ततःस्वगोपककगणोह्यारण्यकगणस्ततः।
क्रमादेषांगृहाणिस्युःशोभनानिपुरेसदा ५५

भाषार्थ-इसके अनंतर गोपालोंके गण फिर वनवासी (भिल्ल) आदिकोंके गण-इस क्रमसे शो। यमान इनके घर पुरमें सदा बनावे ॥ ५५ ॥

पांथशालाततःकार्यासुगुप्तासुजलाशया।
सजातीयगृहाणांहिसमुदायेनपंक्तितः॥५६

भाषार्थ-फिर पांथशाला सुगुप्त और जलाशय(कूप)आदि सुंदर हैं जिसमें ऐसी बनावे और फिर सजातीय गृहोंके समुदाय (मुहल्ले) पृथक् २ बनावे ॥ ५६ ॥

निवेशनंपुरेग्रामेप्राग्उदङ्मुखमेववा।
सजातिपण्यनिर्वहैरापणेपण्यवेशनम् ५७॥

भाषार्थ-पुर और ग्राममें पूर्व और उत्तराभिमुख स्थान बनावे और आपण (बाजार) में सजातियोंकी पृथक्२ दुकान बनावे५७॥

धनिकादिक्रमेणैवराजमार्गस्यपार्श्वयोः।
एवंहिपत्तनंकुर्याद्ग्रामंचैवनराधिपः ॥५८॥

भाषार्थ-धनिक आदिके क्रमसे राजमार्ग दोनों पार्श्वोंमें पण्य(दुकानें) बनावे इस प्रकार पत्तन और ग्रामको राजा बनावे ॥ ५८ ॥

राजमार्गास्तुकर्तव्याश्चतुर्दिक्षुनृपगृहात्।
उत्तमोराजमार्गस्तुत्रिंशद्धस्तमितोभवेत् ॥

भाषार्थ-राजगृहसे चारोंदिशाओंमें राजमार्ग(सडक)बनावे और तीस हाथका राजमार्ग उत्तम है ॥ ५९॥

मध्यमोविंशतिकरोदशपंचकरोधमः।
पण्यमार्गास्तथाचैतेपुरग्रामादिपुस्थिताः॥

भाषार्थ-बीस हाथका मध्यम और पंद्रह हाथका राजमार्ग अधम होता है और पण्यके मार्गभी ऐसीही पुर और ग्रामादिकोंके होते हैं ॥ ६० ॥

करत्रयात्मिकापद्यावीथिःपंचकरात्मिका।
मार्गोदशकरःप्रोक्तोग्रामेषुनगरेषुच ॥६१॥

भाषार्थ-तीन हाथकी पद्या और पांच हाथकी वीथी और दशहाथका मार्ग ग्राम और नगरोंमें कहा है ॥ ६१ ॥

प्राक्पश्चाद्दक्षिणोदक्तान्ग्राममध्यात्प्रकल्पयेत् ॥
पुरंदृष्ट्वाराजमार्गान्सुबहून्कल्पयेन्नृपः ६२॥

भाषार्थ-पूर्वसे पश्चिम और दक्षिणसे उत्तर ग्रामके मध्यसे राजमार्ग आदिको रचे और उन्हें पुरके अनुसार बहुत बनावे ॥ ६२ ॥

नवीथिंनचपद्यांहिराजधान्यांप्रकल्पयेत्।
षड्योजनांतरेरण्येराजमार्गंतुचोत्तमम् ६३।

भाषार्थ-तीन और पांच हाथका मार्ग राजधानीमें न बनावे चोबिसकोस वनके अंतरसे राजमार्ग उत्तम होता है ॥ ६३ ॥

कल्पयेन्मध्यमंमध्येतयोर्मध्येतथाधमम्।
दशहस्तात्मकंनित्यंग्रामेग्रामेनियोजयेत् ॥

भाषार्थ-और वनके मध्यमें बारहकोसके अंतरमें मध्यम और उत्तमसे भी मध्यममें अधम मार्ग बनावे और दश हाथका मार्ग ग्राम ग्राममें हो ॥ ६४ ॥

कूर्मपृष्ठामार्गभूमिःकार्याग्राम्यैःसुसेतुका।
कुर्यान्मार्गान्पार्श्वखातान्निर्गमार्थंजलस्यच

भाषार्थ-मार्गकी भूमि कछवेकी पीठके समान और उत्तम पुल हैं जिसमें ऐसी बनानी और जलके गमनके निमित्त दोनों पार्श्वोंमें खाई जिसमें ऐसे मार्ग बनावे ॥ ६५ ॥

राजमार्गमुखानिस्युर्गृहाणिसकलान्यपि।
गृहपृष्ठेचदावीथिंमलनिर्हरणस्थलम् ॥६६

भाषार्थ-राजमार्गमें हैं दरवाजे जिनके ऐसे संपूर्ण गृह बनावे और गृहके पिछवारे मल आदिके दूरकरनेकी गली बनावे॥६६॥

पंक्तिद्वयगतानांहिगेहानांकारयेत्तथा।
मार्गान्सुधाशर्करैर्वाघटितान्प्रतिवत्सरम् ॥

भाषार्थ-दोनों पंक्तियोंमे विद्यमान गृहोंके मार्ग ऐसे प्रतिवर्ष बनावे जो चूना शर्करा (कंकर) आदिसे कूटा हो ॥ ६७ ॥

अभियुक्तनिरुद्धैर्वाकुर्यात्ग्राम्यजनैर्नृपः।
ग्रामद्वयांतरेचैवपांथशालाःप्रकल्पयेत् ६८

भाषार्थ- अभियुक्त (मजूर) निरुद्ध (कैदी) ऐसे ग्रामीणोंसे मार्गको बनावे और ग्रामोंकी मध्यमें पांथशाला बनावे ॥ ६८ ॥

नित्यंसंमार्जितांचैवग्रामपैश्चसुगोपिताम्।
तत्रागतंतुसंपृच्छेत्पांथंशालाधिपःसदा ६९

भाषार्थ-ग्रामके अधिपतियोंसे पांथशालाको प्रतिदिन संमार्जित (स्वच्छ) रक्खै और उस पांथशालामें आए पथिकको उक्त शालाका अधिपति यह पूछे ॥ ६९ ॥

मयातोसिकुतःकस्मात्कगच्छसिऋतंवद।
ससहायोऽसहायोवाकिंशस्त्रःकिंसवाहनः ॥

भाषार्थ-कहांसे आयेहो, और किस हेतुसे और कहां जाते हो और कौन संगहै अथवा एका की हो और कौन तुम्हारे पास शस्त्र है और कौन तुम्हारे वाह (सवारी) है यह सत्य बताओ ॥ ७० ॥

काजातिःकिंकुलंनामस्थितिःकुत्रास्तितेचिरं
इतिपृष्ट्वालिखेत्सायंशस्त्रंतस्यप्रगृह्यच ॥७१

भाषार्थ-और कौन जाति कुल नाम है और कहांके वासी हो यह पूछे और उसके शस्त्रको ग्रहण करके सायंकालके समय लिखले ॥ ७१ ॥

सावधानमनाभूत्वास्वापंकुर्वितिशासयेत्।
तत्रस्थान्गणयित्वातुशालाद्वारंपिधायच ॥

संरक्षयेद्यामिकैश्चप्रभातेतान्प्रबोधयेत्।
शस्त्रंदद्याच्चगणयेद्वारमुद्घाट्यमोचयेत् ७३

भाषार्थ-और सावधानतासे सोवो यह शिक्षा दे और वहांके टिकेहुए संपूर्ण मनुष्योंको गिणकरि और शालाके दरवाजेको लगाकरि चौकीदारोंसे रक्षा करावै और प्रातःकाल जगवादे और शस्त्रकोदे और दरवाजे खोलकरि प्रभात छोड़दे॥७२॥७३॥

कुर्यात्सहायंसीमांतंतेषांग्राम्यजनस्सदा।
प्रकुर्याद्दिनकृत्यंतुराजधान्यांवसन्नृपः॥७४

भाषार्थ-और पथिकोंकी सीमातक ग्रामके मनुष्य रक्षा करै और राजधानीमें वसता हुआ राजा दिनमें करने योग्य कर्म करै ७४

उत्थायपश्चिमेयामेमुहूर्तद्वितयेनवै ।
नियतायश्चकत्यास्तिव्ययश्चनियतःकति ॥
कोशभूतस्यद्रव्यस्यव्ययःकतिगतस्तथा
व्यवहारेमुद्रितायव्ययशेषंकतीतिच॥७६॥
प्रत्यक्षतोलेखतश्चज्ञात्वाचाद्यव्ययःकति
भविष्यतिचतत्तुल्यंद्रव्यंकोशात्तुनिर्हरेत् ॥

भापार्थ-रात्रिके पश्चिमभागमें दो मुहूर्त (चार घडी) रात्रि से उठकरि कितना आजका आय (आमदनी) और कितना व्यय (खर्च) नियमित है और कोशमेंसे कितना व्यय हुआ है और व्यवहारमें कितना रुपया आया और कितना व्यय हुआ प्रत्यक्ष और लेखसे यह जानकर और आज कितना व्यय होगा यह निश्चय करिके उतनाही द्रव्य कोशमेंसे निकाले ॥ ७५ ॥ ७६ ॥ ७७ ॥

पश्चात्तुवेगनिर्मोक्षंस्नानंमौहूर्तिकंमतं।
संध्यापुराणदानैश्चमुहूर्तद्वितयंनयेत् ७८॥

भाषार्थ-पीछेसे मलका परित्याग करिके एक मुहूर्त्तमें स्नान करै और दोमुहूर्त्तको संध्या पुराण श्रवण और दानमें व्यतीत करै ॥ ७८ ॥

पारितोषिकदानेनमुहूर्तंतुनयेत्सुधीः ॥
धान्यवस्त्रस्वर्णरत्नसेनादेशविलेखनैः॥७९

भाषार्थ-और पारितोषिकके देनेसे मुहूर्त व्यतीत करै अन्न वस्त्र सुवर्ण रत्न सेना और देश इनके देखनेसे एक मुहूर्त व्यतीत करै॥ ७९ ॥

आयव्ययैर्मुहूर्तानांचतुष्कंतुनयेत्सदा ॥
स्वस्थचित्तोभोजनेनमुहूर्तंससुहृन्नृपः ८०॥

भाषार्थ-४ चार मुहूर्त्त आय और व्ययमें व्यतीत करै फिर मित्रोंसहित राजा भोजन करिके एक मुहूर्त्त स्वस्थचित्त रहै॥ ८० ॥

प्रत्यक्षीकरणाज्जीर्णनवीनानांमुहूर्तकम् ।
ततस्तुप्राड्विवाकादिबोधितव्यवहारतः ॥

भाषार्थ-पुरानी और नई वस्तुओंके देखनेमें एक मुहूर्त व्यतीत करै फिर एक मुहूर्त्त वकीलोंसे बोधित (जताये) व्यवहारसे व्यतीत करै ॥ ८१ ॥

मुहूर्तद्वितयंचैवमृगयाक्रीडनैर्नयेत् ॥
व्यूहाभ्यासैर्मुहूर्तंतुमुहूर्तंसंध्ययाततः ८२॥

भाषार्थ-दो मुहूर्त्त मृगयाकी क्रीडासे एक मुहूर्त्त व्यूहाभ्यास (कवायद) से फिर एक मुहूर्त्त संध्यासे व्यतीत करै८२॥

मुहूर्तंभोजनेनैवद्विमुहूर्तंचवार्तया ॥
गूढचारैः श्रावितयानिद्रयाष्टमुहूर्तकम् ८३

भाषार्थ-एकमुहूर्त्त भोजनसे दो मुहूर्त्त गूढचारी पुरुषने सुनाई हुई वार्त्ता व्यवहारसे और आठमुहूर्त्त निद्रासे व्यतीत करै ॥८३॥

एवंविहरतोराज्ञः सुखंसम्यक्प्रजायते
अहोरात्रंविभज्यैवंत्रिंशद्भिस्तुमुहूर्तकैः८४॥

नयेत्कालंवृथानैवनयेत्स्त्रीमद्यसेवनैः ।
यत्कालेह्युचितंकर्तुंतत्कार्यंद्रागशंकितम् ८५

भाषार्थ-इस प्रकार विहार करते राजाको सुख अच्छीतरह होताहै इस प्रकार तीस मुहूर्त्तसे रात्रिदिनका विभाग करके कालको व्यतीत करै स्त्री और मदिरादिसे कालको न वितावे और जिस समय जो करनेको उचित हो उसी समय उस कार्यको निःशंक होकर शीघ्रही करै ॥ ८४ ॥ ८५ ॥

कालेवृष्टिःसुपोषायह्यन्यथासुविनाशिनी ।
कार्यस्थानानिसर्वाणियामिकैरभितोनिशम्

भाषार्थ-समयकी वृद्धि भले प्रकार पुष्टिके अर्थ है और अकालवृष्टि शीघ्र विनाशका हेतु है संपूर्णकार्य स्थानों चारों ओरसे यामिक (चौकीदारों) से रात्रि दिन रक्षा करै ॥८६॥

नयवान्नीतिनतिवित्सिद्धशस्त्रादिकैर्वरैः ।
चतुर्भिःपंचभिर्वापिषड्भिर्वागोपयेत्सदा ॥

भाषार्थ-न्याय-नीति-नति इनका ज्ञाता सिद्ध (ज्ञात) हैं शस्त्रादि जिनको ऐसे चार-पांच-छै यामिकोंसे कार्यस्थानोंकी रक्षाकरै ॥ ८७ ॥

तत्रत्यानिदैनिकानिशृणुयाल्लेखकाधिपैः ।
दिनेदिनेयामिकानांप्रकुर्यात्परिवर्तनं ८८

भाषार्थ-कार्यस्थानोंमें जो दैनिक हैं उन्हें लेखाधिपोंसे सुनै और दिन २ में यामियों-का परिवर्त्तन (वदली) करै ॥८८॥

गृहपंक्तिमुखेद्वारंकर्तव्यंयामिकैःसदा
तैस्तद्वृत्तंतुशृणुयात्गृहस्थभृतिपोषितैः८९

भाषार्थ-गृहोंकी पंक्तिके मुखपर यामिक (चौकीदार) सदा द्वार करैं उन्हींयामिकोंसे गृहोंके वृत्तांतको राजा सुने और वेषा यामिक गृहस्थ भृति (गृहस्थके पालन योग्य वेतन) से पुष्ट रहें ॥ ८९ ॥

निर्गच्छंतिचयेग्रामाद्येग्रामंप्रविशंतिच ।
तान्सुसंशोध्ययत्नेनमोचयेद्दत्तलक्ष्मकान् ॥

भाषार्थ-जो मनुष्य ग्राममें जांय और जो ग्राममें प्रविष्ट हो उन्हें भलीभांति शोधन और चिह्न सहित करके छोड दे ॥ ९० ॥

प्रख्यातवृत्तशीलांस्तुह्यविमृश्यविमोचयेत्
वीथिवीथिपुयामार्धैर्निशिपर्यटनंसदा ९१॥

भाषार्थ-और प्रसिद्ध है आचरण और शील जिनका उन्हें विनाविचारेही छोड दे और रात्रिमें चार २ घटी गली २ में सदा विचरै ॥ ९१ ॥

कर्तव्यंयामिकैरेवचौरजारनिवृत्तये ।
शासनंत्वीदृशंकार्यंराज्ञानित्यंप्रजासुच ९२

भाषार्थ-यामिकोंको चौर और जारकी निवृत्तिके अर्थ गली २ में विचरना और राजाको प्रजामें इस प्रकार शिक्षा करनी कि ॥ ९२ ॥

दासेभृत्येथभार्यायांपुत्रेशिष्येपिवाक्वचित् ।
वाग्दंडपरुषान्नैवकार्यंमद्देशसंस्थितैः ९३॥

भाषार्थ-जो मनुष्य मेरे देशमें रहते हैं उन्हें दास-भृत्य-भार्या-पुत्र-शिष्य इनके विषय कठोर वचनका दंड नहीं देना अर्थात् कठोरवचन नहीं कहना ॥ ९३ ॥

तुलाशासनमानानांनाणकस्यापिवाक्वचित्
निर्यासानांचधातूनांसजातीनांघृतस्यच ।

मधुदुग्धवसादीनांपिष्टादीनांचसर्वदा ।
कूटंनैवतुकार्यंस्याद्बलाच्चालिखितंजनैः ९५

भाषार्थ-तुला-आज्ञा-मान-नाणक-निर्यास(गोंद)धातु-सजाति-घृत-मधु-दूध-वसा-पिष्ट (आटा) इनके लेखको मनुष्य बलसे मिथ्या न करैं ॥९४॥९५॥

उत्कोचग्रहणन्नैवस्वामिकार्यविलोभनम् ।
दुर्वृत्तकारिणंचोरंजारंमद्वेषिणंद्विषम् ९६॥

नरक्षंत्वप्रकाशंहितथान्यानपकारकान् ।
मातॄणांपितॄणांचैवपूज्यानांविदुषामपि ९७

भाषार्थ-उत्कोच (कोड) के ग्रहण कर्त्ता स्वामी कार्यके नाशक-दुराचारी और चौर और जार और राजाका अद्वेषी-और द्वेषी-इतर अपकारी इनकी प्रत्यक्ष रक्षा कोई न करै-माता पिता पूज्य और विद्वान् इनका तिरस्कार कोई न करै ॥९६॥९७॥

नावमानंनोपहासंकुर्युःसद्वृत्तशालिनाम् ।
नभेदंजनयेयुर्वैनृनार्योःस्वामिभृत्ययोः ९८

भाषार्थ-और सदाचारमें तत्परोंकाभी तिरस्कार न करै और स्त्री पुरुष-स्वामी-भृत्य-इनके भेद (फूट) को कोई उत्पन्न न करै॥९८॥

भ्रातॄणांगुरुशिष्याणांनकुर्युःपितृपुत्रयोः ।
वापीकूपारामसीमाधर्मशालासुरालयान् ॥

मार्गान्नैवप्रबाधेयुर्हीनांगविकलांगकान् ।
द्यूतंचमद्यपानंचमृगयांशस्त्रधारणम्१००॥

भाषार्थ-भ्राता-गुरु शिष्य-पिता पुत्र-इनकेभी भेदको न करै-और वापी-कूप-आराम-सीमा-धर्मशाला-देवमंदिर और मार्ग-हीनअंगवाला पुरुष-इनको कोई पीडा न दे-और द्यूतमद्यपान मृगया-शस्त्रधारण-इन सब को राजाके विना न करै॥९९॥१००॥

गोगजाश्वोष्ट्रमहिषीनृणांवैस्थावरस्यच ॥
रजतस्वर्णरत्नानांमादकस्यविषस्यच १ ॥

क्रयंवाविक्रयंवापिमद्यसंधानमेवच
क्रयपत्रंदानपत्रमृणनिर्णयपत्रकम् ॥ २ ॥

राजाज्ञयाविनानैवजनैःकार्यंचिकित्सितं
महापापाभिशपनंनिधिग्रहणमेवच ॥ ३ ॥

भाषार्थ-गौ हस्ती-ऊंट-भैंस-मनुष्य-स्थावर-चांदी-सोना-रत्न-मादकवस्तु-विष-इनका लेनदेन-और मदिरा निकासना-लेनेका पत्र-देनेकापत्र-ऋणके निर्णयका पत्र चिकित्सा (इलाज) महापापका अभिशपन अर्थात् महापापका दोष लगाना निधि (खजाना) का ग्रहण-इतने कार्य राजाकी आज्ञाके विना कोईभी मनुष्य न करै ॥ १ ॥ २ ॥ ३ ॥

नवसमाजनियमंनिर्णयंजातिदूषणं
अस्वामिनाष्टिकधनंसंग्रहंमंत्रभेदनम्॥४ ॥

भाषार्थ-नये समाजका नियम-निर्णय जातिका दोष-जिसका कोई स्वामी न हो उस वस्तुका ग्रहण-और मंत्र सलाह-इनका भेद कोई न करै ॥ ४ ॥

नृपदुर्गुणलोपंतुनैवकुर्युःकदाचन ।
स्वधर्महानिमनृतंपरदाराभिमर्शनम् ॥५ ॥

भाषार्थ-राजाके दुर्गुणोंका लोप कोई पुरुष कदाचित्भी न करै अपने धर्मका त्याग-असत्य भाषण-अन्यस्त्रीका संग-कोई न करै ॥ ५ ॥

कूटसाक्ष्यंकूटलेख्यमप्रकाशप्रतिग्रहम् ॥
निर्धारितकराधिक्यंस्तेयंसाहसमेवच ॥६॥

भाषार्थ-झूठी साक्षी-झूठा लेख-गुप्त प्रतिग्रह-नियमित करसे अधिककर-चोरी साहस-इन्हे कोई न करै ॥ ६ ॥

मनसापिनकुर्वंतुस्वामिद्रोहंतथैवच ॥
भृत्याशुल्केनभागेनवृद्ध्यादर्पबलाच्छलात्

भाषार्थ—वेतन शुल्क (महसूल) भाग—सूत—अहंकार—चल—छल—इनके द्वारा मनसेभी कोई अपने स्वामीका द्रोह न करै—७

आधर्षणंनकुर्वंतुयस्यकस्यापिसर्वदा ।
परिमाणोन्मानमानंधार्यंराजविमुद्रितम्८॥

भाषार्थ—संपूर्णकालमें किसीकाभी आधर्षण (दबाकर दुःखित करना) न करै परिमाण उन्मान— (द्रोण) आदि मान (तोल) इनको राजाकी मुद्रा युक्त रक्खे ॥८॥

गुणसाधनसंदक्षाभवंतुनिखिलाजनाः
साहसाधिकृतेदद्युर्विनिगृह्याततायिनम्॥९॥

भाषार्थ—गुणोंकी सिद्धिमें संपूर्णजन चतुर हों और अपराधीको पकडकर साहसके अधिकारी (फौजदारीके हाकिम) को सौंप दे ॥ ९ ॥

उत्सृष्टावृषभाद्यायैस्तैस्तेधार्याःसुयंत्रिताः ।
इतिमच्छासनंश्रुत्वायेन्यथावर्तयंतितान् ॥

विनिशिष्यामिदंडेनमहतापापकारकान्
इतिप्रबोधयेन्नित्यंप्रजाःशासनडिंडिमैः ११

भाषार्थ—जिनपुरुषोंने वृषभ अदि छोडे हैं वे ही उनको बडे यत्नसे रक्खें—इस मेरी आज्ञाको सुनकर जो अन्यथा वर्तेंगे—उन पापियोंको मैं महान् दंडसे शिक्षा दुंगा यह नित्य डिंडीमें (ढंढोरा) से राजा प्रबोधित करावे ॥ १० ॥ ११ ॥

लिखित्वाशासनंराजाधारयीतचतुष्पथे ।
सदाचोद्यतदंडःस्यादसाधुषुचशत्रुषु ॥१२।

भाषार्थ—अपनी आज्ञाको लिखकर राजा चतुष्पथ (चौराहा) में रखदे और असाधु शत्रु इनमें दंडको सदा उद्यत रक्खै ॥ १२ ॥

प्रजानांपालनंकार्यंनीतिपूर्वंनृपेणहि ।
मार्गसंरक्षणंकुर्यान्नृपःपांथसुखायच॥१३॥

भाषार्थ—राजा प्रजाका पालन नीतिसे करै और पथिकोंके सुखके निमित्त मार्गकी सदा रक्षा करै ॥ १३ ॥

पांथप्रपीडकायेयेहंतव्यास्तेप्रयत्नतः ।
त्रिभिरंशैर्बलंधार्यंदानमर्धांशकेनच ॥१४॥

भाषार्थ—पथिकोंके जो२ पीडा कारक हैं तिन२को यत्नसे मारे और तीन भागोंसे सेनाको धारण करै और आधेभागसे दानको धारै १४

अर्धांशेनप्रकृतयोह्यर्धांशेनाधिकारिणः ।
अर्धांशेनात्मभोगश्चकोशोंशेनसरक्ष्यते १५

भाषार्थ—आधेभागसे प्रकृति (दिवानआदि) आधेभागसे अधिकार (दरबार) आधेभागसे अपना भोग—चौथेभागसे कोश (खजाना) इस प्रकार भागोंसे अपने द्रव्यको भुगतावे१५

आयस्यैवंषड्भिर्भागैर्व्ययंकुर्यात्तुवत्सरे ।
सामंतादिपुधर्मोयंनन्यूनस्यकदाचन॥१६।

भाषार्थ—इस प्रकार आय (आमदनी) का वर्ष भरमें व्यय (खर्च) करै यह सामंत (मंत्री)आदिका धर्म है न्यूनका नही ॥ १६ ॥

राज्यस्ययशसःकीर्तेर्धनस्यचगुणस्यच ।
प्राप्तस्यरक्षणेन्यस्यहरणेचोद्यमोपिच॥१७

भाषार्थ—राज्य—यश— कीर्ति—धन—गुण—आदि प्राप्तोंकी रक्षामें न्यास अर्थात् व्याज आदिसे वढाना और हरणे अर्थात् इतरराज्य आदिके छीननेमें यत्न करै ॥ १७ ॥

संरक्षणेसंहरणेसुप्रयत्नोभवेत्सदा ॥
शौर्यंपांडित्यवक्तृत्वंदातृत्वंनत्यजेत्क्वचित्

भाषार्थ—भलीप्रकार रक्षा और हरणमें अच्छे प्रकारसे यत्न करै शूरता—पांडित्य—वक्तृता दातृता—इनको कदापि न त्यागे ॥ १८ ॥

बलंपराक्रमंनित्यमुत्थानंचापिभूमिपः।
क्षमितौस्वात्मकार्येवास्वामिकार्येतथैवच ॥

भाषार्थ-बल-पराक्रम-नित्य उत्थान (चढाई) इनकोभी न त्यागे-संग्राम अपने और स्वामीके कार्यमें प्राणोंका भय न करै ॥१९॥

त्यक्त्वाप्राणभयंयुध्येत्सशूरस्त्वविशंकितः
पक्षंसंत्यजयत्नेनबालस्यापिसुभापितं२०॥

गृण्हातिधर्मतत्वचव्यवस्यतिसपंडितः
राज्ञोपिदुर्गणान्वक्तिप्रत्यक्षमविशंकित २१

भाषार्थ-प्राणोंके भयकोत्याग और निःशंक होकर जो युद्ध करै वही शूर है-पक्षपातको छोडकर बालककेभी उत्तम कथनको ग्रहण करै-और धर्मके तत्त्वका निश्चय करै और निःशंक होकर राजाके प्रत्यक्ष राजाकेभी अपगुणोंको जो कहै वही पंडित है २०।२१

सवक्तागुणतुल्यांस्तान्प्रस्तौतिकदाचन ।
अदेयंयस्यनैवास्तिभार्यापुत्रादिकंधनं॥२२

भाषार्थ-वही वक्ता है जो गुणोंके तुल्य यथार्थ स्तुति करै और अधिक न करै और भार्या-पुत्र-धन आदिमें जिसको अदेय न हो वही राजा है ॥२२॥

आत्मानमपिसंदत्तेपात्रेदातासउच्यते ।
अशंकितक्षमोयेनकार्यकर्तुंबलंहितत् २३॥

भाषार्थ-जो सुपात्रको अपने आत्माकोभी दे दे वही दाता है और जिससे निःशंक होकर कार्यको करै वही बल है ॥ २३ ॥

किंकराइवयेनान्येनृपाद्याःसपराक्रमः।
युद्धानुकूलव्यापारउत्थानमितिकीर्तितं२४

भाषार्थ-जिससे इतर राजा किंकरके समान होजाय वही पराक्रम है और युद्धका जो संपादक जो व्यापार उसे उत्थान कहते हैं-॥२४॥

विषदोषभयादन्नंविमृश्यकपिकुक्कुटैः ।
हंसाः स्खलंतिकूजंतिभृंगानृत्यंतिमायुराः

विरौतिकुक्कुटोमत्तःक्रौंचोवैरेचतेकपिः।
हृष्टरोमाभवेद्बभ्रुः सारिकावमतेतथा २६॥

भाषार्थ-विषके दोषभयसे वानर मुरगों अन्नकी परीक्षा करै क्योंकि विषके भक्षणसे हंस स्खलित (अंडबंड) बोलते हैं भ्रमर शब्द करते हैं मोर नाचते हैं मुरगा अत्यंत शब्द करता है कूंच मत्त हो जाता है वानर वमन करदेता है नोलेकी रोम खडी हो जाती है सारिकाभी वमन करती है-यदि ये पूर्वोक्त जीव जिस अन्नभक्षणसे उक्त कार्यकारी हो जायँ तो उस अन्नको कदाचिदपि अन्नको भक्षण न करै-२६-२७ ॥

दृष्ट्वैवंसविषंचान्नंतस्माद्भोज्यंपरीक्षयेत् ।
भुंजीतषड्रसंनित्यंनद्वित्रिरससंकुलम्२७॥

भाषार्थ-इस प्रकार विष सहित अन्नको देखकरि पश्चाद्भोजनके योग्यकी परीक्षा करै अर्थात् छै रस जिसमें उसै भक्षण करै और दो अथवा तीन रस जिसमें हों उसै भक्षण न करै-२७ ॥

हीनातिरिक्तंनकटुमधुरक्षारसंकुलम्।
आवेदयतियत्कार्यंशृणुयान्मंत्रिभिःसह २८

भाषार्थ-न्यून और अधिक है-कटु-मधुर-खार-जिसमें उसे भक्षण न करै जो कोई मनुष्यकार्यको निवेदन करै उसेई मंत्रियों सहित राजा सुनै ॥ २८॥

आरामादौप्रकृतिभिःस्त्रीभिश्चनटगायकैः ।
विहरेत्सावधानस्तु[illegible]गधैरैंद्रजालिकैः॥२९

भाषार्थ-प्रजा-स्त्री-नट-गानेवाले-भाट-इंद्रजाली-इनके संग सावधान हो कर आराम (बगीचा) आदिमें विहार करै ॥ २९ ॥

गजाश्वरथयानंतुप्रातःसायंसदाभ्यसेत् ।
व्यूहाभ्यासंसैनिकानांस्वयंशिक्षेच्चशिक्षयेत्

भाषार्थ–प्रातःकाल और संध्यासमय–हस्ति–अश्व–रथ–इनके यानका अभ्यास करै और सेनाके मनुष्योंको व्यूह (कवायद) अभ्यास करावे और आपभी करै ॥ ३० ॥

व्याघ्रादिभिर्वनचरैर्मयूराद्यैश्चपक्षिभिः ।
क्रीडयेन्मृगयांकुर्याद्दुष्टसत्त्वान्निपातयन् ॥

भाषार्थ–सिंह आदि वनचर और मयूरआदि पक्षी इनके संग क्रीडा और मृगया करै और दुष्ट जीवोंको नष्ट करै ॥ ३१ ॥

शौर्यंप्रवर्धतेनित्यंलक्ष्यसंधानमेवच ।
अकातरत्वंशस्त्रास्त्रशीघ्रपातनकारिता ॥

भाषार्थ–शूरताकी वृद्धि और लक्ष्य (निशाने) का संधान अकातरता शस्त्रअस्त्रका शीघ्र चलाना ये मृगयासे होते हैं ॥ ३२ ॥

मृगयायांगुणाएतेहिंसादोषोमहत्तरः ।
इंगितंचेष्टितंयत्नात्प्रजानाधिकारिणाम् ॥

भाषार्थ–मृगयामें ये गुण हैं परंतु हिंसा दोष महान् है प्रजा और अधिकारी इनका मनोरथ और चेष्टा गुप्तचारोंसे सुनै ॥ ३३ ॥

प्रकृतीनांचशत्रूणांसैनिकानांमतंचयत् ।
सभ्यानांबांधवानांचस्त्रीणामंतःपुरेचयत् ॥

शृणुयाद्गूढचारेभ्योनिशिचात्ययिकेसदा ।
सावधानमनाःसिद्धशस्त्रास्त्रःसंलिखेच्चतत् ॥

भाषार्थ–प्रजा–शत्रु–सेनाके मनुष्य और सभासद्–बंधु–अंतःपुर–स्त्री–इनका आचरण–नित्य पिछली रात्रिको विचरने हारे गूढचारियोंसे सुनै और सावधानतासे शस्त्रअस्त्रको धारण करिके उसे लिखे ॥ ३४ ॥ ॥ ३५ ॥

असत्यवादिनंगूढचारंनैवचशास्तियः ।
सनृपोम्लेच्छइत्युक्तःप्रजाप्राणधनापहः ॥

भाषार्थ–झूंठेगुप्तचारीको जो राजा शिक्षा नहीं देता वह राजा प्रजाके प्राण और धनका अपहारी म्लेच्छ है ॥ ३६ ॥

वर्णीतपस्वीसंन्यासीनीचसिद्धस्वरूपिणम् ।
प्रत्यक्षेणछलेनैवगूढचारंविशोधयेत् ॥ ३७ ॥

भाषार्थ–ब्रह्मचारी-तपस्वी-संन्यासी-नीच-लिङ्गमें हैं रूप जिसके ऐसे गूढचारीको प्रत्यक्ष अथवा छलसे शोधै अर्थात् पहचाने ॥ ३७ ॥

विनातच्छोधनात्तत्त्वंनजानातिचनाप्यते ।
अशोधकनृपान्नैवबिभ्यत्यनृतवादने ॥ ३८ ॥

भषार्थ–गूढचारीके शोधे विना राजाको तत्वका ज्ञान और प्राप्ति नही होती और जो राजा इनका शोध न नही करता उससे गूढ बोलनेमें वे नही हारते ॥ ३८ ॥

प्रकृतिभ्योधिकृतेभ्योगूढचारंसुरक्षयेत् ।
सदैकनायकंराज्यंकुर्यान्नबहुनायकम् ३९ ॥

भाषार्थ–प्रकृति और अधिकारी इनसे गूढचारीकी रक्षा करै और राज्यका स्वामी एकही करै बहुत नहीं ॥ ३९ ॥

नानायकंक्वचिदपिकर्तुमीहेतभूमिपः ।
राजकुलेतुबहवः पुरुषायदिसंतिहि ॥ ४० ॥

तेषुज्येष्ठोभवेद्राजाशेषास्तत्कार्यसाधकाः ।
गरीयांसोवराःसर्वसहायेभ्योभिवृद्धये ४१

भाषार्थ–राजा किसी स्थानकोभी अनायक (स्वामीरहित) करनेकी चेष्टा न करै यदि राजाके कुलमें बहुत पुरुष होय तो उनमें ज्येष्ठ राजा होता है शेष उसके कार्यसाधक होते हैं राजाकी वृद्धिके अर्थ और बंधु इतर सहायोंसे श्रेष्ठ है ॥ ४० ॥ ४१ ॥

ज्येष्ठोपिबधिरः कुष्ठीमूकोंधः पंढएवयः
सराज्यार्होभवेन्नैवभ्राताततत्पुत्रएवहि ४२ ॥

भाषार्थ—यदिज्येष्ठ भ्राताभी बधिर—कुष्ठी—मूक—अंध—नपुंसक होय तो वह राज्यके योग्य नहीं होता भ्राता अथवा उसका पुत्र राज्यका अधिकारी होता है ॥ ४२ ॥

स्वकनिष्ठोपिज्येष्ठस्यभ्रातुः पुत्रस्तु
राज्यभाक् ॥ दायादानामैकमत्यं
राज्ञःश्रेयस्करंपरम् ॥ ४३ ॥

भाषार्थ—अपना कनिष्ठ ज्येष्ठ भ्राता अथवा भ्राताका पुत्र राज्यका अधिकारी होता है और दायाद (अंशभागियों) की एक मति राज्यके परमकल्याणको करतीहै ॥४३॥

पृथग्भावोविनाशायराज्यस्यचकुलस्यच
अतःस्वभोगसदृशान्दायादान्कारयेन्नृपः ॥

भाषार्थ—अंशभागियोंका जो पृथक् भाग वह राज्य और कुलके विनाशका हेतु है इससे राजा हिस्सेदारोंको अपने भागके सदृश करै ॥ ४४ ॥

राज्यविभजनाच्छ्रेयोनभूपानांभवेत्खलु ॥
अल्पीकृतंविभागेनराज्यंशत्रुर्जिघृक्षति ४५

भाषार्थ—राज्यके विभागसे राजाओंको कल्याण नहीं होता क्योंकि विभागसे स्वल्पहुए राज्यको शत्रु ग्रहण करनेकी इच्छा करता है ॥ ४६ ॥

राज्यतुर्यांशदानेन स्थापयेत्तान्समंततः ।
चतुर्दिक्ष्वथवादेशाधिपान्कुर्यात्सदानृपः ॥

भाषार्थ—राज्यके चतुर्थभागको देकर कनिष्ठ बंधुओंको चारों ओर नियत करै अथवा चारों दिशाओंमें देशोंके अधिपति करै ४६॥

गोगजाश्वोष्ट्रकोशानामाधिपत्येनियोजयेत्
मातामातृसमायाचसानियोज्यामहासने ॥

भाषार्थ—गौ-हस्ति—अश्व—ऊंट—कोश (खजाना) इनके अधिपति करै माता और माताके जो तुल्य हैं उसे सिंहासन पर नियुक्त करै ४७

सेनाधिकारेसंयोज्याबांधवाशालकाः सदा
स्वदोषदर्शकाः कार्यागुरवः सुहृदश्चये ४८

भाषार्थ—सेनाके अधिकारमें बंधु और शालोंको नियुक्त करै अपने दोषोंके दिखानेमें गुरु अथवा मित्रोंको नियुक्त करै॥४८॥

वस्त्रालंकारपात्राणांस्त्रियोयोज्यासुदर्शने
स्वयंसर्वंतुविमृशेत्पर्यायेणचमुद्रयेत् ॥४९॥

भाषार्थ—वस्त्र—भूषण—पात्र—इनके भली प्रकार देखनेमें स्त्रियोंको नियुक्त करै और संपूर्णको आपविचारै और राजमुद्रासे अङ्कित करै ॥ ४९ ॥

अंतर्वेश्मनिरात्रौवादिवारण्येविशोधिते ।
मंत्रयेन्मंत्रिभिःसार्धंभाविकृत्यंतुनिर्जने ॥

भाषार्थ—गृहके भीतर अथवा वनमें दिनके समय एकांतमें मंत्रियोंके संग भाविकार्यको विचारै ॥ ५० ॥

सुहृद्भिर्भ्रातृभिःसार्धंसभायांपुत्रबांधवैः ।
राजकृत्यंसेनपैश्चसभ्याद्यैश्चिंतयेत्सदा ॥

भाषार्थ—मित्र—भ्राता—पुत्र—बंधु—सेनाके अधिप—सभासद इनके संग राजकृत्यका सदा चिंतन करै ॥ ५१ ॥

सभायांप्रत्यगर्धस्यमध्येराज्ञासनंस्मृतं ।
दक्षसंस्थावामसंस्थाविशेयुःपार्श्वकोष्ठगाः॥

भाषार्थ—सभामें पश्चिमदिशाके मध्यभागमें राजाका आसन कहा है और पासके बैठन हारे दक्षिण अथवा वामभागमें बैठे ॥ ५२॥

पुत्राःपौत्राभ्रातरश्चभागिनेयाःस्वपृष्ठतः ।
दौहित्रादक्षभागात्तुवामसंस्थाःक्रमादिमे॥

भाषार्थ–पुत्र–पौत्र–भ्राता–भानजे ये, अपने पृष्ठभागमें बैठे दौहित्र (पुत्रीके पुत्र) दक्षिणभागसें वाम भागमें क्रमसे बैठें ॥ ५३ ॥

पितृव्याःस्वकुलश्रेष्ठाःसभ्याःसेनाधिपास्तथा ।
स्वाग्रेदक्षिणभागेतुप्राक्संस्थाःपृथगासनाः।

भाषार्थ–पितृव्य (चाचा ताऊ) अपने कुलके श्रेष्ठ सभासद–सेनाके अधिप ये अपने आगे दक्षिण भागमें पूर्वदिशामें बैठें ॥ ५४ ॥

मातामहकुलश्रेष्ठामंत्रिणोबांधवास्तथा ।
श्वशुराश्चैवश्यालाश्चवामांग्रेचाधिकारिणः॥

भाषार्थ–माताके कुलमें श्रेष्ठ–मंत्री–बंधु–श्वशुर–श्याल ये वामभागमें अग्रभागके अधिकारी हैं– ॥ ५५ ॥

वामदक्षिणपार्श्वस्थौजामाताभगिनीपतिः ॥
स्वसदृशःसमीपेवास्वार्धासनगतःसुहृत्५६

भाषार्थ– वाम और दक्षिणपार्श्वमें जमाई, और भनोई बैठें और अपनी तुल्य मित्र अपने समीपमें वा अपने आधे आसनपर बैठे ॥ ५६ ॥

दौहित्रभागिनेयानांस्थानेस्युर्दत्तकादयः ।
भागिनेयाश्चदौहित्राःपुत्रादिस्थानसंश्रिताः

भाषार्थ–दौहित्र–भानजे इनके स्थानमें दत्तकादि पुत्र बैठे और भानजे और दौहित्र पुत्र आदिके स्थानमें बैठे ॥ ५७ ॥

यथापितातथाचार्यःसमश्रेष्ठासनेस्थितः ।
पार्श्वयोरग्रतःसर्वेलेखकामंत्रिपृष्ठगाः५८॥

भाषार्थ–पिताके समान गुरु होता है इससे पिताके समान श्रेष्ठआसनपर बैठे और दोनों पार्श्वमें अग्रभाग विषे संपूर्ण लेखक मंत्रियोंके पीछे बैठे ॥ ५८ ॥

परिचारगणाःसर्वेसर्वेभ्यःपृष्ठसंस्थिताः ।
स्वर्णदंडधरौपार्श्वेप्रवेशनतिबोधकौ ॥५९॥

भाषार्थ–संपूर्ण सेवकोंके गण सबसे पीछें बैठे और सभामें प्रवेश (आने) के जताने और राजाको इतरकी प्रणामके बोधक सुवर्णके दंडको ग्रहण करके दो मनुष्य राजाके दोनों पार्श्वोंमें बैठें ॥ ५९ ॥

विशिष्टचिन्हयुग्राजास्वासनेप्रविशेत्सुखं ।
सुभूषणःसुकवचःसुवस्त्रोमुकुटान्वितः ६०

भाषार्थ–श्रेष्ठ चिह्नवाला राजा अच्छेभूषण और श्रेष्ठ कवच–और श्रेष्ठ मुकुट–इनको धारण करके सुंदर आसनपर सुखसे बैठे ॥ ६० ॥

सिद्धास्त्रोनग्नशस्त्रस्स्यात्सावधानमनाःसदा ।
सर्वस्मादधिकोदाताशूरस्त्वंधार्मिकोह्यसि ॥

भाषार्थ–सिद्ध हैं अस्त्र जिसको ऐसा राजा नग्न शस्त्रको ग्रहण करके सदा सावधानमन रहै और आप सबसे अधिक दाता–शूर और–धार्मिकहो इस वाणीको न सुने ६१ ॥

इतिवाचंनशृणुयाच्छ्रावकावंचकास्तुये ।
रागाल्लोभाद्भयाद्राज्ञःस्युर्मूकाइवमंत्रिणः ॥

भाषार्थ–और जो पूर्वोक्त वाणीके सुनानेवाले हैं और जो ठग हैं और जो राजाके मंत्री किसीकी प्रीति–राग–लोभसे मूक होजाय अर्थात् यथार्थ न्यायमें संमति न दें उन्हें राजा अपने अनुमत नजानैं ॥ ६२ ॥

नताननुमतान्विद्यान्नृपतिःस्वार्थसिद्धये ।
पृथक्पृथङ्मतंतेषांलेखयित्वाससाधनं ६३

भाषार्थ-अपने कार्यकी सिद्धिके निमित्त पूर्वोक्तोंको अनुमत नही-समझे किंतु उनका मत युक्ति सहित पृथक् २ लिखकर आप विचारे ॥ ६३ ॥

विमृशेत्स्वमतेनैवयत्कुर्याद्बहुसंमतं ।
गजाश्वरथपश्वादीन्भृत्यान्दासांस्तथैवच ॥

भाषार्थ-और जो कार्य वह संमतभी किया हो उसेभी अपने मतसे करै । हस्ती-घोडे रथ-पशु-आदि-भृत्य-और दास-६४

संभारान्सैनिकान्कार्यक्षमान्ज्ञात्वादिनेदिने
संरक्षयेत्प्रयत्नेनसुजीर्णान्संत्यजेत्सुधीः ॥

भाषार्थ-और सेनाके संभार-इनकी प्रतिदिन यत्नसे रक्षा करके कार्यके योग्य करै और जो जीर्ण (पुराने) हों उन्हें त्याग दे ॥ ६५ ॥

अयुतक्रोशजांवार्तांहरेदेकदिनेनवै ।
सर्वविद्याकलाभ्यासेशिक्षयेद्भृतिपोषितान्

भाषार्थ-दशसहस्र कोशकी वार्ताको एकही दिनमें जानले और भृत्योंको संपूर्ण विद्याओंकी कलाओंके अभ्यासमें शिक्षित करै ॥ ६६ ॥

समाप्तविद्यंसंदृष्ट्वातत्कार्येतंनियोजयेत् ।
विद्याकलोत्तमान्दृष्ट्वावत्सरेपूजयेच्चतान् ॥

भाषार्थ-उसकी पूरी विद्याको देखकर उसे कार्यमें नियुक्त करै और विद्याकी कला-में उत्तम देखकर उन्हें प्रतिवर्ष पूजे अर्थात् उनकी विद्याके अनुसार उनका सत्कार करै ॥ ६७ ॥

विद्याकलानांवृद्धिःस्यात्तथाकुर्यान्नृपःसदा
पृष्ठाग्रगान्क्रूरवेषान्नतिनीतिविशारदान् ६८

भाषार्थ-जैसे विद्याकी कला वृद्धिको प्राप्त हों तैसे राजा सदा करै पृष्ठभाग और अग्रभागमें विद्यमान जो पुरुष वे नति (प्रणाम) और नीतिमें चतुर और भयानक वेषधारी हों ॥ ६८ ॥

सिद्धास्त्रनग्नशस्त्रांश्चभटानारान्नियोजयेत्
पुरेपर्यटयेन्नित्यंगजस्थोरंजयन्प्रजाः ॥६९

भाषार्थ-और वे ज्ञात हैं अस्त्र जिन्हैं ऐसे हों और नग्नशस्त्र हों ऐसे भटों (नोकरों) को समीप नियुक्त करै और हस्तीपर चढ़क-र प्रजाको प्रसन्न करता राजा आपभी अपने नगरमें फिरै ॥ ६९ ॥

राजयानारूढितःकिंराज्ञाश्वानसमोपिच ।
शुनासमोनकिंराजाकविभिर्भाव्यतेजसा७०

भाषार्थ-जो राजा अपने यान (सवारी) पर श्वान अथवा नीचको बैठा लै तौ ज्ञानी-पुरुष राजाभी श्वानके समान क्या नही जा-नैंगे अर्थात् अवश्य जानेंगे ॥ ७० ॥

अतः स्वबांधवैर्मित्रैः स्वसाम्यप्रापितैर्गुणैः।
प्रकृतीभिर्नृपोगच्छेन्ननीचैस्तुकदाचन॥७१

भाषार्थ-इससे राजा अपने बंधु और मित्र -और जो गुणोंसे अपनी तुल्यताको प्राप्त-हुए हैं उन और प्रकृतियों सहित गमन करै नीचोंके संग कदाचिदपि गमन न करै ॥ ७१ ॥

मिथ्यासत्यसदाचारैर्नीचःसाधुःक्रमात्स्मृत
साधुभ्योतिस्वमृदुत्वंनीचाःसंदर्शयंतिहि ॥

भाषार्थ-झूंठसे नीच सत्य और श्रेष्ठ आचरणसे साधु होता है क्योंकि नीचभी साधुओंसे कोमल अपने आचरणको दिखाते हैं ॥ ७२ ॥

ग्रामान्पुराणिदेशांश्चस्वयंसंवीक्ष्यवत्सरे ।
अधिकारिगणैःकाश्चरंजिताःकाश्चकर्षिताः

भाषार्थ-ग्राम पुर देश इनको स्वयं प्रति-वर्ष देखै और अधिकारियोंनें कौनसी प्रजा प्रसन्न की और कौनसी दुःखी की यहभी देखै ॥ ७३ ॥

प्रजास्तासांतुभूतेनव्यवहारंविचिंतयेत् ।
नभृत्यपक्षपातीस्यात्प्रजापक्षंसमाश्रयेत् ॥

भाषार्थ-उन प्रजाओंके वर्तावसे व्यवहार-का चिंतन करै और अपने भृत्य (नोकरों) का पक्षपाती नहो किंतु प्रजाके पक्ष पातीही हो ॥ ७४ ॥

प्रजाशतेनसंद्विष्टंसंत्यजेदधिकारिणम् ।
अमात्यमपिसंवीक्ष्यसकृदन्यायगामिनं ७५

भाषार्थ-जो अधिकारी अनेक प्रजाओंका द्वेषी है उसको त्यागदे और मंत्रीको एकवार अन्यायगामी अर्थात् अनीतिकारक देखकर एकांतमें दंड ये दे ॥ ७५ ॥

एकांतेदंडयेत्स्पष्टमभ्यासागस्कृतंत्यजेत् ।
अन्यायवर्तिनांराज्यंसर्वस्वंचहरेन्नृपः ७६॥

भाषार्थ-और प्रकट जो अपना अपराधी है उसे त्याग दे अर्थात् उसे दंड न दे और अन्यायवर्तियोंके राज्य और सर्वस्वको राजा हरले ॥ ७६ ॥

जितानांविषयेस्थाप्यंधर्माधिकरणंसदा ।
भृतिंदद्याज्जितानांतच्चारित्र्यानुरूपत७७

भाषार्थ-जीतेहुओंके राज्यमें धर्मसे सदा अधिकार करै और जीतेहुओंको उनके स्वरूपके अनुसार भृति (नोकरी) दे ॥ ७७ ॥

स्वानुरक्तांसुरूपांचसुवस्त्रांप्रियवादिनीम् ।
सुभूषणांतुसंशुद्धांप्रमदांशयनेभजेत् ॥७८

भाषार्थ-अपने विषै अनुरक्त (प्रीतिमती) सुरूप-सुवस्त्र-प्रियवादिनी-सुंदर-भूषणोंवाली शुद्ध जो हो उस स्त्रीको शय्या पर भजे अर्थात् ऐसी स्त्रीके संगही भोग करै ॥ ७८ ॥

यामद्वयंशयानोहित्वत्यंतंसुखमश्नुते ।
नसंत्यजेच्चस्वस्थानंनीत्याशत्रुगणंजयेत् ॥

भाषार्थ-जो राजा दो प्रहर शयन करता है वह अत्यंत सुखको भोगता है और अपने स्थानका परित्याग राजा न करै किंतु नीतिसेही शत्रुओंके गणको जीतै ॥ ७९ ॥

स्थानभ्रष्टानोविभांतिदंताःकेशानखान्नृपाः
संश्रयेद्गिरिदुर्गाणिमहापदिनृपःसदा ॥८०

भाषार्थ-अपने स्थानसे भ्रष्ट (पतित) दन्त-केश-नख-राजा ये शोभाको प्राप्त नहीं होते और महान् आपत्तिमें राजा किल्ला पर्वत इनका आश्रय ले ॥ ८० ॥

तदाश्रयाद्दस्युवृत्त्यास्वराज्यंतुसमाहरेत्
विवाहदानयज्ञार्थविनाप्यष्टांशशेषितं ८१॥

भाषार्थ-उनके आश्रयसे चोरीसे अपने राज्यको ग्रहण करै और विवाह-दान यज्ञ-इनके अर्थ अष्टांशशेषके विनाभी सबसे द्रव्यको ग्रहण करै ॥८१ ॥

सर्वतस्तुहरेद्दस्युरसतामखिलंधनं ।
नैकत्रसंवसेन्नित्यंविश्वसेन्नैवकंप्रति ॥८२ ॥

भाषार्थ-सब प्रकार चौरीसे असज्जनोंके धनको ग्रहण करै और प्रतिदिन एकस्थानमें न बसे और किसीका विश्वास नकरै ८२

सदैवसावधानःस्यात्प्राणनाशंनचिंतयेत् ।
क्रूरकर्मासदोद्युक्तोनिर्घृणोदस्युकर्मसु॥८३

भाषार्थ-राजा सदा सावधान रहै और प्राणोंके नाशकी चिंता न करै (कठोर) क्रूर कर्मको करै, और सदा उद्योगी रहै, और चौरोंके कर्ममें दया न करै ॥ ८३ ॥

विमुखःपरदारेषुकुलकन्याप्रदूषणे ।
पुत्रवत्पालिताभृत्याःसमयेशत्रुतांगताः८४

भाषार्थ-परस्त्री और कुलीनकन्याके दूषणसे पराङ्मुख रहै और पुत्रके समान पाले भृत्यभी समयमें शत्रु होजाते हैं ॥ ८४ ॥

नदोषःस्यात्प्रयत्नस्यभागधेयंस्वयंहितत् ।
दृष्ट्वासुविफलंकर्मतपस्तप्त्वादिवंव्रजेत् ८५

भाषार्थ-और प्रयत्न करनेमें राजाको कुछ दोष नहीं क्योंकि प्रयत्नमें राजाका भाग्यही होता है-और कर्मको अच्छीतरह विफल (निष्फल) देखकर और तपको करिके स्वर्गमें राजा गमन करे ॥ ८५ ॥

उक्तंसमासतोराजकृत्यंमिश्रेधिकंब्रुवे ।
अध्यायःप्रथमःप्रोक्तोराजकार्यनिरूपकः ॥

भाषार्थ- इस प्रकार संक्षेपसे राजकार्य जिसमें ऐसा यह राजकार्य निरूपक प्रथमाध्याय हुवा । आगे विस्तारसे कहेंगे ॥ ८६॥

इति प्रथमोध्यायः पूर्तिमगात् ॥ १ ॥

॥ प्रथमोऽध्यायः समाप्तः ॥ १ ॥

श्रीः।

शुक्रनीति

(भाषाटीकासहिता)
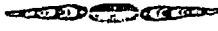
अध्यायः २ यः

यद्यप्यल्पतरंकर्मतदप्येकेनदुष्करं ।
पुरुषेणासहायेनकिमुराज्यंमहोदयं ॥ १ ॥

भाषार्थ–अल्पसे अल्पभी कार्य एक असहाय मनुष्यसे दुःखसे किया जाता है. महोदय (अतिमहान्) राज्य तो क्यों नही दुष्कर होगा ॥ १ ॥

सर्वविद्यासुकुशलोनृपोह्यपिसुमंत्रवित् ।
मंत्रिभिस्तुविनामंत्रंनैकोर्थंचिंतयेत्कचित् ॥

भाषार्थ–सर्व विद्याओंमें अच्छीतरह कुशल और सुमंत्रका वेत्ता (जाननेवाला) भी राजा एकाकी मंत्रियोंके विना व्यवहारकी कदापि चिंता न करे ॥ २ ॥

सभ्याधिकारिप्रकृतिसभासत्सुमतेस्थितः ।
सर्वदास्यान्नृपः प्राज्ञः स्वमतेनकदाचन ॥

भाषार्थ–विद्वान् राजा सभ्य अधिकारी प्रकृती सभासद इनके मतमें सदा स्थित रहे और अपने मतमें कदापि स्थित न रहे ॥ ३ ॥

प्रभुःस्वातंत्र्यमापन्नोह्यनर्थायैवकल्पते ।
भिन्नराष्ट्रोभवेत्सद्योभिन्नप्रकृतिरेवच ॥ ४ ॥

भाषार्थ–स्वतंत्रताको प्राप्त होकर राजा अनर्थ करता है और उसका राज्य भिन्न हो जाता है और प्रकृतिभी पृथक् होजाती है ४

पुरुषेपुरुषेभिन्नंदृश्यतेबुद्धिवैभवं ।
आप्तवाक्यैरनुभवैरागमैरनुमानतः ॥ ५ ॥

भाषार्थ–पुरुष २ में भिन्न २ बुद्धिका प्रताप दीखता है यथार्थ वक्ताओंके वाक्यसे और अनुभवसे और आगम और अनुमानसे ५ ॥

प्रत्यक्षेणचसादृश्यैःसाहसैश्चछलैर्बलैः ।
वैचित्र्यंव्यवहाराणामौन्नत्यंगुरुलाघवैः ६ ॥

नहितत्सकलंज्ञातुंनरेणैकेनशक्यते ।
अतःसहायान्वरयेद्राजाराज्यविवृद्धये ॥ ७

भाषार्थ– प्रत्यक्षसे-सादृश्यसे-और-साहस छल–बल इन पूर्वोक्त संपूर्ण साधनोंसे व्यवहारोंकी विचित्रता और गुरुलाघवसे ऊंचाई इनको एक मनुष्य नहीं जानसकता इससे राज्यकी वृद्धिके अर्थ सहायोंको अंगीकार राजा अवश्य करे ॥ ६ ॥ ७ ॥

कुलगुणशीलवृद्धाञ्छूरान्भक्तान्प्रियंवदान् ।
हितोपदेशकान्क्लेशसहान्धर्मरतान्सदा ८ ॥

भाषार्थ– कुल-गुण-शील-इनसे वृद्ध-शूर-वीर-भक्त-प्रियवक्ता-हितके उपदेष्टा-क्लेशके सहनशील-सदा धर्ममें रत ऐसे सहायों को राजा रक्खै ॥ ८ ॥

कुमार्गगंनृपमपिबुद्ध्योद्धर्तुंक्षमाञ्छुचीन् ।
निर्मत्सरान्कामक्रोधलोभहीनान्निरालसान् ॥

भाषार्थ–जो सहायक कुमार्गगामी राजाकोभी अपनी बुद्धिसे निवृत्त करनेको समर्थ हो और शुद्धहो और मत्सरी न हो काम-क्रोध लोभ-आलस्य-इनसे रहित हों उन्हें रक्खै ९

हीयतेकुसहायेनस्वधर्माद्राज्यतोनृपः ।
कुकर्मणाप्रनष्टास्तुदितिजाःकुसहायतः १०

भाषार्थ–निंदित सहायकसे राजा अपने धर्म और राज्यसे हीन होजाता है क्योंकि निंदितकर्म और निंदित सहायकसे दैत्य नष्ट होगये ॥ १० ॥

नष्टादुर्योधनाद्यास्तुनृपाःशूराबलाधिकाः ।
निरभिमानोनृपतिःसुसहायोभवेदतः ॥ ११

भाषार्थ–निंदितसहायक आदिसे शूरवीर और बलवान् दुर्योधनादिक भी नष्ट होगये इससे राजा निरभिमानी और सुसहायकर है॥

युवराजोमात्यगणोभुजावेतौमहीभुजः ।
तावेवनयनेकर्णौदक्षसव्यौक्रमात्स्मृतौ १२

भाषार्थ–राजाके युवराज और मंत्रियोंका समूह क्रमसे दक्षिण वामभुजा नेत्र और कर्ण कहे हैं ॥ १२ ॥

बाहुकर्णाक्षिहीनःस्याद्विनाताभ्यामतोनृपः
योजयेच्चिंतयित्वातौमहानाशायचान्यथा ॥

भाषार्थ–युवराज और मंत्रियोंके विना राजा बाहु-कर्ण-नेत्र इनसे हीन होता है इससे इन दोनोंको विचारके युक्त करै अन्यथा नियुक्त कियेहुये ये दोनों महानाशके कर्ता होते हैं ॥ १३ ॥

मुद्रांविनाखिलंराजकृत्यंकर्तुंक्षमंसदा ।
कल्पयेद्युवराजार्थमौरसंधर्मपत्निजं १४ ॥

भाषार्थ–जो मुद्राके विना संपूर्ण राजकृत्य करनेको सदा समर्थ हो ऐसे धर्मपत्नीके औरस पुत्रको युवराजके अर्थ कल्पित करै॥

स्वकनिष्ठंपितृव्यंवानुजंवाग्रजसंभवं ।
पुत्रंपुत्रीकृतंदत्तंयौवराज्येभिषेचयेत् १५ ॥

भाषार्थ–अपने कनिष्ठ पितृव्य (चाचा) अथवा कनिष्ठ भ्राताको अथवा ज्येष्ठ भ्राताके पुत्रको अथवा पुत्रीकृत पुत्रको अथवा दत्त पुत्रको युवराजपदवीपर नियुक्त करै १५

क्रमादभावेदौहित्रंस्वस्त्रीयंवानियोजयेत् ।
स्वहितायापिमनसानैतान्संकर्षयेत्क्वचित् ॥

भाषार्थ–क्रमसे पूर्वोक्त पुत्र आदिके अभावमें दौहित्र वा भानजाको नियुक्त करै और अपने हितके लियेभी कदाचित् इनको मनसे दुःखी न करै ॥ १६ ॥

स्वधर्मनिरताञ्छूरान्भक्तान्नीतिमतःसदा ।
संरक्षयेद्राजपुत्रान्बालानपिसुयत्नतः ॥ १७

भाषार्थ–अपने धर्ममें तत्पर-शूर-भक्त-नीतिवाले जो राजाओंके बालकपुत्र उनकी बडेयत्नसे रक्षा करै ॥ १७ ॥

लोलुभ्यमानास्तेर्थेषुहन्युरेनमरक्षिताः ।
रक्ष्यमाणायदिच्छिद्रंकथंचित्प्राप्नुवंतिते १८

भाषार्थ–यदि राजा इतर राजपुत्रोंकी यत्नसे रक्षा करै तौ वे द्रव्यके लोभको प्राप्त और अरक्षित हुए इस राजाको मार दैंगे यदि रक्षासेभी वे छिद्रको प्राप्त होजाय तौ १८॥

सिंहशावइवघ्नंतिरक्षितारंद्विपंद्रुतं ।
राजपुत्रामदोद्भूतागजाइवनिरंकुशाः ।१९।

भाषार्थ-वे राजपुत्र जैसे सिंहका बालक हस्तीको इस प्रकार रक्षक राजाको हतदेते हैं निरंकुश गजके समान मदसे उन्मत्त राजपुत्र-पिता आदिकोभी हतदेते हैं ॥१९॥

पितरंचापिनिघ्नंतिभ्रातरंत्वितरंनकिं ।
मूर्खोबालोपीच्छतिस्मस्वाम्यंकिंनुपुनर्युवा

भाषार्थ-पिता और भ्राताको भी हतदेते हैं तो इतरको क्यों नहीं हतेंगे क्योंकि मूर्ख और बालकभी अपने स्वल्पराज्यकी इच्छा करता है तो युवा क्यों नहीं करेगा ॥२०॥

स्वात्यंतसन्निकर्षेणराजपुत्रांस्तुरक्षयेत् ।
सद्भृत्यैश्चापितत्स्वांतंछलेर्ज्ञात्वासदास्वयं ॥

भाषार्थ-और अपने सुपात्रभृत्योंसे उसके स्वांत (दिले) को आप जानकर और अपने बहुत निकट रखकर राजपुत्रोंकी रक्षा करे२१

सुनीतिशास्त्रकुशलान्धनुर्वेदविशारदान् ।
क्लेशसहांश्चवाग्दंडपारुष्यानुभवान्सदा२२।

भाषार्थ-श्रेष्ठ नीतिशास्त्रमें कुशल धनुषविद्यामें चतुर-क्लेशके सहनेवाले और वाग्दंड (कठोर वचन) इनके ज्ञाता अपने पुत्रोंको राजा करे ॥ २२ ॥

शौर्ययुद्धरतान्सर्वकलाविद्याविदोजसाः ।
सुविनीतान्प्रकुर्वीतह्यमात्याद्यैर्नृपःसुतान् ॥

भाषार्थ-वीरता और युद्धमें रत संपूर्ण विद्याओंकी कलाके यथार्थ ज्ञाता और अच्छे विनीत (नम्र) अपने पुत्रोंको मंत्रियोंके द्वारा राजा करे ॥२३॥

सुवस्त्राद्यैर्भूषयित्वाललयित्वासुक्रीडनैः ।
अर्हयित्वासनाद्यैश्चपालयित्वासुभोजनैः ॥

भाषार्थ-अच्छे वस्त्रों आदिसे भूषित और अच्छी क्रीडाओंसे लाडिला और अच्छे आसन आदिसे सत्कार और अच्छे भोजनोंसे पाल करि ॥ २४ ॥

कृत्वातुयौवराज्यार्हान्यौवराज्येभिषेचयेत्।
अविनीतकुमारंहिकुलमाशुविनश्यति ॥

भाषार्थ-और यौवराज्यके योग्य करिके यौवराज्यके विषे अभिषेक देदे क्योंकि जिस कुलमें राजकुमार अविनीत है वह कुल शीघ्र नष्ट होजाता है ॥२५॥

राजपुत्रःसुदुर्वृत्तः परित्यागंहिनार्हति ।
क्लिश्यमानःसपितरंपरानाश्रित्यहंतिहि २६

भाषार्थ-दुष्टभी राजाका पुत्र त्याग करनेके योग्य नहीं होता और वह क्लेशको प्राप्त होकर और इतर राजाओंके आधीन होकर अपने पिताको मारदेता है ॥ २६ ॥

व्यसनेसज्जमानंतंक्लेशयेद्व्यसनाश्रयैः ।
दुष्टगजमिवोद्वृत्तंकुर्वीतसुखबंधनं ॥ २७ ॥

भाषार्थ-जो राजपुत्र व्यसन (द्यूतआदि) में आसक्त होजाय तो व्यसनके अधिपतियोंसे दुःखित करै उद्वृत्त (उन्मत्त) दुष्टगजके समान उसका सुखसे बंधन करै अर्थात् शांति आदिके उपायसे वश करै२७

सुदुर्वृत्तास्तुदायादाहंतव्यास्तेप्रयत्नतः ।
व्याघ्रादिभिःशत्रुभिर्वाछलैराष्ट्रविवृद्धये ॥

भाषार्थ-दुराचारी जो दायाद (हिस्सेदार) है उनको बडे यत्नके साथ सिंह आदि अथवा शत्रु और छलसे अपने राज्यकी वृद्धिके अर्थ मरवा दे ॥ २८ ॥

अतोन्यथाविनाशायप्रजायाभूपतेश्चते ।
तोषयेयुर्नृपंनित्यंदायादाःस्वगुणैःपरैः ॥

भाषार्थ-अन्यथा प्रजा .और राजाको वे दायाद नाशके हेतु होते हैं क्योंकि दायाद अपने श्रेष्ठ गुणोंसे राजाको नित्य प्रसन्न करते हैं ॥ २९ ॥

भ्रष्टाभवंत्यन्यथातेस्वभागाज्जीवितादपि ।
स्वसापिंड्यविहीनायेह्यन्योत्पन्नानराःखलु॥

भाषार्थ-अन्यथा वे अपने भाग और जीवनसे हीन होजाते हैं जो नर अपने सपिंड हो और अन्यसे उत्पन्न है उन्हें ॥ ३० ॥

मनसापिनमंतव्यादत्ताद्याःस्वसुताइति ।
तद्दत्तकत्वमिच्छंतिदृष्ट्वायंधनिकंनरं ॥ ३१॥

भाषार्थ-मनसेभी दत्त आदि अपने पुत्र हैं ऐसा न मानैं जिस धनिक मनुष्यको देखकर तिसके दत्तककी इच्छा करते हैं३१

स्वकुलोत्पन्नकन्यायाःपुत्रस्तेभ्योवरोह्यतः ।
अंगादंगात्संभवतिपुत्रवद्दुहितानृणां ॥ ३२॥

भाषार्थ-उनसे अपने कुलसे उत्पन्न हुई कन्याका पुत्र श्रेष्ठ है क्योंकि पुत्रके समान मनुष्यके अंग२से कन्या उत्पन्न होती है ॥३२॥

पिंडदानेविशेषोनपुत्रदौहित्रयोस्त्वतः ।
भूप्रजापालनार्थंहिभूपोदत्तंतुपालयेत् ॥ ३३

भाषार्थ-और जिससे पुत्र दौहित्रके पिंडदानमें विशेष नही है पृथ्वी और प्रजाके पालनाके अर्थ राजा दत्तकपुत्रकोभी पालना करै ॥ ३३ ॥

नृपःप्रजापालनार्थंसधनश्चेन्नचान्यथा ।
परोत्पन्नेस्वपुत्रत्वंमत्वासर्वंददातितं॥ ३४ ॥

भाषार्थ-राजा और धनी केवल प्रजाके पालनार्थ हैं अन्यथा नही परसे उत्पन्नके विषें अपना पुत्रभाव मानकर उसीको सर्वस्व देताहै ॥ ३४ ॥

किमाश्चर्यमतोलोकेनददातियजत्यपि ।
प्राप्यापियुवराजत्वंप्राप्नुयाद्विकृतिंनच ३५

भाषार्थ-इससे अधिक क्या आश्चर्य है कि न धनको लोकमें देता है और न यज्ञ करता है और युवराजपदवीको प्राप्त होकरभी जो विकारको नही प्राप्त होता है ॥३५॥

स्वसंपत्तिमदान्नैवमातरंपितरंगुरुं ।
भ्रातरंभगिनींवापिह्यन्यान्वाराजवल्लभान् ॥

भाषार्थ-अपनी संपत्तिके मदसे माता-पिता-गुरु-भ्राता-भगिनी (बहन) और इतर राजाके वल्लभ (मंत्री) आदिका अपमान न करै॥३६

महाजनांस्तथाराष्ट्रेनावमन्येन्नपीडयेत् ।
प्राप्यापिमहतींवृद्धिंवर्तेतपितुराज्ञया॥ ३७॥

भाषार्थ-राज्यके महाजनोंको अपमान और पीडा न दे और अधिकवृद्धिको प्राप्त होकर भी पिताकी आज्ञामें वर्त्तै ॥ ३७ ॥

पुत्रस्यपितुराज्ञापिपरमंभूषणंस्मृतं ।
भार्गवेणहतामाताराघवस्तुवनंगतः ॥ ३८॥

भाषार्थ-पिताकी आज्ञाही पुत्रका परमभूषण कहा है परशुरामजीने पिताकी आज्ञासे माताको हता और रामचंद्रजी पिताकी आज्ञासे वनको गये ॥ ३८ ॥

पितुस्तपोबलात्तौतुमातरंराज्यमापतुः ।
शापानुग्रहयोःशक्तोयस्तस्याज्ञागरीयसी ॥

भाषार्थ-आर पिताके तपोबलसे वे दोनों माता और राज्यको क्रमसे प्राप्त हुए जो शाप और अनुग्रहमें समर्थ हैं उसकी आज्ञाही सर्वोपरि है ॥ ३९ ॥

सोदरेषुचसर्वेषुस्वस्याधिक्यंनदर्शयेत् ।
भागार्हभ्रातॄणांनष्टोह्यवमानात्सुयोधनः ॥

भाषार्थ–संपूर्ण भ्राताओंमें अपनी अधिकता न दिखावें क्योंकि भागके योग्य भ्राताओंके अपमानसे दुर्योधन नष्ट होगया ॥ ४० ॥

पितुराज्ञोल्लंघनेनप्राप्यापिपदमुत्तमं।
तस्माद्भ्रष्टाभवंतीहदासवद्राजपुत्रकाः ४१

भाषार्थ– पिताकी आज्ञाके अवलंघनसे उत्तम पदको प्राप्त होकरभी तिस पदसे इस संसारमें दासके समान राजाके पुत्र भ्रष्ट हो जाते हैं ॥ ४१ ॥

ययातेश्चयथापुत्राविश्वामित्रसुतायथा।
पितृसेवापरस्तिष्ठेत्कायवाङ्मानसैःसदा४२

भाषार्थ–जैसे ययातिराजाके पुत्र और विश्वामित्र ऋषिके पुत्र पिताकी आज्ञाके अवलंघनसे नष्ट हुए तिससे पुत्र देहमनवाणीसे पिताकी आज्ञामें तत्पर रहें ॥ ४२ ॥

तत्कर्मनियतंकुर्याद्येनतुष्टोभवेत्पिता।
तन्नकुर्याद्येनपितामनागपिविषीदति॥४३॥

भाषार्थ–उस कार्यको नियमसे करें जिससे पिता प्रसन्न हो और उसको न करें जिससे पिता यत्किंचित्भी दुःखित हो ॥ ४३ ॥

यस्मिन्पितुर्भवेत्प्रीतिःस्वयंतस्मिन्प्रियंचरेत्
यस्मिन्द्वेषंपिताकुर्यात्स्वस्यापिद्वेष्यएवसः

भाषार्थ-जिस पुरुषमें पिताकी प्रीति हो उसमें अपनीभी प्रीति करें और जिससे पिताका द्वेष हो उसे अपनाभी द्वेष्य ही जाने ॥४४॥

असंमतंविरुद्धंवापितुर्नैवसमाचरेत्।
चारसूचकदोषेणयदिस्यादन्यथापिता४५

भाषार्थ–पिताके असंमत और विरुद्धका आचरण न करें यदि दूत और सूचक (चुगल) के दोषसे पिताकी विपरीत बुद्धि होजाय ॥ ४५ ॥

प्रकृत्यनुमतंकृत्वातमेकांतेप्रबोधयेत्।
अन्यथासूचकान्नित्यंमहद्दंडेनदंडयेत्॥४६।

भाषार्थ–तो प्रजाके अनुमत करिके उसे एकांतमें बोधित करे (समझावे) यदि पिता न माने तो सूचककी सहायता लेकर महादंडसे शिक्षित करे ॥ ४६ ॥

प्रकृतीनांचकपटःस्वांतंविद्यात्सदैवहि।
प्रातर्नत्वाप्रतिदिनंपितरंमातरंगुरुं॥ ४७॥

भाषार्थ–कपट कर प्रकृतियोंके स्वभावको सदा जानें और पिता-माता-गुरु-इनको प्रतिदिन प्रातःकाल नमस्कार करके॥४७॥

राजानंस्वकृतंयच्चनिवेद्यानुदिनंततः।
एवंगृहविरोधेनराजपुत्रोवसेद्गृहे॥ ४८ ॥

भाषार्थ-तिसके अनंतर राजाको अपना कृत्य प्रतिदिन निवेदन करके इस प्रकार अपने घरके अविरोधसे राजाका पुत्र घरमें वसे४८

विद्ययाकर्मणाशीलैःप्रजाःसंरंजयन्मुदा।
त्यागीचसत्वसंपन्नःसर्वान्कुर्याद्वशेस्वके४९

भाषार्थ–विद्या-कर्म-शीलसे आनंद होकर प्रजाको प्रसन्न रखता हुआ त्यागी और सत्वगुणी हो कर सबको अपने वशमें करे४९

शनैःशनैःप्रवर्धेतशुक्लपक्षमृगांकवत्।
एवंवृत्तोराजपुत्रोराज्यंप्राप्याप्यकंटकं ५०

भाषार्थ–शनैः २शुक्लपक्षके चंद्रमा समान वृद्धिको प्राप्त हो इस प्रकार आचरणशील राजपुत्र निष्कंटक राज्यको प्राप्त हो करभी ॥ ५० ॥

सहायवान्सहामात्यश्चिरंभुंक्तेवसुंधरां।
समासतःकार्यमुक्तंयुवराजस्ययद्धितं।५१।

भाषार्थ–सहाय और मंत्रियों सहित युवराज चिर कालतक पृथ्वीको भोगता है यह

संक्षेपसे युवराजका हितकारी कार्य वर्णन किया ॥ ५१ ॥

समासादुच्यतेकृत्यममात्यादेश्चलक्षणं ।
मृदुगुरुप्रमाणस्ववर्णशब्दादिभिःसमं ५२॥

भाषार्थ-मंत्री आदिकोंके कार्य और लक्षण संक्षेपसे वर्णन करते हैं-कोमलता-गुरुता-प्रमाण-वर्ण-शब्दादिकों सहित॥ ५२ ॥

परीक्षकैर्द्रावयित्वायथास्वर्णपरीक्ष्यते ।
कर्मणासहवासेनगुणैःशीलकुलादिभिः ५३

भाषार्थ-जैसे परीक्षकोंसे तपायकर सुवर्णकी परीक्षा कीजाती है तिसी प्रकार कर्मसे सहवाससे गुण-शील-और-कुलादिकसे भृत्यकीभी परीक्षा करे ॥ ५३

भृत्यंपरीक्षयेन्नित्यंविश्वास्यंविश्वसेत्तदा ।
नैवजातिर्नचकुलंकेवलंलक्षयेदपि॥ ५४ ॥

भाषार्थ-भृत्यकी नित्य परीक्षा करे और तभी विश्वासके योग्यका विश्वास करै और केवल जाति और कुलहीको न देखै॥५४ ॥

कर्मशीलगुणाःपूज्यास्तथाजातिकुलेनहि ।
नजात्यानकुलेनैवश्रेष्ठत्वंप्रतिपद्यते॥५५॥

भाषार्थ-जैसे कर्म-शील-गुण पूज्य हैं तिस प्रकार जाति-कुल-पूज्य नहीं केवल जाति और कुलसे श्रेष्ठताको प्राप्त नही होता॥५५

विवाहेभोजनेनित्यंकुलजातिविवेचनं ।
सत्यवान्गुणसंपन्नस्तथाभिजनवान्धनी ५६

भाषार्थ-विवाह और भोजनमें-नित्य कुल और जातिका विवेक करै सत्यवान्-गुणी और कुटुंबी और धनी ॥ ५६ ॥

सुकुलश्चसुशीलश्चसुकर्माचनिरालसः ।
यथाकरोत्यात्मकार्यंस्वामिकार्यंततोधिकं॥

भाषार्थ-श्रेष्ठकुलसे उत्पन्न सुशील उत्तम कर्मका कर्त्ता और निरालस होकर जैसा अपना कार्य करै तिससे अधिक स्वामीका करै ॥ ५७ ॥

चतुर्गुणेनयत्नेनकायवाङ्मानसेनच ।
भृत्याचतुष्टेमृदुवाक्कार्यदक्षःशुचिर्दृढः॥५८

भाषार्थ-अपने कार्यकी अपेक्षा चतुर्गुण यत्न और देह वाणी मनसे स्वामीके कार्यको करै भृति (नोकरी) से संतुष्ट रहै कोमलवाणी और कार्यमें चतुर और शुद्ध और दृढ रहै ॥ ५८ ॥

परोपकरणेदक्षोह्यपकारपराङ्मुखः ।
स्वाम्यागस्कारिणंपुत्रंपितरंचापिदर्शकः ॥

भाषार्थ-परके कार्यमें चतुर और परके अपकारसे निवृत्त रहै और अपने स्वामीके अपराधी पुत्र और पिता आदिका द्रष्टा अर्थात् देखता रहै ॥ ५९ ॥

अन्यायगामिनिपतौह्यतद्रूपःसुबोधकः ।
नाक्षेप्तातद्गिरंकांचित्तन्न्यूनस्याप्रकाशकः॥

भाषार्थ-अन्याय करते स्वामीको बोधन करै (समझावै) और अन्यायमें स्वयं प्रवृत्त न हो और स्वामीकी वाणीमें शंका न करै और स्वामीकी न्यूनताभी प्रकाशित न करै ॥ ६० ॥

अदीर्घसूत्रःसत्कार्येह्यसत्कार्येचिरक्रियः ।
नतद्दारपुत्रमित्रच्छिद्रदर्शीकदाचन६१॥

भाषार्थ-उत्तम कार्यको शीघ्र करै और असत् (बुरे) कार्यको विलंबसे करै और स्वामी-स्त्री-पुत्र-मित्र-इनके छिद्रको कभी न देखै ॥ ६१ ॥

तद्वद्बुद्धिस्तदीयेषुभार्यापुत्रादिबंधुषु ।
नश्लाघतेस्पर्धतेननाभ्यसूयतिनिंदति॥६२।

भाषार्थ-स्वामीके संबंधी स्त्री-पुत्र-बंधु आदिकोंमें स्वामीके समान बुद्धि रक्खे श्लाघा (बड़ाई) न करे और न स्पर्धा (तिरस्कार) की इच्छा करे और उनकी बड़ाई देखकर दुःखित न होय और न निंदा करे ॥ ६२ ॥

नेच्छत्यन्याधिकारंहिनिःस्पृहोमोदतेसदा ।
तद्दत्तवस्त्रभूषादिधारकस्तत्पुरोनिशं॥६३॥

भाषार्थ-अन्यके अधिकारकी इच्छा न करे निःस्पृह (इच्छारहित) हुआ सदा प्रसन्न रहे और स्वामीके दिये हुए वस्त्र-भूषण-आदिको स्वामीके आगे रात्रिदिन धारण करे ॥ ६३ ॥

भृतितुल्यव्ययीदांतोदयालुःशूरएवहि ।
तदकार्यस्यरहसिसूचकोभृतकोवरः॥६४॥

भाषार्थ-अपनी भृति (नोकरी) के समान व्यय (खर्च) करे और दांत (चतुर) दयालु और शूरवीर और स्वामीके अन्यथा कार्यको एकांतमें जो सूचन करे वह भृत्य श्रेष्ठ होता है ॥ ६४ ॥

विपरीतगुणैरेभिर्भृतकोनिंद्यउच्यते ।
येभृत्याहीनभृतिकायेदंडेनप्रकर्षिताः ६५

भाषार्थ-जो पूर्वोक्त इनगुणोंसे हीनहो वह भृत्य निंदायोग्य कहाता है जो भृत्य हीन भृतिक (नोकरी रहित) है और दंडसे दुःखित है ॥ ६५ ॥

शठाश्चकातरालुब्धाःसमक्षप्रियवादिनः ।
मत्ताव्यसनिनश्चार्ताउत्कोचेष्टाश्चदेविनः ॥

भाषार्थ-और जो शठ और भीरु लोभी और प्रत्यक्षमें प्रियवादी है व्यसनी (मदिरापान आदिमें प्रवृत्त) और दुःखी है उत्कोच (घूंस) लेनेमें इष्ट है और देवी द्यूतमें आसक्त है ॥ ६६ ॥

नास्तिकादांभिकाश्चैवसत्यवाचोप्यसूयकाः
येचापमानितायेसद्वाक्यैर्मर्मणिभेदिताः ॥

भाषार्थ-जो भृत्य नास्तिक दंभी और सत्यबोलनेमें निंदा प्रकट करते हैं और जो अपमानको प्राप्त हुएहै, और जो कुवाक्योंसे मर्ममें विंधे है ॥ ६७ ॥

चंडाःसाहसिकाधर्महीनानैतेसुसेवकाः ।
संक्षेपतस्तुकथितंसदसद्भृत्यलक्षणं ॥६८॥

भाषार्थ-चंड (अतिक्रोधी) साहसिक (अविचारसे कार्यकारी) धर्महीन ऐसे भृत्य अच्छे नही होते संक्षेपसे उत्तम और अधम भृत्योंके लक्षण वर्णन किये ॥ ६८ ॥

समासतःपुरोधादिलक्षणंयत्तदुच्यते ।
पुरोधाचप्रतिनिधिःप्रधानसचिवस्तथा॥६९

मंत्रीचप्राड्विवाकश्चपंडितश्चसुमंत्रकः ।
अमात्योदूतइत्येताराज्ञःप्रकृतयोदश ॥७०

भाषार्थ-संक्षेपसे पुरोहित आदिकोंके जो लक्षण होते हैं सो कहते हैं पुरोहित प्रतिनिधि (कायममुकाम) प्रधानमंत्री-मंत्री-प्राड्विवाक (वकील) पंडित-श्रेष्ठमंत्री-अमात्य-दूत-ये दश राजाकी प्रकृति होती हैं ॥ ६९ ॥ ७० ॥

दशमांशाधिकाःपूर्वंदूतांताःक्रमशःस्मृताः।
अष्टप्रकृतिभिर्युक्तोनृपःकैश्चित्स्मृतःसदा ॥

भाषार्थ-पूर्वोक्त पुरोहित आदि और दूततक दशांश अधिक मासिक आदिके भागी क्रमशः होने कहे हैं और कोई ऋषि आठ प्रकृतियोंसे युक्त राजाको वर्णन करते हैं ॥ ७१ ॥

सुमंत्रःपंडितोमंत्रीप्रधानःसचिवस्तथा ।
अमात्यप्राड् विवाकश्चतथाप्रतिनिधिःस्मृतः

भाषार्थ-सुमंत्र-पंडित-मंत्री-प्रधान सचिव-अमात्य-प्राड्विवाक-प्रतिनिधि ये प्रकृति हैं ॥ ७२ ॥

एताभृतिसमास्त्वष्टौराज्ञःप्रकृतयःसदा ।
इंगिताकारतत्वज्ञोदूतस्तदनुगःस्मृतः ७३॥

भाषार्थ-समान है मासिक जिनका ऐसे पूर्वोक्त सुमंत्र आदि प्रकृति कहे हैं जो चेष्टा और आकृतिके तत्वको जाने वह राजाका अनुयायी दूत होता है ॥ ७३ ॥

पुरोधाःप्रथमंश्रेष्ठःसर्वेभ्योराजराष्ट्रभृत् ।
तदनुस्यात्प्रतिनिधिःप्रधानस्तदनंतरं॥७४

भाषार्थ-सबसे श्रेष्ठ और प्रथम और संपूर्ण देशका पालनकर्त्ता पुरोहित होता है और पुरोहितका अनुयायी प्रतिनिधि और प्रतिनिधिके अनंतर प्रधान होता है ॥७४॥

सचिवस्तुततःप्रोक्तोमंत्रीतदनुचोच्यते ।
प्राड्विवाकस्ततःप्रोक्तःपंडितस्तदनंतरं ॥

भाषार्थ-तिसके अनंतर सचिव-और तिसके अनंतर मंत्री और तिसके अनंतर प्राड्विवाक और तिसके अनंतर पंडित होता है ॥ ७५ ॥

सुमंत्रस्तुततःख्यातोह्यमात्यस्तुततः परं ।
दूतस्ततःक्रमादेतेपूर्वश्रेष्ठायथागुणाः॥७६।

भाषार्थ-तिसके अनंतर सुमंत्र और तिसके अनंतर अमात्य और तिसके अनंतर दूत ये पूर्वोक्त क्रमसे गुणोंके अनुसार श्रेष्ठ होते हैं ॥ ७६ ॥

मंत्रानुष्ठानसंपन्नस्त्रैविद्यःकर्मतत्परः ।
जितेंद्रियोजितक्रोधोलोभमोहविवर्जितः७७

भाषार्थ-मंत्र और अनुष्ठानमें संपन्न (कुशल) वेदत्रयीके ज्ञाता-कर्ममें तत्पर-जितेंद्रिय-जितक्रोध-लोभ और मोह रहित ॥ ७७ ॥

षडंगवित्सांगधनुर्वेदविच्चार्थधर्मवित् ।
यत्कोपभीत्याराजापिधर्मनीतिरतोभवेत् ॥

भाषार्थ-वेदके व्याकरण आदि छः अंगोंका ज्ञाता औ धनुर्विद्याका-औ धर्मका ज्ञाता हो और जिसके क्रोधके भयसे राजाभी धर्म और नीतिमें तत्पर होजाय॥७८॥

नीतिशस्त्रास्त्रव्यूहादिकुशलस्तुपुरोहितः ।
सैवाचार्यःपुरोधायःशापानुग्रहयोःक्षमः ॥

भाषार्थ-नीति-शस्त्र-और अस्त्रके समूहमें कुशलहो वही पुरोहित होता है और जो पुरोहित होता है वही आचार्य होता है और वह पुरोहित ऐसा होना चाहिये जो शाप और अनुग्रह (दयाभाव) में समर्थ हो ॥ ७९ ॥

विनाप्रकृतिसन्मंत्राद्राज्यनाशोभवेन्मम ।
निरोधनंभवेदेवंराज्ञस्तेस्युःसुमंत्रिणः८०॥

भाषार्थ-प्रजाकी संमतिके विना राज्यका नाश होता है और मेरा निरोध होता है इस प्रकारके अवसर पर संमतिके जो दाता हैं वे राजाके सुमंत्री होते हैं ॥ ८० ॥

नबिभेतिनृपोयेभ्यस्तैःकिंस्याद्राज्यवर्धनं ।
यथालंकारवस्त्राद्यैःस्त्रियोभूष्यास्तथाहिते॥

भाषार्थ-जिन मंत्रियोंसे राजा भय नहि करता उनसे राज्यकी क्या वृद्धि होती है इससे जिस प्रकार स्त्रियोंको वस्त्र-भूषण आदिसे भूषित करते हैं इसी प्रकार मंत्रियोंकोभी राजा भूषित करै ॥ ८१ ॥

राज्यंप्रजाबलंकोशःसुनृपत्वंनवर्धितं ।
यन्मंत्रतोरिनाशस्तैर्मंत्रिभिःकिंप्रयोजनं ॥

भाषार्थ-राज्य-प्रजा-सेना-कोश (खजाना) राजाकी उत्तमता-शत्रुनाश जिन मंत्रि-

योंकी संमतिसे पूर्वोक्त राज्य आदि वृद्धिको प्राप्त नहीं हुए ऐसे मंत्रियोंसे क्या प्रयोजनहै अर्थात् कुछभी नहीं ॥ ८२ ॥

कार्याकार्यप्रविज्ञातास्मृतःप्रतिनिधिस्तुसः।
सर्वदर्शीप्रधानस्तुसेनावित्सचिवस्तथा ॥

भाषार्थ—कार्य और अकार्यका प्रतिज्ञाता जो हो उसे प्रतिनिधि कहते हैं राजाके संपूर्ण कार्योंका जो द्रष्टा उसे प्रधान कहते हैं और सेनाका जो ज्ञाता उसे सचिव कहते हैं

मंत्रीतुनीतिकुशलःपंडितोधर्मतत्त्ववित् ।
लोकशास्त्रनयज्ञस्तुप्राड्विवाकःस्मृतःसदा ॥

भाषार्थ—नीतिमें जो कुशल उसे मंत्री और धर्मतत्त्वका जो ज्ञाता उसे पंडित और लोक और शास्त्रकी नीतिका जो ज्ञाता उसे प्राड्विवाक कहते हैं ॥ ८४ ॥

देशकालप्रविज्ञाताह्यमात्यइतिकथ्यते ।
आयव्ययप्रविज्ञातासुमंत्रःसचकीर्तितः ॥

भाषार्थ—देशकालके ज्ञाताको अमात्य कहते हैं—आय (आमदनी) व्यय (खर्च) का जो ज्ञाता उसे सुमंत्र कहते हैं ॥ ८५ ॥

इंगिताकारचेष्टज्ञःस्मृतिमान्देशकालवित् ।
षाड्गुण्यमंत्रविद्वाग्मीवीतभीर्दूतइष्यते ॥

भाषार्थ—इंगित-नेत्रसे इच्छाका प्रकाश आकार और चेष्टाका ज्ञाता और स्मृतिमान् (धारणाका अधिकारी) और देशकालका ज्ञाता छः हैं गुण जिसमें ऐसे मंत्रका वेत्ता वाग्मी यथार्थ धीरतासे वक्ता और भयरहित इस प्रकारके लक्षण जिसमें हों उसे दूत कहते हैं ॥ ८६ ॥

अहितंचापियत्कार्यंसद्यःकर्तुंयदौचितं ।
अकर्तुंयद्धितमपिराज्ञःप्रतिनिधिःसदा॥८७॥

भाषार्थ—राजाके अहितकार्य और तत्काल कर्त्तव्यकार्य और अकर्तव्य कार्य औ हितकारी कार्यको प्रतिनिधि सर्व कालमें जानें ॥ ८७ ॥

बोधयेत्कारयेत्कुर्यान्नकुर्यान्नप्रबोधयेत् ।
सत्यंवायदिवासत्यंकार्यंजातंचयाकिल८८।

भाषार्थ—और जो सत्यकार्यका समूह है उसे बोधन करे अथवा किसीसे करवादे और जो असत्य कार्योंका समूह है उसे नतौ आप करे और न किसीको विदित करै८८॥

सर्वेषांराजकृत्येषुप्रधानस्तद्विचिंतयेत् ।
गजानांचतथाश्वानांरथानांपदगामिनां ८९

भाषार्थ-संपूर्ण राजकार्योंमें सत्य और असत्यका प्रधान चिंतन करै और-हस्ति अश्व-रथ और पदाति इनकीभी परीक्षा प्रधानही करै॥

सदृढानांतथोष्ट्राणांवृषाणांसद्यएवहि।
वाद्यभाषासुसंकेतव्यूहाभ्यसनशालिनां ९०

भाषार्थ—और दृढ उष्ट्र (ऊंट) और वृष (बैल) वाद्य (बाजे) के संकेत और व्यूह (कसरत)के अभ्यासियोंके आचरणोंको देखै

प्राक्प्रत्यग्गामिनांराज्यचिन्हशस्त्रास्त्रधारिणां ।
परिचारगणानांहिमध्यमोत्तमकर्मणां।९१।

भाषार्थ—पूर्व और पश्चिमके गमनकर्त्ता और मध्यम उत्तम है कर्म जिनका ऐसे जो राज्यके चिह्न शस्त्र अस्त्रके धारी परिचारक (सेवक) उनके आचरणकोभी देखै॥९१॥

अस्त्राणामस्त्रपातीनांसद्यस्त्वंतुरगीगणः ।
कार्यक्षमश्चप्राचीनःसाद्यस्कःकतिविद्यते ॥

भाषार्थ—अस्त्र और शस्त्रधारी इनकी नवीनता और सवारोंका समूह कितना कार्य-

कारी है और कितना प्राचीनहै और कितना नवीनहै इसकी चिंताभी प्रधानही रक्खै ९२

कार्यासमर्थःकत्यस्तिशस्त्रगोलाग्निचूर्णयुक्।
सांग्रामिकश्चकत्यस्तिसंभारस्तान्विचिंत्यच

भाषार्थ–और कितना कार्यकारि नहीं है और दारु और गोलेके संयुक्त शस्त्र कितने है और संग्रामके योग्य संभार कितना है इसको चिंतन करके ॥ ९३ ॥

सचिवश्चापितत्कार्यंराज्ञेसम्यङ्निवेदयेत्।
सामदामश्चभेदश्चदंडःकेषुकदाकथं॥ ९४॥

भाषार्थ–और सचिवभी पूर्वोक्त कार्यको राजाके प्रति भली प्रकार निवेदन करै और साम दाम भेद दंड किनको उचित है और किस कालमें देना होगा यहभी मंत्री राजाको निवेदन करै ॥ ९४ ॥

कर्तव्यःकिंफलंतेभ्योबहुमध्यंतथाल्पकं।
एतत्संचिंत्यनिश्चित्यमंत्रीसर्वंनिवेदयेत्॥

भाषार्थ–और पूर्वोक्त दंडोंसे क्या उत्तम मध्यम अल्प फल होगा यह संपूर्ण निश्चय और चिंता करके मंत्री निवेदन करै ॥९५॥

साक्षिभिर्लिखितैर्भोगैश्छलभूतैश्चमानुषान्।
स्वानुत्पादितसंप्राप्तव्यवहारान्विचिंत्यच ॥

भाषार्थ– साक्षियोंनें लिखे जो भोग उनसे और छलके बलसे किये भोगोंसे अपने मनुष्योंको ऐसे देखै कि आप उत्पन्न करके ये व्यवहारी हैं अर्थात् अनर्थसे नही ॥९६॥

दिव्यसंसाधनान्वापिकेषुकिंसाधनंपरं।
युक्तिप्रत्यक्षानुमानोपमानैर्लोकशास्त्रतः ॥

भाषार्थ-दिव्य साधनके योग्यको और किसमें कौन साधन है इनको प्रत्यक्ष अनुमान उपमान लोक और शास्त्रसे मंत्री जाने ॥ ९७॥

बहुसम्मतसंसिद्धान्विनिश्चित्यसभास्थितः।
ससभ्यःप्राड्विवाकस्तुनृपंसंबोधयेत्सदा ॥

भाषार्थ–अनेक संमतियोंके सिद्ध कार्योंको सभासदोंके सहित प्राड्विवाक (वकील) सभामें स्थित होकर राजाको निवेदन करै९८

वर्तमानाश्चप्राचीनाधर्माःकेलोकसंश्रिताः।
शास्त्रेषुकेसमुद्दिष्टाविरुध्यंतेचकेधुना ९९॥

लोकशास्त्रविरुद्धाःकेपंडितस्तान्विचिंत्यच।
नृपंसंबोधयेत्तैश्चपरत्रेहसुखप्रदैः ॥१००॥

भाषार्थ–वर्तमान और प्राचीन धर्म लोकमें कौनसे हैं और शास्त्रमें कौनसे कहे हैं और अब कोनसे धर्म शास्त्रके विरुद्ध हैं और लोक और शास्त्र दोनोंसे कौनसे धर्म विरुद्ध है पंडित विचार कर इस लोक और परलोकमें सुखदायक उन धर्मोंको राजाके प्रति बोधित करै (बतावै) ॥ ९९ ॥ १०० ॥

इयच्चसंचितंद्रव्यंवत्संरेस्मिन्तृणादिकं।
व्ययीभूतमियच्चैवशेषंस्थावरजंगमं ॥ १ ॥

इयदस्तीतिवैराज्ञेसुमंत्रोविनिवेदयेत्।
पुराणिचकतिग्रामाअरण्यानिचसंतिहि २॥

भाषाथ–इस वर्षमें इतना तृण आदि द्रव्य संचय हुआ है और इतना व्यय (खर्च) हुआ है और इतना शेष (बाकी) है और इतना स्थावर (वृक्षादि) और इतना जंगम (पशु-आदि) है यह संपूर्ण सुमंत्र राजाके प्रति निवेदन करै–और कितने पुर हैं और कितने ग्राम हैं और कितने अरण्य (वन)हैं यह अमात्य राजाके प्रति निवेदन करै ॥१॥ ॥२॥

कर्षिताकतिभूःकेनप्राप्तोभागस्ततःकति।
भागशेषंस्थितंतस्मिन्कत्यकृष्टाचभूमिका ॥

भाषार्थ–किसने कितनी भूमि जोती है और कितना भाग उससे मिला और कितना शेष रहा और विना जोती भूमि कितनी है यहभी अमात्यही राजाको निवेदन करे ॥३॥

भागद्रव्यंवत्सरेस्मिन्शुल्कंदंडादिजंकति ॥
अकृष्टपच्यंकतिचकतिचारण्यसंभवं ॥४ ॥

भाषार्थ–इस वर्ष कितना द्रव्य भागका हुआ और कितना शुल्क (महसूल) और कितना द्रव्य दंडका हुआ और विनाजोते कितना अन्न हुआ और कितना अन्न वनमें उत्पन्न हुआ यहभी अमात्य निवेदन करे ॥४

कतिचाकरसंजातंनिधिप्राप्तंकतीतिच ।
अस्वामिकंकतिप्राप्तंनाष्टिकंतस्कराहृतं ॥५

भाषार्थ–आकर (खान) से कितना द्रव्य उत्पन्न हुआ और निधि खजानेमें कितना है और अस्वामिक (लावारसी) कितना मिला और चोरीसे कितना नष्ट हुआ यहभी अमात्यही निवेदन करे ॥ ५ ॥

संचितंतुविनिश्चित्यामात्योराज्ञेनिवेदयेत्॥
समासाल्लक्षणंकृत्यंप्रधानदशकस्यच॥ ६॥

भाषार्थ–और संचित द्रव्यका निश्चय करिके अमात्य राजाके प्रति निवेदन करै और पूर्वोक्त दश प्रधानोंका लक्षण और कृत्य संक्षेपसे कहा ॥ ६ ॥

उक्तंतल्लिखितैःसर्वैविद्यात्तदनुदर्शिभिः ।
परिवर्त्यनृपोह्येतान्युंज्यादन्योन्यकर्मणि ॥

भाषार्थ–प्रधान आदिके लेखसे उनके लेखको अनुदर्शियों (देखनेवालों) से जाने और राजा पूर्वोक्त प्रधान आदिकों-को वदलता हुआ परस्परके कर्ममें नियुक्त करे अर्थात् मंत्रीके स्थानपर अमात्य और अमात्यकी पदवीपर मंत्री इत्यादि ॥ ७ ॥

नकुर्यात्स्वाधिकवलान्कदापिह्यधिकारिणः
परस्परंसमवलाःकार्याःप्रकृतयोदश ॥८॥

भाषार्थ–अपनेसे प्रवल अधिकारियोंको कदाचित् न करे पूर्वोक्त दश प्रकृति समवल (एकसे) करने ॥ ८ ॥

एकस्मिन्नधिकारेतुपुरुषाणांत्रयंसदा ।
नियुंजीतप्राज्ञतमंमुख्यमेकंतुतेपुवै ॥ ९ ॥

भाषार्थ–एक २ अधिकारके तीन २ साक्षियोंके निमित्त पुरुष नियुक्त करे और उनमें एक अत्यंत बुद्धिमानको नियुक्त करे ॥ ९ ॥

द्रौदर्शकौतुतत्कार्येहायनैस्तान्निवर्तनं ।
त्रिभिर्वापंचभिर्वापिसप्तभिर्दशभिश्चवा ॥

भाषार्थ–और उसके कार्यके दो द्रष्टा हों और–तीन–पांच–सात–अथवा दश वर्षमें उनकी निवृत्ति करे ॥ १० ॥

दृष्टातत्कार्यकौशल्येतथातंपरिवर्तयेत् ।
नाधिकारंचिरंदद्याद्यस्मैकस्मैसदानृपः ॥

भाषार्थ–तिनको कार्य और कुशलता जैसी देखै तैसेही पदवीपर वदले और जिस किसीको चिरकाल तक राजा अधिकार दे ॥ ११ ॥

अधिकारेक्षमंदृष्ट्वाह्यधिकारेनियोजयेत् ।
अधिकारमदंपीत्वाकोनमुह्यात्पुनश्चिरं १२

भाषार्थ–अधिकारके योग्य देखकर अधि-कारमें नियुक्त करे क्योंकि अधिकाररूपी मदको चिरकालतक पीकर कौन मोहको प्राप्त नही होता ॥ १२ ॥

अतःकार्यक्षमंदृष्ट्वाकार्येन्येतंनियोजयेत् ।
तत्कार्येकुशलंचान्यंतत्पदानुगतंखलु ॥१३

भाषार्थ-इससे कार्यके योग्य देखकर अन्यकार्यमें तिसे नियुक्त करै और तिसके कार्यपर उसके अनुयायी अन्यको नियुक्त करै ॥ १३ ॥

नियोजयेद्वर्त्तनेतुतदभावेतथापरं ।
तद्गुणोयदितत्पुत्रस्तत्कार्येतंनियोजयेत् ॥

भाषार्थ-उसके अभावमें वर्त्तन (लोटने) में अन्यको नियुक्त करै-यदि उन गुणोंसें युक्त उसका पुत्र होय तो उसके कार्यमें उसे नियुक्त करै ॥ १४ ॥

यथायथाश्रेष्ठपदेह्यधिकारीयदाभवेत् ।
अनुक्रमेणसंयोज्योह्यंतेतंप्रकृतिंनयेत्॥ १५

भाषार्थ-जैसे २ अधिकारी हो तैसे २ श्रेष्ठ पदपर नियुक्त करै इस प्रकार दश प्रकृतियोंको पदवीपर अंतसमय नियुक्त करै॥ १५ ॥

अधिकारबलंदृष्ट्वायोजयेद्दर्शकान्बहून् ।
अधिकारिणमेकंवायोजयेद्दर्शकंविना ॥१६

भाषार्थ-अधिकारके बलको देखकर बहुतसे द्रष्टाओंको नियुक्त करै अथवा द्रष्टाके विना एक अधिकारीको नियुक्त करै॥१६॥

येचान्येकर्मसचिवास्तांसर्वान्विनियोजयेत्
गजाश्वरथपादातपशूष्ट्रमृगपक्षिणां ॥ १७॥

भाषार्थ-जो इतर कर्मोंके सचिव हैं उन संपूर्णोंको नियुक्त करै हस्ति-अश्व-रथ-पदाति-पशु-ऊंट-मृग-पक्षियोंके पृथक् २ अधिपति नियुक्त करै ॥ १७ ॥

सुवर्णरत्नरजतवस्त्राणामधिपान्पृथक् ।
वितानाद्यधिपंधान्याधिपंपाकाधिपंतथा ॥

भाषार्थ- सुवर्ण-रत्न-चांदी-वस्तु-इनके अधिपति वितान (तंबू) आदि कोंके अधिपति अन्न और पाक (रसोई) के अधिपति पृथक् २ नियुक्त करै ॥१८॥

आरामाधिपतिंचैवसौधरोहाधिपंपृथक् ।
संभारपंदेवतुष्टिपतिंदानपतिंसदा ॥१९ ॥

भाषार्थ-आराम (बगीचे) का आधिपति मंदिरोंका अधिपति संभारोंका अधिपति देवताओंके स्थानोंका अधिपाति और दानाध्यक्ष इनको पृथक् २ नियुक्त करै ॥१९॥

साहसाधिपतिंचैवग्रामनेतारमेवच ।
भागहारंतृतीयंतुलेखकंचचतुर्थकं ॥२०॥

भाषार्थ-साहस (दंड) का अधिपाति ग्रामका नेता (चोधरी) तीसरा भागका लेनेवाला और चौथा लेखक-इनको भी नियत करै २०

शुल्कग्राहंपंचमंचप्रतिहारंतथैवच ।
षट्कमेतन्नियोक्तव्यंग्रामेग्रामेपुरेपुरे ॥२१॥

भाषार्थ-पांचमां शुल्क (मोल) का ग्राहक और छठा प्रतीहार इन पूर्वोक्त छःओंको ग्राम २ और पुर २ में नियुक्त करै ॥२१॥

तपस्विनोदानशीलाःश्रुतिस्मृतिविशारदाः
पौराणिकाःशास्त्रविदोदैवज्ञामांत्रिकाश्चये ।

भाषार्थ-तपस्वी-दाता-श्रुति (वेद) स्मृतिमें चतुर पुराणोंके ज्ञाता शास्त्रोंके ज्ञाता ज्योतिषी मंत्रोंके जो ज्ञाता हैं ॥२२॥

आयुर्वेदविदःकर्मकांडज्ञास्तांत्रिकाश्चये ।
येचान्येगुणिनःश्रेष्ठाबुद्धिमंतोजितेंद्रियाः ॥

भाषार्थ-वैद्य-कर्मकांडके ज्ञाता तंत्रके ज्ञाता और गुणवान् हैं श्रेष्ठ हैं और बुद्धिमान् जितेंद्रिय हैं ॥ २३ ॥

तान्सर्वान्पोषयेद्भृत्यांदानैर्मानैःसुपूजितान्
हीयतेचान्यथाराजाह्यकीर्तिंचापिविंदति ॥

भाषार्थ–तिन तपस्वी आदिकोंको भृति (नौकरी) से दान सत्कारसे पूजित करके पोषण करै यदि पोषण न करै तो राजहानिको और कुकीर्तिको प्राप्त हो ॥२४॥

वहुसाध्यानिकार्याणितेषामप्यधिपांस्तथा। तत्तत्कार्येपुकुशलाञ्ज्ञात्वातांस्तुनियोजयेत्

भाषार्थ–जो कार्य वहुतसे मनुष्योंसे हो उनकेभी अधिपति नर कार्योंमें कुशल जानकर नियुक्त करै ॥२५॥

अमंत्रमक्षरंनास्तिनास्तिमूलमनौषधम् । अयाग्यः पुरुषोनास्तियोजकस्तत्रदुर्लभः

भाषार्थ–मंत्रके विनाअक्षर नहीं और औषधिके विना मूलनही और अयोग्य पुरुष नहीं परंतु योजन करनेहारा तहां दुर्लभ है॥२६॥

प्रभद्रादिजातिभेदंगजानांचचिकित्सितम् । शिक्षांव्याधिंपोषणंचतालुजिव्हानखैर्गुणान्

भाषार्थ-प्रभद्र आदि हाथियोंकी जातियोंके भेद और हाथियोंके चिकित्सक-शिक्षा-रोग–पोषण–तालु–जिह्वा–नख–इनके गुण तिनका जो ज्ञाता ॥२७॥

आरोहणंगतिंवेत्तिसयोज्योगजरक्षणे । तथाविधाधोरणस्तुहस्तीहृदयहारकः ॥

भाषार्थ–चढ़ना–गमन–जो जानै उस मनुष्यको गजोंकी रक्षामें नियुक्त करै और वैसेही आधोरण (पीलवान्) को नियुक्त करै जो हाथीके हृदयको वश करले ॥ २८ ॥

अश्वानांहृदयंवेत्तिजातिवर्णभ्रमैर्गुणान् । गतिंशिक्षांचिकित्सांचसत्वंसाररुजंतथा ॥

भाषार्थ–जो अश्वोंके हृदयको और जाति वर्ण–गमनसे गुणोंको और गति–शिक्षा–चिकित्सा–बल–दृढता–और रोग इनको जानै ॥ २९ ॥

हिताहितंपोषणंचमानंयानंदंतोवयः । शूरश्चव्यूहवित्प्राज्ञःकार्योश्वाधिपतिश्चसः॥

भाषार्थ–हित और अहित–पोषण–मान–प्रमाण यान–गति–दंत–अवस्था इनको जो जानै ऐसा शूरवीर व्यूहका ज्ञाता विद्वान् अश्वोंका अधिपति नियुक्त करना ॥३०॥

एभिर्गुणैश्चसंयुक्तोधुर्यान्युग्यांश्चवेत्तियः । रथस्यसारंगमनंभ्रमणंपरिवर्तनम् ॥३१॥

भाषार्थ–इन पूर्वोक्तगुणोंसे संयुक्त धुर्य अर्थात् धुरके योग्य-युग्य-अर्थात् यानके वहनेको समर्थ अश्वोंका ज्ञाता और रथकी सारता और गमन और भ्रमण और परिवर्त्तन (लौटाना) इनको जो यथार्थ जानै ऐसा सारथी नियुक्त करै ॥३१॥

समापतत्सुशस्त्रास्त्रलक्ष्यसंधाननाशकः । रथगत्यारथहयहयसंयोगगुप्तिवित् ॥ ३२॥

भाषार्थ–योद्धाओंके संमुख शस्त्रऔर अस्त्रोंके लक्ष्यके संधानको जो नाश करै और रथकी गति और रथ-अश्व-और अश्वोंका मेल और रक्षा इनको जानै ॥३२॥

सादिनश्चतथाकार्याःशूराव्यूहविशारदाः । वाजिगतिविदःप्राज्ञाःशस्त्रास्त्रैर्युद्धकोविदाः

भाषार्थ–और सादि (असवारभी) ऐसे करने जो शूर व्यूह (कवायद) में चतुर घोडोंकी गतिका वेत्ता–विद्वान् शस्त्र और अस्त्रोंसे युद्धमें कुशल हो ॥ ३३ ॥

चाक्रितंरेचितंवल्गीतकंधौरितमाप्लुतं । तुरंमंदंचकुटिलंसर्पणंपरिवर्तनम् ॥ ३४ ॥

एकादशास्कंदितंचगतीरश्वस्यवेत्तियः । यथावलंयथर्तुचशिक्षयेत्सचशिक्षकः ॥ ३५

भाषार्थ–चक्रके समान गति–रेचितगति–मधुरगति–धौरितगति-आप्लुतगति-तुर (शी-

श्वगति) मंदगति-कुटिलगति-सर्पणगति-परिवर्त्तनगति-आस्कंदितगति-इन पूर्वोक्त एकादशगतियोंको जो जानै और अश्वके वल और ऋतुके अनुसार अश्वको शिक्षादे ऐसे मनुष्यको शिक्षक नियुक्त करै॥३४।३५

वाजिसेवासुकुशलःपल्याणादिनियोगवित्।
दृढांगश्चतथाशूरःसकार्योवाजिसेवकः॥ ३६

भाषार्थ-घोडोंकी सेवामें कुशल-पल्याण (चारजामा वगैरह) की शिक्षाका ज्ञाता-और दृढांग और शूरवीर-ऐसा जो हो वह घोडोंका सेवक करना ॥ ३६ ॥

नीतिशस्त्रास्त्रव्यूहादिनतिविद्याविशारदाः
अवालामध्यवयसःशूरादांतादृढांगकाः ।

भाषार्थ- जो नीतिशास्त्र-अस्त्रसमूह-नम्रताओंसे चतुर हो वालक न हो यौवनका भोक्ता-शूरवीर दांत-दृढांग हो ॥ ३७ ॥

स्वधर्मनिरतानित्यंस्वामिभक्तारिपुद्विषः
शूद्रावाक्षत्रियावैश्याम्लेच्छाः संकरसंभवाः

भाषार्थ-अपने स्वधर्ममें नित्य स्थित और स्वामीके भक्त-शत्रुओंके द्वेषी-शूद्र-क्षत्रिय-वैश्य-म्लेच्छ-वर्णसंकर-इन जातियोंके हों३८

सेनाधिपाः सैनिकाश्चकार्याराज्ञाजयार्थिना
पंचानामथवाषण्णामधिपः पदगामिनाम् ।

भाषार्थ-ऐसे सेनाधिप और सैनिक (सेनाके योद्धा) जयकी इच्छा करनेवाले राजाको करने और पांच अथवा छै सिपाईयोंका अधिप जो हो ॥ ३९ ॥

योज्यःसपत्तिपालःस्यात्त्रिंशतांगौल्मिकः स्मृतः ।
शतानांतुशतानीकस्तथानुशातिकोवरः ।

भाषार्थ-उसे पत्तिपाल कहते हैं तीस सिपाईयोंके अधिपतिको गौल्मिक कहते हैं शतके अधिपको शतानीक और अनुशातिक उससे उत्तमको कहते हैं ॥ ४० ॥

सेनानीर्लेखकश्चैतेशतंप्रत्यधिपाइमे ।
साहस्त्रिकस्तुसंयोज्यस्तथाचायुतिकोमहान् ॥ ४१ ।

भाषार्थ-सेनानी और लेखक ये सव शतके आधिपति होते हैं और सहस्रका आधिपति और एकादश सहस्रका अधिपति नियुक्त करना ॥ ४१ ॥

व्यूहाभ्यासंशिक्षयेद्यःसायंप्रातस्तुसैनिकान्
जानातिसशतानीकःसुयोद्धुंयुद्धभूमिकाम्

भाषार्थ-व्यूह (कवायद) के अभ्यासकी जो सायंकाल और प्रातःकाल सैनिकोंको शिक्षा दे और युद्धभूमिमें युद्ध करनेको जो जाने उसे शतानीक कहते हैं॥ ४२ ॥

तथाविधोनुशतिकः शतानीकस्यसाधकः
जानातियुद्धसंभारंकार्ययोग्यंचसैनिकम् ।

भाषार्थ-तैसाही शतानीकका शिक्षक अनुशातिक होता है जो युद्धके संभारों और कार्यमें कुशल सेनाके सिपाईयोंको जाने४३

निदेशयतिकार्याणिसेनानीर्यामिकांश्चसः
परिवृत्तिंयामिकानांकरोतिसचपत्तिपः ।

भाषार्थ-सिपाईयोंको जो कार्य वतावै उसे सेनानी कहते हैं और जो सिपाईयोंकी परिवृत्ति (वदली) करै उसे पत्तिप कहते हैं ॥ ४४ ॥

सावधानोंयामिकानांविजानीयाच्चगुल्मपः
सैनिकाःकतिसंत्येतैःकतिप्राप्तंतुवेतनम् ४५

भाषार्थ–जो सिपाईयोंकी सावधानीको जाने उसे गुल्मप कहते हैं और ये सैनिक कितने हैं और कितना वेतन (नौकरी)मिली

प्राचीनाःकेकुत्रगताश्चैतान्वेत्तिसलेखकः ।
गजाश्वानांविंशतेश्चाधिपोनायकसंज्ञकः ॥

भाषार्थ–प्राचीन सैनिक कितने हैं और वे कहां गये इसको जो जाने उसे लेखक कहते हैं और वीसहाथी और वीस अश्वोंका जो अधिपति उसे नायक कहते है ॥ ४६॥

उक्तसंज्ञान्स्वस्वाचिन्हैर्लांछितांश्चनियोजयत् ।
अजाविगोमहिष्येणमृगाणामधिपाश्चये ॥

भाषार्थ–उक्तसंज्ञावालोंको अपनेश्चिह्नोंसे चिह्नित करके नियुक्त करै और अजा-भेड-गौ-भैंस-मृग इनके अधिपोंको भी इसी प्रकार चिह्नित करके नियुक्त करे ॥ ४७ ॥

तद्वृद्धिपुष्टिकुशलास्तद्वात्सल्यानिपीडिताः
तथाविधागजोष्ट्रादेर्योज्यास्तत्सेवकाअपि ।

भाषार्थ–तिनकी वृद्धि और पुष्टिमें जो कुशल और तिनपर दयालु और पीडारहितहो और तैसेही गज ऊंट आदिके भी सेवक नियुक्त करनैं ॥ ४८ ॥

युद्धप्रवृत्तिकुशलांस्तित्तिरादेश्चपोषकाः ।
शुकादेःपाठकाःसम्यक्छयेनादेःपातबोधकाः ॥ ४९ ॥

भाषार्थ–और युद्धकी प्रवृत्तिमें कुशल और तित्तिर आदिके पोषक (पालक) और तोतोंके उत्तम पाठक और शिखरेके पाता (गिरने) के बोधक नियुक्त करने ॥ ४९ ॥

तत्तद्धृदयविज्ञानकुशलाश्चसदाहिते ।
मानाकृतिप्रभावर्णजातिसाम्याच्चमौल्य वित् ॥५० ॥

भाषार्थ–तिसके हृदयके जाननेमें सदा कुशल वे हों मान आकार प्रभा–वर्ण जाति इनकी साम्यता मूल्यके वेत्ताहों ॥ ५० ॥

रत्नानांस्वर्णरजतमुद्राणामधिपश्चसः ।
दांतस्तुसधनोयस्तुव्यवहारविशारदः ॥

भाषार्थ-रत्न-स्वर्ण–चांदी–मुद्रा–इनका अधिपहो और दांत और धनी और चतुर व्यवहारमें हो ऐसा कोशाध्यक्ष हो ॥ ५१ ॥

धनप्राणोतिकृपणःकोशाध्यक्षःसएवहि ।
देशभेदैर्जातिभेदैःस्थूलसूक्ष्मबलाबलैः ॥

भाषार्थ-धनमें जिसके प्राणहों ऐसा अत्यंत कृपण कोशाध्यक्ष होताहै देश और जातिके भेद स्थूल और सूक्ष्म बल और निर्बलतासे ॥ ५२ ॥

कौशेयादेर्मानमूल्यवेत्ताशास्त्रस्यवस्त्रपः ।
कुटींकंचुकनेपथ्यमंडपादेःपरिक्रियाम् ॥

भाषार्थ–रेसमके मान और मूल्यका ज्ञाता और शास्त्रका वेत्ता वस्त्रोंका अधिप होताहै दस्त्र और वेष और मंडपकी क्रियाको जो जानै॥ ५३ ॥

प्रमाणतःसौचिकेनरंजनानिचवेत्तियः ।
तथाशय्यादिसंधानंवितानादेर्नियोजनम्॥

भाषार्थ–सूचिके प्रमाणसे रंगोंको जो जानैं और शय्यादिक संधान वितान (चंदोआ)का नियोग जो जानें ॥ ५४ ॥

वस्त्रादीनांचसप्रोक्तोवितानाद्यधिपःखलु ।
जातिंतुलांचमौल्यंचसारंभोगंपरिग्रहम् ॥

भाषार्थ–वस्त्रका ज्ञाता ऐसा पुरुष वितान छवानेका अधिपहो और जाति तोल-मौल्य-सार-भोग-परिग्रह ॥ ५५ ॥

संमार्जनंचधान्यानांविजानातिसधान्यपः ।
धौताधौतविपाकज्ञोरससंयोगभेदवित् ॥

भाषार्थ-अन्नकी शुद्धी (छडन) जो जाने उसे धान्यपति करना और मलीन शुद्ध पाकका ज्ञाता रसके संयोगभेदका ज्ञाता ॥ ५६ ॥

क्रियासुकुशलोद्रव्यगुणवित्पाकनायकः ।
फलपुष्पवृद्धिहेतुंरोपणंशोधनंतथा ॥५७॥

भाषार्थ-क्रियामें कुशल द्रव्यके गुणका वेत्ता जो हो उसे पाकनायक करना फल फूलकी वृद्धिका कारण रोपण (लगाना) और शोधन ॥ ५७ ॥

पादपानांयथाकालंकर्तुंभूमिजलादिना ।
तद्भेषजंचसंवेत्तिह्यारामाधिपतिश्चसः५८॥

भाषार्थ-वृक्षोंका रोपण भूमिजलादिकसे कालके अनुसार जो जाने और उनका भेषज (इलाज) जो जाने वह आरामका अधिप होताहै ॥ ५८ ॥

प्रासादंपरिखांदुर्गंप्राकारंप्रतिमांतथा ।
यंत्राणिसेतुबंधंचवापींकूपंतडागकम् ५९॥

भाषार्थ-ऐसे पुरुषको गृहवनानेका अधिपकरे प्रासाद (मकान) खाई किला प्राकार परकोटाकी प्रतिमा (प्रमाण) यंत्र पुलबांधना वापी (बावडी) कूप तडाग इनका ज्ञाताहो५९

तथापुष्करिणींकुंडंजलादूर्ध्वंगतिक्रियाम् ।
सुशिल्पशास्त्रतःसम्यक्सुरम्यंतुयथाभवेत्॥

भाषार्थ-तिसी प्रकार पुष्करिणी छोटा क्रीडाका तलाव कुंड जलसे ऊपर आनेकी क्रिया ऐसा जानताहो जिस प्रकार शिल्पविद्यासे भली प्रकार रमणीय हो उसको ६०

कर्तुंजानातियःसैवगृहाद्यधिपतिःस्मृतः ।
राजकार्योपयोग्यान्हिपदार्थान्वेत्तितत्वतः॥

भाषार्थ-करनेको जो जाने वही गृहोंका अधिपति होता है ऐसा पुरुष संभारका अधिप होताहै जो राजाके कार्योपयोगी पदार्थोंको जानें ॥ ६१ ॥

संचिनोतियथाकालेसंभाराधिपउच्यते ।
स्वधर्माचरणेदक्षोदेवताराधनेरतः ॥६२॥

भाषार्थ-और समयके अनुसार संचय करे वह संभारका अधिपति होताहै और वह पुरुष देवताओंका संतोषकारी होताहै जो अपनें धर्माचरणमें चतुर और देवताके आराधनमें तत्परहो ॥ ६२ ॥

निःस्पृहःसचकर्तव्योदेवतुष्टिपतिःसदा ।
याचकंविमुखंनैवकरोतिनचसंग्रहम् ॥६३॥

भाषार्थ-लोभी न हो वह देव पुष्टिका पति (पुजारी) करना और वह दानाध्यक्ष करना जो याचकको विमुख न करै और संग्रह न करै ॥ ६३ ॥

दानशीलश्चनिर्लोभोगुणज्ञश्चनिरालसः ।
दयालुर्मृदुवाग्दानपात्रविन्नतितत्परः ६४॥

भाषार्थ-दानशीलहो लोभी न हो गुणी हो आलसी नहो दयालुहो कोमलवचन कहता हो पात्रका ज्ञाताहो नमस्कारमें तत्परहो ६४

नित्यमेभिर्गुणैर्युक्तोदानाध्यक्षःप्रकीर्तितः ।
व्यवहारविदःप्राज्ञावृत्तशीलगुणान्विताः ॥

भाषार्थ-प्रतिदिन जो इन गुणोंसे युक्तहो वह दानाध्यक्ष कहाहै और ऐसे सभासदहो जो व्यवहारके ज्ञाता सदाचारशील गुणोंसे संयुक्तहो ॥ ६५ ॥

रिपौमित्रेसमायेचधर्मज्ञाःसत्यवादिनः ।
निरालसाजितक्रोधकामलोभाःप्रियंवदाः ॥

भाषार्थ-शत्रु और मित्रमें जो समहों धर्मज्ञ और सत्यवादी हों आलसी न हों क्रोध

काम लोभ ये तीनों जिन्होंनें जीतलियेहो और प्रियवक्ता हों ॥ ६६ ॥

सभ्याःसभासदःकार्यावृद्धाःसर्वासुजातिपु।
सर्वभूतात्मतुल्योयोनिःस्पृहोतिथिपूजकः॥

भापार्थ–ऐसे संपूर्ण जातियोंमें वृद्ध और सभामें साधु सभासद् करने और ऐसा यज्ञका अधिपति हो जो सबको अपने आत्माके समान जानें और निर्लोभी और अभ्यागतोंका जो पूजक हो ॥ ६७ ॥

दानशीलश्चयोनित्यंसैवसत्वाधिपःस्मृतः ।
परोपकारनिरतःपरमर्माप्रकाशकः ॥६८॥

भापार्थ–जो प्रतिदिन दानशीलहो और ऐसा मनुप्य परीक्षकहो जो परोपकारमें तत्परहो परमर्म (छिद्र) प्रकाश न करे ६८॥

निर्मत्सरोगुणग्राहीतद्विद्यःस्यात्परीक्षकः ।
प्रजानष्टानहिभवेत्तथादंडविधायकः ६९॥

भापार्थ–क्रोधी न हो गुणका ग्राहक हो परीक्ष्यविद्याका ज्ञाताहो और ऐसा मनुष्य (साह) फोजदारीका अधिपतिहो जो इसप्रकार दंडदे जिस प्रकार प्रजा नष्ट न होय ॥६९॥

नातिक्रूरोनातिमृदुःसाहसाधिपतिश्चसः ।
आधर्पकेभ्यश्चोरेभ्यःह्यधिकारिगणात्तथा ॥

भापार्थ–और अतिकठोर और अतिकोमल जो नहो और ऐसा पुरुष ग्रामका अधिपतिहो जो ठग और चौर अधिकारियोंके समूहसे प्रजाकी रक्षामें चतुरहो ॥ ७० ॥

प्रजासंरक्षणेदक्षोग्रामपोमातृपितृवत् ।
वृक्षान्संपुष्ययत्नेनफलंपुष्पंविचिन्वति ॥

भापार्थ–मातापिताके समान प्रजाकी रक्षामें चतुरहो और ऐसा पुरुष भाग(कर)का ग्राहक हो जो मालीके समान वृक्षोंको यत्नसे पुष्ट करके फल फूलको वीनें अर्थात् प्रजाकी अत्यंत रक्षापूर्वक कर ले ॥ ७१ ॥

मालाकारइवात्यंतंभागहारस्तथाविधः ।
गणनाकुशलोयस्तुदेशभाषाप्रभेदवित् ॥

भापार्थ–ऐसा पुरुप लेखकहो जो गणनामें कुशलहो और देशभापाके भेदका ज्ञाताहो ॥ ७२ ॥

असंदिग्धमगूढार्थंविलिखेत्सचलेखकः ।
शस्त्रास्त्रकुशलोयस्तुदृढांगश्चनिरालसः ॥

भापार्थ–संदेहरहित स्पष्ट जो लिखै और ऐसा पुरुष प्रतिहार (दूत) हो जो शस्त्र अस्त्रमें कुशलहो और दृढांग और आलसी न हो ॥ ७३ ॥

यथायोग्यंसमाहूयात्प्रनम्रःप्रतिहारकः ।
यथाविक्रयिणांमूलधननाशोभवेन्नहि७३ ॥

भापार्थ–जो नम्र होकर यथोचित आह्वान करे (बुलावै) ऐसा पुरुष शौल्किक (महसूलका अधिप) हो जो जैसे लेन देनहारोंके मूलधनका नाश नहो इस प्रकार शुल्क ग्रहण करे ॥ ७४ ॥

तथाशुल्कंतुहरतिशौल्किकःसउदाहृतः ।
जपोपवासनियमकर्मध्यानरतस्सदा ७५॥

भाषार्थ–तिस प्रकार शुल्क (महसूल) को ले वह शौल्किक कहाताहै उसे तपोनिष्ठ कहते हैं जो जप–उपवास–नियम कर्म और ध्यानमें सदा रतहो ॥ ७५ ॥

दांतःक्षमीनिःस्पृहश्चतपोनिष्ठःसउच्यते ।
याचकेभ्योददात्यर्थंभार्यापुत्रादिकंत्वपि ॥

भापार्थ–दांत हो क्षमावान् (इच्छारहित) हो वह दानशील कहाता है जो याचकोंको भार्या पुत्र आदिको अति उदार होकर देदे ॥ ७६ ॥

नसंगृह्णातियत्किंचिद्दानशीलःसउच्यते ।
पठनंपाठनंकर्तुंक्षमास्त्वभ्यासशालिनाम् ॥

भाषार्थ-और यत् किंचित्‌भीग्रहण नकरैं वे श्रुति (वेद्के) ज्ञाता होते हैं जो कियाहै अभ्यास जिनका ऐसे श्रुतिस्मृति पुराणोंके पठनपाठन करनेमें समर्थहो ॥ ७७ ॥

श्रुतिस्मृतिपुराणानांश्रुतज्ञास्तेप्रकीर्तिताः ।
साहित्यशास्त्रनिपुणःसंगीतज्ञश्चसुस्वरः ॥

भाषार्थ-और वह पुराणोंका ज्ञाता होताहै जो साहित्यशास्त्रमें निपुणहो संगीतका ज्ञाता और उत्तम स्वर जिसका हो ॥ ७८ ॥

सर्गादिपंचकज्ञातासवैपौराणिकःस्मृतः ।
मीमांसातर्कवेदांतशब्दशासनतत्परः ७९ ॥

भाषार्थ-सर्ग आदि पांचका जो ज्ञाताहो और वह शास्त्रका ज्ञाता होता है जो मीमांसा-न्याय-वेदांत-व्याकरणमें तत्पर हो७९

ऊहवान्बोधितुंशक्तस्तत्वतःशास्त्रविच्चसः ।
संहितांचतथाहोरांगणितंवेत्तितत्वतः ८० ॥

भाषार्थ-तर्कका ज्ञाता बोधन करनेमें समर्थ और तत्वका ज्ञाता हो और वह ज्योतिषी होताहै संहिता और होरा और गणित इनको तत्वसे जानें ॥ ८० ॥

ज्योतिर्विच्चसविज्ञेयोत्रिकालज्ञश्चयोभवेत् ।
वीजानुपूर्व्यामंत्राणांगुणान्दोषांश्चवेत्तियः

भाषार्थ-औरभूत भविष्यत् वर्त्तमान तीनों कालोंका ज्ञाता हो और ऐसा पुरुष मंत्रशास्त्रका ज्ञाता हो जो मंत्रोके वीजोंके अनुसार गुण और दोषोंको जानें ॥ ८१ ॥

मंत्रानुष्ठानसंपन्नोमांत्रिकःसिद्धदैवतः ।
हेतुलिंगौषधीभिर्योव्याधीनांतत्वनिश्चयम् ॥

भाषार्थ-मंत्रोंके अनुष्ठानमें युक्त हो और देवता जिसे सिद्ध हों और वैद्य वह होता है जो कारण चिन्ह और औषधियोंसे व्याधियोंके तत्व निश्चय ॥ ८२ ॥

साध्यासाध्यंविदित्वोपक्रमतेसभिषक्स्मृतः
श्रुतिस्मृतीतरन्मंत्रानुष्ठानैर्दैवतार्चनम् ८३

भाषार्थ-और साध्य और असाध्यको जानकर चिकित्साका आरंभ करै वह भिषक् कहा है और श्रुतिस्मृतिमंत्रोंके अनुष्ठानसे जो देवताओंका पूजन ॥ ८३ ॥

कर्तुंहिततमंमत्वायततेसचतांत्रिकः ।
नपुंसकाः सत्यवाचोसुभूषाश्चप्रियंवदाः ।

भाषार्थ-करनेको जो हिततम मानकर यत्न करैवह तांत्रिक होता है और ऐसे पुरुषरणवासमें युक्त करने जो नपुंसक सत्यवादी सुवेष और प्रियवादी हों ॥ ८४ ॥

सुकुलाश्चसुरूपाश्चयोज्यास्त्वंतःपुरेसदा ।
अनन्याःस्वामिभक्ताश्चधर्मनिष्ठादृढांगकाः

भाषार्थ-और उत्तम कुलीन और सुरूप हों और ऐसे दूत युक्त करने जो अनन्य होकर स्वामीके भक्त हों और धर्मशील हों और दृढ जिनका अंग हो ॥ ८५ ॥

अबालामध्यवयसःसेवासुकुशलाःसदा ।
सर्वंयद्यत्कार्यजातंनीचंवाकर्तुमुद्यताः८६ ॥

भाषार्थ-बालक न हों और सेवामें यथार्थ कुशल हो और संपूर्ण कार्योंका समूह चाहैं नीचभी हो उसे करनेको उद्युक्त (तईयार) हो ॥ ८६ ॥

निदेशकारिणोराज्ञाकर्तव्याःपरिचारकाः ।
राज्ञःसमीपप्राप्तानांनतिस्थानविबोधकाः ॥

भाषार्थ-आज्ञाके कर्त्ता और राजाके समीप जो आवैं उनको नमस्कार और

स्थानके बतानेहारे राजाको परिचारक सेवक नियुक्त करने ॥ ८७ ॥

दंडधारावेत्रधाराःकर्तव्यास्तेसुशिक्षकाः ।
तंत्रीकंठोत्थितान्सप्तस्वरान्स्थानविभागतः

भाषार्थ-और वे सेवक दंड और वेतको धारण करैं और उत्तम शिक्षावान् हों और ऐसा गानेवालोंका अधिपति हो जो तंत्रीके कंठसे उत्पन्न सातस्वरोंके स्थानोंको विभाग (भेद) से जानें ॥ ८८ ॥

उत्पादयतिसंवेत्तिसंयोगविभागतः ।
अनुरागंसुस्वरंचसतालंचप्रगायति ॥

भाषार्थ-स्वरोंको उत्पन्न करै और जाने और संयोग और विभागसे प्रसन्नता और उत्तमस्वर और ताल और नृत्यसे जो गावे ॥ ८९ ॥

सनृत्यंवागायकानामधिपःसचकीर्तितः ।
तथाविधाचपण्यस्त्रीनिर्लज्जाभावसंयुता ॥

भाषार्थ-ऐसा पुरुष गायकोंका अधिप कहा है और इसी प्रकारकी गणिका (वेश्या) हो जो निर्लज्ज हो और भाव (प्रीति) युक्त हो ॥९० ॥

शृंगाररसतंत्रज्ञासुंदरांगीमनोरमा ।
नवीनोत्तुंगकठिन्कुचासुस्मितदर्शिनी ९१॥

भाषार्थ-शृंगार रसके तंत्रकी ज्ञाता सुंदर है अंग जिसका मनोरमा (मनके हरने वाली) नवयौवना ऊंचे हैं कठोर स्तन जिसके और हंसमुखी वेश्या हो ॥ ९१ ॥

येचान्येसाधकास्तेचतथाचित्तविरंजकाः ।
सुभृत्यास्तेपिसंधार्यानृपेणात्महितायच ॥

जो वेश्याके इतर साधक हैं वेभी तिसी कार चित्तके रंजकहों और उन साधकोंके भृत्य (नोकर) भी श्रेष्ठ हों ऐसे साधक अपने हितके अर्थ राजाको रखनें ॥ ९२ ॥

वैतालिकाःसुकवयोवेत्रदंडधराश्चये ।
शिल्पज्ञाश्चकलावंतोयेसदाप्युपकारकाः ॥

भाषार्थ-भांड ऐसे हों जो सुंदर कविहों वेत और दंडके धारण करनेहारे हों कारीगर (कलाधारी) हों और जो सदा उपकारी हों ॥ ९३ ॥

दुर्गुणान्सूचकाभाणानर्तकाबहुरूपिणः ।
आरामकृत्रिमवनकारिणोदुर्गकारिणः॥९४

भाषार्थ-इतरके दुर्गुणोंको जो सूचित करैं वे भाँड कहाते हैं और जो अनेकरूपोंको धारैं वे नर्तक होते हैं, आराम और कृत्रिम वन (बाग) के बनानेहारे और किलेके बनानेहारे ॥ ९४ ॥

महानालिकयंत्रस्यगोलैर्लक्ष्यविभेदिनः ।
लघुयंत्राग्नेयचूर्णबाणगोलासिकारिणः ९५

भाषार्थ-तोपके गोलोंसे लक्ष्य (निसाने) के भेदन करनेहारे बंदूक और आग्नेय चूर्ण (बारूद) और बाण और गोले और असि (तलवार) इनके करनेहारे ॥ ९५ ॥

अनेकयंत्रशस्त्रास्त्रधनुस्तूणादिकारकाः ।
स्वर्णरत्नाद्यलंकारघटकारथकारिणः ॥

भाषार्थ-अनेकप्रकारके यंत्र शस्त्र अस्त्र-धनुष-तरकस इनके करनेहारे और स्वर्ण रत्न-आदिके अलंकार इनके घडनेहारे और रथके करनेहारे ॥ ९६ ॥

पाषाणघटकालोहकाराधातुविलेपकाः ।
कुंभकाराःशौल्विकाश्चतक्षिणोमार्गकारकाः

भाषार्थ-पत्थरके और लोहेके बनानेहारे और धातुके लेपक (मुलंमा करनेहारे) कुंभार शुल्वके बनानेहारे और बढ़ई और सडकके बनानेहारे- ॥ ९७ ॥

नापितारजकाश्चैववंशिकामलहारकाः ।
वार्ताहराःसौचिकाश्चराजचिन्हाग्रधारिणः॥

भाषार्थ—नाई— धोबी— वंशोंके लानेहारे मलके शोधक—डांकवाले—दरजी—ये संपूर्ण पूर्वोक्त राजचिह्नाग्रके धारण करनेहारे हों१९८

भेरीपटहगोपुच्छशंखवेण्वादिनिःस्वनैः ।
येव्यूहरचकायानापयानादिकबोधकाः ॥

भाषार्थ—नगारे—ढोल—रणसींगे—शंख—वंशी इनके शब्दोंसे जो व्यूहकी रचनामें तत्पर हैं और जो यान—और अपयान (कवायद) के शिक्षक हैं ॥ १९ ॥

नाविकाःखनकाव्याधाःकिराताभारिकाअपि ।
शस्त्रसंमार्जनकराजलधान्यप्रवाहकाः ॥

भाषार्थ—मल्लाह—खनक (खोदनेवाले) व्याध भील—भारके लेजानेवाले शस्त्रके मार्जन करनेहारे और जो जलमें अन्नके पहुंचानेहारे ॥ २०० ॥

आपणिकाश्चगणिकावाद्यजायाप्रजीविनः ।
तंतुवायाःशाकुनिकाश्चित्रकाराश्चचर्मकाः

भाषार्थ—बाजारवाले—वेश्या—नट—कुली—शकुनके ज्ञाता—चित्रकारी और चमार— १॥

गृहसंमार्जकाःपात्रधान्यवस्त्रप्रमार्जकाः ।
शय्यावितानास्तरणकारकाःशासकाअपि॥

भाषार्थ—घरके झारनेहारे और पात्र—अन्न वस्त्र—इनके मार्जन करनेहारे शय्या पर बिछोंना करनेहारे और शिक्षा देनेहारे—२॥

आमोदाःस्वेदसद्धूपकारास्तांबूलिकास्तथा
हीनाल्पकर्मिणश्चैतेयोज्याःकार्यानुरूपतः

भाषार्थ—सुगंध द्रव्य—धूपकर्त्ता—तंबोली—नीचकर्मके कर्त्ता—इनपूर्वोक्तोंको कार्यके अनुसार नियुक्त करै— ॥ ३ ॥

प्रोक्तंपुण्यतमंसत्यंपरोपकरणंतथा ।
आज्ञायुक्तांश्चभृतकान्सततंधारयेन्नृपः ॥४

भाषार्थ—सत्य और परोपकार अत्यंत श्रेष्ठ कहा है और राजा अपनी आज्ञासे युक्त सेवकोंको निरंतर रक्खे ॥ ४ ॥

हिंसागरीयसीसर्वपापेभ्योनृतभाषणं ।
गरीयस्तरमेताभ्यांयुक्तान्भृत्यान्नधारयेत्॥

भाषार्थ—संपूर्ण पापोंसे हिंसा प्रबल है और झूंठ उससेभी अधिक प्रबल है इससे हिंसक—और झूठे भृत्योंको धारण न करै५

यदायद्रुचितंकर्तुंवक्तुंवातत्प्रबोधयन् ।
तद्वक्तिकुरुतेद्राक्तुससद्भृत्यःसुपूज्यते ६॥

भाषार्थ—जिस समय जो करनेको उचित है उसको अथवा कहने को उचित हैं उसको बोधित (जताया) हुआ जो शीघ्रकार्य को करता है वही उत्तम भृत्य है और उसेही राजा युक्त करै ॥ ६ ॥

उत्थायपश्चिमेयामेगृहकृत्यंविचिंत्यच ।
कृत्वोत्सर्गंतुदेवंहिस्मृत्वास्नायादनंतरं ॥७

भाषार्थ—रात्रिके पिछले पहरमें उठकर और गृहके कार्यकी चिंता करके और शौचको करके तिसके अनंतर स्नान करै॥ ७ ॥

प्रातःकृत्यंतुनिर्वर्त्त्ययावत्साधंमुहूर्तकं ।
गत्वास्वकीयंशालांवाकार्याकार्यंविचिंत्यच

भाषार्थ—तीन घड़ी दिन चढेपर्यंत अपने प्रातःकालके कृत्यको करिकें अपनी कार्यशाला (कचहरी) में जाकर और कार्य और अकार्यकों चिंता करकें ॥ ८ ॥

विनाज्ञयाविशंतंतुद्वास्थःसम्यङ्निरोधयेत्।
निदेशकार्यंविज्ञाप्यतेनाज्ञतःप्रमोचयेत् ॥

भाषार्थ—राजाकी आज्ञाके बिना जे कार्यशालामें प्रवेश करै उसे राजाका

द्वारपाल रोकैं तदनंतर इसके निवेशकार्य (प्रार्थना) को राजाको जता कर और राजाकी आज्ञासे उसे छोड दे ॥ ९ ॥

दृष्टागतान्सभामध्येराज्ञेदंडधरःक्रमात् ।
निवेद्यतन्नतपिश्चात्तेषांस्थानानिसूचयेत् ॥

भापार्थ–सभाके मध्यमें आये मनुष्योंको दंडधर (चोकीदार) क्रमसे निवेदन करे और नम्र होकर पश्चात् उनको स्थानोंको सूचित करे ॥ १० ॥

ततोराजगृहंगत्वाज्ञप्तोगच्छेच्चसंनिधिं ।
नत्वानृपंयथान्यायंविष्णुरूपमिवापरं ११॥

भापार्थ–तिसके अनंतर राजाके स्थानमें जाकर राजाकी आज्ञासे समीप जाकर और नीतिके अनुसार राजाको नमस्कार इस प्रकार करिकें कि मानों दूसरे विष्णुही हैं।११

प्रविश्यसानुरागस्याँचित्तज्ञस्यसमंततः ।
भर्तुरर्धासनेदृष्टिंकृत्वानान्यत्रनिक्षिपेत् ॥

भापार्थ–सभामे प्रविष्ट होकर प्रीतिमान् और चित्तके ज्ञाता राजाके सिंहासनमें ही सारेसे रोककर दृष्टिको करिके किसी इतर मनुष्यकी और नदेखैं ॥ १२॥

अग्निंदीप्तमिवासीदेद्राजानमुपशिक्षितः ।
आशीविषमिवक्रुद्धंप्रभुंप्राणधनेश्वरं ॥१३॥

भापार्थ–तदनंतर शिक्षाको प्राप्तहोकर अपने प्राण और धनके ईश्वर प्रभु (राजा) के समीप इसप्रकारता किमानों प्रज्वल अग्निरूप हैं और क्रोधी सर्पके समान है ॥ १३ ॥

यत्नेनोपचरेन्नित्यंनाहमस्मीतिचिंतयेत् ।
समर्थयंश्चतत्पक्षंसाधुभाषितभाषितं ॥१४॥

भापार्थ–सेवक बडे यत्नसे स्वामीकी सेवा करे जानों मैंहूं नहीं और स्वामीके पक्षकी पुष्टि करता हुआ कोमल वाणीसे भाषण करे ॥ १४ ॥

तन्नियोगेनवाब्रूयादर्थंसपरिनिश्चितं ।
सुखप्रबंधगोष्ठीपुविवादेवादिनांमतं ॥१५॥

भापार्थ–अच्छाहै प्रबंध जिनमें ऐसीसभाओंमें विवादियोंके मतको और राजाकी आज्ञासे अच्छीतरह युक्तिसे बोले ॥१५॥

विजानन्नपिनोब्रूयाद्भर्तुःक्षिप्रोत्तरंवचः ।
सदानुद्धतवेषःस्यान्नृपाहूतस्तुप्रांजलिः१६

भापार्थ–स्वामीके प्रश्नका उत्तर जानता हुआभी शीघ्र नदे और सेवक उद्दंड वेषको कदाचित् भी धारण नकरै और राजा जब बुलावे तब हाथ जोड कर खडारहै॥ १६॥

तद्वाक्तनतिःश्रुत्वावस्त्रांतरितसंमुखः ।
तदाज्ञांधारयित्वादौस्वकर्माणिनिवेदयेत् ॥

भापार्थ–राजाकी वाणीको प्रणाम करिकें सुनकर और वस्त्रकी ओटमें राजाके संमुख होकर और प्रथम राजाकी आज्ञाको लेकर अपने कार्योंको निवेदन करे ॥ १७॥

नत्वासीतासनेप्रव्हस्तत्पार्श्वेसंमुखोज्ञया ।
उच्चैःप्रहसनंकासंष्ठीवनंकुत्सनंतथा ॥१८॥

भापार्थ–और राजाके समीप और आसनपर उद्धत होकर न बैठे और संमुख आज्ञासे बैठे और ऊंचेस्वरसे हंसी और थूंकना और किसीकी निंदा न करे ॥१८ ॥

जृंभणंगात्रभंगंचपर्वास्फोटंचवर्जयेत् ।
राज्ञादिष्टंतुयत्स्थानंतत्रतिष्ठेन्मुदान्वितः ॥

भापार्थ–जंभाई अंगको भंग (आलस्यसे जोडोंका चटकाना) (मटकाना) राजानें जो स्थान बतादिया है वहांही आनंदसे बैठा रहै ॥ १९ ॥

प्रवीणोचितमेधावीवर्जयेदाभिमानतां ।
आपद्युन्मार्गगमनेकार्यकालात्ययेषुच २० ॥

भाषार्थ-प्रवीण (कुशल) और उत्तम बुद्धिमान्‌पुरुष अभिमानको त्यागदे आपत्ति और कुमार्गकी प्राप्ति (हलन) और कार्यके नाशमेंभी राजाका हित चाहैं ॥ २० ॥

अपृष्टोपिंहितान्वेषीब्रूयात्कल्याणभाषितं ।
प्रियंतथ्यंचपथ्यंचवदेद्धर्मार्थकंवचः ॥ २१

भाषार्थ-राजाके कल्याणकी इच्छा करने द्वारा सेवक विनापूछेभी कल्याणरूपी ही बचन कहै और वह वचनभी प्रिय सत्य हितकारी और धर्म और अर्थके अनुकूल हो ॥२१॥

समानवार्तयाचापितद्धितंबोधयेत्सदा ।
कीर्तिमन्यन्नृपाणांवावदेन्नीतिफलंतथा २२

भाषार्थ-अपने सहयोगियोंके संग वार्तासे राजाके हितकोही बोधन करै और इतर राजाओंकी कीर्ति और न्यायके फलकोभी बोधन करै ॥ २२ ॥

दातात्वंधार्मिकःशूरोनीतिमानसिभूपते ।
अनीतिस्तेतुमनसिवर्ततेनकदाचन ॥२३॥

भाषार्थ-हे राजन् तुम दाता और धर्मके कर्त्ता और न्यायके ज्ञाता हो और कदाचित् भी तुह्मारे मनमें अन्याय नही वर्तता है-२३

येयेभ्रष्टाअनीत्यातांस्तदग्रेकीर्तयेत्सदा ।
नृपेभ्योह्यधिकोसीतिसर्वेभ्योनविशेषयेत् ॥

भाषार्थ-और जोजो अन्यायके राजा नष्ट हो गये हैं उनको राजाके आगें सदा कीर्तन करै और राजासे ऐसे नकहै कि तुम संपूर्ण राजाओंसे अधिक हो ॥ २४ ॥

परार्थदेशकालज्ञोदेशेकालेचसाधयेत् ।
स्वार्थनाशंनंनस्यात्तथाब्रूयात्सदैवाहि ॥२५

भाषार्थ-देश और कालका ज्ञाता सेवक इतरके प्रयोजनको संपूर्ण देश और कालमें सिद्ध करै और परके प्रयोजनका नाश जैसे न हो इसीप्रकार सदा राजासे कहै ॥ २५॥

नकर्षयेत्प्रजांकार्यमिषतश्चनृपःसदा ।
अपिस्थाणुवदासीतशुष्यन्परिगतःक्षुधा ॥

भाषार्थ-राजा किसी कार्यके मिषसे प्रजा को दुःखित न करै चाहे क्षुधासे पीडित सूखते हुए वृक्षके समानभी स्थित रहै ॥२६॥

नत्वेवानर्थसंपन्नांवृत्तिमीहेतपंडितः ।
यत्कार्येयोनियुक्तःस्याद्भूयात्तत्कार्यतत्परः

भाषार्थ-अनर्थसे युक्त आजीविकाकी पंडित चेष्टा कभीं न करै और जिस कार्यमें जो नियुक्त हो उसी कार्यमें तत्पर रहै॥२७॥

नान्याधिकारमन्विछेन्नाभ्यसूयाच्चकेन चित्
नन्यूनंलक्षयेत्कस्यपूरयीतस्वशक्तितः २८

भाषार्थ-अनर्थके कार्यकी इच्छा और निंदा नकरै और जो किसीकी न्यूनता अपनेको प्रतीत हो जाय तौ अपनी शक्तिके अनुसार संपूर्ण करदे ॥ २८ ॥

परोपकरणादन्यन्नस्यान्मित्रकरंसदा ।
करिष्यामीतितेकार्यंनकुर्यात्कार्यलंबनं ॥

भाषार्थ-परके उपकारसे इतर मित्रका और कोई कर्त्तव्य नही है और मैं तेरा कार्य सदा करूंगा ऐसी कहकर कार्यके करनेमे विलंब न करै ॥ २९ ॥

द्राक्कुर्यात्तुसमर्थश्चेत्साशंदीर्घंनरक्षयेत् ।
गुह्यंकर्मचमंत्रंचनभर्तुःसंप्रकाशयेत्॥ ३० ॥

भाषार्थ-जो समर्थ हो तौ कार्यको शीघ्र करै और बहुत दिनका विश्वास नदे और अपने स्वामीके गुप्तकार्य और मंत्रका प्रकाश न करै ॥ ३० ॥

विद्वेषंचाविनाशंचमनसापिनचिंतयेत् ।
राजापरममित्रोस्तिनकामंविचरेदिति ३१

भाषार्थ- मनमेंभी किसीके द्वेष और नाशकी चिंता न करे और मेरा राजा परम मित्रहै इसविश्वाससे यथेच्छ न विचरे॥३१॥

स्त्रीभिस्तदर्थिभिःपापैर्वैरिभिर्भूतैर्निराकृतैः ।
एकार्थचर्यासाहित्यंसंसर्गंचविवर्जयेत्३२॥

भाषार्थ-स्त्री स्त्रियोंके रसिक पापी राजाने जिनको निकास दियाहो इनके संग वास और संबंधको त्यागदे ॥ ३२ ॥

वेषभाषानुकरणंनकुर्यात्पृथवीपतेः ।
संपन्नोपिचमेधावीनस्पर्धेतचतद्गुणैः॥३३॥

भाषार्थ-विद्वान् मनुष्य संपन्नहोकरभी राजाके वेष और भाषाका अनुकरण न करै राजाके गुणोंकी ईर्ष्याभी न करे ॥ ३३ ॥

रागापरागौजानीयाद्भर्तुःकुशलकर्मवित् ।
इंगिताकारचेष्टाभ्यस्तदभिप्रायतातथा ३४

भाषार्थ-कुशल कर्मका ज्ञाता मनुष्य इंगित आकार और चेष्टासे राजाकी प्रीति क्रोध और अभिप्रायको जाने ॥ ३४ ॥

तद्दत्तवस्त्रभूषादिचिन्हंसंधारयेत्सदा ।
न्यूनाधिक्यंस्वाधिकारकार्योनित्यंनिवेदयेत् ॥ ३५ ॥

भाषार्थ- राजाके दिये हुए वस्त्र आभूषण आदि चिन्हको सदा धारण करै और अपनी पदवीके न्यून और अधिक कार्यको प्रतिदिन निवेदन करे ॥ ३५ ॥

तदर्थांतत्कृतांवार्तांशृणुयाद्वापिकीर्तयेत् ।
चारसूचकदोषेणत्वन्यथायद्वदेन्नृपः॥ ३६

भाषार्थ-राजाके प्रजाजनकी और आज्ञाकी की हुई वार्त्ताको सुने और आचार और सूचकके दोषसे जो कुछ राजा अन्यथा कहै ॥ ३६ ॥

शृणुयान्मौनमाश्रित्यतथ्यवन्नानुमोदयेत् ।
आपद्गतंसुभर्तारंकदापिनपरित्यजेत् ॥३७

भापर्थ- तो उसे मौन होकर सुनें और सत्यके समान उसमें संमति नदे और आपत्तिके समय श्रेष्ठ स्वामीको कदापि न त्यागे ॥ ३७ ॥

एकवारमप्यशितंयस्यान्नंह्यादरेणच ।
तदिष्टंचिंतयेन्नित्यंपालकस्यांजसानकिं ॥

भाषार्थ-एकवारभी जिसके अन्नका आदरसे भक्षण किया हो उस पालकके इष्टकी चिन्ता सुखसे क्यों न करै अर्थात् अवश्य करै ॥ ३८ ॥

अप्रधानःप्रधानःस्यात्कालेचात्यंतसेवनात्
प्रधानोप्यप्रधानःस्यात्सेवालस्यादिनायतः

भाषार्थ-क्योंकि समयपर अत्यंत सेवा करनेसे अप्रधानभी मनुष्य प्रधान हो जात है और सेवा करनेमें आलस्यसे प्रधानभी अप्रधान होजाता है ॥ ३९ ॥

नित्यंसंसेवनरतोभृत्योराज्ञःप्रियोभवेत् ।
स्वस्वाधिकारकार्यंयद्राक्कुर्यात्सुमनायतः

भाषार्थ-नित्यसेवामें जो तत्पर होता है वह भृत्य राजाका प्रिय होता है क्योंकि अपने २ अधिकारके कामको प्रसन्नमन होकर शीघ्र करै ॥ ४० ॥

नकुर्यात्सहसाकार्यंनीचंराजापिनोदिशेत् ।
तत्कार्यकारकाभावेराज्ञाकार्यंसदैवहि ॥४१

भाषार्थ-और कार्यको शीघ्र न करै और राजाभी नीच मनुष्यको कार्य करनेको नकहै यदि उस कार्यके करनेवाला न होय तो राजा स्वयं उस कामको करै ॥ ४१ ॥

कालेयदुचितंकर्तुंनीचमप्युत्तमोर्हति ।
यस्मिन्प्रीतोभवेद्राजातदनिष्टंनचिंतयेत् ॥

भाषार्थ-और किसी समयपर उत्तम पुरुषभी नीचकर्म करनेको योग्य होता है और जिस मनुष्यपर राजाकी प्रसन्नता है उसके अनिष्टकी चिंता न करै ॥ ४२ ॥

नदर्शयेत्स्वाधिकारगौरवंतुकदाचन ।
परस्परंनाभ्यसूयुर्नभेदंप्राप्नुयुःकदा ॥ ४३

भाषार्थ-अपने अधिकारके गौरव (बड़ाई) को कदाचित्भी न दिखावे और राजाके वे पुरुष परस्पर निंदा और भेदको न करै ॥ ४३ ॥

राज्ञाचाधिकृताःसंतःस्वस्वाधिकारगुप्तये ॥
अधिकारिगणोराजासद्वृत्तौयत्रातिष्ठतः ४४

भाषार्थ-जो अपने २ अधिकारकीरक्षा के लियें राजाने नियतकिये हों-अधिकारियोंका समूह और राजा ये दोनों जहां सदाचारमें तत्पर रहते हैं ॥ ४४ ॥

उभौतत्रस्थिरालक्ष्मीर्विपुलासंमुखीभवेत् ।
अन्याधिकारवृत्तंतुनब्रूयाच्छ्रुतमप्युत ४५

भाषार्थ-वहां लक्ष्मी स्थिर और बहुत और संमुख होती है और अन्यके अधिकारके वृत्तांतको सुनकरभी न कहै ॥ ४५ ॥

राजानभृणुयादन्यमुखतस्तुकदाचन ।
नबोधयंतिचहितमहितंचाधिकारिणः ॥४६

भाषार्थ-और राजाभी अन्यके मुखसें अन्यका वृत्तांत न सुनें और अधिकारी हित और अहितका बोधन न करै ॥ ४६ ॥

प्रच्छन्नवैरिणस्तेतुदास्यरूपमुपाश्रिताः ।
हिताहितंनशृणोतिराजामंत्रिमुखाच्चयः ॥

भाषार्थ-वे दासरूपको प्राप्तहुए गुप्तवैरीहैं. और जो राजा मंत्रियोंके मुखसे हित और अहितको न सुने ॥ ४७ ॥

सदस्यूराजरूपेणप्रजानांधनहारकः ।
सुपुष्टव्यवहारायेराजपुत्रैश्चमंत्रिणः ॥ ४८

भाषार्थ-वह राजा राजाका रूप धारें प्रजाके धनका हरनेहारा चोर है और जो मंत्री राजा के पुत्रों के संग प्रबल व्यवहार करते हैं वेही मंत्री हैं ॥ ४८ ॥

विरुध्यंतिचतैःसाकंतेतुप्रच्छन्नतस्कराः ।
बालाअपिराजपुत्रानावमान्यास्तुमंत्रिभिः॥

भाषार्थ-और जो मंत्री राजपुत्रोंके संग विरोध करते है वे गुप्त तस्कर है और बालकभी राजपुत्रोंका अपमान न करना४९

सदासुबहुवचनैःसंबोध्यास्तेप्रयत्नतः ।
असदाचरितंतेषांकचिद्राज्ञेनदर्शयेत्॥५०॥

भाषार्थ-और राजाके पुत्रोंको सदा भली प्रकार बहुवचनक (यथा भो राजकुमाराः) संबोधन करै और उनके दुराचार राजाको न दिखावै ॥ ५० ॥

स्त्रीपुत्रमोहोबलवांस्तयोर्निंदानश्रेयसे ।
राज्ञोवश्यतरंकार्यंप्राणसंशयितंचयत् ॥५१

भाषार्थ-स्त्री और पुत्रका मोह बलवान् है इससे उनकी निंदा कल्याणकारिणी नहीं है और राजाका अत्यंत आवश्यक कार्यकर्त्ता जो प्राणोंकाभी संशय जता हो ५१॥

आज्ञापयाग्रतश्चाहंकारिष्येतत्तुनिश्चितं ।
इतिविज्ञाप्यद्राक्कर्तुंप्रयतेतस्वशक्तितः ॥५२

भाषार्थ-मैं आपके आगे स्थित हूं आज्ञा दीजिये और सब कार्यको निश्चयसे करूंगा ऐसे राजाकी आज्ञासे और अपनीशक्तिके अनुसार शीघ्र करनेमें यत्न करै ॥ ५२ ॥

प्राणानपिचसंदद्यान्महत्कार्येनृपायच ।
भृत्यःकुटुंबपुष्टयर्थेनान्यथातुकदाचन ॥

भाषार्थ–बड़े कार्यमें राजा और अपने कुटुंबके निमित्त भृत्य अपने प्राणोंकोभी दग्ध करदे और इतरके निमित्त दग्ध न करे ॥ ५३ ॥

भृत्याधनहराःसर्वेयुक्त्याप्राणहरोनृपः ।
युद्धादौसुमहत्कार्येभृत्याप्राणान्हरेन्नृपः ॥

भाषार्थ–वेतन (नौकरी) से धनके हरनेहारे सब हैं और युक्तिसे प्राणोंको हरने द्वारा राजा है क्योंकि युद्ध आदि बड़े कार्योंमें राजा भृत्योंके प्राण हरता है ॥ ५४ ॥

नान्यथाभृतिरूपेणभृत्योराजधनंहरेत् ।
अन्यथाहरतस्तौतुभवतश्चस्वनाशकौ ॥५५

भाषार्थ–भृत्य अपने वेतनसे राजाके धनको हरें अन्यथा हरते हुए राजा और भृत्य अपनेही नाश कर्त्ता होते हैं ॥ ५५ ॥

राजानुयुवराजस्तुमान्योमात्यादिकैःसदा ।
तन्न्यूनामात्यनवकंतन्न्यूनाधिकृतोगणः ५६

भाषार्थ–राजाके अनुसार युवराजकोभी मंत्री आदि सदा मानें और युवराजसे न्यून नौ मंत्री और मंत्रीयोंसे न्यून नीचेके अधिकारी गण हैं ॥ ५६ ॥

मंत्रितुल्यश्चायुतिकोन्यूनसाहस्रिकोमतः ।
नक्रीडयेद्राजसमंक्रीडितेतंविशेषयेत् ॥५७

भाषार्थ–दश सहस्रका अधिपति मंत्रीके तुल्य है और उससे न्यून सहस्रका अधिपति माना है और राजाके संग क्रीडा न करे करैभी तो राजाको अधिक मानें ॥ ५७ ॥

नावमान्याराजपत्नीकन्याद्यापिचमंत्रिभिः ।
राजसंबंधिनःपूज्याःसुहृदश्चयथार्हतः॥५८

भाषार्थ–राजाकी पत्नी और कन्या आदिका मंत्री आदि अपमान न करे इससे राजाका संबंधि और मित्र इनका यथायोग्य पूजन करे ॥ ५८ ॥

नृपाहूतस्तुरंगच्छेत्त्यक्त्वाकार्यशतंमहत् ।
मित्रायापिनवक्तव्यंराजकार्यसुमंत्रितं॥५९

भाषार्थ–राजाके बुलानेपर अपने बड़े सैकड़ों कार्यको त्याग कर शीघ्र जाइ भलीप्रकार मंत्रित (निश्चित) राजाका कार्य मित्रकोभी न बतावे ॥ ५९ ॥

भृतिंविनाराजद्रव्यमदत्तंनाभिलाषयेत् ।
राजाज्ञयाविनानेच्छेत्कार्यमाध्यस्थिकींभृतिं

भाषार्थ–अपनी भृति (मासिक) के विना राजाके द्रव्यकी विना दिये इच्छा न करे और राजाकी आज्ञाके विना मध्यस्थ अधिक भृतिकीभी इच्छा न करे ॥ ६० ॥

नानिहन्याद्द्रव्यलोभात्तत्कार्ययस्यकस्यचित् ।
स्वस्त्रीपुत्रधनप्राणैःकालेसंरक्षयेन्नृपं॥६१॥

भाषार्थ–और जिस किसीके कार्यको द्रव्यके लोभसे नष्ट न करे और अपने स्त्री पुत्र धन प्राणोंसे समयपर राजाकी रक्षा करे ॥ ६१ ॥

उत्कोचंनैवगृण्हीयान्नान्यथाबोधयेन्नृपं ।
अन्यथादंडकंभूपंनित्यंप्रबलदंडकं ॥६२॥

भाषार्थ–और उत्कोच (रिसवत) को ग्रहण न करै और समयपर राजाको बोध करादे कि अन्यथा दंड और प्रबल दंड देनेवाले राजाको ॥ ६२ ॥

निगृह्यबोधयेत्सम्यगेकांतेराज्यगुप्तये ।
हितंराज्ञश्चाहितंयल्लोकानांतन्नकारयेत् ६३

भाषार्थ-बलात्कारसे एकांतमें राज्यकी रक्षाके लिये भलीप्रकार बोधित करै (समझावे) और उससमय वह काम करावे जिसमें राजाका हित हो और लोकोंका अहित हो ॥ ६३ ॥

नवीनकरशुल्कादेर्लोकउद्विजतेततः ।
गुणनीतिबलद्वेषीकुलभूतोप्यधार्मिकः ॥

भाषार्थ-नवीन कर (दंड) और शुल्क (महसूल) से लोक दुःखित होतेहैं और कुलीनभी राजा जो गुणनीति सेनाका द्वेष करता है वह अधार्मिक है ॥ ६४ ॥

नृपोयदिभवेत्तंतुत्यजेद्राष्ट्रविनाशकं ।
तत्पदेतस्यकुलजंगुणयुक्तंपुरोहितः॥६५॥

भाषार्थ-और जो राजाही ऐसा हो कि जो अपने राज्यको नष्ट करता होय तौ पुरोहित उसके स्थानमें गुणयुक्त उसके कुलसे उत्पन्नको ॥ ६५ ॥

प्रकृत्यनुमतिंकृत्वास्थापयेद्राज्यगुप्तये ।
सास्त्रोदूरंनृपात्तिष्ठदस्त्रपाताद्बहिःसदा ६६

भाषार्थ-प्रकृतियोंकी संमतिसे और राज्यकी रक्षाके निमित्त स्थापन करै अस्त्रधारी मनुष्य राजासे दूर अस्त्रके पातकी भयसे बाहर सदैव टिकें ॥ ६६ ॥

सशस्त्रोदशहस्तंतुयथादिष्टंनृपप्रियाः ।
पंचहस्तंवसेयुर्वैमंत्रिणोलेखकाःसदा ॥६७

भाषार्थ-शस्त्र सहित जो राजाके प्यारे हैं वे राजाकी आज्ञाके अनुसार दशहातके अंतरसे रहैं ॥ ६७ ॥

सेनपैस्तुविनानैवसशस्त्रास्त्रोविशेत्सभां ।
पुरोहितःश्रेष्ठतरःश्रेष्ठःसेनापतिःस्मृतः ॥

भाषार्थ-शस्त्र और अस्त्र सहित कोईभी मनुष्य सेनापतियोंके विना सभामे न जावे और पुरोहित सर्वोत्तमहै और सेनापति उत्तम कहा है ॥ ६८ ॥

समःसुहृच्चसंबंधीह्युत्तमामंत्रिणःस्मृताः ।
अधिकारिगणोमध्योधमौदर्शकलेखकौ६९

भाषार्थ-मित्र और संबंधि समहैं (न उत्तम न मध्यम) और मंत्री उत्तम कहे हैं अधिकारियोंका समूह मध्यमहै और देखनेहारे और लिखारी अधम हैं ॥ ६९ ॥

ज्ञेयोधमतमोभृत्यःपरिचारगणःसदा ।
परिचारगणान्न्यूनोविज्ञेयोनीचसाधकः ७०

भाषार्थ-दास और टहलवे अत्यंत अधम हैं और नीच कार्यके कर्त्ता इनसेभी अधम जानने योग्य हैं ॥ ७० ॥

पुरोगमनमुत्थानंस्वासनेसन्निवेशनं ।
कुर्यात्सुकुशलप्रश्नंक्रमात्सुस्मितदर्शनं ॥

भाषार्थ-संमुख गमन अभ्युत्थान अपने आसन पर बैठाना कुशल पूंछना हंसकर देखना इन्हें क्रमसे ॥ ७१ ॥

राजापुरोहितादीनांत्वन्येषांस्नेहदर्शनं ।
अधिकारिगणादीनांसभास्थश्चानिरालसः ॥

भाषार्थ-राजा पुरोहितादिकोंसे करै और इतर जनोंको प्रीतिसे देखे और सभामें स्थित पुरुष आलस्यको छोडकर अधिपति आदिकोंसे इसी प्रकार आचरण करै ॥७२॥

विद्यावत्सुशरच्चंद्रोनिदाघार्कोद्विषत्सुच ।
प्रजासुचवसंतार्कइव स्यात्त्रिविधोनृपः ॥

भाषार्थ-विद्यावानोंमें शरद ऋतुके चंद्रमाके समान शत्रुओंसे ग्रीष्म ऋतुके सूर्यके समान प्रजाओंमे वसंत ऋतुके सूर्यके समान तीन प्रकारसे राजा रहै ॥ ७३ ॥

यदिब्राह्मणाभिन्नेपुमृदुत्वंधारयेन्नृपः ।
परिभवंतितंनीचायथाहास्तिपकागजं ७४ ॥

भापार्थ-जो राजा ब्राह्मणसे इतर जातियोंमे कोमल रहें तो नीच उसे इस प्रकार तिरस्कृत करते हैं जैसे पीलवान हाथीको७४

भृत्याद्यैर्यत्नकर्तव्याःपरिहासाश्चक्रीडनं।
अपमानास्पदेतेतुराज्ञोनित्यंभयावहं ॥७५

भापार्थ-भृत्यादिके संग हंसी और कीर्त्तन न करें और तिरस्कारवालेके संग हंसी और कीर्तन तो भयके दाता हैं ॥ ७५ ॥

पृथक्पृथक्ख्यापयंतिस्वार्थसिद्ध्यैनृपायते।
स्वकार्यंगुणवक्तृत्वात्सर्वेस्वार्थपरायत:७६॥

भापार्थ-अपने २ प्रयोजनकी सिद्धिके निमित्त वे अपमानी पुरुप पृथक् २ विख्यात करते हैं और वे अपने कार्यके गुणके वक्ता हैं इससे स्वार्थमें तत्पर हैं ॥ ७६ ॥

विकल्पंतेवमन्यंतिलंघयंतिचतद्वचः।
राजभोज्यानिभुंजंतिनातिष्ठतिस्वकेपदे७७॥

भापार्थ-और अपमान (तिरस्कार) के भेदसे अर्थात् अनेक प्रकारसे वे तिरस्कार करते हैं और राजाके वचनका अवलंघन करते हैं और राजाके भोग्य पदार्थोंको भोगते हैं और अपनी पदवी पर नहीं टिकते७७

विस्रंसयंतितन्मंत्रंविवृण्वंतिचदुष्कृतं।
भवंतिनृपवेषाहिवंचयंतिनृपंसदा ॥ ७८ ॥

भापार्थ-राजाके मंत्रका भेद करतेहैं और राजाके निन्दित कर्मका प्रकाश करते हैं और राजाके समान वेषको धारते हैं और सदा राजाको ठगतेहैं ॥ ७८ ॥

तत्स्त्रियंसज्जयंतिस्मराज्ञिक्रुद्धेहसंतिच।
व्याहरंतिचनिर्लज्जाहेलयंतिनृपंक्षणात् ॥

भापार्थ-जो राजाकी स्त्रीके संग व्यभिचार करते हैं और राजाके क्रोध हुए पर हंसते हैं और निर्लज्ज होकर बोलते हैं और क्षण भरमें राजाको ठगलेते हैं ॥ ७९ ॥

आज्ञामुल्लंघयंतिस्मनभयंयांत्यकर्माणि।
एतेदोषाःपरीहासक्षमाक्रीडोद्भवानृपे८० ॥

भापार्थ-राजाकी आज्ञा अवलंघन करते हैं और बुराकर्म कियेपर भय नहीं मानते ये दोप राजामें मंत्रियोंके संग क्षमा और क्रीडासे उत्पन्न होते हैं ॥ ८० ॥

नकार्यंभृतकःकुर्यान्नृपलेखाद्विनाक्वचित्।
नाज्ञापयेल्लेखनेनविनाल्पंवामहन्नृपः ॥८१

भापार्थ-राजाके लेखविना कदाचित्भी भृत्य कार्य न करे और राजाभी लेखविना अल्प अथवा अधिककी आज्ञा नदे॥ ८१ ॥

भ्रांतिःपुरुषधर्मत्वाल्लेख्यंनिर्णायकंपरं।
अलेख्यमाज्ञापयतिह्यलेख्यंयत्करोतियः ॥

भापार्थ-भ्रम पुरुषका धर्म है इससे लेखही परम निर्णय कर्त्ता है जो विना लिखें राजा कार्यकी आज्ञादे और विना लिखें जो करे ॥ ८२ ॥

राजकृत्यमुभौचोरौतौभृत्यनृपतीसदा।
नृपसंचिन्हितंलेख्यंनृपस्तन्ननृपोनृपः ८३॥

भापार्थ-वे दोनों भृत्य और राजा सदा चोर हैं राजाकी मुद्रासे चिन्हित जो लेख वही राजा है और राजा राजा नहीं है॥८३॥

समुद्रंलिखितंराज्ञालेख्यंतच्चोत्तमोत्तमं।
उत्तमंराजलिखितंमध्यमंत्रमयादिभिःकृतं ॥

भाषार्थ-मुद्रा (मोहर) सहित जो राजाका लेख है वह उत्तमसेभी उत्तम है और जो मंत्री आदिकोंका लेख है वह मध्यम है ॥ ८४ ॥

पौरलेख्यंकनिष्ठंस्यात्सर्वसंसाधनक्षमं।
यस्मिन्यस्मिन्हिकृत्येतुराज्ञायोधिकृतोनरः

भापार्थ-पुरवासियोंका लेख अधम है जो संपूर्ण साधनोंसे योग्य हो जिस२कार्यमें

राजानें जिस २ को अधिकार देरक्खा है वह मनुष्य ॥ ८५ ॥

सामात्ययुवराजादिर्यथानुक्रमतश्वसः ।
दैनिकंमासिकंवृत्तंवार्षिकंबहुवार्षिकं ॥८६

भाषार्थ-मंत्री और युवराज सहित यथा क्रमसे दिन २ का दैनिक और महीनेका मासिक और वर्षोंका वार्षिक और बहुत वर्षोंका बहुवार्षिक ॥ ८६ ॥

तत्कार्यजातलेख्यंतुराज्ञेसम्यङ्निवेदयेत् ।
राजाद्यंकितलेख्यस्यधारयेत्स्मृतिपत्रकं ॥

भाषार्थ-और मासिक आदिकोंके लेखको अछीतरह निवेदन करै और राजाके मुद्रा-सहित लेखके स्मृतिपत्र (रसीद) कोभी धारण करै ॥ ८७ ॥

कालेतीतेविस्मृतिर्वाभ्रांतिःसंजायतेनृणां ।
अनुभूतस्यस्मृत्यर्थंलिखितंनिर्मितंपुरा॥८८॥

भाषार्थ-बहुत कालके बीते पीछें मनुष्योंको भूल अथवा भ्रम हो जाता है इससे अनुभूत (जाने हुए) की स्मृतिके वास्ते पूर्व (प्रथम) लेखको रचा है ॥ ८८ ॥

यत्नाच्चब्रह्मणावाचांवर्णस्वरविचिन्हितं ।
वृत्तलेख्यंतथाचायव्ययलेख्यमितिद्विधा॥

भाषार्थ-ब्रह्माने यत्नसे वाणी वर्ण स्वरसे युक्त लेखको और वृत्तांतको आयव्यय (लेंनदेंन) के भेदसे दो प्रकारका लेख रक्खा है ॥ ८९ ॥

व्यवहारक्रियाभेदादुभयंबहुतांगतं ।
यथोपन्यस्तसाध्यार्थसंयुक्तंसोत्तरक्रियं ॥

भाषार्थ-व्यवहारके कार्योंके भेदसे वह दोनों प्रकारका लेख बहुत हो जाता है और आज्ञाके अनुकूल कर्त्तव्य अर्थसे युक्त और उत्तर क्रिया आगें करना सहित ॥ ९० ॥

सावधारणकंचैवजयपत्रकमुच्यते ।
सामंतेष्वथभृत्येपुराष्ट्रपालादिकेपुयत् ॥

भाषार्थ-जिससे निश्चय जीतको मानें उसे जयपत्र कहते हैं और जिससे सामंत (पासके राजा) भृत्य राष्ट्रपाल (जमीदार) आदिकोंमें आज्ञादी जाय ॥ ९१ ॥

कार्यमादिश्यतेयेनतदाज्ञापत्रमुच्यते ।
ऋत्विक्पुरोहिताचार्यमन्येष्वभ्यर्चितेपुच ॥

भाषार्थ-पूर्वोक्त सामंत आदिकोंको जिससे कार्यकी आज्ञा दीजाय उसे आज्ञापत्र कहते हैं ऋत्विक्-पुरोहित-आचार्य-और इतर पूजितोंको ॥ ९२ ॥

कार्यंनिवेद्यतेयेनपत्रंप्रज्ञापनायतत् ।
सर्वेश्रृणुतकर्तव्यमाज्ञयाममनिश्चितं ॥९३

भाषार्थ-जिससे कार्यका निवेदन किया जाय उसे प्रज्ञापन पत्र कहते हैं-संपूर्ण मेरी आज्ञासे निश्चित कर्त्तव्यको सुनों ॥ ९३ ॥

स्वहस्तकालसंपन्नंशासनंपत्रमेवतत् ।
देशादिकंयस्यराजालिखितेनप्रयच्छति ९४

भाषार्थ-अपने हस्त और कालसे संयुक्त वह शिक्षापत्र कहाता है और राजा अपने लेखसे देश आदि जिसको देता है ॥ ९४॥

सेवाशौर्यादिभिस्तुष्टःप्रसादलिखितंहितत् ।
भोगपत्रंतुकरदीकृतंचोपायनीकृतं ॥९५॥

भाषार्थ-सेना अथवा शूरवीरतासे प्रसन्न होकर जो राजा देता है वह तोषपत्र कहाता है कर और भेटका पत्र भोगपत्र कहता है ॥ ९५ ॥

पुरुषावधिकंतत्तुकलावधिकमेववा ।
विभक्तायेचभ्रात्राद्याःस्वरुच्यातुपरस्परं ॥

भाषार्थ–और वह पत्र पुरुषकी अवधि पर्यंत अथवा कालकी अवधि पर्यंत होता है और जो अपनी २ रुचिसे विभक्त (जुदे-हुए) भ्राता आदि ॥ ९६ ॥

विभागपत्रंकुर्वंतिभागलेख्यंतदुच्यते ।
गृहभूम्यादिकंदत्त्वापत्रंकुर्यात्प्रकाशकं ९७

भाषार्थ–विभागके पत्रको करें उसे भाग-लेख्य कहते हैं–घर और भूमि आदिको दे-कर प्रकाशके अर्थ पत्रको करें ॥ ९७ ॥

अनाछेद्यमनाहार्थंदानलेख्यंतदुच्यते ।
गृहक्षेत्रादिकंक्रीत्वातुल्यमूल्यप्रमाणयुक् ॥

भाषार्थ–और वह पत्र अनाच्छेद्य (मज-बूत) हो और हरनेके अयोग्य हो उसे दान लेख्य कहते हैं–घर और क्षेत्र आदिका क्रयण (खरीद) कर तुल्यमूल्य और प्रमाणसे युक्त ॥ ९८ ॥

पत्रंकारयतेयत्तुक्रयलेख्यंतदुच्यते ।
जंगमस्थावरंवद्धंकृत्वालेख्यंकरोतियत् ॥

भाषार्थ–जो पत्र कराया जाता है उसे क्रयण लेख्य कहते हैं–जंगम और स्थावर का वद्ध करके जो संख्या किई जाती है ९९

ग्रामोदेशश्चयत्कुर्यात्सत्यलेखपरस्परं ।
राजाविरोधिधर्मार्थंसंवित्पत्रंतदुच्यते ३००

भाषार्थ–और ग्राम अथवा देश जो पर-स्पर लेख करते हैं और राजाके अविरोधसे और धर्मके अर्थ जो किया जाता है उसे संवित्पत्र कहते हैं ॥ ३०० ॥

वृध्याधनंगृहीत्वातुकृतंवाकारितंचयत् ।
ससाक्षिमच्चतत्प्रोक्तंऋणलेख्यंमनीषिभिः ॥

भाषार्थ–व्याजपर धनको लेकर किया और कराया साक्षिक सहित जो लेख उसको बुद्धिमानोंने ऋणलेख्य कहा है ॥ १ ॥

अभिशापेसमुत्तीर्णेप्रायश्चित्तेकृतेबुधैः
दत्तंलेख्यंसाक्षिमच्चछुद्धिपत्रंतदुच्यते२ ॥

भाषार्थ–लोकके अतिवादकी निवृत्ति हुए पीछें और प्रायश्चित्तके अनंतर पंडितोंनें दिया साक्षिके युक्त लेख उसे शुद्धिपत्र कहते हैं ॥ २ ॥

मेलयित्वास्वधनांशान्व्यवहारायसाधकाः ।
कुर्वंतिलेखपत्रंयत्तच्चसामायिकंस्मृतं ॥ ३ ॥

भाषार्थ–अपने २ धनके भागको मिला कर किसी व्यवहारकी सिद्धिके अर्थ जो लेख पत्र करतें हैं उसे सामायिक पत्र कहते हैं ॥ ३ ॥

सभ्याधिकारिप्रकृतीसभासद्भिर्नयःकृतः ।
तत्पत्रंवाध्यमान्यंचेज्ज्ञेयंसंमतिपत्रकं ॥४॥

भाषार्थ–सभासदोंने जो लभ्य अधिकार और प्रजाओंका न्याय किया है तिसका जो जानने लिये पत्र उसे संमति पत्र कहते हैं ॥ ४ ॥

स्वकीयवृत्तज्ञानार्थंलिख्यतेयत्परस्परं ।
श्रीमंगलपदाद्यंवासपूर्वोत्तरपक्षकं ॥ ५ ॥

भाषार्थ–अपने वृत्तांतके ज्ञानके अर्थ ऐसा जो पत्र जिसके श्री आदिमें हो अथवा मांगालिकपद आदिमें हो परस्पर लिखा जाता है और जिसमें पूर्व और उत्तर दोनों पक्ष हों ॥ ५ ॥

असंदिग्धमगूढार्थंस्पष्टाक्षरपदंसदा ।
अन्यव्यावर्तकस्वात्मपरपित्रादिनामयुक् ॥

भाषार्थ–और जिसमें संदेह नहो और जिसके पद–अक्षर–अर्थ ये स्पष्टहों और जिसमें अन्यकी व्यावृत्तिके अर्थ अपने-पिता आदिका नामहो ॥ ६ ॥

एकद्विबहुवचनैर्यथार्हस्तुतिसंयुतं।
समामासतदर्धाहनामजात्यादिचिन्हितं॥

भाषार्थ-एकवचन-द्विवचन और बहुवचनोंसे यथोचित स्तुतिके संयुक्त और वर्ष-मास-पक्ष-नाम-जाति आदिसे निश्चितहो॥ ७॥

कार्यबोधिसुसंबंधनत्याशीर्वादपूर्वकं।
स्वाम्यसेवकसेव्यार्थक्षेमपत्रंतुतत्स्मृतं ८॥

भाषार्थ-जो पत्र कार्यका बोधकहो और जिसका संबंध भली प्रकार मिलताहो नमस्कार और आशीर्वाद जिसमें हो स्वामी-सेवक सेवनेयोग्य जिससे प्रतीतहो उसको क्षमपत्र कहते हैं॥ ८॥

एभिरेवगुणैर्युक्तंस्वाधर्षकविबोधकं।
भाषापत्रंतुतज्ज्ञेयमथवावेदनार्थकं॥ ९॥

भाषार्थ-इनीगुणोंसे युक्त और अपने दुःखका बोधक अथवा बतानेका जो पत्र उसे भाषापत्र कहतेहैं॥ ९॥

प्रदर्शितंवृत्तलेख्यंसमासाल्लक्षणान्वितं।
समासात्कथ्यतेचान्यच्छेषायव्ययबोधकं॥

भाषार्थ-दिखाया जो वृत्तांत लेख्य और संक्षेपसे जिसमें लक्षणहो और संक्षपसे ही जिसमें शेष आमंदनी व्यय(खर्चहो)॥१०॥

व्याप्यव्यापकभेदैश्चमूल्यमानादिभिःपृथक्
विशिष्टसंज्ञितैस्तद्धियथार्थैर्बहुभेदयुक् ११

भाषार्थ-न्यून और अधिकभेदों और तोल और प्रमाण आदिसे और विशिष्ट (उत्तम) हो और यथार्थ अनेक प्रकारके भेदसे जो युक्त हो॥ ११॥

वत्सरेवत्सरेवापिमासिमासिदिनेदिने।
हिरण्यपशुधान्यादिस्वाधीनंचायसंज्ञकं१२

भाषार्थ-वर्ष २ में और मास२में और दिन २ में होना पशु अन्न आदिको अपने आधीन रक्खै और आमदनीकोभी अपनेही आधीनरक्खे॥ १२॥

पराधीनंकृतंयत्तुव्ययसंज्ञंधनंचतत्।
साधकश्चैवप्राचीनआयःसंचितसंज्ञकः १३

भाषार्थ-पराधीनकी जो धन सो व्यय खर्चहीहै वर्त्तमान और प्राचीन जो आय (आमदनी) उसे संचित कहतेहैं॥ १३॥

व्ययोद्विधाचोपभुक्तस्तथाविनिमयात्मकः।
निश्चितान्यस्वामिकश्चानिश्चितस्वामिकं तथा॥ १४॥

भाषार्थ-व्यय दो प्रकारकाहै एक तो भुक्त दूसरा देना-और तीन प्रकारका संचितहै एक जिनके स्वामीका निश्चयहो दूसरा जिनके स्वामीका निश्चय नहो॥ १४॥

स्वस्वत्वानिश्चितंचेतित्रिधंविसंचितंमतं।
निश्चितान्यःस्वामिकंयद्धनंतुत्रिविधंहितत्

भाषार्थ-और तीसरा जो अपने स्वत्वसे निश्चितहो और निश्चितहै अन्यस्वामी जिसका ऐसा धन तीनप्रकारका है॥ १५॥

औपनिध्यंयाचितकमौत्तमर्णिकमेवच।
विस्रंभान्निहितंसद्भिर्यदौपनिधिकंहितत्॥

भाषार्थ-१ औपनिध्य- २ याचितक ३ औत्तमर्णिक जो विश्वाससे सत्पुरुषोंने अपने यहां रखदिया हो उसै औपनिधिक कहते हैं॥ १६॥

अवृद्धिकंगृहीतान्यालंकारादिचयाचितं।
सवृद्धिकंगृहीतंयदृणंतच्चोत्तमर्णिकं॥१७॥

भाषार्थ-विना सूदके लिया जो अलंकारादि उसे याचित कहतेहै और सूतपर लिया जो ऋण उसे औत्तमर्णिक कहतेहैं॥ १७॥

निध्यादिकंचमार्गादौप्राप्तमज्ञातस्वामिकं ।
साहजिकंचाधिकंचाद्विधास्वस्वत्वनिश्चितं ॥

भाषार्थ–जो निधि आदि मार्गमें मिलै और स्वामीका निश्चय नहो स्वभावसे प्राप्त और वृद्धि (व्याज) इन दो प्रकारका अपना धन होता है ॥ १८ ॥

उत्पद्यतेयोनियतोदिनेमासिचवत्सरे ।
आयःसाहजिकःसैवदायाद्यश्चस्ववृत्तितः ॥

भाषार्थ– जो नियमसे दिन– मास और वर्षमें उत्पन्नहो वह धनका आय (आमदनी) साहजिकहै और वह धन अपनी वृत्तिसे उत्पन्न होनेसे भाईका भाग होताहै ॥ १९ ॥

दायःपरिग्रहोयत्तुप्रकृष्टंतत्स्वभावजं ।
मौल्याधिक्यंकुसीदंचगृहीतंयाजनादिभिः

भाषार्थ–जो भाग परिग्रहसे मिलै और उत्तमभीहो उसे स्वभावज कहतेहैं और मोलमें अधिक मिलें (नफा) कृषिसे और यज्ञ करनेसे मिलै ॥ २० ॥

पारितोष्यंभृतिप्राप्तंविजितादयंधनंचयत् ।
स्वस्वात्वेधिकसंज्ञंतदन्यत्साहजिकंस्मृतं ॥

भाषार्थ– जो पारितोषिक और वेतनसे और जो जीतसे मिलै वह धन अपने धनसे अधिक कहाताहै उससे इतरधनको साहजिक कहतेहैं ॥ २१ ॥

पूर्ववत्सरशेषंचवर्तमानाव्दसंभवं ।
स्वाधीनंसंचितंद्वेधाधनंसर्वंप्रकीर्तितम् ॥२२॥

भाषार्थ–पूर्व वर्षका शेष और वर्त्तमान वर्षका जोद्रव्य वह अपने २ आधीनका संपूर्ण धन दो प्रकारका संचित कहाहै॥२२॥

द्वेधाधिकंसाहजिकंपार्थिवेतरभेदतः ।
भूमिभागसमुद्भूतआयःपार्थिवउच्यते ॥२३

भाषार्थ–दोप्रकारका अधिकमासिकहै पार्थिव और इतरभेदसे जो पृथिवीके भागसे राजाको मिलै उस आयको पार्थिव कहते हैं ॥ २३ ॥

सदैवकृत्रिमजलैर्देशग्रामपुरैःपृथक् ।
बहुमध्याल्पफलतोभिद्यतेभुविभागतः॥२४

भाषार्थ– मेघके जलसे और कूपआदिके जलसे देश–ग्राम और पुरोंसे जो बहुत मध्यम अल्प भागके भेदसे वह धन अनेक अनेक प्रकारका होताहै ॥ २४ ॥

शुल्कदंडाकरकरभाटकोपायनादिभिः ।
इतरःकीर्तितस्तज्ज्ञैरायोलेखविशारदैः २५

भाषार्थ–शुल्क (महसूल) दंड आकर (खान) उपायन(भेट)आदिसे मिला जो आय उसे लेखके कुशल मनुष्य इतर कहतेहैं२५

यन्निमित्तोभवेदायोव्ययस्तन्नामपूर्वकः ।
व्ययश्चैवंसमुद्दिष्टोव्याप्यव्यापकसंयुतः ॥

भाषार्थ– जिस निमित्तसे आवै उसी नामसे खर्च करै और व्ययभी व्याप्य व्यापकभेदसे दोप्रकारका होताहै अर्थात् अल्प और अधिक ॥ २६ ॥

पुनरावर्तकःस्वत्वनिवर्तकइतिद्विधा ।
व्ययोयन्निध्युपनिधिकृतोविनिमयैर्वृतः ॥

भाषार्थ– व्यय इस प्रकार दो भेदकाहै १पुनरावर्तक (फिर आजावै) और २ जिसमें अपना स्वत्व न रहै और निधि उपनिधि विनिमय भेदसे तीन प्रकारकाहै ॥ २७ ॥

सुकुसीदाकुसीदाधमर्णिकश्चावृत्तःस्मृतः ।
निधिर्भूमौविनिहितोन्यस्मिन्नुपनिधिःस्थितः ॥ २८ ॥

भाषार्थ–व्याजके निमित्त दिया अथवा विना व्याजसे दिया जो ऋण उसे आयन (फिर

आनेवाला) कहतेहैं पृथ्वीमें रक्खेहुएको निधि और इतर मनुष्यके पास रक्खेको उपनिधि कहतेहैं ॥ २८ ॥

दत्तमूल्यादिसंप्राप्तःसर्वैर्विनिमयीकृतः ।
वृध्याद्वृध्याचयोदत्तोसर्वस्यादाधमर्णिकः

भाषार्थ-दिये हुये मोलसे जो मिले उसे विनिमय कहतेहैं और व्याज अथवा विन-व्याज ये दिया जाय उसे आधमर्णिक कहते हैं

सवृद्धिकमृणंदत्तमकुसीदंतुयाचितं ।
स्वत्वंनिवर्तकोद्वेधात्वैहिकःपारलौकिकः॥

भाषार्थ- व्याजके निमित्त दिया अथवा उधारा जो दिया दो प्रकारका आधमर्णिक होताहै और खर्चके दोभेद हैं एक वह जो इस लोकके लियेहो दूसरा जो वह परलोकके लियेहो ॥ ३० ॥

प्रतिदानंपारितोष्यंवेतनंभोग्यमैहिकः ।
चतुर्विधस्तथापारलौकिकोनंतभेदभाक् ॥

भाषार्थ- बदलेमें देना-पारितोपिक-वेतन भोग्य-इस प्रकार ४ भेद ऐहिकके हैं और पारलौकिकके अनंत भेदहैं ॥ ३१ ॥

शेषेसंयोजयेन्नित्यंपुनरावर्तकोव्ययः ।
मूल्यत्वेनचयद्दत्तंप्रतिदानंस्मृतंहितत् ॥ ३२

भाषार्थ-और शेषमें जो व्यय प्रतिदिन होताहै उसे पुनरावर्त्तक कहतेहैं और जो माल लेकर दियाहो उसे प्रतिदान कहतेहैं ॥ ३२॥

सेवाशौर्यादिसंतुष्टैर्दत्तंतत्पारितोषिकं ।
भृतिरूपेणसंदत्तवेतनंतत्प्रकीर्तितं ॥ ३३ ॥

भाषार्थ-सेवा शूरवीरता आदिसे प्रसन्न होकर जो दिया उसे पारितोषिक कहतेहैं और जो भृतिरूपसे दियाहो उसे वेतन कहते हैं ॥ ३३ ॥

धान्यवस्त्रगृहारामगोगजादिरथार्थकं ।
विद्याराज्याद्यर्जनार्थधनाप्त्यर्थंतथैवच ॥

भाषार्थ-जो धन- अन्न-वस्त्र-घर-बाग हाथी-रथ इनके निमित्त खर्चहो और विद्या राज्य औ धनकी प्राप्तिके लिये जो खर्चहो ३४

व्ययीकृतंरक्षणार्थमुपभोग्यंतदुच्यते ।
सुवर्णरत्नरजतनिष्कशालास्तथैवच ॥ ३५

भाषार्थ-रक्षाकरनेमें जो खर्चहो उसे उपभोग कहतेहैं सोना-रत्न-चांदी और मणियोंकी शाला इनें पृथक् २ बनावे ॥ ३५ ॥

रथाश्वगोगजोष्ट्राजाविनशालाःपृथक्पृथक् ।
वाद्यशस्त्रास्त्रवस्त्राणांधान्यसंभारयोस्तथा॥

भाषार्थ-रथ- अश्व और हाथी-ऊंट-बकरी. भेड इनकी शाला पृथक् २ और बाजे शस्त्र. अस्त्र और अन्नकी और संभारकी शाला पृथक् २ बनावे ॥ ३६ ॥

मंत्रीशिल्पनाट्यवैद्यमृगाणांपाकपक्षिणां ॥
शालाभोग्येनिविष्टास्तुतद्व्ययोभोग्यउच्यते ।

भाषार्थ- मंत्री शिल्प नाट्य वैद्य मृग और पाकके योग्य पक्षी इनकी शालाओंके भोगमें जो नियुक्तहैं उनके निमित्त जो व्यय (खर्च)हो उसे भोग्य कहतेहैं ॥ ३७ ॥

जपहोमार्चनैर्दानैश्चतुर्धापारलौकिकः ।
पुनर्यातोनिवृत्तश्चविशेषायव्ययौचतौ॥ ३८

भाषार्थ-जप होम पूजन दानके भेदसे चार प्रकारका व्यय परलोकका होताहै जो फिर आजाय और फिर न आवे वे दोनों आय और व्यय विशेषसे होतेहैं ॥ ३८ ॥

आवर्तकोनिवर्तीचव्ययायौतुपृथग्द्विधा ।
आवर्तकविहीनौतुव्ययायौलेखकोलिखेत् ।

भाषार्थ-आनेवाला और न आने वाला इन भेदसे व्यय और आय पृथक्२ दोप्रका-

रकेहैं और जो फिर न लौटे ऐसे आय और व्ययको लिखनेवाला लिखे ॥ ३९ ॥

क्रयाधमर्णघटनान्यस्थलासेविवर्तकः ।
द्रव्यंलिखित्वादद्यात्तुगृहीत्वाविलिखेत्स्वयं।

भाषार्थ–लेन–देन–कर्ज जो औरको दिया जाय वह निवर्त्तक (फिर न आनेवाला) होताहै द्रव्यको प्रथम लिखकरदे और प्रथम ग्रहण करके पीछे लिखे ॥ ४० ॥

क्षीयतेवर्धतेनैवमायव्ययविलेखकः ।
हेतुप्रमाणसंबंधकार्यांगव्याप्यव्यापकैः ॥

भाषार्थ– न घटे और न बढे ऐसा जमा खर्च लिखे और उसके कारण प्रमाण संबंध कार्यके अंगभी न्यून अधिकभावसे लिखे४१

आयाश्चबहुधाभिन्नाव्ययाःशेषंपृथक्पृथक्।
मानेनसंख्ययाचैवोन्मानेनपरिमाणकैः ॥

भाषार्थ–आय (आमदनी) और व्यय (खर्च) ये दोनों अनेक प्रकारके होतेहैं मान संख्याउन्मान और परिमाणके भेदोंसे ॥४२॥

क्वचित्संख्याक्वचिन्मानमुन्मानपरिमाणकं।
समाहारःक्वचिच्चेष्टोव्यवहारायतद्विदां ॥

भाषार्थ–कहीं संख्या और कहीं मान और कहीं उन्मान और कहीं परिमाण और कहीं चारों व्यवहारके अज्ञाताओंके व्यवहारके लिखे इष्ट होते हैं ॥ ४३ ॥

अंगुलाद्यंस्मृतंमानमुन्मानंचतुलास्मृता ।
परिमाणंपात्रमानंसंख्यैकद्व्यादिसंज्ञिका ॥

भाषार्थ–अंगुलीसे जो मापा जाय उसे मान कहते हैं बाटोंसे जो तोला जाय उसे उन्मान कहते हैं किसी पात्रसे जो मापा जाय उसें परिमाण कहते हैं और एक दो तीन आदि संख्या होती है ॥ ४४ ॥

यत्रयादृग्व्यवहारस्तत्रतादृक्प्रकल्पयेत् ।
रजतस्वर्णताम्रादिव्यवहारार्थमुद्रितं ॥ ४५

भाषार्थ–जहां जैसा व्यवहार हो वहां वैसाही नियत करे–चांदी–सोना–तांबा–इनको व्यवहारके अर्थ मुद्रित करे ॥ ४५ ॥

व्यवहार्यंवराटाद्यंरत्नांतंद्रव्यमीरितं ।
सपशुधान्यवस्त्रादितृणांतंधनसंज्ञकं॥४६॥

भाषार्थ–कौडीसे लेकर रत्न पर्यन्तको द्रव्य कहते हैं पशु–अन्न–वस्त्र–तृण–आदिको धन कहते हैं ॥ ४६ ॥

व्यवहारेचाधिकृतंस्वर्णाद्यंमूल्यतामियात् ।
कारणादिसमायोगात्पदार्थस्तुभवेद्धृवि ॥

भाषार्थ–व्यवहारके लिये माना हुआ सोना आदि मोल हो जाता है और कारणके बलसे वही सोना आदि पदार्थ हो जाता हैं (जैसे भूषण) ॥ ४७ ॥

येनव्ययेनसंसिद्धस्तद्व्ययस्तस्यमूल्यकं ।
सुलभासुलभत्वाच्चागुणत्वगुणसंश्रयैः ॥

भाषार्थ–जितने व्ययसे मिलै उतना व्यय उसका मूल्य होजाता है और सुलभ और कठिन और भले और बुरे भेदोंसे ॥ ४८ ॥

यथाकामात्पदार्थानामनर्घमाधिकंभवेत् ।
नहीनंमणिधातूनांक्वचिन्मूल्यंप्रकल्पयेत् ॥

भाषार्थ–अपनी कामनाके अनुसार पदार्थोंका मोल अधिक हो जाता है और मणि–धातु इनका मूल्य कभीभी न्यून न करै४९॥

मूल्यहानिस्तुचैतेषांराजदौष्टेनजायते ।
दीर्घेचतुर्भागभूतपत्रेतिर्यग्गतावलिः ॥५०

भाषार्थ–इनके मूल्यकी न्यूनता राजाकी दुष्टतासे होती है बडे और चारभागके पत्रमें तिरछी आवली (पंक्ति) हो ऐसा पत्र हो ५०

त्र्यंशगाभ्यंतरगताचार्धगापादगापिवा ।
कार्यान्यापकव्याप्यानांलेखनेपदसंज्ञिका॥

भाषार्थ-तीन भागमें भीतरकी अथवा आधे भागमें अथवा चौथाई भागमें श्रेणी हो ऐसे पत्रको छोटे और बड़ेके लिखनेके निमित्त बतावै ॥ ५१ ॥

श्रेष्ठाभ्यंतरगातासुवामनस्त्र्यंशगाप्यनु ।
दक्षत्र्यंशगताचानुह्यर्धगापादगाततः ॥५२

भाषार्थ-उनमें भीतरकी श्रेष्ठ हैं उसमें बाइ ओरकी तीनभागकी और दांहनी ओरकीभी तीनभागकी और फिर चौथाई भागकी ये सब क्रमसे हों ॥ ५२ ॥

स्वभ्यंतरेस्वभेदाःस्युःसदृशाःसदृशेपदे ।
स्वारंभपूर्तिसदृशेपदगेस्तःसदैवहि ॥५३॥

भाषार्थ-अपने भीतरमें और अपने सदृश भेद अपने २ और वे भेद अपनी समाप्तिके सदृश हों और प्रत्येक भागमें वे सदा रहैं ॥ ५३ ॥

राजास्वलेख्यचिन्हंतुयथाभिलषितंतथा ।
लेखानुरूपेकुर्याद्धिदृष्ट्वालेख्यंविचार्यच ॥

भाषार्थ-राजा अपनी इच्छाके अनुसार अपने लेखका चिह्न ऐसा करै जो लेखके अनुकूल हो और लेखको देखले और विचारले ॥ ५४ ॥

मंत्रीचप्राड्विवाकश्चपंडितोदूतसंज्ञकः ।
स्वाविरुद्धंलेख्यमिदंलिखेयुःप्रथमंत्विमे॥

भाषार्थ-मंत्री-वकील-पंडित-दूत बसये पहले इस लेखको इसप्रकारसे लिखें जिस प्रकार अपनी पदवीका विरोधी नहो ॥५५॥

अमात्यःसाधुलिखितमस्त्येतत्प्राक्लिखेदयं ।
सम्यग्विचारितामितिसुमंत्रोविलिखेत्ततः॥

भाषार्थ-जो पहले भली प्रकार लिखा हो उसे अमात्य लिखै और यह भली प्रकार विचारा है ऐसे तिसके अनंतर सुमंत्र लिखै५६

सत्यंयथार्थमितिचप्रधानश्चालिखेत्स्वयं ।
अंगीकर्तुयोग्यमितिततःप्रतिनिधिर्लिखेत्॥

भाषार्थ-यह पत्र सत्य और यथार्थ है यह प्रधान स्वयं लिखै और तिसके अनंतर यह पत्र स्वीकार करनेके योग्य है यह प्रतिनिधि लिखै ॥ ५७ ॥

अंगीकर्तव्यमितिचयुवराजालिखेत्स्वयं ।
लेख्यंस्वाभिमतंचैतद्विलिखेच्चपुरोहितः५८

भाषार्थ-स्वीकार करो यह स्वयं युवराज लिखै और यह लेख हमें संमत है यह पुरोहित लिखै ॥ ५८ ॥

स्वस्वमुद्राचिन्हितंचलेख्यांतेकुर्युरेवहि ।
अंगीकृतमितिलिखेन्मुद्रयेच्चततोनृपः५९॥

भाषार्थ-अपनी मोहरसे चिह्नित संपूर्ण लेखको करै और तिसके अनंतर राजाभी अंगीकार किया यह लिखै और अपनी मोहरसे मुद्रित करै ॥ ५९ ॥

कार्यांतरस्याकुलत्वात्संम्यक्द्रष्टुंनशक्यते ।
युवराजादिभिर्लेख्यंतदानेनचदर्शितं॥६०

भाषार्थ-जो राजा इनकार्योंकी व्याकुलतासे न देखसके तिस समयमें राजाके दिखाये पत्रको युवराज आदि लिखैं ॥ ६० ॥

समुद्रंविलिखेयुर्वैसर्वेमंत्रिगणास्ततः ।
राजादृष्टमितिलिखेद्द्राक्संम्यद्रर्शनाक्षमः ॥

भाषार्थ-तिसके अनंतर सब मंत्रियोंके समूह अपनी २ मोहरसे चिह्नित करके लिखै यदि राजा भली प्रकार देखने असमर्थ हो. देख लिया ऐसे लिखै ॥ ६१ ॥

आयमादौलिखेत्सम्यग्व्ययंपश्चाद्यथागतं।
वामेचायंव्ययंदक्षेपत्रभागेचलेखयेत् ॥ ६२

भाषार्थ–प्रथम आमदनीको लिखै पश्चात् खर्चको-पत्रके वामभागमें आमदनीको लिखै और दक्षिण भागमें खर्चको ॥ ६२ ॥

यत्रोभौव्यापकव्याप्यौवामोर्ध्वभागगौक्रमात् ।
आधाराधेयरूपौवाकालार्थौगणितंहितत् ॥

भाषार्थ–जिसमें अधिक और न्यून-वाम और क्रमसे दक्षिण भागमें हों और अथवा आधार और आधेयरूप हों वह कालके निमित्त गणित है ॥ ६३ ॥

अधोधश्चक्रमात्तत्रव्यापकंवामतोलिखेत् ।
व्याप्यानांमूल्यमानादितरपंक्त्यांविनिवेशयेत् ॥ ६४ ॥

भाषार्थ–नीचें २ क्रमसे पत्रमें व्यापकको वामभागमें लिखै और व्याप्योंका मोल और प्रमाण आदिभी उसी पंक्तिमें लिखै६४

ऊर्ध्वगानांतुगणितमधःपंक्त्यांप्रजायते ।
यत्रोभौव्यापकव्याप्यौव्यापकत्वेनसंस्थितौ ॥ ६५ ॥

भाषार्थ–ऊपर लिखे हुओंकी गिनती नीचेकी पंक्तिमें होती है जहां दोनों व्यापक और व्याप्यव्यापक समानही प्रतीत हो ६५

व्यापकंबहुवृत्तित्वंव्याप्यंस्यान्न्यूनवृत्तिकं।
व्याप्याश्चावयवाःप्रोक्ताव्यापकावयवी स्मृतः ॥ ६६ ॥

भाषार्थ–अधिक जगै जो वर्त्तै उसे व्यापक और अल्पजगे जो वर्त्तै उसे व्याप्य कहते हैं और अवयवोंको व्याप्य और अवयवीको व्यापक कहते हैं ॥ ६६ ॥

सजातीनांचलिखनंकुर्याच्चसमुदायतः ।
यथाप्राप्तंतुलिखनमाद्यंनसमुदायतः ६७॥

भाषार्थ–सजातीय पदार्थोंको समुदाय रूपसे लिखै और समुदायमें प्रथम उसे लिखे प्रथम आया हो ॥ ६७ ॥

व्यापकश्चपदार्थोवायत्रसंतिस्थलानिहि ।
व्याप्यमायंव्ययंतत्रकुर्यात्कालेनसर्वदा ॥

भाषार्थ–व्यापक अथवा पदार्थ जहां स्थल हों वहां आय और व्यय जो है उसे समयके अनुसार व्याप्यसे करै ॥ ६८ ॥

स्थानटिप्पणिकाचैषाततोन्यत्संघटिप्पणं ।
विशिष्टसंज्ञितंतत्रव्यापकंलेख्यभाषितं ६९

भाषार्थ–यह स्थानकी टिप्पण (पत्र) है और इससे इतर संघटिप्पण होती है और वहां विशिष्टनामका व्यापक भाषा (अर्जी) लेख होता है ॥ ६९ ॥

आयाःकतिव्ययाःकस्यशेषंद्रव्यस्यचास्तिवै ।
विशिष्टसंज्ञकैरेषांसंविज्ञानंप्रजायते ॥७०॥

भाषार्थ–कितना आय (आमदनी) और कितना व्यय (खर्च) है और किस आयका कितना शेष (बाकी) है इनका पृथक्२ नामोंसे ज्ञान होता है ॥ ७० ॥

आदौलेख्यंयथाप्राप्तंपश्चात्तद्गणितंलिखेत् ।
यथाद्रव्यंचस्थानंचाधिकसंज्ञंचटिप्पणे ॥

भाषार्थ–प्रथम जैसे आया हो वैसे लिखै और पीछें उसकी संख्या लिखै जैसा द्रव्य हो और जैसा स्थान हो और जैसी अधिक संज्ञा हो यह सब टिप्पण (वही) में लिखै

शेषायव्ययविज्ञानंक्रमाल्लेख्यैःप्रजायते ।
स्थलायव्ययविज्ञानंव्यापकस्थलतोभवेत्॥

भाषार्थ-शेष आय व्ययका ज्ञान क्रमसे लेखोंसे होता है स्थान आय व्ययका ज्ञान बडे स्थानसे अर्थात् इस जिलेके इस गांवसे इतना रुपया आया है ॥ ७२ ॥

पदार्थस्यस्थलानिस्युःपदार्थाश्चस्थलस्यतु
व्याप्यास्तिथ्यादयश्चापियथेष्टालेखनेनृणां

निश्चितान्यस्वामिकाद्याआयायेइतरांतगाः
विशिष्टसंज्ञिकायेचपुनरावर्तकादयः ॥ ७४

भाषार्थ-पदार्थके स्थान होते हैं और स्थानके पदार्थ होते हैं और अपनी इच्छाके अनुसार व्याप्य (मासके अंग) तिथि आदिभी मनुष्योंको लिखनी ॥ ७४ ॥

व्ययाश्चपरलोकांताअंतिमव्यापकाश्चते ।
इच्छयाताडितंकृत्वादौप्रमाणफलंततः ॥

भाषार्थ-निश्चित है अन्य स्वामी जिसका ऐसे जो इतरोंके आय और पृथक् २ हैं संज्ञा जिनकी ऐसे जो पुनरावर्त्तक (फिर लौटने वाले) आदि ॥ ७५ ॥

प्रमाणभक्तंतल्लब्धंभवेदिच्छाफलंनृणां ।
समासतोलेख्यमुक्तंसर्वेषांस्मृतिसाधनं ॥

भाषार्थ-परलोक पर्यंत जो व्यय हैं ये सब अंतिम व्यापक कहाते हैं अपनी इच्छासे प्रथम इनें गिनें और फिर प्रमाणका फल लिखे ॥ ७६ ॥

गुंजामाषस्तथाकर्षःपदार्थप्रस्थएवहि ।
यथोत्तरादशगुणापंचप्रस्थस्यचाढकाः ॥

भाषार्थ- गुंजा-मासा-कर्ष-पदार्थ-प्रस्थये क्रमसे दश २गुणे अधिक होते हैं और एक प्रस्थके पांच आढक होते हैं ॥ ७७ ॥

ततश्चाष्टाढकःप्रोक्तोह्यर्मणस्तेनुविंशतिः
खारिकास्माद्भिद्यतेतद्देशेदेशेप्रमाणकं ॥

भाषार्थ-और आठ आढकका एक अर्मण कहा है और वीस आढककी एक खारी होती है और देशके भेदसे प्रमाणका भेद होता है ॥ ७८ ॥

पंचांगुलावटंपात्रंचतुरंगुलविस्तृतं ।
प्रस्थपादंतुतज्ज्ञेयंपरिमाणेसदाबुधैः ॥ ७९

भाषार्थ-पांच अंगुल गहरा और चार अंगुल चौडा जो पात्र होता है उसे परिमाणके विषे विद्वान् सदा प्रस्थपाद जाने ॥ ७९ ॥

ऊर्ध्वांकश्चयथासंज्ञस्तदधस्थाश्चवामगाः ।
क्रमात्स्वदशगुणिताःपरार्धांताःप्रकीर्तिताः।

भाषार्थ- ऊपरके अंककी जो संख्या हो और उसके नीचेके जो दश गुणे हैं वे परार्द्ध पर्यंत कहे हैं ॥ ८० ॥

नकर्तुंशक्यतेसंख्यासंज्ञाकालस्यदुर्गमात्
ब्रह्मणोद्विपरार्धंतुआयुरुक्तंमनीषिभिः ।८१

भाषार्थ-दुर्गम होनेसे कालकी संख्याकी संज्ञा नहीं करसकते और मनीषियों (विद्वानों) ने ब्रह्माकी द्विपरार्द्ध आयुः कही है ८१

एकोदशशतंचैवसहस्रंचायुतंक्रमात् ।
नियुतंप्रयुतंकोटिरर्बुदंचाब्जखर्वकौ ॥८२॥

भाषार्थ-एक-दश-सौ-हजार-दशहजार लक्ष-दशलक्ष-किरोड-अर्व-अब्ज-खर्व-ये क्रमसे संख्या जाननी ॥ ८२ ॥

निखर्वपद्मशंखाब्धिमध्यमांतपरार्धकाः ।
कालमानंत्रिधाज्ञेयंचांद्रंसौरंचसावनं ॥८३

भाषार्थ-निखर्व-पद्म-शंख-अब्धि-मध्य अंत-परार्द्धभी संख्या जाननी और कालका मान तीन प्रकारका होता है सूर्यकी संक्रांति चन्द्रमाका उदय और सावनसे८३

भृतिदानेसदासौरंचांद्रंकौसीदवृद्धिषु ।
कल्पयेत्सावनंनित्यंदिनभृत्येवधौसदा ॥

भाषार्थ–भृति (नोंकरी) के देनेमें सूर्यकी संक्रांतिसे और खेती और व्याजमें चन्द्रोदयसे और भृति (मजूरि) और अवधिमें अमावससे मास लेना ॥ ८४ ॥

कार्यमानाकालमानाकार्यकालमितिस्त्रिधा।
भृतिरुक्तातुतद्विज्ञैःसादेयाभाषितायथा ॥

भाषार्थ–कार्य कालके मानसे और कार्यके कालसे भृति (नोंकरी) भृतिके ज्ञाताओंने कही है और वह भृति जैसे कहती हो वैसेही देनी ॥ ८५ ॥

अयंभारस्त्वयातत्रस्थाप्यस्त्वैतावतींभृतिं ।
दास्यामिकार्यमानासाकीर्तितातद्विदेशकैः।

भाषार्थ–यह बोझ तेरेको वहां पहुंचा देना और इतनी भृति दूंगा इस भृतिको भृतिके उपदेश करनेवाले कार्यमाना कहते हैं ॥ ८६ ॥

वत्सरेवत्सरेवापिमासिमासिदिनेदिने ।
एतावतींभृतिंतेहंदास्यामीतिचकालिका ॥

भाषार्थ–वर्ष २ में अथवा महीने २ में इतनी भृति तुझे दूंगा इस भृति को कालिका कहते हैं ॥ ८७ ॥

एतावताकार्यमिदंकालेनापित्वयाकृतं ।
भृतिमेतावतींदास्येकार्यकालमिताचसा ॥

भाषार्थ–इतने कालमें इतना काम तुझे करना और इतनी भृति दूंगा इस भृतिको कार्यकालमिता कहते हैं ॥ ८८ ॥

नकुर्याद्भृतिलोपंतुतथाभृतिविलंबनं ।
अवश्यपोष्यभरणाभृतिर्मध्याप्रकीर्तिता ॥

भाषार्थ–भृतिका लोप (अभाव) और देनेमें विलंब न करे जिस भृतिसे भरण पोषण हो उस भृतिको मध्यमा कहते हैं ८९॥

परिपोष्याभृतिःश्रेष्ठासमान्नाच्छादनार्थिका
भवेदेकस्यभरणंययासाहीनसंज्ञिका ॥९०।

भाषार्थ–अन्न–वस्त्र–आदिसे जिस भृतिसे सबका पोषण हो वह भृति श्रेष्ठ होती है और जिससे एककाही पोषण हो उसे हीन भृति कहते हैं ॥ ९० ॥

यथायथातुगुणवान्भृतकस्तद्भृतिस्तथा ।
संयोज्यातुप्रयत्नेननृपेणात्महितायवै ॥

भाषार्थ–जैसे २ गुणवाला भृत्य हो वैसी ही उसकी भृति राजा अपने हितके अर्थ प्रयत्नसे नियत करे ॥ ९१ ॥

अवश्यपोष्यवर्गस्यभरणंभृतकाद्भवेत् ।
तथाभृतिस्तुसंयोज्यायद्योग्याभृतकायवै ॥

भाषार्थ–भृत्यके पोषण करने योग्यका पालन जिस प्रकार होसके वैसीही योग्य भृति (नोंकरी) भृत्यके अर्थ संयुक्त करे ९२

येभृत्याहीनभृतिकाःशत्रवस्तेस्वयंकृताः ।
परस्यसाधकास्तेतुछिद्रकोशप्रजाहराः ॥

भाषार्थ–जिन भृत्योंकी भृति न्यून है वे अपनेही बनाये शत्रु हैं और वे दूसरेके साधक हैं और छिद्र कोश और पूजाके हरने वाले होते हैं ॥ ९३ ॥

अन्नाच्छादनमात्राहिभृतिःशूद्रादिषुस्मृता।
तत्पापभाग्यन्यथास्यात्पोषकोमांसभोजिषु

भाषार्थ–शूद्र आदिकोंको ऐसी भृति दे जिससे भोजन वस्त्रका निर्वाह चलै क्यों कि जो मांसके भक्षकोंको अधिक भरण पोषण करता है वे उनके हिंसा आदिक पापके भागी होते हैं ॥ ९४ ॥

यद्ब्राह्मणेनापहृतंधनंतत्परलोकदं ।
शूद्रायदत्तमपियन्नरकायैवकेवलं ॥९५ ॥

भाषार्थ-जो ब्राह्मणने धन हरभी लियाहै वह परलोकका देनेवाला है और जो धन शूद्रको अपने हाथसेभी दिया हो वह केवल नरककाही देनेवाला होताहै ॥ ९५ ॥

मंदोमध्यस्तथाशीघ्रस्त्रिविधोभृत्यउच्यते ।
समामध्याचश्रेष्ठाचभृतिस्तेषांक्रमात्स्मृता

भाषार्थ-मंद-मध्यम-शीघ्र-तीन प्रकारका भृत्य होता है और उनकी भृतिभी सम मध्यम श्रेष्ठ भेदसे तीन प्रकारकी होती है ॥ ९६ ॥

भृत्यानांगृहकृत्यार्थंदिवायामंसमुत्सृजेत् ।
निशियामत्रयंनित्यंदिनभृत्येर्धयामकं ॥

भाषार्थ-अपने घरके कार्य करनेके अर्थ एक प्रहरकी छुट्टी भृत्योंको दिननें और तीन प्रहरकी रात्रिमें और जो दिनकाही भृत्य हो उसे आधे प्रहरकी छुट्टी दे ॥ ९७॥

तेभ्यःकार्यंकारयीतह्युत्सवाहैर्विनानृपः ।
अत्यावश्यंतूत्सवेपिहित्वाश्राद्धदिनंसदा ॥

भाषार्थ-राजा भृत्योंसे काम करावै परन्तु जो दिन उत्सव (दिवाली आदि) के हों उनके विना यदि कार्य आवश्यक होय तौ उत्सवमेंभी काम करावे परन्तु श्राद्धके दिनोंको सदा त्याग दे अर्थात् काम न ले९८॥

पादहीनांभृतिंत्वार्तेदद्यात्त्रैमासिकींततः ।
पंचवत्सरभृत्येतुन्यूनाधिक्यंयथातथा ॥

भाषार्थ-रोगके समय तीन महीनेकी भृति एक वर्षके रोगीको दे एक चौथाई कम भृति भृत्यको दे और पांचवर्षके भृत्यको तौ रोगकी अवस्थामें जैसे तैसे न्यून और अधिक भृति दे ॥ ९९ ॥

षाण्मासिकींतुदीर्घार्तेतदूर्ध्वंनचकल्पयेत् ।
नैवपक्षार्धमार्तस्यहातव्याल्पापिवैभृतिः ।

भाषार्थ-और बहुत दिनके अधिक रोगीको वर्षमें छःमहीनेकी भृति दे और इससे आगे न्यून भृतिकी कल्पना न करे और१८ आठ दिनके रोगीकी कुछभी भृति न काटे ॥ ४०० ॥

शश्वत्सदोषितस्यापिग्राह्यःप्रतिनिधिस्ततः ।
सुमहद्गुणिनंत्वार्तंभृत्यर्धंकल्पयेत्सदा ॥१॥

भाषार्थ-जो भृत्य वार २ रोगसे ग्रस्त रहै उसकी जगह प्रतिनिधि रखले और जो भृत्य अत्यंत गुणी हो उसको रोगकी अवस्थामेंभी सदा आधी भृतिदे ॥ १ ॥

सेवांविनानृपःपक्षंदद्याद्भृत्यायवत्सरे ।
चत्वारिंशत्समानीताःसेवयायेनवैनृपः २॥

भाषार्थ-भृत्यको एक वर्षमें १५ दिनकी भृति सेवाके विनाभी राजादे और जिसने सेवा करते २ चालीस वर्ष विताये हों उस भृत्यको राजा ॥ २ ॥

ततःसेवांविनातस्मैभृत्यर्धंकल्पयेत्सदा ॥
यावज्जीवंतुतत्पुत्रेक्षमेबालेतदर्धकं ॥ ३ ॥

भाषार्थ-तिसके अनंतर सेवाके विनाही तिसके लिये आधी भृति नियत जीनेतक करदे और उसके बालके लिये आधीमेंसे आधी भृति नियत करै ॥ ३ ॥

भार्यायांवासुशीलायांकन्यायांवास्वश्रेयसे ।
अष्टमांशंपारितोष्यंदद्याद्भृत्यायवत्सरे ॥

भाषार्थ-सुशील स्त्री और कन्याको अपने कल्याणके अर्थ भृतिका आठवां भाग दे और भृतिका आठवां भाग पारितोषिक भृत्यको दे ॥ ४ ॥

कार्याष्टमांशंवादद्यात्कार्यंद्रागधिकंकृतं ।
स्वामिकार्येविनष्टोयस्तत्पुत्रेतद्भृतिंवहेत्॥

भाषार्थ–अथवा कामका आठवां भाग दे और जो काम शीघ्र और मर्यादासे अधिक किया हो और जो भृत्य स्वामीके कार्यमें नष्ट हो गया हो तो उसकी भृति उसके पुत्रको दे ॥ ५ ॥

यावद्बालोन्यथापुत्रगुणान्दृष्ट्वाभृतिंवहेत् ।
षष्ठांशंवाचतुर्थांशंभृतेर्भृत्यस्यपालयेत्॥६॥

भाषार्थ–इतने भृत्यका पुत्र बालक हो तिसके अनंतर पुत्रके गुणोंको देखकर भृति दे छठा भाग अथवा चौथा भाग भृत्यकी भृतिको पालता रहै अर्थात् उसके भागको देता रहै ॥ ६ ॥

दद्यात्तदर्धंभृत्यायद्वित्रिवर्षेखिलंतुवा ।
वाक्पारुष्यान्न्यूनभृत्यास्वामीप्रबलदंडतः

भाषार्थ–दो तीन वर्षमें मासिकका आधा उस भृत्यको सेवाके विना दे जो भृत्य कटुवचनी हो अथवा सेवाको जिसने यथार्थ न कियाहो ॥ ७ ॥

भृत्यंप्रशिक्षयेन्नित्यंशत्रुत्वंत्वपमानतः ।
भृतिदानेनसंपुष्टामानेनपरिवर्धिताः ॥ ८॥

भाषार्थ–अपमानसे भृत्य शत्रु होजाता है इससे भृत्यको नित्य शिक्षा देता रहै मासिकके देनेसे भृत्य पुष्ट होते हैं और मानसे बढते हैं ॥ ८ ॥

सांत्वितामृदुवाचायेनत्यजंत्यधिपंहिते ।
यथागुणान्स्वभृत्यांश्चप्रजाःसंरंजयेन्नृपः ९

भाषार्थ–जिन भृत्योंको कोमल वचनोंसे शांत रक्खा है वे अपने स्वामीको नहीं त्यागते हैं गुणोंके अनुसार अपने भृत्य और प्रजाकी भली प्रकार रक्षा करा करै ॥ ९ ॥

शाखाप्रदानतः कांश्चिदपरान्फलदानतः ।
अन्यान्सुचक्षुषाहास्यैस्तथाकोमलयागिरा

भाषार्थ–किसी भृत्यको शाखा(मासिकसे अधिक) देनेसे और किसीको फल (द्रव्य आदि) देनेसे और किसीको हंसीसे और किसीको कोमलवाणीसे राजा प्रसन्न रक्खै ॥ १० ॥

सुभोजनैःसुवसनैस्तांबूलैश्चधनैरपि ।
कांश्चित्सुकुशलप्रश्नैरधिकारप्रदानतः॥११॥

भाषार्थ–किनी एक भृत्योंको सुंदर वस्त्रोंसे और किनी एकोंको पानोंसे और किनी एकोंको कुशल पूछनेसे और किनी एकोंको अधिकारके देनेसे राजा प्रसन्न रक्खै ॥ ११ ॥

वाहनानांप्रदानेनयोग्याभरणदानतः ।
छत्रातपत्रचमरदीपिकानांप्रदानतः॥ १२॥

भाषार्थ–किनी एक भृत्योंको वाहनके देनेसे और योग्य भूषणोंके देनेसे और छत्री छतर चंवर और मसालके देनेसे राजा प्रसन्न रक्खै ॥ १२ ॥

क्षमयाप्रणिपातेनमानेनाभिगमेनच ।
सत्कारेणचज्ञानेनह्यादरेणशमेनच ॥ १३॥

भाषार्थ–किनी एक भृत्योंको क्षमासे और नमस्कारसे और सत्कारसे और ज्ञानसे और आदरसे और किनीएक भृत्योंको शांतिसे राजा प्रसन्न रक्खै ॥ १३ ॥

प्रेम्णासमीपवासेनस्वार्धासनप्रदानतः ।
संपूर्णासनदानेनस्तुत्योपकारकीर्तनात्१४।

भाषार्थ–और किनी एक भृत्योंको प्रेमसे और अपने समीप वासके देनेसे और अपने आधे आसनपर बैठानेसे और संपूर्ण जुदा आसन देनेसे और किनी एकोंको किये हुए उपकारकी प्रशंसासे प्रसन्न रक्खै ॥ १४ ॥

यत्कार्येविनियुक्तायेकार्यंकैरंकयेत्ततान् ।
लोहजैस्ताम्रजैरीतिभवैराजतसंभवै॥:१५॥

भाषार्थ–जिसकार्यमें जो भृत्य नियुक्त है उसी कार्यको मुद्रासे उन्हें अंकित करे और वे मुद्रा लोहेकी हों अथवा तांबेकी अथवा पीतलकी अथवा चांदिकी हों ॥ १५ ॥

सौवर्णरत्नजैर्वापियथायोग्यैःस्वलांछनैः ।
प्रविज्ञानायदूरात्तुवस्त्रैश्चमुकुटैरपि ॥१६॥

भाषार्थ–सोनेकी हों अथवा रत्नोंकी हों और दूरसे ज्ञानके अर्थ वस्त्र मुकुट आदि अपने २ यथा योग्य चिह्नोंसे अंकित करै१६

वाद्यवाहनभेदैश्चभृत्यान्कुर्यात्पृथक्पृथक् ।
स्वविशिष्टंचयच्चिन्हंनदद्यात्कस्यचिन्नृपः ॥

भाषार्थ–वाद्य (बाजे) और वाहनके भेदसे भृत्योंको पृथक्२ करै और अपना जो विशिष्ट चिन्ह है उसे राजा किसीकोभी नदे १७॥

दशप्रोक्ताःपुरोधाद्याब्राह्मणाःसर्वएवते ।
अभावेक्षत्रियायोज्यास्तदभावेतथोरुजाः ॥

भाषार्थ–जो दश पुरोहित आदि कहे हैं वे सब ब्राह्मणही होने चाहियें जो ब्राह्मण न मिलें तो क्षत्रिय और क्षत्रिय न मिलें तो वैश्य होने चाहियें ॥ १८ ॥

नैवशूद्रास्तुसंयोज्यागुणवंतोपिपार्थिवैः ।
भागग्राहीक्षत्रियस्तुसाहसाधिपतिश्चसः १९

भाषार्थ–और गुणवालेभी शूद्र पुरोहित आदि पदवियोंपर कदाचित् नियुक्त न करै भागकरके ग्रहण करनेको और साहस (फौजदारी) की पदवीपर क्षत्रियको नियुक्त करै ॥ १९ ॥

ग्रामपोब्राह्मणोयोज्यःकायस्थोलेखकस्तथा
शुल्कग्राहीतुवैश्योहिप्रतिहारश्चपादजः २०

भाषार्थ–ग्रामका अधिपति ब्राह्मण और लेखक कायस्थ नियुक्त करना शुल्क (महसूल)का अधिपति वैश्य और प्रतिहार(दूत) शूद्र नियुक्त करना ॥ २० ॥

सेनाधिपःक्षत्रियस्तुब्राह्मणस्तदभावतः ।
नवैश्योनचवैशूद्रःकातरश्चकदाचन ॥२१॥

भाषार्थ–सेनाका अधिपति क्षत्रिय और उसके अभावमें ब्राह्मण और वैश्य और शूद्र और कातर (कायर) इनको कभीभी नियुक्त न करे ॥ २१ ॥

सेनापतिःशूरएवयोज्यःसर्वासुजातिषु ।
ससंकरचतुर्वर्णधर्मेयंनवयावनः ॥ २२ ॥

भाषार्थ–संपूर्ण जातियोंमें सेनापति शूरही नियुक्त करना यह धर्म संकर सहित चारों वर्णोंका है और यवनोंका नहीं है ॥ २२ ॥

यस्यवर्णस्ययोराजासवर्णःसुखमेधते ।
नोपकृतंमन्यतेस्मनतुष्यतिसुसेवनैः २३॥

भाषार्थ–जिस वर्णका जो राजा होता है वह वर्ण सुख पावता है न उपकारको मानता है और न सेवा करनेसे प्रसन्न होता है॥२३

कथांतरेनस्मरतिशंकतेप्रलपत्यपि ।
क्षुब्धस्तनोतिमर्माणितंनृपंभृतकस्त्यजेत् ॥

भाषार्थ–कथन समय पर स्मरण न करै और कहतेभी शंका रक्खे क्षोभके समय मर्मको बींधे ऐसे राजाको भृत्य त्यागदे २४

लक्षणंयुवराजादेःकृत्यमुक्तंसमासतः २५॥

भाषार्थ–युवराज आदिकों का लक्षण और कार्य संक्षेपसे कहा ॥ २५ ॥

इतिशुक्रनीतौयुवराजाकथनं नाम ॥
द्वितीयाध्यायः ॥२ ॥

यह शुक्रनीतिमें युवराजहै नाम जिसका ऐसा दूसरा अध्याय समाप्त हुआ

श्रीः ।

शुक्रनीति

(भाषाटीकासहिता)
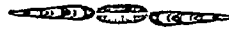
अध्याय ३ रा

अथसाधारणंनीतिशास्त्रंसर्वेषुचोच्यते ।
सुखार्थाःसर्वभूतानांमताःसर्वाःप्रवृत्तयः ॥

भाषार्थ–इसके अनंतर संपूर्णोका साधारण नीतिशास्त्र कहते हैं संपूर्ण भूतोंकी सब प्रवृत्ति सुखके निमित्त होने वाली मानी है ॥ १ ॥

सुखंचनविनाधर्मात्तस्माद्धर्मपरोभवेत् ॥
त्रिवर्गशून्यंनारंभंभजेत्तंचाविरोधयन् ॥२॥

भाषार्थ–धर्मके विना सुख नहीं होता इससे मनुष्य धर्ममें तत्पर रहे इससे जिसमें धर्म अर्थ काम हों ऐसे कार्यका आरंभ न करै और इनके अनुरोधसेही आरंभ करै ॥ २ ॥

अनुयायात्प्रतिपदंसर्वधर्मेषुमध्यमः ।
नीचरोमनखश्मश्रुर्निर्मलांघ्रिर्मलायनः ॥

भाषार्थ–सदा संपूर्ण धर्मोंके अनुकूल आचरण करै और रोम नख श्मश्रू इनको न रक्खै चरणोंको निर्मल रक्खे मलसे दूर रहे ॥ ३ ॥

स्नानशीलःसुसुरभिःसुवेषोनुल्वणोज्ज्वलः
धारयेत्सततंरत्नसिद्धमंत्रमहौषधीः ॥ ४॥

भाषार्थ–स्नानमें तत्पर रहै सुंदर सुगंधिको धारण करै वेषको धारै और उज्ज्वल रहै और निरंतर रत्न सिद्धमंत्र और उत्तम औषधियोंको धारण करै ॥ ४ ॥

सातपत्रपदत्राणोविचरेद्युगमात्रदृक् ।
निशिचात्ययिकेकार्येदंडीमौलीसहायवान्

भाषार्थ–छत्र और उपानह सहित विचरै और अपने आगे चारहात भूमिपर दृष्टि रक्खै और आवश्यक कार्यके निमित्त रात्रिमें दंड और मुकुटको धारण करके भृत्यसहित विचरै ॥ ५ ॥

नवेगितोन्यकार्यःस्यान्नवेगान्नीरयेद्बलात् ।
भक्त्याकल्याणमित्राणिसेवेतेतरदूरगः ॥

भाषार्थ–वेगसे अन्यके कार्यको न करै और वेगसे जलमें न परै और कल्याण और मित्रोंको भक्तिसे सेवै और इतरो (शत्रुओं) से दूर रहै ॥ ६ ॥

हिंसास्तेयान्यथाकामंपैशून्यंपरुषानृतं ।
संभिन्नालापंव्यापादमभिख्यादृग्विपर्ययं ७

भाषार्थ–हिंसा –चोरी–दुष्टकर्म–चुगली–कठोरता–झूंठ–भेद–वृथावचन–द्रोह–चिंता–दृष्टिकी विषमता–इनको त्याग दे ॥ ७ ॥

पापकर्मेतिदशधाकायवाङ्मानसैस्त्यजेत् ।
अवृत्तिव्याधिशोकार्तानुवर्तेतशक्तितः८॥

भाषार्थ–देववाणी मनसे यह दश प्रकारका पाप होता है इसको त्याग दे–और दरिद्री और रोग और शोकसे जो दुःखी है उनकी अपनी शक्तिके अनुसार पालना करै ॥ ८ ॥

आत्मवत्सततंपश्येदपिकीटपिपीलिकं ।
उपकारप्रधानःस्यादपकारपरेप्यरौ॥ ९ ॥

भाषार्थ–कीडे–चेंटी–इनको सदा अपने ही समान देखे और अपकारके योग्य शत्रुके विषैभी उपकारही मुख्य समझै ॥ ९ ॥

संपद्विपत्स्वेकमनाहेतावीर्षेत्फलेन तु ।
कालेहितंमितंब्रूयादविसंवादिपेशलं॥ १०।

भाषार्थ–संपदा और विपत्तिमें एकरस मन रक्खै कार्यके कारणमें ईर्षा करै और कार्यमें न करै और समयपर हित और प्रमित यथार्थ सुंदर वचन कहै ॥ १० ॥

पूर्वाभिभाषीसुमुखःसुशीलःकरुणामृदुः ।
नैकःसुखीनसर्वत्रविस्रब्धोनचशंकितः।११

भाषार्थ–सुंदर मुखसे प्रथम बोले और सुशील और दयावान् कोमल रहै सदा एक सुखी और विश्वासी शंकावाला नही होता ॥ ११ ॥

नकंचिदात्मनःशत्रुंनात्मानंकस्यचिद्रिपुं ।
प्रकाशयेन्नापमानंनचानिःस्नेहतांप्रभोः १२

भाषार्थ–दूसरेको अपना शत्रु और अपनेको दूसरेका शत्रु प्रकाश न करै और प्रभुका अपमान और प्रीतिके अभावको भी प्रकाश न करै ॥ १२ ॥

जनस्याशयमालक्ष्ययोयथापरितुष्यति ।
तंतथैवानुवर्तेतपराराधनपंडितः ॥ १३ ॥

भाषार्थ–पराई आराधना (सेवा)करनेमें चतुर मनुष्य इतर मनुष्यके अभिप्राय को देखकर जो जिसप्रकार प्रसन्न हो उसी प्रकार उसके संग वर्त्ताव करै ॥ १३ ॥

नपीडयेदिंद्रियाणिनचैतान्यतिलालयेत् ।
इंद्रियाणिप्रमाथीनिहरंतिप्रसभंमनः॥१४॥

भाषार्थ–मनुष्य न तो इंद्रियोंको पीडा दे और न अधिक इनके संग प्रीति करै क्योंकि मतवाली इंद्रियां बलात्कारसे मनको हर लेती हैं ॥ १४ ॥

एणोगजःपतंगश्चभृंगोमीनस्तुपंचमः ।
शब्दस्पर्शरूपरसगंधैरेतेहताःखलु ॥१५॥

भाषार्थ–मृग हेडीके शब्दसे–हाथी हथिनीके स्पर्शसे–पतंग दीपकके रूपसे–भ्रमर फूलके रससे–मीन अन्नकी गंधिसे ये पांचौं एक २ इंद्रियके विषयसे मारे जाते हैं ॥ १५ ॥

एषुस्पर्शोवरस्त्रीणांस्वांतहारीमुनेरपि ।
अतोप्रमत्तःसेवेतविषयांस्तुयथोचितान्१६

भाषार्थ–इन इंद्रियोंके निमित्त उत्तम स्त्रियोंका स्पर्श मुनिकेभी मनको हरता (वश करता) है इससे अप्रमत्त होकर विषयोंको यथोचित सेवै ॥ १६ ॥

मात्रास्वस्त्रादुहित्रावानात्यंतैकांतिकंवसेत्
यथासंबंधमाहूयादाभाष्याश्वास्यवैस्त्रियं ॥

भाषार्थ–माता–भगिनी –लडिकी –इनके संग बहुत एकांतमें न बैठे नातेके अनुसार संबोधन करके स्त्रियोंको बुलावे॥१७ ॥

स्वीयांतुपरकीयांवासुभगेभगिनीतिच ।
सहवासोन्यपुरुषैःप्रकाशमपिभाषणं ॥१८॥

भाषार्थ–अपनी और पराई को सुभगे भगिनी इसप्रकारसे बोले और पुरुषोंके संगवात और संभाषण न करने दे ॥ १८ ॥

स्वातंत्र्यंनक्षणमपिह्यवासोन्यगृहेतथा ।
भर्त्रापित्राथवाराज्ञापुत्रश्वशुरबांधवैः॥१९॥

भाषार्थ–एक क्षणभी स्त्रियोंको स्वतंत्रता नदे और दूसरे के घरमें भर्त्ता पिता राजा पुत्र श्वशुर भाई बंधु–ये सब स्त्रीको न बसनेदे ॥ १९ ॥

स्त्रीणांनैवतुदेयःस्याद्गृहकृत्यैर्विनाक्षणः ।
चंडंषंढंदंडशीलमकामंसुप्रवासिनं॥२०॥

भाषार्थ–घरके कार्यके विना स्त्रियोंको एक क्षणभी न रहनेदे और जो पुरुष अत्यंत क्रोधी नपुंसक दंडकारक–कामरहित–परदेशवासी ॥ २० ॥

सुदरिद्रंरोगिणंचह्यन्यस्त्रीनिरतंसदा ।
पतिंदृष्ट्वाविरक्तास्यान्नारीवान्यंसमाश्रयेत् ॥

भाषार्थ–अत्यंत दरिद्री–रोगी सदा अन्यस्त्रीमें रतहो उस पतिको देखकर विरक्त हो जाय अथवा दूसरे पुरुषके आश्रय हो ॥ २१ ॥

त्यक्त्वैतान्दुर्गुणान्यत्नात्ततोरक्ष्याःस्त्रियो नरैः। वस्त्रान्नभूषणप्रेममृदुवाग्भिश्चशक्तितः

भाषार्थ–वस्त्र–अन्न–भूषण–प्रीति–और कोमल वाणीसे शक्तिके अनुसार यत्नसे इन दुर्गुणोंको त्यागकर मनुष्य स्त्रियोंकी रक्षा ॥ २२ ॥

स्वात्यंतसन्निकर्षेणस्त्रियंपुत्रंचरक्षयेत् ।
चैत्यपूज्यध्वजाशस्तच्छायाभस्मतुपाशुचीन् ॥ २३ ॥

भाषार्थ–अपनी अत्यन्त समीपतासे स्त्री और पुत्रकी रक्षा करे और चबूतरा पूज्य–ध्वजा उत्तमोंकी छाया–भस्म–जो अमंगल है इनका अवलंघन न करे ॥ २३ ॥

नाक्रामेच्छर्करालोष्टबलिस्नानभुवोपिच ।
नदींतरेन्नबाहुभ्यांनाग्निस्कन्नमभिव्रजेत् ॥

भाषार्थ–कंकर–डेला–भेट–स्नानकी भूमि इनकोभी अवलंघन न करे और भुजाओंसे नदीको न तैरे और विस्तारको प्राप्तहुई अग्निके सम्मुख न जाय ॥ २४ ॥

संदिग्धनावंवृक्षंचनारोहेद्दुष्टयानवत् ।
नासिकांनविकुष्णीयान्नाकस्माद्विलिखेद्भुवं

भाषार्थ–टूटी नाव और यान और वृक्षपर न चढे जैसे दुष्टसवारीमें. अपनी नाकको न खुजावे और विना प्रयोजन पृथिवीको न खोदे ॥ २५ ॥

नसंहताभ्यांपाणिभ्यांकंडूयेदात्मनःशिरः॥
नांगैश्चेष्टेताविगुणंनाशीतोत्कटुकांचिरं ॥२६

भाषार्थ–मिले हुए हाथोंसे अपने शिरको न खुजावे और अपने अंगकी निरर्थक चेष्टा न करै और बहुत दिनतक खट्टे पदार्थको न खाय ॥ २६ ॥

देहवाक्चेतसांचेष्टाःप्राक्श्रमाद्विनिवर्तयेत्
नोर्ध्वजानुश्चिरंतिष्ठेन्नक्तंसेवेतनद्रुमं ॥२७॥

भाषार्थ–श्रम करकें अपने देह-वाणी-मन इनकी चेष्टाओंको त्यागदे और बहुत देरतक ऊपरको गोडे करके न बैठे और रात्रिके समय वृक्षपर न रहै ॥ २७ ॥

तथाचत्वरचैत्यांतश्चतुष्पथसुरालयान् ।
शून्याटवीशून्यगृहश्मशानानिदिवापिन२८

भाषार्थ—चैत्य (चबूतरा)· शून्य आंगन चौराहा देवमंदिर और शून्यवन और शून्य गृह और श्मशान इनको दिनमेंभी न सेवै अर्थात् इनमें न वसै ॥ २८ ॥

सर्वथेक्षेतनादित्यंनभारंशिरसावहेत् ।
नेक्षेतप्रततंसूक्ष्मंदीप्तामेध्याप्रियाणिच २९

भाषार्थ—सूर्यको निरंतर न देखै शिरपर बोझ लेकर न चलै और सूक्ष्म पदार्थकोभी निरंतर न देखै और प्रकाशमान अपवित्र और अप्रिय इनकोभी निरंतर न देखै ॥ २९ ॥

संध्यास्वभ्यवहारस्त्रीस्वप्नाध्ययनचिंतनं ।
मद्यविक्रयसंधानदानादानानिनाचरेत् ३०

भाषार्थ—संध्याके समय भोजन—शय्या—पढना—इतनेकी चिंता न करै और मदिराका बेचना निकासना पीना और पिलाना इनको न करै ॥ ३० ॥

आचार्यःसर्वचेष्टासुलोकएवहिधीमतः ।
अनुकुर्यात्तमेवातोलौकिकार्थेपरीक्षकः ॥

भाषार्थ—बुद्धिमान मनुष्यका जगत्के लोकही संपूर्ण कार्योंमें आचार्य है इससे परीक्षा करनेवाला मनुष्य आचार्यकाही अनुयायी रहै ॥ ३१ ॥

राजदेशकुलज्ञातिसद्धर्मान्नैवदूषयेत् ।
शक्तोपिलौकिकाचारंमनसापिनलंघयेत् ।

भाषार्थ-राजा-देश-कुल-जाति इनके उत्तम धर्ममें दूषण न लगावे और समर्थ होकरभी लौकिक आचरणका अवलंघन नकरै ॥३२॥

अयुक्तंयत्कृतंचोक्तंनबलाद्धेतुनोद्धरेत् ।
दुर्गुणस्यचवक्तारःप्रत्यक्षंविरलाजनाः ॥

भाषार्थ—जो अयोग्य कर्मको किसीनें किया हो अथवा कहा हो उसका बलसे समाधान करै कि प्रत्यक्ष दुर्गुणके कहनेवाले मनुष्य विरले होते हैं ॥ ३३ ॥

लोकतःशास्त्रतोज्ञात्वाह्यतस्त्याज्यांस्त्यजेत्सुधीः ।
अनयंनयसंकाशंमनसापिनचिंतयेत् ॥ ३४

भाषार्थ—लोक और शास्त्रसे त्यागने योग्य कर्मोंको जानकर बुद्धिमान् मनुष्य त्यागदे और न्यायके समान प्रतीति होते अन्यायको मनसेभी चिंता न करै ॥ ३४ ॥

अहंसहस्रापराधीकिमेकेनभवेन्मम ।
मत्वानाघंस्मरेद्दोषाद्बिदुनापूर्यते घटः ३५॥

भाषार्थ—मैं हजारों अपराधोंका करनेवाला हूं इस एक पाप करिके मेरा क्या बुरा होगा यह मानकर किंचित्भी पापका स्मरण न करै क्योंकी बूंद २ से ही घडा भरता है॥ ३५॥

नक्तंदिनानिमेयांतिकथंभूतस्यसंप्रति ।
दुःखभाग्नभवत्येवंनित्यंसन्निहितस्मृतिः ३६

भाषार्थ—अब मेरे रातादिन कैसे बीतते हैं इससे दुःखी न हो और नित्य स्मरण रक्खै ॥ ३६ ॥

समासव्यूहहेत्वादिकृतेच्छार्थंविहायच ।
स्तुत्यर्थवादान्संत्यज्यसारंसंगृह्ययत्नतः ॥

भाषार्थ—संक्षेप और विस्तारके कारणके लिये अपनी इच्छाको त्याग दे और बडाईके वृथा वचनोंको भी त्यागकर सारको यत्न से ग्रहण करके ॥ ३७ ॥

धर्मतत्वंहिगहनमतःसत्सेवितंनरः ।
श्रुतिस्मृतिपुराणानांकर्मकुर्याद्विचक्षणः ॥

भाषार्थ—सत्पुरुषोंनें सेवन किया जो गहन (गंभीर) धर्मका तत्व उसको विचारै और श्रुतिस्मृतिमें कहे कर्मको ज्ञानवान् करै३८॥

नगोपयेद्रासयेच्चराजामित्रंसुतंगुरुम् ॥
अधर्मनिरतंस्तेनमाततायिनमप्युतः ३९॥

भाषार्थ-राजा अधर्म करते हुएको और जो चोर आततायी हो ऐसे मित्र पुत्र और गुरुकोभी न छिपावे किंतु राजसे निकासदे॥

अग्निदोगरदश्चैवशस्त्रोन्मत्तोधनापहः।
क्षेत्रदारहरश्चैतान्पड्विद्यादाततायिनः॥

भाषार्थ-ये छः आततायी होते हैं अग्नि लगानेवाला विष देनेवाला शस्त्रसे उन्मत्त धन चुरानेवाला खेत हरनेवाला और स्त्री हरनेवाला ॥ ४० ॥

नोपेक्षेतस्त्रियंवालंरोगंदासंपशुंधनं।
विद्याभ्यासंक्षणमपिसत्सेवांवुद्धिमान्नरः॥

भाषार्थ-वुद्धिवाला मनुष्य इनको एकक्षण भी न छोडे स्त्री-वालक-रोग-दास-पशु-धन और विद्याका अभ्यास सज्जनसेवा ॥ ४१ ॥

विरुद्धोयत्रनृपतिर्धनिकःश्रोत्रियोभिषक्।
आचारश्चतथादेशेनतत्रदिवसंवसेत् ४२ ॥

भाषार्थ-जिस देशमें राजा विरुद्ध हो वेदपाठी धनी हो वैद्य आचारवान् हो उस देशमें एक दिनभी न वसे ॥ ४२ ॥

नपुंसकश्चस्त्रीवालश्चंडोमूर्खश्चसाहसी।
यत्राधिकारिणश्चैतेनतत्रदिवसंवसेत् ।४३॥

भाषार्थ-जिस राजाके राज्यमें नपुंसक-स्त्री-वालक अत्यंत क्रोधी मूर्ख साहसी अधिकारी हो वहां एकदिनभी न वसे ॥ ४३॥

अविवेकीयत्रराजासभ्यायत्रतुपाक्षिकाः।
सन्मार्गोज्झितविद्वांसःसाक्षिणोनृतवादिनः

भाषार्थ-जहां राजा अविवेकी हो सभासद पक्षपात करैं पंडितजन सन्मार्गी न हों साक्षी (गवा) झूंठ वोले वहांभी न वसे ४४

दुरात्मनांचप्रावल्यंस्त्रीणांनीचजनस्यच।
यत्रनेच्छेद्धनंमानंवसतिंतत्रजीवितम् ४५॥

भाषार्थ-जहां दुष्ट स्त्री नीच इनकी प्रवलता हो वहां धन मान वास जीवन इनकी इच्छा न करे ॥ ४५ ॥

मातानपालयेद्वाल्येपितासाधुनशिक्षयेत्।
राजायदिहरेद्वित्तंकातत्रपरिदेवना ॥४६॥

भाषार्थ-जो वालकअवस्थामें माता पालन न करे और पिता भली प्रकार शिक्षा न दे और राजा अपने धनको हरले तो शोककी इसमें क्या वात है ॥ ४६ ॥

सुसेविताःप्रकुप्यंतिमित्रस्वजनपार्थिवाः।
गृहमग्न्यशनिहतंकातत्रपरिदेवना ॥ ४७॥

भाषार्थ-यदि भली प्रकार सेवा करनेसे भी मित्र वा अपने भाई वंधु और राजा क्रोध करें और अपना घर अग्नि वा विजलीसे नष्ट हो जाई तो वहां शोककी क्या वात है ॥ ४७ ॥

आप्तवाक्यमनादृत्यदर्पेणाचरितंयदि।
फलितंविपरीतंतत्कातत्रपरिदेवना ॥४८॥

भाषार्थ-यदि किसीसज्जनके वचनको न मानकर अभिमानसे कोई काम किया होय और उसका फल विपरीत होजाय तो वहां क्या शोककी वात है ॥ ४८ ॥

सावधानमनानित्यंराजानंदेवतांगुरुं।
अग्निंतपस्विनंधर्मज्ञानवृद्धंसुसेवयेत्॥४९॥

भाषार्थ-राजा-देवता-गुरु-अग्नि-तपस्वी और धर्ममें और विद्याज्ञानमें जो वडी इनकी सदैव सावधान होकर भली प्रकार सेवा करै ॥ ४९ ॥

मातृपितृगुरुस्वामिभ्रातृपुत्रसखिष्वपि।
नविरुद्धेन्नापकुर्यान्मनसापिक्षणंक्वचित् ॥

भाषार्थ–माता–पिता–गुरु–स्वामी–भाई–पुत्र–और मित्र इनके संग एकक्षण मात्रभी मनसे कभी विरोध और इनका तिरस्कार न करै ॥ ५० ॥

स्वजनैर्नविरुध्येतनस्पर्धेतबलीयसा ।
नकुर्यात्स्त्रीबालवृद्धमूर्खेषुचविवादनं ॥५१

भाषार्थ–स्वजनों (कुटुंबके मनुष्यों) के साथ बलसे विरोध न करै और स्त्री–बालक वृद्ध–मूर्ख–इनके साथ विवाद न करै॥५१॥

एकःस्वादुनभुंजीतएकअर्थान्नचिंतयेत् ।
एकोनगच्छेदध्वानंनैकःसुप्तेषुजागृयात् ॥

भाषार्थ–अकेला स्वादु भोजन न करै और अकेला अर्थकी चिंता न करै अकेला मार्गमें न चलै और सोतेसे अकेला न जागै ॥ ५२ ॥

नान्यधर्मंहिसेवेतनद्रुह्याद्वैकदाचन ।
हीनकर्मगुणैःस्त्रीभिर्नासितैकासनेक्वचित् ।

भाषार्थ–अन्यके धर्मको न करै और किसीके संग द्रोह न करै और नीच है कर्म और गुण जिसके उनके संग और स्त्रियोंके संग एक आसनपर कभी न बैठे ॥ ५३ ॥

षट्दोषापुरुषेणेहहातव्याभूतिमिच्छता ।
निद्रातंद्राभयंक्रोधआलस्यंदीर्घसूत्रता ।

भाषार्थ–बड़ाई चाहनेवाला पुरुष इन छः दोषोंको त्यागदे कि निद्रा–तंद्रा (उदासीनता) भय–क्रोध–आलस्य–दीर्घसूत्रता ५४

प्रभवंतिविघातायकार्यस्यैतेनसंशयः ।
उपायज्ञश्चयोगज्ञस्तत्वज्ञःप्रतिभानवान् ।

भाषार्थ–क्यों कि ये छःओं कार्यके नाश करनेमें समर्थ हैं इसमें संशय नही है और उपाय और युक्ति और तत्वको मनुष्य जाने और सदैव पैनी बुद्धिवाला रहै ॥ ५५ ॥

स्वधर्मनिरतोनित्यंपरस्त्रीपुपराङ्मुखः ।
वक्ताहवान्विचित्रकथःस्यादकुंठितवाक्सदा

भाषार्थ–और सदैव अपने धर्ममें तत्पर रहै और पराई स्त्रियोंका त्याग करै और बोलनेमें तत्पर रहै विचित्र कथा कहै और वाणी कुंठी कभी न कहै ॥ ५६ ॥

चिरंसंशृणुयान्नित्यंजानीयात्क्षिप्रमेवच ।
विज्ञायप्रभजेदर्थान्नकामंप्रभेजत्क्वचित् ॥

भाषार्थ–चिरकालतक नित्य सुने और शीघ्र जाना करै जानकर द्रव्यका विभाग और क्वचित् इच्छा न होय तौ विभाग न करै ॥ ५७ ॥

क्रयविक्रयस्यातिलिप्सांस्वदैन्यंदर्शयेन्नहि
कार्यविनान्यगेहेननाशातःप्रविशेदपि५८॥

भाषार्थ–लेनदेनकी अधिक इच्छाके लिये अपनी दीनता न दिखावै और कार्यके विना आशासे दूसरेके घरमें प्रवेश न करै ॥ ५८ ॥

अपृष्टोनैवकथयेद्गृहकृत्यंतुकंगति ।
बह्वर्थाल्पाक्षरंकुर्यात्संल्लापंकार्यसाधकं ॥

भाषार्थ–घरका कार्य विनापुंछै किसीसे न कहै और दूसरेके संग ऐसी बात चीत करै जिसे अर्थ बहुत और अक्षर थोडे हों और जिसमें कार्यकी सिद्धि हो ॥ ५९ ॥

नदर्शयेत्स्वाभिमतमनुभूताद्विनासदा ।
ज्ञात्वापरमतंसम्यक्तेनाज्ञातोत्तरंवदेत् ॥

भाषार्थ–अनुभूतके विना (अजानेको) अपने अभिप्रायको न दिखावै (न बतावै) और दूसरेके मत (अभिप्राय) को भली प्रकार जानकर उत्तर दे ॥ ६० ॥

दंपत्योःकलहेसाक्ष्यंनकुर्यात्पितृपुत्रयोः ।
सुगुप्तःकृत्यमंत्रःस्यान्नत्यजेच्छरणागतं ॥

भाषार्थ–स्त्री और पुरुषकी और पिता पुत्रकी साक्षी न दे और संमति (सलाह) को छिपाकर करे और शरण आयेका परित्याग न करे ॥ ६१ ॥

यथाशक्तिचिकीर्षेतुकुर्यान्मुह्येन्नापदि ।
कस्यचिन्नस्पृशेन्मर्ममिथ्यावादंनकस्यचित्

भाषार्थ–करनेको अभीष्ट कार्यका यथा शक्ति करे और आपत्तिकालमें मोहको न प्राप्त हो किसीके मर्मका न स्पर्श करे और किसीके मिथ्याअपवादको न करे ॥ ६२ ॥

नाश्लीलंकीर्तयेत्कंचित्प्रलापंनचकारयेत् ।
अस्वर्ग्यंस्याद्धर्म्यमपिलोकविद्वेषितंतुयत्॥

भाषार्थ–अयोग्य और अनर्थक वचन किसीके प्रति न कहे क्योंकि सब जगत्का जिसमें वैरहो वह धर्मका कामभी स्वर्गदेने वाला नहीं होता ॥ ६३ ॥

स्वहेतुभिर्नहन्येतकस्यवाक्यंकदाचन ।
प्रविचार्योत्तरंदेयंसहसानवदेत्क्वचित् ॥६४

भाषार्थ– अपने बनाये कारणोंसे किसीके वचनोंको नष्ट नकरे और विचारकर उत्तरदे और शीघ्र उत्तर नदे ॥ ६४ ॥

शत्रोरपिगुणाग्राह्यागुरोस्त्याज्यास्तुदुर्गुणा
उत्कर्षोनैवनित्यःस्यान्नापकर्षस्तथैव ६५॥

भाषार्थ–शत्रुकेभी गुण ग्रहण करने और गुरुकेभी अपगुण त्यागने योग्यहैं क्योंकि बडाई और छोटापन सदा नहीं रहते ॥६५ ॥

प्राक्कर्मवशतोनित्यंसधनानिर्धनोभवेत् ।
तस्मात्सर्वेपुलोकेपुमैत्रींनैवचहापयेत् ६६॥

भाषार्थ–पूर्वजन्मके कर्मोंसे धनवान् वा निर्धन होताहै जिससे संपूर्ण लोकोंके संग मित्रताको न त्यागे ॥ ६६ ॥

दीर्घदर्शीसदाचस्यात्प्रत्युत्पन्नमतिःक्वचित्
साहसीआलसीचैवचिरकारभिवेन्नहि ॥६७

भाषार्थ–सदा दीर्घदर्शी (होनहारको जो पहचानें) रहे औरकभीर तत्काल बुद्धिभी रहे और शीघ्र करने वाला और आलसी और विलंबमें कार्य करने वाला न रहे ॥ ६७॥

यःसुदुर्निष्फलंकर्मज्ञात्वाकर्तुंव्यवस्यति ।
प्रागादौदीर्घदर्शीस्यात्सचिरंसुखमश्नुते ॥

भाषार्थ–वृथा कर्मोंको भी जानकर जो किया चाहताहै और पहिलेही जो शीघ्र दीर्घदर्शी होताहै वह चिरकाल तक सुख भोगताहै ॥ ६८ ॥

प्रत्युत्पन्नमतिःप्राप्तांक्रियांकर्तुंव्यवस्यति ।
सिद्धिःसांशयिकीतत्रचापल्यात्कार्यगौरवा
त् ॥ ६९ ॥

भाषार्थ–बुद्धिको प्राप्तहोकर जो कार्यके समयमेंही जो कार्यकिया चाहताहै उसकार्य की सिद्धिमें मनुष्यही चपलताही और कार्यकी गौरवतासे संशय होताहै ॥ ६९ ॥

यततेनैवकालेपिक्रियांकर्तुंचसालसः ।
नसिद्धिस्तस्यकुत्रापिसनश्यतिचसान्वयः

भाषार्थ– आलसी मनुष्य कार्यके समयमें भी कार्यकरनेमें यत्न नहीं करता उसमनुष्यकी कहींभी सिद्धि नहीं होती औरवह वंशसहित नष्ट होजाताहै ॥ ७० ॥

क्रियाफलमविज्ञाययततेसाहसीचसः ।
दुःखभागीभवत्येवक्रियायांतत्फलेनवा ७१

भाषार्थ- जो मनुष्य कार्यके फलको विनाजानकर यत्न करताहै वह साहसी शीघ्रकारी है और कार्य और कार्यके फलमें वह मनुष्य दुःखकाही भागी होताहै ॥७१॥

महत्कालेनाल्पकर्मचिरकारीकरोतिच ।
सशोचत्यल्पफलतोदीर्घदर्शीभवेदतः॥७२

भाषार्थ-जो अल्पकार्यको वडे कालमें करे उसे चिरकारी कहतेहै और वह अल्प फलकी प्राप्तिसे पीछे शोचकरताहै इससे मनुष्यको दीर्घदर्शी होनाचाहिये ॥ ७२ ॥

सुफलंतुभवेत्कर्मकदाचित्सहसाकृतं ।
निष्फलंवापिप्रभवेत्कदाचित्सुविचारितम्॥

भाषार्थ-और कभी शीघ्र किया हुआभी कर्म अधिक फलदायी होजाताहै और भली प्रकारसेभी कियाहुआ कर्म कदाचित् निष्फल होजाताहै ॥ ७३ ॥

तथापिनैवकुर्वीतसहसानर्थकारितत् ।
कदाचिदपिसंजातमकार्यादिष्टसाधनम् ॥

भाषार्थ-तौभी सहसा (शीघ्र) कर्मको नकरै क्योंकि वह अनर्थकारी होताहै और कदाचित् कुकर्मसेभी इष्टकी सिद्धि होजातीहै

यदनिष्टंतुसत्कार्यान्नाकार्यप्रेरकंहितत् ।
भृत्योभ्रातापिवापुत्रःपत्नीकुर्यान्नचैवयत्॥

भाषार्थ-और जिस सत्कर्मसे जो अनिष्टहो जाय वह सत्कर्म उस अनिष्टका प्रेरक नही होता जिसकार्यको भृत्य भाई स्त्री न करसकै ॥ ७५ ॥

विधास्यंतिचमित्राणितत्कार्यमविशंकितम्।
अतोयतेततत्प्राप्त्यैमित्रलब्धिर्वरानृणाम् ॥

भाषार्थ-उसकार्यको निःसंदेह मित्र करसकेंगे इससे मित्रकी प्राप्तिके लिये यत्न करै क्योंकी मनुष्योंको मित्रकी प्राप्ति वडीश्रेष्ठहै७६

नात्यंतंविश्वसेत्कंचिद्विश्वस्तमपिसर्वदा ।
पुत्रंवाभ्रातरंभार्याममात्यमधिकारिणम् ॥

भाषार्थ-सदा विश्वासवालेका अत्यंत विश्वास नकरे पुत्र भाई स्त्री मंत्री और अधिकारी इनकाभी विश्वास नकरे ॥ ७७ ॥

धनस्त्रीराज्यलोभोहिसर्वेषामधिकोयतः ।
प्रामाणिकंचानुभूतमाप्तंसर्वत्रविश्वसेत्॥७८॥

भाषार्थ-क्योंकि धन स्त्री राज्य इनका लोभ सबसे अधिकहै और जो प्रमाणिकहै और जिसको वताय रक्खाहो और जो यथार्थ वादी हो उसका विश्वास सदैव करे ॥७८॥

विश्वासित्वात्मवद्गूढस्तत्कार्यंविमृशेत्स्वयं ।
तद्वाक्यंतर्कतोनर्थविपरीतांनचिंतयेत् ॥७९

भाषार्थ- जो विश्वाससे समान होगयाहो उसके कार्यको स्वयं विचारे उसके वाक्य को तर्कनासे और विपरीत न जानें ॥७९॥

चतुःषष्टितमांशंतन्नाशितंशमयेदथ ।
स्वधर्मनीतिवलवान्तेनमैत्रींप्रधारयेत्॥८०

भाषार्थ-चौसठवा जो सेवक नष्ट करदे उसपर क्षमा करे और अपना नीति धर्म वल इनवाला जो पुरुष उसके संग मित्रता करे ॥ ८० ॥

दानैर्मानैश्चसत्कारैःसुपूज्यान्पूजयेत्सदा ।
कदापिनोग्रदंडस्यात्कटुभाषणतत्परः॥८१

भाषार्थ-दान मान और सत्कारोंसे पूजने योग्योंका सदैव पूजन करे और राजाउग्र दंडका दाता और कटुवचनका वक्ता कभी नहो ॥ ८१ ॥

भार्यापुत्रोप्युद्विजतेकटुवाक्यात्प्रदंडतः ।
पशवोपिवशंयांतिदानैश्चमृदुभाषणैः॥८२॥

भाषार्थ-कटु वचन और उग्र दंडसे स्त्री और पुत्रभी कंपतेहैं और दान देना और कोमल वचनसे पशुभी वशमें होजातेहैं८२॥

नविद्ययानशौर्येणधनेनाभिजनेनच ।
नबलेनप्रमत्तस्यान्नातिमानीकदाचन ८३॥

भाषार्थ–विद्या शूरवीरता धन कुल बल इनसे कभी प्रमत्त नहो और न अत्यंत मान करे ॥ ८३ ॥

नाप्तोपदेशंसंवेत्तिविद्यामत्तस्वहेतुभिः ।
अनर्थमप्यभिप्रेतंमन्यतेपरमार्थवत्॥८४॥

भाषार्थ–विद्यासे उन्मत्त पुरुष अपने हेतुओंसे आप्तोंके उपदेशको नही जानता और अपने वांछित अनर्थकोभी परमार्थके समान मानताहै ॥ ८४ ॥

शौर्यमत्तस्तुसहसायुद्धंकृत्वाजहात्यसून् ।
व्यूहादियुद्धकौशल्यंतिरस्कृत्यचशात्रवान्।

भाषार्थ–शूरवीरतासे उन्मत्त पुरुष शीघ्रही युद्धकरके और राजाओंके व्यूह (समूह) की कुशलतासे शत्रुओंका तिरस्कार करके अपने प्राणोंको त्याग देताहै ॥ ८५ ॥

श्रीमत्तपुरुषोवेत्तिनदुष्कीर्तिमजोयथा ।
स्वमूत्रगंधंमूत्रेणसुखमासिंचतेस्वकं॥८६॥

भाषार्थ–लक्ष्मीसे उन्मत्त पुरुष अपनी कुकीर्तिको नही जानता और वह पुरुष अपने मूत्रकी दुर्गंधिवाले मुखको अपने मूत्रसे ही बकरेके समान सींचताहै ॥ ८६॥

तथाभिजनमत्तस्तुसर्वानेवावमन्यते ।
श्रेष्ठानपीतरान्सम्यगकार्यंकुरुतेमतिं॥८७

भाषार्थ–तिसीप्रकार अपने कुलसे उन्मत्त संपूर्ण इन श्रेष्ठोंकाही तिरस्कार करताहै और निंदित कामोंमें मतिको करताहै ॥ ८७ ॥

बलमत्तस्तुसहसायुद्धेविदधतेमनः ।
बलेनबाधतेसर्वानश्वादीनपिह्यन्यथा ८८ ॥

भाषार्थ–बलसे उन्मत्तपुरुष शीघ्रही युद्धमें मन लगाताहै यह पुरुष बलसे सबको पीडा देताहै और अश्व आदिभी वृथाहै ८८

मानमत्तोमन्यतेस्मतृणवत्राखिलंजगत् ।
अनर्होपिचसर्वेभ्यस्त्वत्यर्घासनमिच्छति ॥

भाषार्थ–मानसे उन्मत्त पुरुष संपूर्ण जगत्को तृणके समान मानताहै और सबसे अयोग्य होनेपरभी ऊंचे आसनकी इच्छा करताहै ॥ ८९ ॥

मदाएतेवलिप्तानांसतामेतेदमाःस्मृताः।
विद्यायाश्चफलंज्ञानंविनयश्चफलंश्रियः ९०

भाषार्थ–अभिमानियोंके ये मद होतेहैं और सत्पुरुषोंके येही दम कहेहैं विद्याका फल ज्ञानहै और लक्ष्मीका फल विनयहै ॥ ९० ॥

यज्ञदानेबलफलंसद्रक्षणमुदाहृतं ।
नामिताःशत्रवःशौर्यफलंचकरदीकृताः९१

भाषार्थ–यज्ञ और दानका फल और सज्जनोंकी रक्षा कहाहै और शूरवीरताका फल यहहै कि शत्रुओंको नवांना और उनसे करलेना ॥ ९१ ॥

शमोदमश्चार्जवंचाभिजनस्यफलंत्विदं ।
मानस्यतुफलंचैतत्सर्वेस्वसदृशाइति ॥९२॥

भाषार्थ–और उत्तम कुलका यह फलहै कि शांति इंद्रियोंका दमन और नम्रता करना और मान बडाईका फल यहहै सबको अपने समान समझना ॥ ९२ ॥

सुविद्यामंत्रभैषज्यस्त्रीरत्नंदुष्कुलादपि ।
गृण्हीयात्सुप्रयत्नेनमानमुत्सृज्यसाधकः ॥

भाषार्थ–उत्तम विद्या मंत्र वैद्यविद्या उत्तमस्त्री इनको नीच कुलसेभी साधक (कार्यकरने वाला) मानको त्यागकर ग्रहण करे ॥ ९३ ॥

उपेक्षेतप्रनष्टंयत्प्राप्तंयत्तदुपाहरेत् ।
नबालंनस्त्रियंचातिलालयेत्ताडयेन्नच९४॥

भाषार्थ-जो नष्टवस्तुकी उपेक्षा करै और प्राप्तवस्तुको ग्रहण करै बालक स्त्री इनका न अत्यंत लाड करै और न अत्यंत ताड़नादे ॥ ९४ ॥

विद्याभ्यासेगृहकृत्येतावुभौयोजयेत्क्रमात्।
परद्रव्यंक्षुद्रमपिनादत्तंसंहरेदणु ॥ ९५ ॥

भाषार्थ-विद्याके अभ्यासमें और गृहकृत्यमें इन दोनोंको क्रमसे नियुक्त करै क्षुद्र और अल्पभी परद्रव्यको विनादियें ग्रहण न करै ॥ ९५ ॥

नोच्चारयेदघंकस्यस्त्रियंनैवचदूषयेत् ।
नब्रूयादनृतंसाक्ष्यंकृतंसाक्ष्यंनलोपयेत् ९६

भाषार्थ-किसीके पापका उच्चारण न करै स्त्रीको दोष न लगावै और झूंठी साक्ष्य (गवाई) नदे और साक्ष्यका लोप न करै ९६

प्राणात्ययेनृतंब्रूयात्सुमहत्कार्यसाधने ।
कन्यादात्रेतुह्यधनंदस्यवेसधनंनरं ॥ ९७॥

भाषार्थ- प्राणका नाशमें बडे कार्यका साधनमें झूंठ बोले और कन्याके देनेवालेको निर्धन और चौरको धनवाला ॥ ९७ ॥

गुप्तंजिघांसवेनैवविज्ञातमपिदर्शयेत् ।
जायापत्योश्चपित्रोश्चभ्रात्रोश्चस्वामिभृत्य योः ॥ ९८ ॥

भाषार्थ-हिंसा करनेवालेको रक्षित इन जाने हुएकोभी नबतावै जायापति स्त्री पुरुष माता पिता दोभाई स्वामी भृत्य (नोकर) ॥ ९८ ॥

भगिन्योर्मित्रयोर्भेदंनकुर्याद्गुरुशिष्ययोः ।
नमध्याद्गमनंभाषाशालिनोःस्थितयोरपि॥

भाषार्थ-दोबहन और दोभाई गुरु शिष्य (चेला) इनमें भेद न करै वार्ता करते हुए दोपुरुषोंके और बैठे हुए दोपुरुषोंके बीचमें होकर नजाय ॥ ९९ ॥

सुहृदंभ्रातरंबंधुमुपचर्यात्सदात्मवत् ।
गृहागतंक्षुद्रमपियथार्हंपूजयेत्सदा॥ १००॥

भाषार्थ-मित्र-भाई-बंधु-इनकी सदैव अपने समान सेवा करै और घरआये क्षुद्र भी इनकी यथायोग्य सदैव पूजा करै १००॥

तदीयकुशलप्रश्नःशक्त्यादानैर्जलादिभिः ।
सपुत्रस्तुगृहेकन्यांसपुत्रांवासयेन्नहि ॥ १॥

भाषार्थ-और अपनी शक्तिके अनुसार जल आदि दानोंसे कुशल प्रश्न पूछै और पुत्र सहित (सपुत्र) पुत्र सहित कन्याको नवसावै ॥ १ ॥

सभर्तृकांचभगिनीमनाथेतेतुपालयेत् ।
सर्पोग्निर्दुर्जनोराजाजामाताभगिनीसुतः॥२

भाषार्थ-भर्तार सहित भगिनीको घरन वसावै और अनाथ (असमर्थ) हो तो पालन करै-और सर्प-अग्नि-दुर्जन-राजा-जामाता-भगिनीसुत ॥ २ ॥

रोगःशत्रुर्नावमान्योप्यल्पइत्युपचारतः ।
क्रौर्यात्तैक्ष्ण्यद्दुःस्वभावात्स्वामित्वात्पुत्रिका भयात् ॥ ३ ॥

भाषार्थ-रोग-शत्रु-इनको अल्प समझ कर उपचार (इलाज)से अपमान न करै किंतु क्रूरताके भयसे सर्पका तेजके भयसे अग्निका-दुःस्वभावके भयसे दुर्जनका-स्वामीके भयसे राजाका पुत्रिका (कन्या) के दुःखके भयसे जामाताका ॥ ३ ॥

स्वपूर्वजापिंडदत्वाद्वृद्धिभीत्याउपाचरेत् ।
ऋणशेषंरोगशेषंशत्रुशेषंनरक्षयेत् ॥ ४ ॥

भाषार्थ-और अपने पुरुषोंका पिंडका दाता होनेसे भानजेका और वढनेके भयसे रोगका-और भीतिसे शत्रुका सदैव उपचार (सेवा) करै और ऋण-रोग-शत्रु-इनके शेषकी रक्षा न करै अर्थात् इनको निर्मूल करदे ॥ ४ ॥

याचकाद्यैःप्रार्थितःसन्नतीक्ष्णंचोत्तरंवदेत् ।
तत्कार्यंतुसमर्थश्चेत्कुर्याद्वाकारयीतच॥५॥

भाषार्थ-और याचक आदि प्रार्थना करै तो इनको तीखा उत्तर न दे और समर्थ हो तो इनके कार्यको करै अथवा करादे ॥५॥

दातॄणांधार्मिकाणांचशूराणांकीर्तनंसदा ॥
शृणुयात्तुप्रयत्नेनतच्छिद्रंनैवलक्षयेत् ॥६॥

भाषार्थ-दाता-धार्मिक-शूरवीर-इनकी-कीर्त्तिको बडे यत्नसे सुनै और छिद्रको न देखै ॥ ६ ॥

कालेहितमिताहारविहारीविघसाशनः ।
अदीनात्माचसुस्वप्नःशुचिःस्यात्सर्वदानरः

भाषार्थ-समय पर हितकारी और प्रमित भोजन और विहार करै और यज्ञके शेषको भक्षण करै और अपने दीनता न करै सुखसे सोवै और सर्वदा पवित्र रहै ॥ ७ ॥

कुर्याद्विहारमाहारंनिर्हारंविजनेसदा ।
व्यवसायीसदाचस्यात्सुखंव्यायाममभ्यसेत् ॥ ८ ॥

भाषार्थ-और विहार (क्रीडा) भोजन गमन इनको सदैव एकांतमें करै और सदा परिधीरहै और सुखसे व्यायाम (कसरत) का अभ्यास करै ॥ ८ ॥

अन्नंननिंद्यात्सुस्वच्छःस्वीकुर्यात्प्रीतिभोजनं ।
आहारंप्रवरंविंद्यात्षड्रसंमधुरोत्तरं ॥ ९ ॥

भाषार्थ-अच्छा मनुष्य अन्नकी निंदा न करै प्रीतिसे भोजनको ग्रहण करै और छः रसवाले उस आहारको उत्तम समझै जिस मधुर अधिक हो ॥ ९ ॥

विहारंचैवस्वस्त्रीभिर्वेश्याभिर्नकदाचन ।
नियुद्धंकुशलैःसार्धंव्यायामंनतिभिर्वरं १०

भाषार्थ-विवाहित स्त्रियोंके साथ विहार करै और वेश्याओंके साथ कभी न करैऔर युद्धमें कुशलोंके साथ युद्ध और नति (नमस्कार) करनेवालोंके साथ व्यायाम श्रेष्ठ होता है ॥ १० ॥

हित्वाप्राक्पश्चिमौयामौनिशिस्वापोवरोमतः
दीनांधपंगुबधिरानोपहास्याःकदाचन ११

भाषार्थ-पहिले और पिछले प्रहरको छोडकर रात्रिमें सोना श्रेष्ठ होता है और दीन-अंधे-पंगु-बहिरे इनका हास्य कभी न करै ॥ ११ ॥

नाकार्येतुमतिंकुर्याद्द्राक्स्वकार्यंप्रसाधयेत् ।
उद्योगेनबलेनैवबुध्याधैर्येणसाहसात् १२॥

भाषार्थ-अकार्यमें मति न करै अपने कार्यको शीघ्र सिद्ध करै उद्योग-बल-बुद्धि-धीरज-साहस ॥ १२ ॥

पराक्रमेणार्जवेनमानमुत्सृज्यसाधकः ।
नानिष्टंप्रवदेत्कस्मिन्नच्छिद्रंकस्यलक्षयेत्१३

भाषार्थ-पराक्रम-आर्जव-इनसे कार्यका साधक मानको त्यागकर और किसीको अनिष्ट न कहै और किसीके छिद्रको न देखै ॥ १३ ॥

आज्ञाभंगस्तुमहतांराज्ञःकार्योनवैकाचित् ।
असत्कार्यंनियोक्तारंगुरुंवापिप्रबोधयेत्१४

भाषार्थ—बडोंकी और राजाकी आज्ञा भंग कभी न करै असत्कार्यके नियुक्त करने वाले गुरुकोभी बोधन करावै॥ १४ ॥

नातिक्रामेदपिलघुंक्वचित्सत्कार्यबोधकं ।
कृत्वास्वतंत्रांतरुणींस्त्रियंगच्छेन्नवैक्वचित् १५

भाषार्थ—कार्यके बोधक लघु (छोटे) का भी अवलंघन न करै जवान और स्त्रीको स्वतंत्र छोडकर कहीं न जाय ॥ १५ ॥

स्त्रियोमूलमनर्थस्यतरुण्यःकिंपरैःसह ।
नप्रमाद्येन्मदद्रव्यैर्नविमुह्येत्कुसंततौ १६॥

भाषार्थ—जवान स्त्री अनर्थका मूल होती हैं तौ औरोंके साथ क्या है—मदकी द्रव्यसे प्रमादको और खोटी संतानसे मोहको प्राप्त न हो ॥ १६ ॥

साध्वीभार्यापितृपत्नीमाताबालःपितास्नु षा ।
अभर्तृकानपत्यायासाध्वीकन्यास्वसापिच

भाषार्थ— साधुस्त्री पिताकी स्त्री—माता—बालक—पिता—और जो अनपत्य और भर्त्तार रहित कन्या—स्नुषा (पुत्रकी वहु) स्वसा (वहनि) १७ ॥

मातुलानीभ्रातृभार्यापितृमातृस्वसातथा ।
मातामहोनपत्यश्वशुरुश्वशुरमातुलाः १८

भाषार्थ—माई—भावज—माता और पिताकी वहनि-नाना-संतानरहितगुरु-श्वशुर—मामा१८

बालाःपिताचदौहित्रोभ्राताचभगिनीसुतः।
एतेवश्यंपालनीयाःप्रयत्नेनस्वशक्तितः ॥

भाषार्थ—बालक—रक्षक—धेवता—भ्राता—भानजा—ये अपनी शक्तिके अनुसार यत्नसे पालने ॥ १९ ॥

अविभवेपिविभवेपितृमातृकुलंसुहृत् ।
पत्न्याःकुलंदासदासीभृत्यवर्गांश्चपोषयेत्॥

भाषार्थ—धन नही होतेभी और होतेभी पिता और माताका कुल—मित्र स्त्रीका कुल—दास दासी भृत्यवर्ग इनकी पालना करै २०

विकलांगान्प्रव्रजितान्दीनानाथांश्चपालयेत्
कुटुंबभरणार्थेयोयत्नवान्नभवेन्नरः ॥ २१॥

भाषार्थ—विकलांग (एक अंग रहित) संन्यासी—दीन—अनाथ—इनकी पालना करै और कुटुंबके पोषण करनेमें जो मनुष्य यत्नवाला नही होता उसके ॥ २१ ॥

तस्यसर्वगुणैःकिंतुजीवन्नेवमृतश्चसः ।
नकुटुंबंभृतंयेननामिताःशत्रवोपिन ॥२२॥

भाषार्थ—संपूर्ण गुणोंका क्या फल है वह मनुष्य जीताही हुआ मरा है जिसने कुटुंबको पाला नही और शत्रुओंको नवाया नही ॥ २२ ॥

प्राप्तंसंरक्षितंनैवकस्यकिंजीवितेनवै ।
स्त्रीभिर्जितोऋणीनित्यंसुदरिद्रीचयाचकः॥

भाषार्थ—और हुए पदार्थकी जिसनें रक्षा ही की उसके जीनेसे क्या है स्त्रियोंके वशीभूत और सदैव ऋणी और महान् दरिद्री और याचक ॥ २३ ॥

गुणहीनोर्थधीनःसन्मृताएतेसजीवकाः ।
आयुर्वित्तंगृहछिद्रंमंत्रमैथुनभेषजं ॥२४॥

भाषार्थ—गुणहीन—शत्रुके आधीन ये सव मनुष्य जीतेही मृतकके समान हैं अवस्था—धन—घरका छिद्र—मंत्र—(सलाह)—मैथुन—औषध ॥ २४ ॥

दानमानापमानंचनवैतानिसुगोपयेत् ।
देशाटनंराजसभावेशनंशास्त्रचिंतनं ॥२५॥

भाषार्थ—दान—मान-अपमान-इन नौवस्तुओंको भली प्रकार गुप्त करै देशोंमें विचरना राजसभामें जाना शास्त्रका चिंतन ॥ २५ ॥

वेश्यानिदर्शनंविद्वन्मैत्रीकुर्यादतंद्रितः।
अनेकाश्चतथाधर्माःपदार्थाःपशवोनराः २६

भाषार्थ—वेश्याओंका परिचय—विद्वानोंकी मित्रता—इनको निरालस्य होकर करे और अनेक धर्म—पदार्थ—पशु—नर ॥ २६ ॥

देशाटणात्स्त्वानुभूताःपर्वतादेशरीतयः।
कीदृशाराजपुरुषान्याय्यान्याय्यंचकीदृशं॥

भाषार्थ—पर्वत—देशोंकी रीति ये सब देशाटनसे जाने जाते हैं राजाके पुरुष कैसे हैं न्याय और अन्याय कैसा है ॥ २७ ॥

मिथ्याविवादिनःकेचकेवैसत्यविवादिनः।
कीदृशीव्यवहारस्यप्रवृत्तिःशास्त्रलोकतः॥

भाषार्थ—और कौन मिथ्यावादी हैं और कौन सत्यवादी हैं शास्त्र और लोककी रीतिसे व्यवहारकी प्रवृत्ति कैसी है ॥ २८ ॥

सभागमनशीलस्यतद्विज्ञानंप्रजायते।
नाहंकारीचधर्मांधःशास्त्राणांतत्त्वचिंतनैः॥

भाषार्थ—राजसभामें जानेकूं है शील जिसका ऐसे मनुष्यको इन वस्तुओंका ज्ञान होता है और शास्त्रके तत्त्वोंकी चिंतासे मनुष्य अहंकारी और धर्ममें अंधा नहीं होता ॥ २९ ॥

एकंशास्त्रमधीयानोनविद्यात्कार्यनिर्णयं।
स्याद्बह्वागमसंदर्शीव्यवहारोमहानतः॥

भाषार्थ—एकशास्त्रके पढनेवाला मनुष्य कार्यके निर्णयको नही जान सकता इससे मनुष्य अनेक शास्त्रको देखनेवाला हो इसीसे महान् व्यवहार होता है ॥ ३० ॥

बुद्धिमानभ्यसेन्नित्यंबहुशास्त्राण्यतंद्रितः।
तदर्थंतुगृहीत्वापितदधीनोनजायते ॥ ३१

भाषार्थ—बुद्धिमान् आलस्य छोडकर प्रतिदिवस शास्त्रोंका अभ्यास करे और शास्त्रके अर्थको जानकरभी उसके आधीन मनुष्य नहीं होता ॥ ३१ ॥

वेश्यातथाविधावापिवशीकर्तुंनरंक्षमा।
नेयात्कस्यवशंतद्वत्स्वाधीनंकारयेज्जगत् ॥

भाषार्थ—और वेश्या किसप्रकारकी मनुष्यको वश करनेको समर्थ होती है इससे आप किसीके वशमें नहो और जगत्को अपने वशमें करे ॥ ३२ ॥

श्रुतिस्मृतिपुराणानामर्थविज्ञानमेवच।
सहवासात्पंडितानांबुद्धिःपंडाप्रजायते ॥

भाषार्थ—श्रुति— स्मृति— पुराण— इनके अर्थका ज्ञान और पंडा बुद्धि पंडितोंके संग वाससे होती है ॥ ३३ ॥

देवपित्रातिथिभ्योन्नमदत्वानाश्नियात्क्वचित्।
आत्मार्थंयःपचेन्मोहान्नरकार्थंसजीवति ॥

भाषार्थ—देवता—पितर—अतिथि—इनको विना अन्न दियें भोजन न करे जो अज्ञानसे अपने लिये पकाता है वह नरकके लिये जीवता है ॥ ३४ ॥

मार्गंगुरुभ्योबलिनेव्याधितायशवायच।
राज्ञेश्रेष्ठायव्रतिनेयानगायसमुत्सृजेत् ॥ ३५

भाषार्थ—इतने पुरुषोंको मार्ग छोडदे अर्थात् संमुख आते देखकर हटजा कि गुरु बलवान् रोगी शव राजा—श्रेष्ठ व्रतवाला—और यानमें चढ़ा ॥ ३५ ॥

शकटात्पंचहस्तंतुदशहस्तंतुवाजिनः।
दूरतःशतहस्तंचतिष्ठेन्नागाद्वृषादश ॥ ३६॥

भाषार्थ—गाडीसे पांचहात घोडेसे दशहात हाथीसे सौ हात और बैलसे दशहात—दूर पर टिके— ॥ ३६ ॥

शृंगीणांचनखीनांचदंष्ट्रीणांदुर्जनस्यच ।
नदीनांवसतौस्त्रीणांविश्वासंनैवकारयेत् ॥

भाषार्थ-सींग-नख-डाढ-इनवाले जीवों का और दुर्जन नदीके समीपका वास-स्त्री इनका कदाचित् भी विश्वास न करै ॥३७॥

खादन्नगछेदध्वानंनचहास्येनभाषणं ।
शोकंनकुर्यान्नष्टस्यस्वकृतेरपिजल्पनं ॥३८

भाषार्थ-भोजन करता हुआ मार्गमें न चलै हंसीसे भाषण न करै नष्ट हुई वस्तुका शोक न करै अपने कृत्यका कथन (प्रसंशा) न करै ॥ ३८ ॥

सशंकितानांसामीप्यंत्यजेद्वैनीचसेवनं ।
संल्लापंनैवशृणुयाद्गुप्तःकस्यापिसर्वदा ३९

भाषार्थ-जिसकी तरफसे कुछ शंका हो उसके समीप न रहै और नीचकी सेवाको त्यागदे और किसीके संभाषणको कदाचित्भी छुपकर न सुनै ॥ ३९ ॥

उत्तमैरननुज्ञातंकार्यंनेछेत्तैःसह ।
देवैःसाकंसुधापानाद्राहोश्छिन्नंशिरोयतः ॥

भाषार्थ-बडोंकी आज्ञाके विना और उनके साथकी इच्छा न करै क्योंकि देवताओंके संग अमृतपान करनेसे राहुका शिर छेदन होगयाथा ॥ ४० ॥

महतोसत्कृतमपिभवेत्तद्भूषणायवै ।
विषपानंशिवस्यैवत्वन्येषांमृत्युकारकं ॥

भाषार्थ-निंदितभी कर्म बडोंकेलिये भूषण होता है और अन्य पुरुषोंको मृत्युका दाता होता है ॥ ४१ ॥

तेजस्वीक्षमतेसर्वंभोक्तुंवन्हिरिवानघः ।
नसांमुख्येगुरोःस्थेयंराज्ञःश्रेष्ठस्यकस्यचित्

भाषार्थ-तेजवाला मनुष्य संपूर्ण भक्षण करनेको इसप्रकार समर्थ होता है जैसे पवित्र अग्नि और गुरु राजा अथवा अन्य किसी श्रेष्ठ पुरुषके संमुख न टिके ॥४२॥

राजामित्रमितिज्ञात्वानकार्यंमानसेप्सितं ।
नेछेन्मूर्खस्यस्वामित्वंदास्यामिछेन्महात्मनां ॥ ४३ ॥

भाषार्थ-औ राजाको मित्र जानकर मन माने कार्य न करै और मूर्खको स्वामी बनानेकी इच्छा न करै और महात्माओंके दास बननेकी इच्छा करै ॥ ४३ ॥

विरोधंनज्ञानलवदुर्विदग्धस्यरंजनं ।
अत्यावश्यमनावश्यंक्रमात्कार्यंसमाचरेत् ॥

भाषार्थ-ज्ञानके लेशसे जो दुर्विदग्ध है उसके संग विरोध और प्रीति न करै और आवश्यक और अनावश्यकको क्रमसे करै अर्थात् आवश्य कार्यको करके अनावश्यकको करै ॥ ४४ ॥

प्राक्पश्चाद्राग्विलंबेनप्राप्तंकार्यंतुबुद्धिमान् ।
पित्राज्ञातेनवैमातृवधरूपेसुपूजिता ॥४५॥

भाषार्थ-प्रथम पीछैं शीघ्र और विलंबसे प्राप्तहुए कार्यको मनुष्य करै अर्थात् जो जिस समय करनेके योग्य हो उसको उसी समय करै पिताकी आज्ञासे माताके मारने रूप कार्यमें भली प्रकार पूजा ॥ ४५ ॥

धृतागौतमपुत्रेणह्यकार्येचिरकारिता ।
प्रेम्णासमीपवासेनस्तुत्यानत्याचसेवया ॥

भाषार्थ-गौतमपुत्रको कुकर्ममेंभी चिरकालमें करनेसे मिली-और प्रेम समीप वास-स्तुति-नमस्कार सेवासे ॥ ४६ ॥

कौशल्येनकलाभिश्चकथाभिर्ज्ञानतोपिवा ।
आदरेणार्जवेनैवशौर्याद्दानेनविद्यया ॥४७॥

भाषार्थ-कुशलता-कला-कथाज्ञान-आदर-नम्रता-शूरता-दान-और विद्यासे४७॥

प्रत्युत्थानाभिगमनैरानंदस्मितभाषणैः ।
उपकारैःस्वाशयेनवशीकुर्याज्जगत्सदा ४८

भाषार्थ-और प्रत्युत्थान (देखकर उठना) सन्मुखगमन-आनंद-हंसकर भाषण-उपकार और अपने अंतःकरणसे सदैव जगत् को वशमें करे ॥ ४८ ॥

एतेवश्यकरोपायादुर्जनेनिष्फलाःस्मृताः ।
तत्सन्निधिंत्यजेत्प्राज्ञःशक्तस्तंदंडतोजयेत्

भाषार्थ-परंतु ये सब वश करनेके उपाय दुर्जनके विषय निष्फल कहे हैं इससे बुद्धिमान् मनुष्य दुर्जनके समीपको त्यागदे समर्थ होय तो उसको दंडसे जीते ॥ ४९ ॥

छलभूतैस्तुतद्रूपैरुपायैरेभिरेववा ।
श्रुतिस्मृतिपुराणानामभ्यासःसर्वदाहितः॥

भाषार्थ-छलरूप जीतनेके उपायोंसे अथवा इनही उपायोंसे जीते-श्रुति-स्मृति पुराण-इनका अभ्यास सदैव हितकारी होता है ॥ ५० ॥

सांगानांसोपवेदानांसकलानांनरस्यहि ।
मृगयाक्षाःस्त्रियोपानंव्यसनानिनृणांसदा ॥

भाषार्थ-अंग और उपवेदों सहित संपूर्ण वेदोंका अभ्यास मनुष्यको हित है-और मृगया-द्यूत-स्त्री मदिराका पान ये मनुष्योंके सदैव व्यसन कहे हैं ॥ ५१ ॥

चत्वार्येतानिसंत्यज्ययुक्त्यासंयोजयेत्क्वचित् ।
कूटेनव्यवहारंतुवृत्तिलोपंनकस्यचित् ५२

भाषार्थ-इन चारोंको त्यागदे परंतु युक्त्यासे क्वचित् २ इनका योग करै (वर्ते)किसीके झूंठसे व्यवहार और किसीकी जीविका का लोप ॥ ५२ ॥

नकुर्याच्चिंतयेत्कस्यमनसाप्यहितंक्वचित् ।
तत्कार्यंतुसुखंयस्माद्भवेत्त्रैकालिकंदृढं ५३॥

भाषार्थ-न करे-और मनसेभी किसीके अहितकी चिंता न करे और वही काम करें जिससे तीनों कालमें दृढ सुख मिले ५३

मृतेस्वर्गंजीवतिचविंद्यात्कीर्तिंदृढांशुभां ।
जागर्तिचसचिंतोयःआधिव्याधिसुपीडितः

भाषार्थ-मरे पीछे और जीवते समयमें दृढ और उत्तम कीर्तिको पहिचाने-जो मनुष्य चिंता सहित है वा आधिव्याधिसे सुपीडित है वह जागता है अर्थात् उसको निद्रा नही आती ॥ ५४ ॥

जारश्चोरोबलिद्विष्टोविषयीधनलोलुपः ।
कुसहायीकुनृपतिर्भिन्नामात्यसुहृत्प्रजः ॥

भाषार्थ-जार-चोर-बलवान्का वैरी-विषयी-धनका लोभी-जिसका सहायक बुराहो-वा जो राजा बुराहो-जिसके मंत्री भिन्न हों वा जिसका प्रजा भिन्न हो अर्थात् मित्रतासे उनसे करन लेता हो ॥ ५५ ॥

कुर्याद्यथासमीक्ष्यैतत्सुखंस्वप्याच्चिरंनरः ।
राज्ञोनानुकृतिंकुर्यान्नचश्रेष्ठस्यकस्यचित्॥

भाषार्थ-इससे इन सबकामोंको यथार्थ देखकर करै और मनुष्य चिरकालतक आनंदसे शयन करै-और राजाका अथवा किसी श्रेष्ठ मनुष्यका अनुकरण न करै॥५६

नैकोगच्छेद्व्यालव्याघ्रचोरेषुचप्रबाधितुं ।
जिघांसंतंजिघांसीयाद्गुरुमप्याततायिनं५७

भाषार्थ-और सर्प-सिंह-चौर इनकी हिंसाके लिये अकेला न जाय-और मारते हुये आततायी गुरुकीभी हिंसा करै ॥ ५७ ॥

कलहेनसहायःस्यात्संरक्षेद्बहुनायकं ।
गुरूणांपुरतोराज्ञोनचासीतमहासने॥५८॥

भाषार्थ-और लडाईमें सहायता न करे और उसकी रक्षा करे जिसके समीप बहुत सेना हो और गुरु और राजा इनके आगे उच्च आसनपर न बैठे ॥ ५८ ॥

प्रौढपादोनतत्कार्यंहेतुभिर्विक्रांतिंनयेत् ।
यत्कर्तव्यंनजानातिकृतंजानातिचेतरः ॥

भाषार्थ-और ऊंचे पैर करकेभी नबैठे और न उनके कार्यको विगाडे जो मनुष्य करने योग्य कार्यको न जाने उसको इतर मनुष्य कैसे जान सकतेहैं ॥ ५९ ॥

नैववक्तिचकर्तव्यंकृतंयश्चोत्तमोनरः ।
नप्रियाकथितंसम्यङ्मनुतेनुभवंविना६०॥

भाषार्थ-और जो मनुष्य अपने करने योग्य वा किये कार्यको नहीं कहता वह मनुष्य उत्तम होताहै अथवा जो स्त्रीके कथन-को विना देखे सत्य नही मानता वहभी उत्त-महै ॥ ६० ॥

अपराधंमातृस्नुषाभ्रातृपत्निसपत्निजं ।
षोडशाब्दात्परंपुत्रंद्वादशाब्दात्परंस्त्रियं६१

भाषार्थ-अथवा जो माता-पुत्रवधू भ्राताकी स्त्री सपत्नी इनके अपराधको न माने वह उत्तमहै सोलहवर्षसे ऊपर पुत्रकी और बारहवर्षसे ऊपर स्त्रीकी ॥ ६१ ॥

नताडयेद्दुष्टवाक्यैःपीडयेन्नस्नुषादिकं ।
पुत्राधिकाश्चदौहित्राभागिनेयाश्चभ्रातरः ॥

भाषार्थ-ताडना न करै और पुत्रवधू आदिकोंको दुष्टवचनोंसे दुःख नदे और दौहित्र भानजे भाई ये सब पुत्रसे अधिक होतेहैं ॥ ६२ ॥

कन्याधिकाःपालनीयाभ्रातृभार्यास्नुषास्वसा ।
आगमार्थंहियततेरक्षणार्थंहिसर्वदा ॥६३॥

भाषार्थ-और भ्राताकी स्त्री पुत्रवधू भगिनी इनकी कन्यासेभी अधिक पालना करे और मेल और रक्षाके लिये सदैव यत्न करे ॥ ६३ ॥

कुटुंबपोषणेस्वामीतदन्येतस्कराइव ।
अनृतंसाहसंमौर्ख्यंकामाधिक्यंस्त्रियांयतः

भाषार्थ-स्वामी वही है जो कुटुंबका पोषण करे उससे अन्य चोरोंके समान होतेहैं जिससे स्त्रियोंको झूंठ साहस मूर्खता कामदेवकी अधिकता होतीहै ॥ ६४ ॥

कामाद्विनैकशयनेनैवसुप्यात्स्त्रियासह ।
दृष्ट्वाधनंकुलंशीलंरूपंविद्यांबलंवयः ॥६५॥

भाषार्थ-इससे स्त्रीके संग एकशय्या पर कभी न सोवे और धन-कुल-शील-रूप-विद्या-बल-अवस्था इनको देखकर॥ ६५॥

कन्यांदद्यादुत्तमंचेन्मैत्रींकुर्यादथात्मनः ।
भार्यार्थिनंवयोविद्यारूपिणंनिर्धनंत्वपि।६६

भाषार्थ-कन्याको दे और अपनेसे उत्तम होय तो उसके संग मित्रता करे और वर चाहै निर्धनहो परंतु विद्या और रूप वान्हो ॥ ६६ ॥

नकेवलेनरूपेणवयसानधनेनच ।
आदौकुलंपरीक्षेततोविद्यांततोवयः ६७॥

भाषार्थ- और केवल रूप अवस्था धनसे वरको न देखे किन्तु प्रथम कुलकी परीक्षा करै फिर विद्याकी फिर अवस्थाकी ॥ ६७॥

शीलंधनवयोरूपंदेशंपश्चाद्विवाहयेत् ।
कन्यावरयतेरूपंमातावित्तंपिताश्रुतं॥६८॥

भाषार्थ-फिर शील धन अवस्था रूप इनकी परीक्षा करके विवाह करदे कन्या रूपको माता धनको पिता विद्याको चाहते हैं ॥ ६८ ॥

बांधवाःकुलमिच्छंतिमिष्टान्नमितरेजनाः।
भार्यार्थिवरयेत्कन्यामसमानर्षिगोत्रजां ॥

भाषार्थ-बांधव कुलको और इतर बराती मिष्टान्नकी इच्छा करतेहैं भार्याका अभिलाषी मनुष्य ऐसी कन्याको विवाहे जो अपने प्रवर वा गोत्रकी नहो ॥ ६९ ॥

भ्रातृमतींसुकुलांचयोनिदोषविवर्जितां।
क्षणशःकणशश्चैवविद्यामर्थंचसाधयेत् ॥

भाषार्थ-और जिसके भ्राता हो और अच्छे कुलकी हो और योनिका दोष जिसमें नहो ऐसी कन्याको विवाहै क्षणमें२ और अल्प २ भी विद्या और धनका संचय करै ॥ ७० ॥

नत्याज्यौतुक्षणकणौनित्यंविद्याधनार्थिना।
सुभार्यापुत्रमित्रार्थंहितंनित्यंधनार्जनं ॥७१

भाषार्थ-विद्या और धनके अभिलाषीको क्षण और कण अल्पता नहीं त्यागने और श्रेष्ठस्त्री और पुत्रके लिये नित्य धनका संचय करना अच्छाहै ॥ ७१ ॥

दानार्थंचविनात्वेतैःकिंधनैश्चजनैश्चकिं।
भाविसंरक्षणक्षमंधनंयत्नेनरक्षयेत् ॥७२॥

भाषार्थ-और दानके लियेभी इनके विना धन और जनोंसे क्याहै भविष्य कालमें जो रक्षाके योग्यहो उस धनकी यत्नसे रक्षा करै ॥ ७२ ॥

जीवामिशतवर्षंतुनंदामिचधनेनवै।
इतिबुध्यासंचिनुयाद्धनंविद्यादिकंसदा ॥

भाषार्थ-मैं सौ वर्षतक जीवोंगा और धनसे आनंद भोगोंगा इस बुद्धिसे धन और विद्या आदिका सदैव संचय करै७३॥

पंचविंशत्यब्दपूर्वंतदर्धंवातदर्धकं।
विद्याधनंश्रेष्ठतरंतन्मूलमितरद्धनं ॥७४ ॥

भाषार्थ-पचीसवर्षतक अथवा साढे बारह वर्षतक अथवा सवाछः वर्षतक बुद्धिके अनुसार विद्या धन श्रेष्ठतर होताहै औ सब धनोंका यही मूल कारण है॥ ७४ ॥

दानेनवर्धतेनित्यंनभारायननीयते।
अस्तियावत्तुसधनस्तावत्सर्वैस्तुसेव्यते ॥

भाषार्थ-और विद्या धन दानसे नित्य बढताहै और विद्याका भार नही होता और न कोई लेजासकता और धनी मनुष्य इतने धनवान् रहताहै तितने सब सेवा करतेहैं ॥ ७५ ॥

निर्धनस्त्यज्यतेभार्यापुत्राद्यैःसगुणोप्यतः।
संसृतौव्यवहारायसारभूतंधनंस्मृतं ॥७६॥

भाषार्थ-और गुणवान्भी निर्धनको स्त्री पुत्र आदिभी त्याग देतेहैं परंतु संसारके व्यवहारोंके लिये धनही सार कहाहै ॥७६॥

अतोयतेततत्प्राप्त्यैनरःसूपायसाहसैः।
सुविद्ययासुसेवाभिःशौर्येणकृषिभिस्तथा ॥

भाषार्थ-इससे मनुष्य उत्तम उपाय वा साहससेभी धनकी प्राप्तिके लिये यत्न करै उत्तम विद्या-उत्तम सेवा शूरवीरता और खेतीसे ॥ ७७ ॥

कौसीदवृध्यापण्येनकलाभिश्चप्रतिग्रहैः।
ययाकयाचापिवृत्त्याधनवान्स्यात्तथाचरेत्

भाषार्थ-सूदकी वृद्धि व्यवहार-कला-प्रतिग्रह-वा जिस तिस वृत्तिसे ऐसा आचरण करै जिससे धनवान् हो ॥ ७८ ॥

तिष्ठंतिसधनद्वारिगुणिनःकिंकराइव ।
दोषाअपिगुणायंतेदोषायंतेगुणाअपि ७९॥

धनवतोनिर्धनस्यनिंद्यतेनिर्धनोखिलैः ।
यथानजानंतिधनंसंचितंकतिकुत्रवै ॥८०॥

भाषार्थ-धनवान् मनुष्यके द्वारपर गुणवान् मनुष्य किंकरके समान टिकते हैं और धनवान् मनुष्यके दोषभी गुण-और निर्धनके गुणभी दोष हो जाते हैं और निर्धन मनुष्यकी सब निंदा करते हैं और जैसे संचित धनको कितना है और कहां है ये न जानें ॥ ७९ ॥ ८० ॥

आत्मास्त्रीपुत्रमित्राणिसलेखंधारयेत्तथा ।
नैवास्तिलिखितादन्यत्स्मारकंव्यवहारिणां

भाषार्थ-आत्मा-स्त्री-पुत्र-मित्र-इन सब को लिखकर धनको रक्खे. अर्थात् जिस लेखसे इनको धन प्राप्त हो सके क्योंकि लिखे विना अन्य व्यवहारियोंको जतानेवाला कोई नही हैं ॥ ८१ ॥

नलेखेनविनाकुर्याद्व्यवहारंसदाबुधः ।
निर्लोभेधनिकेराज्ञिविश्वस्तेक्षमिणांवरे ॥

सुसंचितंधनंधार्यंगृहीतलिखितंतुवा ।
मैत्र्यर्थेयाचितंदद्यादकुसीदंधनंसदा ८३॥

भाषार्थ-बुद्धिमान् मनुष्य लिखे विना कोई काम न करे और निर्लोभी धनवान्-राजा-विश्वासके योग्य-क्षमाशील-इनके समीप अपने संचित धनको रक्खे चाहै वह धन ग्रहीत वा लिखाहो और मित्रताके लिये विना व्याजभी धनको सदैव दे ॥ ८३ ॥

तस्मिन्स्थितंचेन्नबहुहानिकृच्चतथाविधं ।
दृष्ट्वाधमर्णंवृद्ध्यापिव्यवहारक्षमंसदा ८४॥

भाषार्थ-और मित्रके पास स्थित हुआभी लिखित धन अत्यन्त हानी, करनेवाला नही होता और व्याजपरहीभी व्यवहारके योग्य सदैव देखकर ॥ ८४ ॥

सबंधंसप्रतिभुवंधनंदद्याच्चसाक्षिमत् ।
गृहीतलिखितंयोग्यमानंप्रत्यागमेसुखम् ॥

भाषार्थ-अवधी-प्रतिभू-(जामिन) और साक्षि-इनको लिखकर धनको दे क्योंकि ग्रहण करनेके समय लिखाहुआ जो प्रमाण है सो लौटानेके समय सुख दाई होता है ८५॥

नदद्याद्वृद्धिलोभेननष्टंमूलधनंभवेत् ।
आहारेव्यवहारेचत्यक्तलज्जःसुखीभवेत् ॥

भाषार्थ-और ऐसी जगे व्याजके लोभसे धनको न दे जहां मूलधनभी नष्ट हो जाय क्योंकि आहार और व्यवहारमें जो लज्जाको त्यागता है वही सुखी होता है ॥ ८६ ॥

धनंमैत्रीकरंदानेचादानेशत्रुकारकं ।
कृत्वास्यांतेतथौदार्यंकार्पण्यंबहिरेवच८७॥

भाषार्थ-देनेके समय धन-मित्रताको और लौटानेके समय शत्रुताको करता है और अपने चित्तमें उदारताको और वाहिर कृपणताको करके ॥ ८७ ॥

उचितंतुव्ययंकालेनरःकुर्यान्नचान्यथा ।
सुभार्यापुत्रमित्राणिशक्त्यासंरक्षयेद्धनैः ॥

भाषार्थ-मनुष्य समयपर उचित व्ययको करै अन्यथा न करै और शक्तिके अनुसार श्रेष्ठ स्त्री-पुत्र-मित्र-इनकी धनसे रक्षाकरै॥

नात्मापुनरतोत्मानंसर्वैःसर्वंपुनर्भवेत् ।
पश्यतिस्मसजीवश्चेन्नरोभद्रशतानिच ८९॥

भाषार्थ-अपनी आत्मा फिर नहीं होता और अन्य सब फिर हो सक्ते हैं इससे आत्माकी सबसे रक्षा करै क्योंकि यदि मनुष्य जीवेगा तो सेंकडो आनन्दोंको देखेगा ॥ ८९ ॥

सदारप्रौढपुत्रान्द्राक्श्रेयोर्थीविभजेत्पिता ।
सदारभ्रातरःप्रौढाविभजेस्युःपरस्परं ॥९०

भाषार्थ–अपने कल्याणका अभिलाषि पिता–स्त्री–और व्यवहार करनेके योग्य पुत्रोंके शीघ्र धनका विभाग करदे अथवा उक्त स्त्री और पुत्र परस्पर धनका विभाग करलें ९०

एकोदराअपिप्रायोविनाशायान्यथाखलु ।
नैकत्रसंवसेच्चापिस्त्रीद्वयंमनुजस्यतु॥९१॥

भाषार्थ–क्योंकि विभागके न करनेसे प्रायः सहोदरभाईभी नष्ट हो जाते हैं–और मनुष्यकी दो स्त्री एक जगे नहीं वस सक्ती॥

कथंवसेत्तद्बहुत्वंपशूनांतुनरद्वयं ।
विभजेयुर्नतत्पुत्रायद्धनंवृद्धिकारणं ॥९२॥

भाषार्थ–और पशुके समान दो मनुष्य अथवा वहुत स्त्री एक जगे किस प्रकार वस सक्ते हैं और जिस धनका व्याज आता हो उस धनका विभाग पुत्र न करें ॥९२॥

अधमर्णस्थितंचापियद्देयंचौत्तमर्णिकं ।
यस्येच्छेदुत्तमांमैत्रींकुर्यान्नार्थाभिलाषकं॥

भाषार्थ–और जो धन व्याजपर हो अथवा जो ऋण देनाहो उसकोभी न वांटे और जिसके संग उत्तम मित्रताकी इच्छा करे उससे धन लेनेकी इच्छा न करे ॥ ९३ ॥

परोक्षेतद्गृहश्चारंतत्स्त्रीसंभाषणंतथा ।
तन्न्यूनदर्शनंनैवतत्प्रतीपविवादनं ॥ ९४॥

भाषार्थ–और परोक्षमें उसके रणवासमें जाना और उसकी स्त्रीके वोलना उसकी न्यूनताको देखना–उसके प्रतिकूल विवाद इनको न करै ॥ ९४ ॥

असाहाय्यंचतत्कार्येह्यानिष्टोपेक्षणंनच ।
सकुसीदमकुसीदंधनंयच्चौत्तमर्णिकम्९५॥

भाषार्थ–उसके कार्य्यमें सहायताका त्याग उसके अनिष्टकी उपेक्षा–इनकोभी न करै और उत्तमर्णका जो धन व्याजपर हो वा विना व्याजपर हो उसको ॥ ९५ ॥

दद्याद्गृहीतमिवनोचोभयोःक्लेशकृद्यथा ।
नासाक्षिमच्चलिखितंऋणपत्रस्यपृष्ठतः ॥

भाषार्थ–जिस प्रकार ग्रहण किया हो उसी प्रकार उस रीतिसे दे जिससे दोनोंको क्लेश न हो और विना साक्षी और ऋण पत्र (रुक्का) पीठपर विना लिखे धनको नदे ९६

आत्मपितृमातृगुणैःप्रख्यातश्चोत्तमोत्तमः
गुणैरात्मभवैःख्यातःपैतृकैर्मातृकैःपृथक् ॥

भाषार्थ–अपने वा पिता माताके गुणोंसे जिसकी कीर्ति है वह नर उत्तमसेभी उत्तम है और जो अपने वा पिताके वा माताके पृथक् २ गुणोंसे विख्यात है वह ॥ ९७ ॥

उत्तमोमध्यमोनीचोधमोमातृगुणैर्नरः ।
कन्यास्त्रीभगिनीभाग्योनरसोव्यधमाधमः

भाषार्थ–क्रमसे उत्तम मध्यम नीच होता है और माताके गुणोंसे जो प्रसिद्ध हो वह अधम और–कन्या–स्त्री–भगिनी–इनके भाग्यसे जो जीवे वह अधमसेभी अधम होता है ॥ ९८ ॥

भूत्वामहाधनःसम्यक्पोष्यवर्गंतुपोषयेत् ।
अदत्त्वायत्किंचिदपिननयेद्दिवसंबुधः९९॥

भाषार्थ–महाधनी हो कर पालन करने योग्य पुत्र आदिकोंकी भली प्रकार पालना करे और दानके विना एक दिनभी व्यतीत न करे ॥ ९९ ॥

स्थितोमृत्युमुखेचाहंक्षणमायुर्ममास्तिन ।
इतिमत्वादानधर्मौयथेष्टौतुसमाचरेत् २००

भाषार्थ-और यह मानकर यथेष्ट दान और धर्म करे कि मैं मृत्युके मुखमें बैठा हूं और मेरी अवस्था एक क्षणकी है ॥ २०० ॥

नतोविनाभेपरत्रसहायाःसंतिचेतरे ।
दानशीलाश्रयाल्लोकोवर्ततेनशठाश्रयात् १

भाषार्थ-और यह बुद्धिरक्खे कि दान और धर्मके विना परलोकमें मेरे कोई सहायक न ही क्योंकि जगत्का व्यवहार दान शील मनुष्यके आसरेसे चलता है शठके आसरे से नही ॥ १ ॥

भवंतिमित्रादानेनद्विषंतोपिचकिंपुनः ।
देवतार्थंचयज्ञार्थंब्राह्मणार्थंगवार्थकम् ॥२॥

भाषार्थ-और तो क्या शत्रुभी देनेसे मित्र होजाते हैं और देवता-यज्ञ-ब्राह्मण-गौ-इनके लिये ॥ २ ॥

यद्दत्तंतत्पारलोक्यंसंविद्दत्तंतदुच्यते ।
वंदिमागधमल्लादिनटानर्थंचदीयते ॥ ३॥

भाषार्थ-जो दिया हो वह परलोकमें काम आता है और उसको संविद्दत्त कहते हैं और जो वंदीजन भाट-मल्ल-नट-इनके लिये दिया जाता है ॥ ३ ॥

पारितोष्यंयशोर्थंतच्छ्रियादत्तंतदुच्यते ।
उपायनीकृतंयत्तुसुहृत्संबंधिबंधुषु ॥ ४ ॥

भाषार्थ-वह पारितोषिक (इनाम) यशके लिये होता है उसको श्रियादत्त कहते हैं और जो धन मित्र-सम्बन्धी-बन्धुओंको उपायन (भेट) किया हो ॥ ४ ॥

विवाहादिषुवाचारदत्तंन्हीदत्तमेवतत् ।
राज्ञेनबलिनेदत्तंकार्यार्थंकार्यघातिने ॥५॥

भाषार्थ-अथवा विवाह आदिमें व्यवहार-से जो दिया हो उसको ह्रीदत्त कहते हैं-और राजा बलवान अथवा कार्यके नष्ट करनेवालेको जो दिया हो ॥ ५ ॥

पापभीत्याथवायच्चतत्तुभीदत्तमुच्यते ।
यद्दत्तंहिंस्त्रवृध्द्यर्थंनष्टंद्यूतविनाशितं ॥ ६॥

भाषार्थ-अथवा पापके भयसे जो दियाहो उसकोभी दत्त कहते हैं-और जो धन हिंसा वृद्धिके लिये अथवा द्यूतमें विनाशित नष्ट होता है ॥ ६॥

चौरैर्हृतंपापदंतत्परस्त्रीसंगमार्थकं ।
आराधयतियंदेवंतमुत्कृष्टतरंवदेत् ॥ ७ ॥

भाषार्थ-वा चोरोंने हरा हो अथवा परस्त्री संगमके लिये दिया हो उसको पापदत्त कहते हैं-और जिस धनसे देवता की आराधना करे उसको अत्यन्त उत्कृष्ट कहते हैं७

तन्न्यूनतांनैवकुर्याज्जोषयेत्तस्यसेवनं ।
विनादानार्जवाभ्यानभुव्यस्तिचवशीकरं ८

भाषार्थ-उसकी न्यूनता न करे किन्तु सदैव सेवन करे दान और नम्रताके विना पृथ्वीपर वस करनेवाली कोई वस्तु नहीं८॥

दानक्षीणोविवर्धिष्णुःशशीवक्रोप्यतःशुभः।
विचार्यस्नेहंद्वेषंवाकुर्यात्कृत्वानचान्यथा ९

भाषार्थ-जो मनुष्य दानसे क्षीण हो वह कभी न कभी वढने योग्य होता है जैसे वक्र भी चन्द्रमा शुभ होता है और विचार कर श्रेष्ठ वा द्वेषको करे और अन्यथा इनको न करे ॥ ९ ॥

नापकुर्यान्नोपकुर्याद्भवतोनर्थकारिणौ ।
नातिक्रौर्यंनातिशाठ्यंधारयेन्नातिमार्दवम्

भाषार्थ-न किसीका तिरस्कार वा उपकार विना विचारे न करे क्योंकि विना विचार किये ये दोनों अनर्थकारी होते हैं अति क्रूरता अति शठता अति मृदुता इनको न करे ॥ १० ॥

नातिवादंनातिकार्येसक्तिमत्याग्रहंनच ।
अतिसर्वनाशहेतुह्यतोत्यंतंविवर्जयेत् ॥ ११

भाषार्थ–और तिसी प्रकार अत्यन्त वाद अत्यन्त कारियोंमें आशक्ति अत्यन्त आग्रह न करे क्योंकि सब जग अतिनाशका हेतु होता है–इससे अतिको वर्जदे ॥ ११ ॥

उद्वेजतेजनःक्रौर्यात्कार्पण्याददतिनिंदाति ।
मार्दवान्नैवगणयेदपमानोतिवादतः ॥१२॥

भाषार्थ–क्रूरतासे मनुष्य कंपता है कृपणतासे अत्यन्त निन्दाको प्राप्त होता है मृदुकु कोई गिनता नही अत्यन्त वादसे अपमान होता है ॥ १२ ॥

अतिदानेनदारिद्र्यंतिरस्कारोतिलोभतः ।
अत्याग्रहान्नरस्यैवमौर्ख्यंसंजायतेखलु १३

भाषार्थ–अत्यन्त दानसे दरिद्रता अत्यन्त लोभसे तिरस्कार और अत्यन्त आग्रहसे मनुष्यकी निश्चय मूर्खता होती है ॥ १३ ॥

अनाचाराद्धर्महानीरत्याचारस्तुमूर्खता ।
ह्यधिकोस्मीतिसर्वेभ्योह्यधिकज्ञानवानहं१४

भाषार्थ–विना आचार किये धर्मकी हानि और अत्यन्त आचारसे मूर्खता होती है मैं सबसे अधिकहुं और अधिक ज्ञान वानहुं ॥ १४ ॥

धर्मतत्वमिदामितिनैवंमन्येतबुद्धिमान् ।
नेच्छेत्स्वाम्यंतुदेवेपुगोपुचब्राह्मणेपुच १५

भाषार्थ–और यही धर्मका तत्व है अन्य नही इसको बुद्धिमान् मनुष्य कभी न माने और देवता–गौ–ब्राह्मण–इनके स्वामि होने की इच्छा न करे ॥ १५ ॥

महानर्थकरंह्येतत्समग्रकुलनाशनं ।
भजनंपूजनंसेवामिच्छेदेतेपुसर्वदा ॥१६॥

भाषार्थ–क्योंकि इनकी स्वामिता महान् अनर्थको और समग्र कुलको नष्ट करती है किन्तु इनके भजन–पूजन–सेवनाकि सदैव इच्छा करे ॥ १६ ॥

नज्ञायतेब्रह्मतेजःकस्मिन्कीदृक्प्रतिष्ठितं ।
पराधीनंनैवकुर्यात्तरुणीधनपुस्तकम् १७॥

भाषार्थ–और किस ब्राह्मणमें कैसा ब्रह्मतेज है यह प्रतीत नही हो सक्ता और तरुण स्त्री–धन–पुस्तक–इनको पराधीन न करे१७

कृतंचेल्लभ्यतेदैवाद्भ्रष्टंनष्टंविमर्दितं ।
बह्वर्थंनत्यजेदल्पहेतुनाल्पंनसाधयेत् १८॥

भाषार्थ–यदि पराधीन किये हुये ये दैवसे मिलभी जाय तो क्रमसे भ्रष्ट–नष्ट–मर्दन किये हुये मिलते हैं अल्प कारणसे बडे अर्थको न त्यागे और अल्पकी सिद्धि॥१८।

बह्वर्थव्ययतोधीमानाभिमानेनवैक्वचित् ।
बह्वर्थव्ययभीत्यातुसत्कीर्तिंनत्यजेत्सदा ॥

भाषार्थ–बहुत धनके व्ययसे न करे और बुद्धिमान् मनुष्य अभिमानसे वा अधिक खर्चके भयसे सदैव सत्कीर्तिको न त्यागे१९

भटानामसदुक्त्यातुनार्पेत्कुप्यान्नतैःसह ।
लज्यतेनसुहृद्योनभिद्यतेदुर्मनाभवेत् ॥

भाषार्थ–और वीरोंके असद्वचनोंसे न डरे और न उनके संग कोप करे जिस मित्रको लज्जा नही होती वह फट जाता है वा उदासीन हो जाता है ॥ २० ॥

वक्तव्यंनतथाकिंचिद्विनोदेपिचधीमता ।
आजन्मसेवितैर्दानैर्मानैश्चपरिपोषितं ॥२१

भाषार्थ–बुद्धिमान मनुष्य विनोदमेंभी तैसे वचनको न कहे जिससे दूसरा उदास हो जिसको–दान–वा मानसे जन्मपर्यंत प्रसन्न रक्खा हो उसको कटु वचन न कहे ॥२१॥

तीक्ष्णवाक्यान्मित्रमपितत्कालंयातिशत्रुतां
वक्रोक्तिशल्यमुद्धर्तुंनशक्यंमानसंयतः २२

भाषार्थ-कठोर वचनसे मित्रभी उसी समय शत्रु हो जाता है क्योंकि कठोर वचनका शल्य (शस्त्र) को मनसे कोई नही उखाड सक्ता ॥ २२ ॥

वहेदमित्रंस्कंधेनयावत्स्यात्स्वबलाधिकः
ज्ञात्वानष्टबलंतंतुभिंद्यात्घटमिवाश्मनि ॥

भाषार्थ-शत्रु जबतक अपने बलसे अधिक हो तबतक अपने कांधे पर लेचले और जब उसका बल नष्ट हो जाय तब इस प्रकार नष्ट करे जैसे पत्थरपर पटक कर घटको ॥ २३ ॥

नभूषयत्यलंकारोनराज्यंनचपौरुषं ।
नविद्यानधनंतादृक्यादृक्सौजन्यभूषणं ॥

भाषार्थ-अलंकार-राज्य-पुरुषार्थ-विद्या इनसे मनुष्यकी वैसी शोभा नहीं होती जैसी सौजन्य (भलाई) रूप भूषणसे होती है ॥ २४ ॥

अश्वेजवोवृषेधैर्यंमणौकांतिःक्षमानृपे ।
हावभावौचवेश्यायांगायकेमधुरस्वरः २५॥

भाषार्थ-अश्वका वेग-बैलका धैर्य्य-मणिकी कान्ति-राजाकी क्षमा-वेश्याके हाव भाव-गानेवालेका मधुर स्वर-भूषण होते हैं ॥ २५ ॥

दातृत्वंधनिकेशौर्यंसैनिकेबहुदुग्धता ।
गोषुदमस्तपस्वीषुविद्वत्सुवावदूकता ॥२६

भाषार्थ-धनवानका दातृत्व (देना) सैनिक (शिपाई) का शूरता-गौओंका बहुत दुग्ध-तपस्वियोंका इन्द्रियोंमें दमन-विद्वानोंका वावदुकता (सभामें बहुत बोलना) भूषण होता है ॥ २६ ॥

सभ्येष्वपक्षपातस्तुतथासाक्षिषुसत्यवाक् ।
अनन्यभक्तिभृत्येषुसुहितोक्तिश्चमंत्रिषु ॥

भाषार्थ-सभासदोंमें पक्षपात न करना-साक्षियोंमें सत्यवाणी-भृत्योंमें स्वामिकी अनन्य भक्ति-और मंत्रियोंमें राजाके हितके वचन-भूषण होते हैं ॥ २७ ॥

मौनंमूर्खेषुचस्त्रीषुपातिव्रत्यंसुभूषणं ।
महादुर्भूषणंचैताद्विपरीतममीषुच ॥२८॥

भाषार्थ-मूर्खोंमें मौन-और स्त्रियोंमें पातिव्रत्य-भूषण होते हैं इन पूर्वोक्त संपूर्णोंमे इनके विपरीत दुष्टभूषण होते हैं अर्थात् शोभाको नही देते ॥ २८ ॥

भात्येकनायकंनित्यंनैवनिर्बहुनायकं ।
नचहिंस्रमुपेक्षेतशक्तोहन्यात्तत्क्षणे ॥२९

भाषार्थ-एक नायक (स्वामि) होय तो शोभाको प्राप्त होता है नायक नहो अथवा बहुत नायक हों तो शोभा नहीं होती और हिंसा करनेवालेकी उपेक्षा न करे समर्थ होयतो उसी समय नष्ट करदे ॥ २९ ॥

पैशून्यंचंडताचौर्यंमात्सर्यमातिलोभता ।
असत्यंकार्यघातित्वंतथालसकताप्यलं ॥

भाषार्थ-पैशून्य-(चुगली खाना) चंडता-चोरी-मात्सर्य-(परायेगुणोंमें दोष देखना) अति लोभ-असत्य-कार्यको नष्ट करना और अत्यन्त आलसी ये सब होना ॥ ३० ॥

गुणिनामपिदोषायगुणानाच्छाद्यजायते ।
मातुःप्रियायाःपुत्रस्यधनस्यचविनाशनं ॥

भाषार्थ-गुणियोंकेभी गुणोंको ढककर दोषके लिये होते हैं माता-स्त्री-पुत्र-और धन-इनका नष्ट होना व क्रमसे ॥ ३१ ॥

बाल्येमध्येचवार्धक्येमहापापफलंक्रमात् ।
श्रीमतामनपत्यत्वमधनानांचमूर्खता ॥ ३२

भाषार्थ–बाल्य–यौवन–वृद्ध–अवस्थामें महापापका फल होता है और धनवानोंको सन्तानका न होना और निर्धन होकर मूर्खता होनी ॥ ३२ ॥

स्त्रीणांपंढपतित्वंचनसौख्यायेष्टनिर्गमः ।
मूर्खःपुत्रोऽधवाकन्याचंडीभार्यादरिद्रता॥

भाषार्थ–स्त्रियोंको नपुंसक पति इनसे सुख और इष्टकी प्राप्ति नहीं होती मूर्ख पुत्र और विधवा कन्या–और चंडी स्त्री–दरिद्रता ॥ ३३ ॥

नीचसेवाटनंनित्यंनैतत्षट्कंसुखायच ।
नाध्यापनेनाध्ययनेनदेवेनगुरौद्विजे॥ ३४॥

भाषार्थ–नीचकी सेवा नित्य भ्रमना–इन छसे सुख नहीं होता–पढानेमें पढने–देवता गुरु–ब्राह्मण–इनमें और ॥ ३४ ॥

नकलासुनसंगीतेसेवायांनार्जवेस्त्रियां ।
नशौर्येनचतपसिसाहित्येरमतेमनः ॥ ३५॥

भाषार्थ–कला–संगीत–सेवा–नम्रता–स्त्री–शूरता–तप–साहित्य–(काव्योंकी रचना) इनमें जिसका मन न रमे ॥ ३५ ॥

यस्यमुक्तःखलःकिंवानररूपपशुश्चसः ।
अन्योदयासहिष्णुश्चछिद्रदर्शीविनिंदकः ॥

भाषार्थ–वह छोडा हुआ खल–नररूपधारी पशु होता है और जो अन्यके उदयको न सहै अथवा छिद्र देखे वा निन्दा करै ॥ ३६ ॥

द्रोहशीलःस्वांतमलःप्रसन्नास्यःखलःस्मृतः
एकस्यैवनपर्याप्तमस्तियद्ब्रह्मकोशजम् ३७

आशावद्धस्योज्झितस्यतस्याल्पमपिपूर्तिकृत् ।
करोत्यकार्यंसाशोन्यंबोधयत्यनुमोदते ३८

भाषार्थ–वा द्रोहमे मन रक्खे जिसका अन्तःकरण मलीन हो और मुख प्रसन्न हो वहभी खल कहा है–और ब्रह्माके सम्पूर्ण कोश (जगत्) का सम्पूर्ण धन आशावान एक मनुष्यकीभी पूर्ती नहीं करसक्ता और आशाहीन मनुष्य की अल्पधनसेभी पूर्ती हो जाती है और आशावान मनुष्य अकार्यको करताहै–उपदेश देता है और सम्मत्ति देता है ॥ ३७ ॥ ३८ ॥

भवत्यन्योपदेशार्थेधूर्ताःसाधूसमाःसदा ।
स्वकार्यार्थमकुर्वंतिह्यकार्याणांशतंतुते ३९॥

भाषार्थ–धूर्त मनुष्य अन्यके उपदेशार्थ सदैव साधुओंके समान होते हैं और वे अपने प्रयोजनके लिये सैंकडों कुकर्म करते हैं ॥ ३९ ॥

पित्रोराज्ञापालयतिसेवनेचनिरालसः ।
छायेववर्ततेनित्यंयततेचागमायवै ॥ ४०॥

भाषार्थ–जो पुत्र माता–पिताकी आज्ञा पाले और सेवा आलस्य न करे और छाया के समान नित्य वर्तै और प्राप्तिके लिये नित्य यत्न करै ॥ ४० ॥

कुशलःसर्वविद्यासुसपुत्रःप्रीतिकारकः ।
दुःखदोविपरीतोयोदुर्गुणीधननाशकः ॥

भाषार्थ–सब विद्याओंमें कुशलहो वह पुत्र पिताकी प्रसन्नताका कारक होता है और जो पूर्वोक्तसे विपरीत दुर्गुणी–धन का नाशक हो वह पिताको दुःखदाई होता है ॥ ४१ ॥

पत्यौनित्यंचानुरक्ताकुशलागृहकर्माणि ॥
पुत्रप्रसूसुशीलायाप्रियापत्युःसुयौवना ४२

भाषार्थ–जो स्त्री पतिमें नित्य अनुरक्त–गृहके कार्य्यमें कुशल–पुत्रवती–सुशीला–

श्रेष्ठ यूति-हो वह स्त्री पतिको प्यारी होती है ॥ ४२ ॥

पुत्रापराधान्क्षमतेयापुत्रपरिपोषिणी ।
सामाताप्रीतिदानित्यंकुलटान्यातिदुःखदा

भाषार्थ-जो माता पुत्रके अपराधोंको सहकर पुत्रकी पालना करे वह माता नित्य प्रीतिको देती है और पूर्वोक्त अन्य जो व्यभिचारिणी वह दुःख देनेवाली होती है४३

विद्यागमार्थंपुत्रस्यवृत्त्यर्थंयततेचयः ।
पुत्रंसदासाधुशास्तिप्रीतिकृत्सपितानृणी ॥

भाषार्थ-जो पिता पुत्रको विद्यालाभके अथवा जीविकाके लिये यत्न करे और सदैव पुत्रको अच्छी शिक्षादे वह पिता प्रीति करनेवाला अनृणी (पुत्रके ऋणसे छूटा) होता है ॥ ४४ ॥

यःसाहाय्यंसदाकुर्यात्प्रतीपन्नवदेत्क्वचित् ।
सत्यंहितंवक्तियातिदत्तेगृह्णातिमित्रतां ४५

भाषार्थ-और जो सदैव सहाय करे कभीभी प्रतिकूल न कहे और सत्य हित वचनको कहे माने और दे वह मित्र होता है ॥ ४५ ॥

नीचस्यातिपरिचयोह्यन्यगेहेसदागतिः ।
जातौसंघेप्रातिकूल्यंमानहानिर्दरिद्रता ४६

भाषार्थ-नीचोंका अत्यन्त परिचय अन्यके घरमें सदैव गमन और जातिके समुदायमें विरोध और मानकी हानि-दरिद्रता ॥ ४६ ॥

व्याघ्राग्निसर्पहिंस्राणांनहिसंघर्षणंहितं ।
सेवितत्वात्तुराज्ञोनैतेमित्राःकस्यसंतिहि४७

भाषार्थ-सिंह-अग्नि-सर्प-हिंस्र-इनका संबंध हितकारी नही होता-और सेवा करनेसे राजाकेभी मित्र नहीं होते ॥ ४७ ॥

दौर्मनस्यंचसुहृदांसुप्राबल्यंरिपोःसदा ।
विद्वत्स्वपिचदारिद्र्यंदारिद्र्याद्बहुपत्यता ४८

भाषार्थ-मित्रोंका दुष्टमन होता है और शत्रुकी सदैव प्रबलता होती है-और विद्वानोंकी दरिद्रता और दरिद्रता अधिक संतान होती है ॥ ४८ ॥

धनीगुणीवैद्यनृपजलहीनेसदास्थितिः ।
दुःखायकन्यकाप्येकापित्रोरपिचयाचनं ॥

भाषार्थ-धनी-गुणी-वैद्य-राजा-जल इनसे रहित स्थानमें सदैव स्थिति (वास) और एकभी कन्या और माता पितासे भी याचना ये सब दुःख के लिये होते हैं ॥ ४९ ॥

सुरूपःसधनःस्वामीविद्वानपिबलाधिकः
नकामयेद्यथेष्टंयःस्त्रीणांनैवसुसौख्यकृत् ॥

भाषार्थ-जो मनुष्य श्रेष्ठ रूपवान् धनी-विद्वान् अधिक बलवान् होकर स्त्रियोंकी यथेष्ट कामना न करै वह सुखका भोगी नही होता ॥ ५० ॥

योयथेष्टंकामयतेस्त्रीतस्यवशगाभवेत् ।
संधारणाल्लालनाच्चयथायांतिवशंशिशुः५१

भाषार्थ-जो स्त्रीकी यथेष्ट कामना करता है उसके वशमें स्त्री होजाती है जैसे भली प्रकार रखने और लाडसे बालक वशमें हो जाता है ॥ ५१ ॥

कार्यंतत्साधकादींश्चतद्व्ययंसुविनिर्गमं ।
विचिंत्यकुरुतेज्ञानीनान्यथालघ्वपिक्वचित्

भाषार्थ-जिसके व्ययका भलीप्रकार जाने उस कामको साधक आदिके द्वारा करै-और ज्ञानी मनुष्य विचार कर कामको करता है और अन्यथा लघुकार्यको कभीभी नही करता ॥ ५२ ॥

नचव्ययाधिकंकार्यंकर्तुमीहेतपंडितः ।
लाभाधिक्यंयत्क्रियतेचेषद्वाव्यवसायिभिः

भाषार्थ–और अधिक व्यय न करै और पंडित मनुष्य कार्य करनेकी चेष्टा करै–और व्यवसायी (परिश्रमी) मनुष्य थोडे-भी उस कामको करते हैं जिसमें अधिक लाभ हो ॥ ५३ ॥

मूल्यंमानंचपण्यानांयाथात्म्यान्मृग्यतेसदा
तपःस्त्रीकृषिसेवासोपभोग्येनापिभक्षणे।५४

भाषार्थ–और पण्य (बेचने योग्य) वस्तुओंके मोल और मानको सदैव ढूंढे–तप और स्त्री भोगनेके लिये और कृषिकी सेवा भक्षणके लिये होती है ॥ ५४ ॥

हितःप्रतिनिधिर्नित्यंकार्येन्येतंनियोजयेत् ।
निर्जनत्वंमधुरभुक्जारश्चोरःसदेच्छति५५

भाषार्थ–प्रतिनिधि सदैव हित होता है–उसको अन्य काममें नियुक्त करै–मधुरका भोगी जार–चोर ये सदैव निर्जन देशको चाहते हैं ॥ ५५ ॥

साहाय्यंतुवलिद्विष्टोवेश्याधनिकमित्रतां ।
कुनृपश्चछलंनित्यंस्वामिद्रव्यंकुसेवकः५६।

भाषार्थ–और बलवान्का वैरी सहायता और वेश्या धनवान्की मित्रता–और खोटा राजा नित्य छल और खोटा सेवक स्वामीके द्रव्यकी सदैव इच्छा करते हैं ॥५६–

तत्वंतुज्ञानवान्दंभतपोग्निंदेवजीवकः ।
योग्येकांतंचकुलटाजारंवैद्यंचव्याधितः ५७

भाषार्थ–ज्ञानी मनुष्य–तत्वकी–दंभ–तपकी–देवजीवक–अग्निकी–योगी एकान्तकी–व्यभिचारिणी–जारकी रोगी–वैद्यकी–और ॥ ५७ ॥

घृतपण्योमहर्घत्वंदानशीलंतुयाचकः ।
रक्षितारंमृगयतेभीतःश्छिद्रंतुदुर्जनः ५८॥

भाषार्थ–जिसके माल पडाहो–वह महंगेकी याचक–दानीकी–भयभीत–रक्षा करनेवालेकी दुर्जन छिद्रकी–इच्छा करते हैं ॥ ५८ ॥

चंडायतेविवदतेस्वपित्यश्नातिमादकं ।
करोतिनिष्फलंकर्ममूर्खोवास्वेष्टनाशनं ५९

भाषार्थ–मूर्ख मनुष्य प्रचंड होजाय–विवाद करे–सोवे–मादक वस्तु भक्षण करे–वा निष्फल कर्म करे–अथवा अपने इष्टकी अनिष्ट करे ॥ ५९ ॥

तमोगुणाधिकंक्षात्रंब्राह्मंसत्वगुणाधिकं ।
अन्यद्रजोधिकंतेजस्तेपुसत्वाधिकंवरं ॥६०

भाषार्थ–क्षत्रियमें तमोगुण–ब्राह्मणमें सत्व गुण–इनसे अन्योंमे रजो गुण अधिक होता है–इन तीनोंमे जिसमें सत्वगुण अधिक हो वह श्रेष्ठ है ॥ ६० ॥

सर्वाधिकोब्राह्मणस्तुजायतेहिस्वकर्मणा ।
तत्तेजसोनुतेजांसिसंतिचक्षत्रियादिषु ॥६१

भाषार्थ–ब्राह्मण अपने कर्मसे सबसे अधिक होता है और क्षत्रिय आदिकोंमें उसके तेजसे न्यूनतेज होता है ॥ ६१ ॥

स्वधर्मस्थंब्राह्मणंहिदृष्ट्वाबिभ्यतिचेतरः ।
क्षत्रियादिर्नान्यथास्वधर्मंचातःसमाचरेत्॥

भाषार्थ–अपने धर्ममें टिके हुये ब्राह्मणको देखकर क्षत्रिय आदि डरते हैं अन्यथा नहीं इससे ब्राह्मण अपने धर्मका आचरण करे६२

नस्यात्स्वधर्महानिस्तुययावृत्त्याचसावरा ।
सदेशःप्रवरोयत्रकुटुंबभरणंभवेत् ॥६३॥

भाषार्थ–वही जीविका श्रेष्ठ होती है–जिसमें अपने धर्मकी हानि न हो–वही देश

उत्तम होता है जिसमें कुटुम्बका पालन होय ॥ ६३ ॥

कृषिस्तुचोत्तमावृत्तिःयासरिन्मातृकामता
मध्यमावैश्यवृत्तिश्चशूद्रवृत्तिस्तुचाधमा ॥

भाषार्थ-जो नदीके तीरपर कीजाय वह खेती उत्तम वृत्ति होती है-और वैश्यकी वृत्ति मध्यम और शूद्रवृत्ति अधम होती है॥६४॥

याञ्चाधमतरावृत्तिर्ह्युत्तमासातपस्विपु ।
क्वचित्सेवोत्तमावृत्तिर्धर्मशीलनृपस्यच ॥

भाषार्थ-याचनाकी वृत्ति अति अधम होती है-परन्तु तपस्वियोंमें वह याचना उत्तम वृत्ति होती है-और कहीं २ धर्मशील राजा की सेवाभी उत्तम होती है ॥ ६५ ॥

अध्वर्यवादिकंकर्मकृत्वायोगृह्यतेभृतिः ।
सर्किमहाधनायैववाणिज्यमलमेवकिं ॥ ६६

भाषार्थ-अध्वर्यु आदिके कर्मको करिके जो वेतनको ग्रहण करता है वह क्या महा धनी होता है और क्या वाणिज्यसे (लेन देन) से महाधन होता है अर्थात् नही होते"

राजसेवांविनाद्रव्यंविपुलंनैवजायते ।
राजसेवातिगहनाबुद्धिमद्भिर्विनानसा ॥

भाषार्थ-राजसेवाके विना विपुल धन नही होता और राजसेवा अत्यन्त कठिन होती है बुद्धिमान मनुष्योंके विना ॥ ६७ ॥

कर्तुंशक्याचेतरेणह्यसिधारेवसर्वदा ।
व्यालग्राहीयथाव्यालंमंत्रीमंत्रबलान्नृपं ॥

भाषार्थ-राजसेवाको कोई नही करसक्ता क्योंकि राजसेवा सदैव खड्गधाराके समान होती है सर्पका पकडनेवाला जैसे सर्पको इसी प्रकार मंत्री मंत्रके बलसे राजाको॥६८॥

करोत्यधीनंतुनृपेभयंबुद्धिमतांमहत् ।
ब्राह्मतेजोबुद्धिमत्सुक्षात्रंराज्ञिप्रतिष्ठितं ६९

भाषार्थ-आधीन करलेता है और बुद्धिमान मनुष्योंको राजाका बड़ा भय होता है बुद्धिमानोंमें ब्रह्मतेज और राजाओंमे क्षत्रियोंका तेज रहता है ॥ ६९ ॥

आरादेवसदाचास्तितिष्ठन्दूरेपिबुद्धिमान् ।
बुद्धिपाशैर्बंधयित्वासंताडयतिकर्षति ॥

भाषार्थ-दूर टिकाभी बुद्धिमान मनुष्य सदैव समीप रहता है बुद्धिकी पासोंमें बांध कर ताडता है और वसना करता है ॥७०॥

समीपस्थोपिदूरेस्तिह्यप्रत्यक्षसहायवान् ।
नानुवाकहताबुद्धिर्व्यवहारक्षमाभवेत् ॥७१

भाषार्थ-जिसको साहायताका प्रत्यक्ष (ज्ञान) न होय वह समीपमें टिकाभी दूर होता है और शास्त्रके ज्ञानसे हीनबुद्धि व्यवहार के योग्य नही होती ॥ ७१ ॥

अनुवाकहतायातुनसासर्वत्रगामिनी ।
आदौवरंनिर्धनत्वंधनिकत्वमनंतरं ॥७२॥

भाषार्थ-और जो बुद्धि शास्त्रके ज्ञानसे हीन है वह सवजगे नही पहुंचती पहिले निर्धन होना-और पीछेसे धनवान होना अच्छा होता है ॥ ७२ ॥

तथादौपादगमनंयानगत्वमनंतरं ।
सुखायकल्पतेनित्यंदुःखायविपरीतकं ७३

भाषार्थ-तिसी प्रकार पहिले पैरों चलना-और पीछेसे यान (सवारी) में चलना सदैव सुखदाई होता है और इससे विपरीत दुःख दायी होता है ॥ ७३ ॥

वरंहित्वनपत्यत्वंमृतापत्यत्वतःसदा ।
दुष्टयानात्पादगमोह्यौदास्न्यंविरोधतः ॥

भाषार्थ-सन्तानके मरनेसे सन्तानका न होना और दुष्टयानसे पैरों चलना और विरोध करनेसे उदासीन रहना सदैव अच्छा होता है ॥ ७४ ॥

वरंदेशाच्छादनतश्चर्मणापादगूहनं।
ज्ञानलवदौर्विदग्ध्यादज्ञतामवरामता ॥७५

भाषार्थ-और देशके आच्छादनसे चर्म्मसे पैरोंका ढकना अच्छा होता है-और ज्ञानके लेशसे दुर्विदग्ध (अल्पज्ञता) से मूर्खता अच्छी कही है ॥ ७५ ॥

परगृहनिवासात्स्वरण्येनिवसनंवरं।
सदुष्टभार्यागार्हस्थ्याद्भैक्ष्यंवामरणंवरं ७६॥

भाषार्थ-अन्यके घरमें निवाससे वनमें रहना और दुष्टभार्यावाले गृहस्थसे भिक्षा वा मरणा श्रेष्ठ होता है ॥ ७६ ॥

श्वमैथुनमृणंगर्भाधानंस्वामित्वमेवच।
खलसख्यमपथ्यंतुप्राक्सुखंदुःखनिर्गमं ॥

भाषार्थ-श्वा (कुत्ता) का मैथुन-ऋण-गर्भाधान-स्वामी होना-खलकी-मित्रता अपथ्य-इनमें पहिले सुख और पीछे निकासनेके समयमें दुःख होता है ॥ ७७ ॥

कुमंत्रिभिर्नृपोरोगीकुवैद्यैःकुनृपैःप्रजा।
कुसंतत्याकुलंचात्माकुबुध्याहीयतेऽनिशं॥

भाषार्थ-कुमंत्रियोंसे राजा कुवैद्योंसे रोगी-कुत्सित राजाओंसे प्रजा-खोटी सन्तानसे कुल-कुबुद्धिसे आत्मा-सदैव नष्ट होते हैं७८

हस्त्यश्ववृषबालस्त्रीशुकानांशिक्षकोयथा।
तथाभवंतितेनित्यंसंसर्गगुणधारकाः॥७९॥

भाषार्थ-हाथी-अश्व-बैल-बालक-स्त्री-शुक-(तोता) इनकी शिक्षा देने वाले जैसे हों वैसेही गुण हाथि आदिकोंमे संसर्गसेहो जाते हैं ॥ ७९ ॥

स्याज्जयोवसरोक्तयासद्वसनैःसुप्रसिद्धता।
सभायांविद्ययामानस्त्रितयंत्वधिकारतः ॥

भाषार्थ-समयके अनुसार वचनसे-जय-अच्छे वस्त्रोंसे-प्रसिद्धि-विद्यासे सभामें मान (बडाई) होता है और ये तीनों अधिकार मिलनेसे होते हैं ॥ ८० ॥

सुभार्यासुप्रचापत्यंसुविद्यासुधनंसुहृत्।
सुदासदास्यौसद्देहःसद्गेहमसुनृपःसदा ॥

भाषार्थ-श्रेष्ठ भार्या-अच्छी सन्तान-उत्तम विद्या-उत्तम धन-उत्तम मित्र-उत्तम दास और दासी-श्रेष्ठ देह-श्रेष्ठ घर-और उत्तम राजा-ये सदैव ॥ ८१ ॥

गृहीणांहिसुखायालंदशैतानिनचान्यथा।
वृद्धाःसुशीलाविश्वस्ताःसदाचारास्त्रियो नराः ॥ ८२ ॥

भाषार्थ-ये दस गृहस्थियों पूर्ण सुखके होते हैं और अन्यथा नहीं वृद्ध-सुशील-विश्वासके योग्य-सदाचारमें तत्पर-स्त्री-वा मनुष्य ॥ ८२ ॥

क्लीबावांतःपुरेयोज्यानयुवामित्रमप्युत।
कालंनियम्यकार्याणिह्याचरेन्नान्यथाक्वचित्

भाषार्थ-वा नपुंसक इनको रणवासमें नियत करे और युवा चाहे मित्रभी हो तथापि नियुक्त न करे-और समयके नियमसे कार्योंको करे अन्यथा कभी न करे ॥ ८३ ॥

गवादिष्वात्मवज्ज्ञानमात्मानंचार्थधर्मयोः।
नियुंजीतान्नसंसिध्यैमातरंशिक्षणेगुरुं ॥८४

भाषार्थ-जो मनुष्य आत्मज्ञानी हो उसको गौ आदिकोंकी सेवामें और आत्माको धन और धर्ममें और अन्नके पाकमे माताका और शिक्षा देनेमें गुरुको नियुक्त करे ८४॥

गच्छेदनियमेनैवसदैवांतःपुरेनरः ।
भार्यानपत्यासद्यानंभारवाहीसुरक्षकः॥८५

भाषार्थ–मनुष्य अपने रणवासमें सदैव विना नियम गमन करै–और जिसके सन्तान नहो ऐसी भार्या–अच्छा यान–और भारका लेजानेवाला अच्छा रक्षक ॥ ८५ ॥

परदुःखहराविद्यासेवकश्चनिरालसः ।
षडैतानिसुखायालंप्रवासेतुनृणांसदा ॥८६

भाषार्थ–और पर दुःख हरनेवाली विद्या–और निरालसी सेवक–ये छः परदेशमें मनुष्योंको सदैव सुखदाई होते हैं ॥ ८६ ॥

मार्गेनिरुध्यनस्थेयंसमर्थेनापिकर्हिचित् ।
सद्यानेनापिगच्छेन्नहट्टमार्गेनृपोपिच ॥८७॥

भाषार्थ–समर्थभी मनुष्य मार्गको रोककर कदाचित्भी खडा नहो और राजाभी हट्टमार्ग (वाजार) में अच्छे यानसे गमन न करे ८७

ससहायःसदाचस्यादध्वगोनान्यथाक्वचित्
समीपसन्मार्गजलोभयग्रामेध्वगोवसेत् ८८

भाषार्थ–और अध्वग (मार्ग चलनेवाला) सदैव सहायको रक्खे और अन्यथा कभी नरहै और ऐसे गाममें रात्रिको वसे जिसके समीप अच्छा मार्ग और जल दोनों अच्छे हो ॥ ८८ ॥

तथाविधेवाविरमेन्नमार्गेविपिनेपिन ।
अत्यटनंचानशनमतिमैथुनमेवच ॥८९॥

भाषार्थ–और ऐसेही ग्राममें विश्राम करे और मार्ग और वनमें विश्राम न करे अति भ्रमण–अति भोजन–अति मैथुन ॥ ८९ ॥

अत्यायासश्चसर्वेषांद्राग्जराकरणंभवेत् ।
सर्वविद्यास्वनभ्यासोजराकारीकलासुचं ॥

भाषार्थ–अति परिश्रम–ये चारों सव मनुष्योंका शीघ्र जरा करनेवाला होते हैं और संपूर्ण विद्याओंमे वा कलाओंमे अभ्यास न करना जरा करनेवाला होता है ॥ ९० ॥

दुर्गुणंतुगुणीकृत्यकीर्तयेत्सप्रियोभवेत् ।
गुणाधिक्यंकीर्तयतियःकिंस्यान्नपुनःसखा

भाषार्थ–जो मनुष्य दुर्गुणकोभी गुणरूपसे वर्णन करे वह प्यारा होता है जो अधिक गुणोंका कीर्तन करता है वह तो मित्र क्यों न होगा ॥ ९१ ॥

दुर्गुणंवक्तिसत्येनप्रियोपिसोप्रियोभवेत् ।
गुणंहिदुर्गुणीकृत्यवक्तियःस्यात्कथंप्रियः॥

भाषार्थ–जो प्यारा होकरभी दुर्गुणोंको स्पष्ट कहै वह शत्रु होता है–और जो गुणकोहि दुर्गुण कहकर वर्णन करे वह प्रिय कैसे होसक्ता है ॥ ९२ ॥

स्तुत्यावशंयांतिदेवाह्यंजसाकिंपुनर्नराः ।
प्रत्यक्षदुर्गुणान्नैववक्तुंशक्नोतिकोप्यतः ॥

भाषार्थ–स्तुति करनेसे देवताभी सुखसे वशमें हो जाते हैं नर क्यों न होंगे–इससे कोईभी मनुष्य दुर्गुणोंको प्रत्यक्ष नहीं कह सक्ता ॥ ९३ ॥

स्वदुर्गुणान्स्वयंवातोविमृशेल्लोकशास्त्रतः ।
स्वदुर्गुणश्रवणतोयस्तुष्यतिनक्रुध्यति ९४

भाषार्थ–अपने दुर्गुणोंको लोक वा शास्त्रसे स्वयं विचारे और अपने दुर्गुणोंके सुननेसे न प्रसन्नहो न क्रोध करे ॥ ९४ ॥

स्वोपहासप्रविज्ञानेयततेत्यजतिश्रुते ।
स्वगुणःश्रवणान्नित्यंसमस्तिष्ठतिनाधिकः॥

भाषार्थ–और अपने अधिक ज्ञानमेंभी उपहास समझकर यत्न करे और दुर्गुणोंको

सुनकर त्यागे और अपने गुणोंको सुनकर समरद्द अधिक नहो ॥ ९५ ॥

दुर्गुणानांखनिरहंगुणाधानंकथंमयि ।
मय्येवचाज्ञताप्यस्तिमन्यतेसोधिकोखिला
त् ॥ ९६ ॥

भाषार्थ–मैं दुर्गुणोंकी खानहुं मेरेमें गुण कैसे होसक्तेहैं और मेरेहीमें मूर्खता है इस प्रकार जो मानताहै वही सबसे अधिकहै ॥ ९६ ॥

ससाधुस्तस्यदेवाहिकलालेशंलभंतिन ।
सदाल्पमप्युपकृतंमहत्साधुपुजायते ॥९७

भाषार्थ–वही साधुहै जिसकी कलाके लेशको देवताभी प्राप्तहो नहीं और साधुओंमे अल्पभी उपकार सदैव महान् होताहै

मन्यतेसर्षपादल्पंमहच्चोपकृतंखलः ॥
तथानक्रीडयेत्कैश्चित्कलहायभवेद्यथा।९८

भाषार्थ–बडेभी उपकारको खल मनुष्य सरसोंसे अल्प मानताहै और इस प्रकारकी क्रीडा किसीके संगभी नकरे जिससे कलह हो ॥ ९८ ॥

विनोदेपिशपेन्नैवंतेभार्याकुलटास्तिकिं ।
अपशब्दाश्चनोवाच्यामित्रभावाच्चकेप्वपि ॥

भाषार्थ–विनोदमेभी ऐसा शाप नदे कि तेरी भार्य्या क्या व्यभिचारिणी है और मित्रभावसे किसीको अपशब्द न कहे ॥ ९९ ॥

गोप्यंनगोपयेन्मित्रेतद्गोप्यंनप्रकाशयेत् ।
वैरीभूतोपिपश्चात्प्राक्कथितंवापिसर्वदा ३००

भाषार्थ–और मित्रसे छिपाने योग्य वस्तुको न छिपावे और मित्रकी गोप्य वस्तुका प्रकाश न करे और पहिले कही हुई अयोग्यवातका वैरी होनेपर कभीभी प्रकाश न करे ॥ ३०० ॥

विज्ञातमपियद्दोष्टंचंदर्शयेत्तन्नकर्हिचित् ।
प्रतिकर्तुंयतेतैवगुप्तःकुर्यात्प्रतिक्रियां ॥१॥

भाषार्थ–और जो दुष्टता जानभी लीनहो उसको कदाचित् न दिखावे और प्रतिकार करने का यत्न करे जिसने अपनी रक्षा कीहो उसका प्रतिकार करे ॥ १ ॥

यथार्थमपिनब्रूयाद्बलवद्विपरीतकं ।
दृष्टंस्वदृष्टवत्कुर्यात्श्रुतमप्यश्रुतंकचित् २॥

भाषार्थ–और बलवान मनुष्यके यथार्थभी विपरीतको नकहे देखेकू न देखेके समान व सुनेकू न सुनेके समान करे ॥ २ ॥

मूकोंधोबधिरःखंजोस्वापत्कालेभवेन्नरः ।
अन्यथादुःखमाप्नोतिहीयतेव्यवहारतः ३॥

भाषार्थ–और मनुष्य अपनी आपत्तिके समयमें–मूक–अन्ध–बधिर– खंज होजाय अन्यथा दुःखको व्यवहारसे हानिको प्राप्त होताहै ॥ ३ ॥

वदेद्वृद्धानुकूलंयन्नवालसदृशंकचित् ।
परवेश्मगतस्तत्स्त्रीवीक्षणंनचकारयेत् ४ ॥

भाषार्थ–और वृद्धोंके अनुकूल वचनको कहे वालकोंके सदृश कभीभी न कहे और पराये घरमे जाकर उसकी स्त्रीको नदेखे ४॥

अधनादननुज्ञातान्नगृह्णीयात्तुस्वामिना ।
स्वशिशुंशिक्षयेदन्यशिशुंनाप्यपराधिनं ५॥

भाषार्थ–और निर्धन होकरभी स्वामीकी आज्ञाके विना कोईवस्तु ग्रहण न करे अपने बालकको शिक्षादे और अन्यके बालकका अपराध न करे ॥ ५ ॥

अधर्मनिरतोयस्तुनीतिहीनश्छलांतरः ।
संकर्षकोतिदंडीतद्ग्रामंत्यक्त्वान्यतोवसेत्

भाषार्थ-जो ग्राम अधर्ममें सदैव रत नीतसेही न मनमे छली लोभी अत्यन्त दण्ड वालाहो उस ग्रामको त्यागकर अन्यत्र-वसे ॥ ६ ॥

यथार्थमपिविज्ञातमुभयोर्वादिनोर्मतं ।
अनियुक्तोनवैब्रूयाद्धीनशत्रुर्भवेदतः ॥ ७॥

भाषार्थ-दोनों वादी प्रतिवादियोंके यथार्थ जाने हुयेभी मतको राजाज्ञाके विना नकहै इससे मनुष्यका शत्रु कोई नही होता॥ ७ ॥

गृहीत्वान्यविवादंतुविवदेन्नैवकेनचित् ।
मिलित्वासंघशोराजमंत्रंनैवतुतर्कयेत् ॥८॥

भाषार्थ-अन्यके विवादको ग्रहण करके किसीके संग विवाद नकरे और किसीसमुदायमे राजाके मंत्रकी तर्कना न करे ॥८ ॥

अज्ञातशास्त्रोनब्रूयाज्ज्योतिषंधर्मनिर्णयं ।
नीतिदंडंचिकित्सांचप्रायश्चित्तंक्रियाफलं९

भाषार्थ-विनाशास्त्रके जाने ज्योतिष-धर्मनिर्णय-नीति-दण्ड-चिकित्सा प्रायश्चित्त क्रियाका फल इनको नकहै ॥ ९ ॥

पारतंत्र्यात्परंदुःखंनस्वातंत्र्यात्परंसुखं ।
अप्रवासीगृहीनित्यंस्वतंत्रःसुखमेधते॥१०

भाषार्थ-पराधीनसे परेदुःख और स्वतन्त्रतासे परे सुख नहीं होता जो गृहस्थी अप्रवासी और स्वतन्त्र होताहै वह नित्य सुख पाताहै-१०

नूतनप्राक्तनानांचव्यवहारविदांधिया ।
प्रतिक्षणंचाभिनवोव्यवहारोभवेदतः ॥११

भाषार्थ-नवीन और पुराने व्यवहारोंके जो जानने वालेहैं उनको बुद्धिसें देखे क्योंकि व्यवहार क्षण२ में नवीन होताहै ॥११॥

वक्तुंनशक्यतेप्रायःप्रत्यक्षादनुमानतः
उपमानेनतज्ज्ञानंभवेदाप्तोपदेशतः ॥ १२

भाषार्थ-व्यवहारको प्रत्यक्षकोई कह नहीं सक्ता किन्तु प्रत्यक्ष अनुमान-उपमान-आप्तों (बडे) के उपदेशसे व्यवहारका ज्ञान होताहै ॥ १२ ॥

कथितंतुसमासेनसामान्यंनृपराष्ट्रयोः
नीतिशास्त्रंहितायालंयद्विशिष्टंनृपेस्मृतं ॥

भाषार्थ-राजा और प्रजाके हितार्थ यह सामान्य नीतिशास्त्र संक्षेपसे कहा जो राजाके लिये उत्तम कहाहै ॥ १३ ॥

तृतीयोऽध्यायः समाप्तः ॥ ३ ॥

श्रीः।

शुक्रनीति

(भाषाटीकासहिता)

अध्याय ४ था

अथमिश्रप्रकरणंप्रवक्ष्यामिसमासतः।
लक्षणंसुहृदादीनांसमासाच्छृणुताधुना ॥१

भाषार्थ-अब संक्षेपसे कहता हूं अब मित्र आदिके लक्षणको संक्षेपसे सुनों ॥१॥

मित्रःशत्रुश्चतुर्धास्यादुपकारापकारयोः।
कर्ताकारयिताचानुमंतायश्चसहायकः ॥२

भाषार्थ-मित्र और शत्रु उपकार और अपकारके करने कराने अनुमति देने सहायता करनेसे चार प्रकारके होतेहैं ॥ २ ॥

यस्यसुद्रवतेचित्तंपरदुःखेनसर्वदा।
इष्टार्थंयततेन्यस्याप्रेरितःसत्करोतियः ॥३

भाषार्थ-परायेदुःखसे जिसका चित्त सदैव पिघले और विना प्रेरणाके अन्यके इष्टार्थ यत्नकरे वा सत्कार जो करे ॥ ३ ॥

आत्मस्त्रीधनगुह्यानांशरणंसमयेसुहृत्।
प्रोक्तोत्तमोयमन्यश्चद्वित्र्येकपदमित्रकः ॥

भाषार्थ-वह मित्र जीव स्त्री धन गुप्त वस्तु इनके लिये समय पर शरण (रक्षक) और उत्तम कहाहै और अन्यतो एक दो तीन पैरे तक मित्र होताहै ॥ ४ ॥

अनन्यस्वत्वकामत्वमेकस्मिन्विषयेद्वयोः।
वैरिलक्षणमेतद्वान्येष्टनाशनकारिता ॥५॥

भाषार्थ-एक वस्तुके विषय दो मनुष्यों की ऐसी बुद्धिहो कि यह अन्यकी नहीं यह वा अन्यके इष्टको नष्ट करना वैरीका लक्षण होताहै ॥ ५ ॥

भ्रातृभावेपितुर्द्रव्यमखिलंममवैभवेत्।
नस्यादेतस्यवश्येयंमभेवस्यात्परस्परं ॥६

भाषार्थ-भाईके विद्यमान होनेपर सम्पूर्ण पिताका द्रव्य मुझे मिले और मैं इसके वसमे नहुं और ये मेरे वशमें रहे ऐसी परस्पर मति हो ॥ ६ ॥

भोक्ष्येखिलमहंचैतद्विनान्यस्तस्तुवैरिणौ।
द्वेष्टिद्विष्टउभौशत्रूस्तश्चैकतरसंज्ञकौ ॥७॥

भाषार्थ-इस सबको मैं भोगूंगा और अन्यनहीं वे परस्पर वैरी होतेहैं जो द्वेष करे और जिसके संग वैर करे वह दोनो एकसे शत्रु होतेहैं ॥ ७ ॥

शूरस्योत्थानशीलस्यवलनीतिमतःसदा
सर्वेमित्राणिगूढवैरानृपाःकालप्रतीक्षकाः ॥८

भाषार्थ-जो राजा सदैव शूरहै उत्थान शील (दूसरे पर चढना) है सेना और नीतिवाला है उसके सब मित्रभी राजा गूढ (छिपे) समयके देखने वाले वैरी होतेहैं८

भवंतीतिकिमाश्चर्यंराज्यलुब्धानतेहिकिं ।
नराज्ञोविद्यतेमित्रंराजामित्रंनकस्यवै ॥९॥

भाषार्थ-इसमें कुछ आश्चर्य नही क्या उनको राज्यका लोभ नहीं न राजाका कोई मित्रहै न राजा किसीका मित्रहै ॥ ९ ॥

प्रायःकृत्रिममित्रेतेभवतश्चपरस्परं ।
केचित्स्वभावतोमित्राःशत्रवःसंतिसर्वदा ॥

भाषार्थ-प्रायः वे दोनों परस्पर कृत्रिम (मतलवी) मित्र परस्पर होतेहैं और कोई मनुष्य सुभावसे मित्रभी सदैव शत्रु होतेहैं१०

मातामातृकुलंचैवपितातत्पितरौतथा ।
पितृपितृव्यात्मकन्यापत्नीतत्कुलमेवच ॥

भाषार्थ-माता-माताका कुल-पिता-पिताके माता पिता पिताके चाचा-अपनी कन्या-पत्नी-और पत्नीका कुल ॥ ११ ॥

पितृमातात्मभगिनीकन्यकासंततिश्चया ।
प्रजापालोगुरुश्चैवमित्राणिसहजानिहि ॥

भाषार्थ-पिता माताकी और अपनी भगनी -कन्याकी संतान -प्रजाना पालक-(राजा) गुरु-ये सब सदैव स्वाभाविक मित्र होतेहैं ॥ १२ ॥

विद्याशौर्यंचदाक्ष्यंचबलंधैर्यंचपंचमं ।
मित्राणिसहजान्याहुर्वर्तयंतिहितैर्बुधाः १३

भाषार्थ-विद्या-शूरवीरता-चतुराई-वल-और पांचवी धीरता येभी स्वाभाविक मित्र कहेहैं क्योंकि बुद्धिमान् मनुष्य इनसेही वर्ततेहैं ॥१३॥

स्वभावतोभवंत्येतेहिंस्रोदुर्वृत्तएवच ।
ऋणकारीपिताशत्रुर्माताखीव्यभिचारिणी॥

भाषार्थ-और हिंसक-दुराचारी ये स्वभावसे शत्रु-और ऋणका कर्ता पिता-और व्यभिचारिणी माता और पत्नी ये सब शत्रु-होतेहैं ॥ १४ ॥

आत्मपितृभ्रातरश्चतत्स्त्रीपुत्राश्चशत्रवः ।
स्नुषाश्वश्रूःसपत्नीचननांदायातरस्तथा ॥

भाषार्थ-अपने और पिताके भाई उनकी स्त्री और पुत्र-पुत्रकी वधू और सास और सपत्नी ननंद-और याता-(दुरानी-जिठानी)ये सब परस्पर शत्रु होतेहैं ॥१५॥

मूर्खःपुत्रःकुवैद्यश्चारक्षकस्तुपिताप्रभुः ।
चंडोभवेत्प्रजाशत्रुरदाताधनिकश्चयः ॥

भाषार्थ-मूर्खपुत्र-कुवैद्य-रक्षा नकरने वाला पिता-और राजा-और चंड(क्रोधी) और धनवान होकरके अदाता-ये सब प्रजाके शत्रु होतेहैं ॥ १६ ॥

आसमंताच्चतुर्दिक्षुसन्निकृष्टाश्चयेनृपाः ।
तत्परास्तत्परायेन्येक्रमाद्धीनबलारयः १७

भाषार्थ-और राजाके चारों दिशाओंमें चारों तरफ जो राजा होतेहैं और उनसे-परले और उनसेभी परले हीनबल शत्रु १७

शत्रुदासीनमित्राणिक्रमात्तेस्युस्तुप्राकृताः
अरिर्मित्रमुदासीनोनंतरस्तत्परस्परम्॥१८

भाषार्थ-ये सब क्रमसे-शत्रु-उदाशीन-मित्र-प्राकृतहो (स्वभाविक) होतेहैं-शत्रु-मित्र-उदाशीन और उसके अनन्तर (समीपवर्ती) येभी परस्पर ॥ १८ ॥

क्रमशोवातथाज्ञेयाश्चतुर्दिक्षुतथारयः।
स्वसमीपतराभृत्याह्यमात्याद्याश्चकीर्तिताः

भाषार्थ-क्रमसे चारों दिशाओंमें उसीप्रकार शत्रु जाननें और अपनें अत्यन्त समीपके भृत्य और मंत्री आदिभी शत्रु कहेहैं ॥ १९ ॥

बृंहयेत्कर्षयेन्मित्रंहीनाधिकबलंक्रमात्।
भेदनीयाःपिडनीयाःकर्षणीयाश्चशत्रवः ॥

भाषार्थ-हीनबल-मित्रको बढावें और अधिकबलकों घटावे अर्थात् उससे कुछ सहायता ले और शत्रुओंकी सदैव भेदन-पीडन कर्षण (हिंसा) करे ॥ २० ॥

विनाशनीयास्तेसर्वेसामादिभिरुपक्रमैः।
मित्रशत्रूयथायोग्यैःकुर्यात्स्ववशवर्तिनौ ॥

भाषार्थ-और साम आदि उपायोंसे उन सबका विनाश करें मित्र और शत्रुकोंभी यथोचित उपायोंसे अपने वशमें करे २१

उपायेनयथाव्यालोगजःसिंहोपिसाध्यते।
भूमिष्ठाःस्वर्गमायांतिवज्रंभिंदत्युपायतः ॥

भाषार्थ-जैसे उपायसें सर्प-हाथी-सिंहकोभी साधलेतेहैं और पृथ्वीके वसनेवाले स्वर्गमें उपायसे जातेहैं और उपायसे ही वज्रको वींधतेहैं ॥ २२ ॥

सुहृत्संबंधिस्त्रीपुत्रप्रजाशत्रुषुतेपृथक्।
सामदानभेददंडाश्चिंतनीयाःस्वयुक्तिभिः

भाषार्थ-मित्र-सम्बन्धी-स्त्री-पुत्र-शत्रु-इन सबमे पृथक् २ सामदान-भेद-दण्ड-इनकी चिन्ता (विचार) अपनी युक्तियोंसे करे ॥ २३ ॥

एकशीलवयाविद्याजातिव्यसनवृत्ततः।
साहचर्यान्भवेन्मित्रमेभिर्यदितुसार्जवैः।२४

भाषार्थ-एक स्वभाव-एक अवस्था-एक विद्या- एक जाति-एक व्यसन-एक जीविका-एकवास-यदि ये सब नम्रता सहित हों तो इनसे मित्रता होजातीहै ॥ २४ ॥

त्वत्समस्तुसखानास्तिमित्रेसाममिमंस्मृतं।
ममसर्वंतवैवास्तिदानंमित्रेसजीवितं ॥२५।

भाषार्थ-मित्रके विषय साम यह कहाहै कि तेरी बराबर कोई मित्रनहीं जो मेरे पास है वह सब तेराहै और दान जीवितकाभी मित्रके लिये कहाहै ॥ २५ ॥

मित्रेन्यमित्रसुगुणान्कीर्तयेद्भेदनंहितत्।
मित्रेदंडोनाकरिष्येमैत्रीमेवंविधोसिचेत्२६

भाषार्थ-और भेदन यह होताहै कि मित्रके आगे दूसरे मित्रके गुणोंका कीर्तन करना और मित्रके लिये दण्ड यह होताहै कि यदि तू ऐसाहै तो तेरे संग मित्रता न करूंगा २६

योनसंयोजयेदिष्टमन्यानिष्टमुपेक्षते ।
उदासीनःसनकथंभवेच्छत्रुःसुसांधिकः२७

भाषार्थ-जो मनुष्य इष्टका संय्योगन करे और अन्यके अनिष्टकी उपेक्षा करे वह उदासीनभी संधी (मेल) करनेके समय शत्रु क्यों नहीं होता ॥ २७ ॥

परस्परमनिष्टंनचिंतनीयंत्वयामया।
सुसहाय्यंहिकर्तव्यंशत्रौसामप्रकीर्तितं॥२८

भाषार्थ-मुझे और तुझे परस्पर अनिष्टकी चिन्ता न करनीचाहिये-किन्तु परस्पर सहायता करनी यह शत्रुके लिये साम कहाहै ॥ २८ ॥

करैर्वाग्रमितैर्ग्रामैर्वत्सरेप्रबलंरिपुं।
तोषयेत्तद्धिदानंस्याद्यथायोग्येषुशत्रुषु।२९

भाषार्थ-कर देने वा प्रमित (दो चार) ग्रामोंसे वर्ष भरके लिये प्रबल शत्रुको प्रसन्न करदे यह यथायोग्य शत्रुओंके लिये दान होता है ॥ २९ ॥

शत्रुसाधकहीनत्वकरणात्प्रबलाश्रयात् ।
तद्धीनतोज्जीवनाच्चशत्रुभेदनमुच्यते ३०॥

भाषार्थ-और शत्रुको साधकसे हीन करना प्रबलका आश्रयलेना उससे हीन हो कर जीना यह शत्रुके लिये भेदन कहाहै ३०

दस्युभिःपीडनंशत्रोःकर्षणंधनधान्यतः ।
तच्छिद्रदर्शनादुग्रबलैर्नीत्याप्रभीषणं ॥ ३१

भाषार्थ-चोरोंसे शत्रुके पीडा देना और धनधान्यकी हिंसा करनी उसके छिद्रोंको देखना उग्रबल नीतिसे भय दिखाना और३१

प्राप्तयुद्धान्निवर्तित्वैस्त्रासनंदंडउच्यते ।
क्रियाभेदादुपायाहिभिद्यंतेचयथार्हतः ३२

भाषार्थ-प्राप्तहुये युद्धमें न हटकर त्रास देना यह शत्रुके लिये दण्ड कहा है-और क्रियाके भेदसे उपायोंकाभी यथा योग्य भेद हो जाता है ॥ ३२ ॥

सर्वोपायैस्तथाकुर्यान्नीतिज्ञःपृथिवीपतिः ।
यथास्वाभ्यधिकानस्युर्मित्रोदासीनशत्रवः

भाषार्थ-नीतिका ज्ञाता राजा तिस प्रकार सम्पूर्ण उपायोंसे आचरण करे जैसे मित्र उदासीन-शत्रु-ये तीनो अपनेसे अधिक नहो॥

सामैवप्रथमंश्रेष्ठंदानंतुतदनंतरं ।
सर्वदाभेदनंशत्रोर्दंडनंप्राणसंशये ॥ ३४ ॥

भाषार्थ-शत्रुके लिये सबसे पहले साम श्रेष्ठ है-उसके पीछे दान-और भेदनतो सदैव श्रेष्ठ है और प्राणके संशयमे दण्ड कहा है-

प्रबलेरौसामदानेःसामभेदौधिकेस्मृतौ ।
भेददंडौसमेकार्योदंडःपूज्यःप्रहीनके॥ ३५

भाषार्थ-प्रबल शत्रुके लिये साम दान-अधिकके लिये-साम भेद-कहे हैं-समशत्रुके लिये भेद दण्ड करने और हीनके लिये दण्ड श्रेष्ठ है ॥ ३५ ॥

मित्रेचसामदानेस्तोनकदाभेददंडने ।
रिपोःप्रजानांसंभेदःपीडनंस्वजयायवै॥ ३६

भाषार्थ-मित्रके लिये सामदान-होते हैं भेद और दण्ड कभीनहीं शत्रु और प्रजाका भेद-और पीडा अपनी जयके लिये होते हैं

रिपुप्रपीडितानांचसाम्नादानेनसंग्रहः ।
गुणवतांचदुष्टानांहितंनिर्वासनंसदा॥ ३७॥

भाषार्थ-शत्रुओंने दीहै पीडा जिनको ऐसे गुणवानोंका साम और दण्डसे संग्रहकरे और दुष्टोंका सदैव निर्वासन (निकासना) करे ॥ ३७ ॥

स्वप्रजानांनभेदेननैवदंडेनपालनं ।
कुर्वीतसामदानाभ्यांसर्वदायत्नमास्थितः॥

भाषार्थ-और अपनी प्रजाओंका भेद और दण्डसे पालन न करे किन्तु यत्नमे टिकाहुवा राजा साम और दानसे पालन करे ३८॥

स्वप्रजादंडभेदैश्चभवेद्राज्यविनाशनं ।
हीनाधिकायथानस्युःसदारक्ष्यास्तथाप्रजाः

भाषार्थ-अपनी प्रजाके दण्ड और भेदसे राज्यका विनाश होता है-इससे राजा प्रजाकी इस प्रकार रक्षा करे जैसे प्रजाहीन और अधिक न हो ॥ ३९ ॥

निवृत्तिरसदाचाराद्दमनंदंडतश्चतत् ।
येनसंदम्यतेजंतुरुपायोदंडएवसः ॥४०॥

भाषार्थ–असत् आचरणसे जो निवृत्ति उसको दण्डसे दमन कहते हैं जिससे प्राणी दमनको प्राप्त होइ वह उपायभी दण्ड होता है ॥ ४० ॥

सउपायोनृपाधीनःससर्वेषांप्रभुर्यतः ।
निर्भर्त्सनंचापमानोनाशनंबंधनंतथा ४१॥

ताडनंद्रव्यहरणंपुरान्निर्वासनांकने ।
व्यस्तक्षौरमसद्यानमंगछेदोवधस्तथा॥४२

भाषार्थ–वह उपाय राजाके आधीन है क्यों-कि वह सबका प्रभु है निर्भर्त्सन (झिडकना) द्रव्यका हरना पुरसे निकासना–अंकित करना–उलटा क्षौर कराना असतियान (गधा आदि) परचढ़ाना अंगका छेदन और वध ॥ ४१ ॥ ४२ ॥

युद्धमेतेह्युपायास्युर्दंडस्यैवप्रभेदकाः ।
जायंतेधर्मनिरताःप्रजादंडभयेनच ॥४३॥

करोत्याधर्षणंनैवतथाचासत्यभाषणं ।
क्रूराश्चमार्दवंयांतिदुष्टादौष्ट्यंत्यजंतिच ॥

भाषार्थ–और युद्ध ये सब उपाय दण्डके ही भेद कहे हैं क्योंकि दण्डके भयसे प्रजा धर्ममें निरत होती है दण्डके भयसे आधर्षण (जबराई) असत्य भाषण कोई नहीं करता और क्रूर कोमल हो जाते हैंऔर दुष्ट मनुष्य दुष्टताको त्याग देते हैं ४३॥४४

पशवोपिवशंयांतिविद्रवंतिचदस्यवः ।
पिशुनामूकतांयांतिभयंयांत्याततायिनः ॥

भाषार्थ–पशुभी वशमें होते हैं चोर भाग जाते हैं पिशुन (चुगल खोर) मूक होते हैं आतताई (हिंसक) डर जाते हैं ॥ ४५ ॥

करदाश्चभवंत्यन्येवित्रासंयांतिचापरे ।
अतोदंडधरोनित्यंस्यान्नृपोधर्मरक्षणे ॥ ४६

भाषार्थ–कोई दण्डके मारे करदेने लगते हैं और कोई त्रासको प्राप्त हो जाते हैं इससे राजा सदैव धर्म रक्षाके लिये दण्डधारी हो ॥ ४६ ॥

गुरोरप्यवलिप्तस्यकार्याकार्यमजानतः ।
उत्पथप्रतिपन्नस्यकार्यंभवतिशासनं॥४७॥

भाषार्थ–जो गुरुभी अभिमानी हो कार्य और अकार्यको न जाने और कुमार्गमें चले तो राजा उसकोभी शिक्षा दे ॥ ४७ ॥

राज्ञांसदंडनीत्याहिसर्वेसिध्यंत्युपक्रमाः ।
दंडएवाहिधर्माणांशरणंपरमंस्मृतं ॥ ४८॥

भाषार्थ–राजाकी दण्ड सहित नीतिसे सब उपक्रम (आरंभ) सिद्ध होते हैं–और दण्डही सम्पूर्ण धर्मोंका उत्तम शरण कहा है ॥ ४८ ॥

अहिंसैवासाधुहिंसापशुवच्छ्रुतिचोदनात् ।
दंड्यस्यादंडनानित्यमदंड्यस्यचदंडनात्॥

भाषार्थ–दुर्जनोंकी हिंसा–वेदकी आज्ञाके अनुसार पशुके समान अहिंसा होती है–दंड देने योग्यको दण्ड न देना–दण्ड देने अयोग्यको दण्ड देना ॥ ४९ ॥

अतिदंडाच्चगुणिभिस्त्यज्यतेपातकीभवेत् ।
अल्पदानान्महत्पुण्यंदंडप्रणयनात्फलं॥५०

भाषार्थ–अथवा अत्यन्त दण्ड देना इनसे गुणी लोग राजाको त्याग देते हैं और वह राजा पातकी होता है–अल्पदानसे बडा पुण्य जैसे होता है तैसे राजाको दण्ड देनेसे फल मिलता है ॥ ५० ॥

शास्त्रेपूक्तंमुनिवरैःप्रवृत्त्यर्थंभयायच ।
अश्वमेधादिभिःपुण्यंतत्किंस्यात्स्तोत्रपाठतः ॥ ५१ ॥

भाषार्थ-शास्त्रोंके विषय श्रेष्ठ मुनियोंने प्रवृत्ति और भयके लिये जो पुण्य अश्वमेधादि यज्ञोंका कहा है वह क्या स्तोत्रके पाठसे होता है अर्थात् नहीं होता ॥ ५१ ॥

क्षमयायत्तुपुण्यस्यात्तत्किंदंडनिपातनात् ।
स्वप्रजादंडनाच्छ्रेयःकथंराज्ञोभविष्यति५२

भाषार्थ-क्षमासे जो पुण्य होता है वह क्या दण्ड देनेसे हो सक्ता है अपनी प्रजाके दण्डसे राजाका कल्याण कैसे होगा ॥५२॥

तद्दंडाज्जायतेकीर्तिधनपुण्यविनाशनं ।
नृपस्यधर्मपूर्णत्वाद्दंडःकृतयुगेनहि ॥५३॥

भाषार्थ-प्रजाके दण्डसे-कीर्ति-धन-पुण्यका नाश होता है-और राजाको धर्म्म पूर्ण होनेसे सतयुगमें दण्ड नहीं ॥ ५३ ॥

त्रेतायुगेपूर्णदंडःपादाधर्मोप्रजायतः ।
द्वापरेचार्धधर्मत्वात्त्रिपाद्दंडोविधीयते॥५४

भाषार्थ-त्रेता युगमें पूर्ण दण्ड इसलिये थाकि प्रजामें चौथाई अधर्म रहा और द्वापरमें आधा धर्म रहनेसे त्रिपात्-(३ हिस्से) दण्ड देना कहा है ॥ ५४ ॥

प्रजानिस्वाराजदौष्ट्याद्दंडार्धंतुकलौयुगे ।
युगप्रवर्तकोराजाधर्माधर्मप्रशिक्षणात् ॥

भाषार्थ-राजाकी दुष्टतासे कलियुगमें प्रजा निर्धन होजाती है इसलिये आधा दण्ड कहा है और धर्म और अधर्म की शिक्षासे युगोंकी प्रवृत्ति राजासे होतीहै५५॥

युगानांनप्रजानांनदोषःकिंतुनृपस्यहि ।
प्रसन्नोयेननृपतिस्तदाचरतिवैजनः ॥५६॥

भाषार्थ-न युगोंका न प्रजाओंका दोष है किन्तु राजाका दोष है क्योंकि मनुष्य वही आचरण करता है जिससे राजा प्रसन्न रहे ॥ ५६ ॥

लोभाद्भयाच्चकिंतेनशिक्षितंनाचरेत्कथं ।
सुपुण्योयत्रनृपतिर्धर्मिष्ठास्तत्रहिप्रजाः ॥

भाषार्थ-जो राजाने लोभ वा भयसे शिक्षा की है उसको प्रजा कैसे नकरेगी जहां राजा पुण्यवान् होता है वहां प्रजाभी धर्मिष्ठ होती है ॥ ५७ ॥

महापापीयत्रराजातत्राधर्मपरोजनः ।
नकालवर्षीपर्जन्यस्तत्रभूर्नमहाफला ॥५८

भाषार्थ-जहां राजा महापापी होता है वहां मनुष्य अधर्ममें तत्पर होजाते हैं न समय पर मेघ वर्षता है-न भूमिमें बहुत फल होते हैं ॥ ५८ ॥

जायतेराष्ट्रह्रासश्चशत्रुवृद्धिर्धनक्षयः ।
सुराप्यपिवरोराजानस्त्रैणोनातिकोपवान् ॥

भाषार्थ-देशकी हानि-शत्रुकी वृद्धि-धनका नाश-होता है मदिराका पीनेवाला भी राजा अच्छा परन्तु व्यभिचारी अत्यन्त क्रोधी अच्छा नही ॥ ५९ ॥

लोकाश्चंडस्तापयातिस्त्रैणोवर्णान्विलुंपति ।
मद्यप्येकश्चभ्रष्टःस्याद्बुध्याचव्यवहारतः ॥

भाषार्थ-क्रोधी राजा लोकोंको दुःख देता है व्यभिचारी वर्णोंका नाश करता है मदिरा पीने वाला तो बुद्धि और व्यवहारसे एकही भ्रष्ट होता है ॥ ६० ॥

कामक्रोधौमद्यतमौसर्वमद्याधिकौयतः
धनप्राणहरोराजाप्रजायांश्चातिलोभतः६१

भाषार्थ-काम-और क्रोध-ये दोनों बडे भारी मद हैं और सब मद्योंसे अधिक हैं और राजा अत्यन्त लोभसे प्रजाके धन और प्राणोंको हरता है ॥ ६१ ॥

तस्मादेतत्रयंत्यक्त्वादंडधारीभवेन्नृपः
अंतर्मृदुर्वहिःक्रूरोभूत्वास्वांदंडयेत्प्रजां ॥

भाषार्थ–इससे राजा इन तीनोंको छोड कर दण्डधारी हो भीतर कोमल और वाहरसें क्रूर अपनी प्रजाको दण्ड दे ॥ ६२ ॥

अत्युग्रंदंडकल्पःस्यात्स्वभावाहितकारिणः
राष्ट्रंकर्णेजपैर्नित्यंहन्यतेचस्वभावतः ६३॥

भाषार्थ–सुभावसे जो अपने अहितकारी हैं उनको अतिउग्र दंड दे जो स्वभावसे सूचक (चुगल) हैं उनसे देश नष्ट होताहै६३

अतोनृपःसूचितोपिविमृशेत्कार्य्यमादरात् ।
आत्मनश्चप्रजायाश्चदोषदर्श्युत्तमोनृपः ॥

भाषार्थ–इससे राजा सूचना करने परभी कार्य्यको आदरसे विचारे जो राजा अपना और प्रजाका दोष देखता है वह उत्तम होता है ॥ ६४ ॥

विनियच्छातिचात्मानमादौभृत्यांस्ततः
प्रजाः । कायिकोवाचिकोमानसिकःसांस
र्गिकस्तथा ॥ ६५ ॥

भाषार्थ–राजा प्रथम अपनी आत्माका फिर भृत्योंका फिर प्रजाका नमन करे और देहसे वाणीसे मनसे और संगसे ॥ ६५ ॥

चतुर्विधोपराधःस्वबुद्धचबुद्धिकृतोद्विधा ।
पुनर्द्विधाकारितश्चतथाज्ञेयोनुमोदितः॥ ६६

भाषार्थ–यह चार प्रकारका अपराध १ जानकर किया और२विना जाने किया दोप्रकारका कहाहै फिर वो दोप्रकारका होता-है एक कराया और दूसरा अनुमोदन किया ॥ ६६ ॥

सकृदसकृदभ्यस्तःस्वभावैःसचतुर्विधः ।
नेत्रवक्त्रविकाराद्यैर्भावैर्मानसिकंतथा ॥

भाषार्थ–फिर वह चार प्रकारका होताहै कि एकवार किया वारंवार किया अभ्यास किया और सुभावसे किया–नेत्र–मुखके विकार आदिभावोंसे मानसिक अपराधको ॥

क्रिययाकायिकंवीक्ष्यवाचिकंक्रूरशब्दतः ।
सांसर्गिकंसाहचर्य्यज्ज्ञात्वागौरवलाघवं ६८॥

भाषार्थ–और देहके अपराधको करनेसे और वाणीके अपराधको कठोर शब्दसे सांसर्गिक अपराधको साहचर्यसे देखकर लाघव और गौरवको जानकर ॥ ६८ ॥

उत्पन्नोत्पत्स्यमानानांकार्याणांदंडमावहेत्।
प्रथमंसाहसंकुर्वन्नुत्तमोदंडमर्हति ॥ ६९ ॥

भाषार्थ–पैदाहुये और पैदाहोने वाले कार्य्योंका दंडदे जो उत्तम पुरुष पहिलेही साहस करे वह उत्तमदण्डके योग्य होता-है ॥ ६९ ॥

न्याय्यंकिमितिसंपृच्छेत्त्वंवेयमसत्कृतिं ।
उपहासंयथोक्तंचद्विगुणंत्रिगुणंततः॥७०॥

भाषार्थ–क्या न्यायहै यह पूछे और यह असत्कर्म तैने कियाहै–फिर दोवार वा तीन-वार यथोक्त उपहासको पूछे ॥ ७० ॥

मध्यमंसाहसंकुर्वन्नुत्तमोदंडमर्हति ।
धिग्दंडंप्रथमंचाद्यसाहसंतदनंतरं ॥ ७१॥

भाषार्थ–यदि उत्तम पुरुष मध्यम साहस करे तो वह दण्डके योग्य होताहै उसको पहिले धिक्कारका दंड और पीछे साहसका दंड होताहै ॥ ७१ ॥

यथोक्तंतुतथासम्यग्यथावृद्धिह्यनंतरं ।
उत्तमंसाहसंकुर्वन्नुत्तमोदंडमर्हति ॥ ७२ ॥

भाषार्थ–प्रथम भली प्रकार यथोक्त दंड और पीछेसे दण्डकी वृद्धि होतीहै यादि उत्तम पुरुष उत्तम साहसकरे तो वह दंडके योग्य होताहै ॥ ७२ ॥

प्रथमंसाहसंचादौमध्यमंतदनंतरं ।
यथोक्तंद्विगुणंपश्चादवरोधंततःपरं ॥ ७३॥

भाषार्थ-और उसको पहिले साहसका दण्ड फिर मध्यम साहसका फिर शास्त्रोक्तसे दूना दण्ड फिर अवरोध (कैद) होताहै७३

बुद्धिपूर्वंनृघातेनविनैतद्दंडकल्पनं ।
उत्तमत्वंमध्यमत्वंनीचत्वंचात्रकीर्त्यते ७४

भाषार्थ-और जो जानकर मनुष्यको मारे उसको बिना विचारे दण्डकी कल्पना करे-यहांपर उत्तम मध्यम नीच दण्डको कहतेहैं॥७४ ॥

गुणेनैवतुमुख्यंहिकुलेनापिधनेनच ।
प्रथमंसाहसंकुर्वन्मध्यमोदंडमर्हति ॥७५॥

भाषार्थ-गुण -कुल वा धनसे मुख्यता होतीहै-मध्यम पुरुष प्रथम साहसको करे तो दण्डके योग्य होताहै ॥ ७५ ॥

धिग्दंडमर्धदंडंचपूर्णदंडमनुक्रमात् ।
द्विगुणंत्रिगुणंपश्चात्संरोधंनीचकर्मच ७६॥

भाषार्थ-उसको क्रमसे धिक्कारका दंड आधादण्ड पूर्णदण्ड दूना वा तिगुनादण्ड होताहै और पीछेसे संरोध (कैद) वा नीचकर्म करनेका दण्ड देना ॥ ७६ ॥

मध्यमं साहसंकुर्वन्मध्यमोदंडमर्हति ।
अर्धंयथोक्तंद्विगुणंत्रिगुणंबंधनंततः ॥७७॥

भाषार्थ-मध्यम पुरुष मध्यम साहसको करे तो दंण्डयोग्य होताहै उसको आधा दण्ड वा शास्त्रोक्तसे दुगना तिगुना दण्ड होताहै और फिर बंधन (कैद) ॥ ७७ ॥

मध्यमंसाहसंकुर्वन्नधमोदंडमर्हति ।
पूर्वंसाहसमादौतुयथोक्तंद्विगुणंततः ७८ ॥

भाषार्थ-नीच जो मध्यम साहस करे तो दण्डके योग्य होताहै उसको पहिले प्रथम साहसका दण्ड पीछे शास्त्रका दण्ड होताहै॥ ७८ ॥

उत्तमंसाहसंकुर्वन्मध्यमोदंडमर्हति ।
मध्यमंसाहसंचादौयथोक्तंतदनंतरं ॥७९॥

भाषार्थ-यदि मध्यम पुरुष उत्तम साहस करै तो दण्डके योग्य होताहै-उसको पहिले मध्यम साहका दण्ड पीछे शास्त्रोक्त होताहै ॥ ७९ ॥

द्विगुणंत्रिगुणंपश्चाद्यावज्जीवंतुबंधनं ।
प्रथमंसाहसंकुर्वन्नधमोदंडमर्हति ॥ ८० ॥

भाषार्थ-फिर शास्त्रोक्तसे दूना वा तिगुना दण्ड फिर जन्मभर बंधन होताहै यदि अधम मनुष्य प्रथम साहस करे तो दण्डके योग्य होताहै ॥ ८० ॥

ततःसंरोधनंनित्यंमार्गसंस्करणार्थकं ।
उत्तमंसाहसंकुर्वन्नधमोदंडमर्हति ॥ ८१ ॥

भाषार्थ-फिर संरोध और नित्य मार्गका संस्कार (सडककी सफाई) अधम मनुष्य उत्तम साहसकरे तो वह दण्डके योग्य होताहै ॥ ८१ ॥

मध्यमंसाहसंचादौयथोक्तंद्विगुणंततः ।
यावज्जीवंबंधनंचनीचकर्मैवकेवलं ॥ ८२॥

भाषार्थ-उसको प्रथम मध्यम साहसका दण्ड पीछे शास्त्रोक्त और फिर शास्त्रोक्त दूना फिर जन्मभर बंधन फिर केवल नीचकर्म कराना कहाहै ॥ ८२ ॥

हरेत्पादंधनात्तस्ययःकुर्याद्धनगर्वतः ।
पूर्वंततोर्धमखिलंयावज्जीवंतुबंधनं ॥८३॥

भाषार्थ-जो मनुष्य धनके अभिमानसे पहला अपराध करे उसके चौथाई धनको

राजा हरले फिर आधे धनको फिर सब धनको हरे फिर जन्मभर बंधन करे ॥ ८३ ॥

सहायगौरवाद्विद्यामदाच्चबलदर्पतः ।
पापंकरोतियस्तंतुबंधयेत्ताडयेत्सदा ८४ ॥

भाषार्थ–जो मनुष्य किसीको सहायताके घमण्डसे वा विद्या और बलके मदसे पापकरे उसका बंधनकरे वा सदैव ताडनादे ८४

भार्यापुत्रश्चभगिनीशिष्योदासःस्नुषाऽनुजः
कृतापराधास्ताड्यास्तेतनुरज्जुसुवेणुभिः ॥

भाषार्थ–भार्य्या–पुत्र–बहन–शिष्य–दास–पुत्रवधू–छोटाभाई ये अपराध करें तो छोटी रस्सी और वांससे ताडनादे ॥ ८५ ॥

पृष्ठतस्तुशरीरस्यनोत्तमांगेकथंचन ।
अतोन्यथातुप्रहरंश्चोरवद्दंडमर्हति ॥ ८६ ॥

भाषार्थ–और वेभी देहकी पीठपर मारे उत्तम अंगमें कभी नमारे इससे अन्यथा जो जो प्रहार करताहै वह चोरके दण्डका भागी होता है ॥ ८६ ॥

नीचकर्मकरंकुर्याद्बंधयित्वातुपापिनं ।
मासमात्रंत्रिमासंवाषण्मासंवापिवत्सरं ८७

भाषार्थ–पापी मनुष्यसे बांधकर एकमास तीनमास छः मास वा वरषभर नीचकर्म करावे ॥ ८७ ॥

यावज्जीवंतुवाकश्चिन्नकश्चिद्वधमर्हति ।
ननिहन्याच्चभूतानित्विातिजागतींवैं श्रुतिः ॥

भाषार्थ–अथवा जीवन पर्य्यन्त–कोईभी जीव वधके योग्य नहीं होता क्योंकि श्रुतिमें यह लिखाहै कि प्राणियोंकी हत्या न करे८८

तस्मात्सर्वप्रयत्नेनवधदंडंत्यजेन्नृपः ।
अवरोधाद्बंधनेनताडनेनचकर्षयेत् ॥८९॥

भाषार्थ–तिससे सम्पूर्ण यत्नसे वधके दण्डको राजा त्यागदे अवरोध–बंधन–ताडनासेही दण्डदे ॥ ८९ ॥

लोभान्नकर्षयेद्राजाधनदंडेनवैप्रजां ।
नासहायास्तुपित्राद्यादंड्यास्युरपराधिनः

भाषार्थ–और राजा लोभसे धनका दण्ड देकर प्रजाको दुःखी नकरे अपराध करनेवाले पिता आदिकोंका यदि कोई सहायक नहीं तो दण्ड नदे ॥ ९० ॥

क्षमाशीलस्यवैराज्ञोदंडग्रहणमीदृशं ।
नापराधंतुक्षमतेप्रचंडोधनहारकः ॥९१॥

भाषार्थ–जो राजा क्षमाशील है उसका दण्ड ऐसा (पूर्वोक्त) होता है और जब राजा प्रचण्ड और धनका हरनेवाला और अपराधकी क्षमा नहीं करता ॥ ९१ ॥

नृपोयदातदालोकःक्षुभ्यतेभिद्यतेपरैः ।
अतःसुभागदंडीस्यात्क्षमावान्रंजकोनृपः ॥

भाषार्थ–तब सम्पूर्ण जगत चलायमान और दूसरोंसे पीडित होताहै इससे राजा सुभाग (थोडा) दण्ड दे–और क्षमासे प्रजाको प्रसन्न रक्खे ॥ ९२ ॥

मद्यपःकितवस्तेनोजारश्चंडश्चहिंसकः ।
त्यक्तवर्णाश्रमाचारोनास्तिकःशठएवच ॥

भाषार्थ–राजा इतने मनुष्योंको राज्यसे निकास दे कि मदिरा पीनेवाला–धूर्त–चौर–जार–क्रोधी–हिंसक–वर्ण और आश्रमके आचरणका त्यागी–नास्तिक और शठ ९३॥

मिथ्याभिशापकःकर्णेजपार्यदेवदूषकौ ।
असत्यवाक्न्यासहारीतथावृत्तिविघातकः॥

भाषार्थ–मिथ्या दुःख दाई–सूचक–सज्जन और देवताओंके दूषक–झूठा–न्यास–

(धरोर)का चोर-जीविकाका नष्ट करनेवाला ॥ ९४ ॥

अन्येोदयासहिष्णुश्चह्युत्कोचग्रहणेरतः ।
अकार्यकर्तामंत्राणांकार्याणांभेदकस्तथा ॥

भाषार्थ-जो दूसरेके प्रतापको न सहे-उत्कोच (रूसवत्) का ग्रहण करनेवाला-कुकर्मकारी-मन्त्र और कार्य्योंका नष्ट करनेवाला ॥ ९५ ॥

अनिष्टवाक्परुषवाग्जलारामप्रबाधकः ।
नक्षत्रसूचीराजद्विट्कुमंत्रीकूटकार्यवित् ॥

भाषार्थ-अनिष्ट वा कठोर वचन कहनेवाला-जल और बागका हिंसक-नक्षत्रसूचि-(जो दुकान २ नक्षत्रोंको बतावे ऐसा ज्योतिषि) राजाका वैरी-खोटा मंत्री-कपटी ॥ ९६ ॥

कुवैद्यामंगलाशौचशीलामार्गनिरोधकाः ।
कुसाक्ष्युद्धतवेषश्चस्वामिद्रोहीव्ययाधिकाः

भाषार्थ-खोटा वैद्य-अमंगली-सदा अशुद्ध-मार्गके रोकने वाला-खोटासाक्षी जिसका वेष उद्धत हो-वा स्वामीका द्रोही-अधिक व्ययका कर्त्ता ॥ ९७ ॥

अग्निदोगरदोवेश्यासक्तःप्रबलदंडकृत् ।
तथापाक्षिकसभ्यश्चबलाल्लिखितग्राहकः ॥

भाषार्थ-अग्नि लगानेवाला-विष देनेवाला-वेश्यागामी-प्रबल दण्डका दाता-पक्षपाती सभासद-बलसे लिखाई लेनेवाला ॥ ९८ ॥

अन्यायकारीकलहशीलोयुद्धेपराङ्मुखः ।
साक्ष्यलोपीपितृमातृसतीस्त्रीमित्रद्रोहकः ॥

भाषार्थ-अन्याय कर्त्ता-कलही-युद्धमें पराङ्मुख-साक्षीने जो कहा हो उसका नाश करनेवाला और पिता- माता-सती स्त्री-मित्र-इनके संग द्रोहका कर्त्ता ॥ ९९ ॥

असूयकःशत्रुसेवीमर्मच्छेदीचवंचकः ।
स्वकीयद्विड्गुप्तवृत्तिर्वृषलोग्रामकंटकः ॥

भाषार्थ-पराये गुणोंमें दोषोंको जो देखे-शत्रुका सेवक-मर्मका छेदक-वंचक-अपनोंका द्वेषी-गुप्त (छिपी) जिसकी जीविका हो-शूद्र-और ग्रामका कंटक ॥ १०० ॥

विनाकुटुंबभरणात्तपोविद्यार्थिनंसदा ।
तृणकाष्ठादिहरणेशक्तःसन्भैक्ष्यभोजकः ॥

भाषार्थ-जो कुटुम्बका भरण पोषण किये विना तप करे वा विद्या सीखे और तृण और काष्ठ आदिके लानेमें समर्थ होकर जो भिक्षा मांगकर भोजन करे ॥ १ ॥

कन्यायाअपिविक्रेताकुटुंबवृत्तिन्हासकः ।
अधर्मसूचकश्चापिराजानिष्टमुपेक्षकः ॥२॥

भाषार्थ-जो कन्याको बेचे-जो कुटुम्बकी जीविकाको कमकरे-जो अधर्मकी सूचना करे जो राजाके अनिष्टकी अपेक्षा करे॥२॥

कुलटापतिपुत्रस्त्रीस्वतंत्रावृद्धनिंदिता ।
गृहकृत्योज्झितानित्यंदुष्टाचाराप्रियस्नुषा

भाषार्थ-व्यभिचारिणीका पति-स्वतन्त्र पुत्र और स्त्री-वृद्धोंका निंदक और जो पुत्रकी वधू घरके कृत्यको न करे सदैव दुष्टाचरण करे ॥ ३ ॥

स्वभावदुष्टानेतान्हिज्ञात्वाराष्ट्राद्विवासयेत् ।
द्वीपेनिवासितव्यास्तेवध्वादुर्गोदरेथवा ॥

भाषार्थ-इन सम्पूर्ण सुभाव दुष्टोंको राजा देशसे निकास दे और किसी द्वीपमें वा बांधकर किलेमें इन सबको वसादे॥४॥

मार्गसंरक्षणेयोज्याःकदन्नन्यूनभोजनाः ।
तत्तज्जात्युक्तकर्माणिकारयीतचतैर्नृपः ॥

भाषार्थ–और खोटा अन्न–और अल्प भोजन देकर इनको मार्गकी रक्षामें नियुक्त करे और इनसे तिस २ जातिके जो कर्म हैं वे करावे ॥ ५ ॥

एवंविधानसाधूंश्चसंसर्गेणचदूषितान् ।
दंडयित्वाचसन्मार्गेशिक्षयेत्तान्नृपःसदा ॥

भाषार्थ-इस प्रकारके असाधुओंको और जो संसर्गसे दूषित हैं उनको दण्ड देकर राजा सन्मार्गकी शिक्षा सदैव दे ॥ ६ ॥

राज्ञोराष्ट्रस्यविकृतिंतथामंत्रिगणस्यच ।
इच्छंतिशत्रुसंबंधाद्येतान्हन्याद्द्रुतंनृपः॥

भाषार्थ–और जो मनुष्य शत्रुओंके सम्बधसे राजा देश मंत्रियोंका गण इनके विगाडनेकी इच्छा करे उनको राजा शीघ्रही नष्ट करदे ॥ ७ ॥

नेच्छेद्युगपद्ध्रासंगणदौष्ट्येगणस्यच ।
एकैकंघातयेद्राजावत्सोश्नातियथास्तनं ८॥

भाषार्थ–यदि किसी समुदायकी दुष्टता हो तो समुदायकी एकवार हानिको न चाहे किन्तु एक२का नाश इस प्रकार करे जैसे वत्स एक २ स्तनको पीता है ॥ ८ ॥

अधर्मशीलोनृपतिर्यदातंभीषयेज्जनः ।
धर्मशीलातिवलवद्रिपोराश्रयतःसदा ॥९॥

भाषार्थ–जव राजा अधर्मशील हो तव प्रजा उसको धर्मशील अत्यन्तवलवान् जो शत्रु उसके आश्रयसे सदैव भयदे ॥९॥

यावत्तुधर्मशीलःस्यात्सनृपस्तावदेवहि ।
अन्यथानश्यतेलोकोद्राङ्नृपोपिविनश्यति

भाषार्थ–इतने राजा धर्मशील रहता है उतनेही कालतक वह राजा होता है और अन्यथा जगत् और राजा दोनों नष्ट हो जाते हैं ॥ १० ॥

मातरंपितरंभार्यांयःसंत्यज्यविवर्तते ।
निगडैर्बंधयित्वातंयोजयेन्मार्गसंसृतौ॥ ११

भाषार्थ–माता–पिता–भार्य्या–इनको जो त्यागकर वर्ते उसको वेडियोंसे बांधकर संसारके मार्गमें लावे ॥ ११ ॥

तद्भृत्यर्थंतुसंदद्यात्तेभ्योराजाप्रयत्नतः ।
विंद्यात्पणसहस्रंतुदंडउत्तमसाहसः॥१२॥

भाषार्थ–और उसको आधि भृति उनमाता आदियोंसे राजा प्रयत्नसे दिवावे एक सहस्रपण दण्ड उत्तम साहस होता है ॥ १२ ॥

दशमाषमितंताम्रंतत्पणोराजमुद्रितं ।
वराटिसार्धशतकमूल्यंकार्षापणश्चसः ॥१३

भाषार्थ–दशमासे तांवा जो राजमुद्रासे अंकित हो उसे पण कहते हैं और १५० वराटी (कोडी) योंका जो मोल हो उसे कारखापण कहते हैं ॥ १३ ॥

तदर्धश्चतदर्धश्चमध्यमःप्रथमःक्रमात् ।
प्रथमेसाहसेदंडःप्रथमश्चक्रमात्परौ॥१४॥

भाषार्थ–और पूर्वोक्तसे आधेको मध्यम और उससे आधेको प्रथम साहस कहते हैं पहले साहसमें प्रथम फिर क्रमसे मध्यम और उत्तम दंड होते हैं ॥ १४ ॥

मध्यमेमध्यमोधार्यश्चोत्तमेत्तमोनृपैः ।
सोपायाःकथितामिश्रेमित्रोदासीनशत्रवः॥

भाषार्थ–और राजा मध्यम साहसमें मध्यम और उत्तम साहसमें उत्तम दंडदे इस मिश्र प्रकरणमें–मित्र–उदासीन–शत्रु–और उनके उपाय कहे हैं ॥ १५ ॥

अथकोशप्रकरणंब्रुवेमिश्रेद्वितीयकं ।
एकार्थसमुदायोयःसकोशःस्यात्पृथक्पृथक्

भाषार्थ-अब मिश्र प्रकरणमें दूसरा कोशका प्रकरण कहते हैं-जो एक प्रकारके धनका समुदाय हो उसे पृथक् २ कोश (खजाना) कहते हैं ॥ १६ ॥

येनकेनप्रकारेणधनंसंचिनुयान्नृपः ।
तेनसंरक्षयेद्राष्ट्रंबलंयज्ञादिकाःक्रियाः १७॥

भाषार्थ-राजा जिस किसी प्रकारसे धनका संचय करे और उस धनसे देश-सेनाकी रक्षा-और यज्ञ आदि कर्म करे ॥ १७॥

बलप्रजारक्षणार्थंयज्ञार्थंकोशसंग्रहः ।
परत्रेहचसुखदोनृपस्यान्यश्चदुःखदः॥१८

भाषार्थ-सेना-और प्रजाकी रक्षा-और यज्ञ इनके लिये कोशका संग्रह परलोक और इस लोकमें सुखदाई होता है और अन्यकोश दुःखका दाता कहा है ॥ १८ ॥

स्त्रीपुत्रार्थंकृतोयश्चसोपभोगायकेवलः ।
नरकायैवसज्ञेयोनपरत्रसुखप्रदः ॥ १९ ॥

भाषार्थ-जो कोश-स्त्री-और पुत्रके ही लिये कियाहो वह केवल उपभोगके लिये होता है-और परलोकमें नरकार्थ है सुखदाई नही ॥ १९ ॥

अन्यायेनार्जितोयस्माद्येनतत्पापभाक्चसः
सुपात्रतोगृहीतंयद्दत्तंवावर्धतेचयत् ॥२०॥

भाषार्थ-अन्यायसे जिसने कोशका संचय किया वह उसके पापका भागी होता है जो धन सुपात्रसे ग्रहण किया हो अथवा वहढते हैं ॥ २० ॥

स्वागमीसद्व्ययीपात्रमपात्रंविपरीतकं ।
अपात्रस्यधनंसर्वंहरेद्राजानदोषभाक् २१

भाषार्थ-जो मनुष्य सुमार्गसे संचय और सुमार्गमें व्यय करता है वह पात्र होता है और इससे विपरीत कुपात्र और कुपात्रक संपूर्ण धन हरनेसे राजा दोपका भागी नही होता ॥ २१ ॥

अधर्मशीलनृपतेःसर्वतःसंहरेद्धनं ।
छलाद्बलाद्दस्युवृत्यापरराष्ट्राद्धरेत्तथा २२॥

भाषार्थ-अधर्मशील राजाके धनको सब प्रकारसे हरले कि छल-बल-चोरी-परके देशसे हरे ॥ २२ ॥

त्यक्त्वानीतिंबलंस्वीयप्रजापीडनतोधनं ।
संचितंयेनतत्तस्यस्वराज्यंशत्रुसाद्भवेत् ॥

भाषार्थ-जिस राजाने-नीति-और बलको त्यागकर अपनी प्रजाकी पीडासे धनका संचय किया हो उस राजाका राज्य शत्रुओंके आधीन होजाता है ॥ २३ ॥

दंडभूभागशुल्कानामाधिक्यात्कोशवर्धनं ।
अनापदिनकुर्वीततीर्थदेवकरग्रहात् ॥२४॥

भाषार्थ-दण्ड-पृथ्वीका भागशुल्क-(महसूल) इनकी-अधिकतासे कोश बढता है उसको और तीर्थ देवसे कर लेकर राजा कोशकी वृद्धि न करै ॥ २४ ॥

यदाशत्रुविनाशार्थंबलसंरक्षणोद्यतः ।
विशिष्टदंडशुल्कादिधनंलोकात्तदाहरेत् ॥

भाषार्थ-जब राजा शत्रुके विनाशार्थ-सेनाकी रक्षामें उद्यत हो उस समय अधिक दण्ड-और शुल्क आदिद्वारा धनको ग्रहण करे ॥ २५ ॥

धनिकेभ्योभृतिंदत्त्वास्वापत्तौतद्धनंहरेत् ।
राजास्वापत्समुत्तीर्णस्तत्संदद्यात्सवृद्धिकं

भाषार्थ-और अपनी आपत्तिमें राजा शूद्पर धनियोंसे धनले और जब आपत्तिसे उत्तीर्ण (रहित) होजाय-तब-सूदसहित दे ॥ २६ ॥

प्रजान्यथाहीयतेचराज्यंकोशोनृपस्तथा।
हीनाप्रबलदंडेनसुरथाद्यानृपायतः २७॥

भाषार्थ-अन्यथा प्रजा-राज्य-कोश-राजा ये सब हीन होजाते हैं-क्योंकि प्रबल दण्डसे सुरथ आदि राजा हीन होगये हैं ॥ २७ ॥

दंडभूभागशुल्कैस्तुविनाकोशाद्बलस्यच।
संरक्षणंभवेत्सम्यग्यावद्विंशतिवत्सरं २८॥

भाषार्थ-दण्ड भूमिका कर और कोश इनके विना बलकी रक्षा इतने बीस वर्षतक भली प्रकार न हो ॥ २८ ॥

तथाकोशस्तुसंधार्यःस्वप्रजारक्षणक्षमः।
बलमूलोभवेत्कोशःकोशमूलंबलंस्मृतं।

भाषार्थ-तिस प्रकार अपनी प्रजाकी रक्षाके योग्य कोशकी रक्षा राजा करे क्योंकि कोशका मूल बल-और बलका मूल कोश कहा है॥ २९ ॥

बलसंरक्षणात्कोशराष्ट्रवृद्धिररिक्षयः।
जायतेतत्त्रयंस्वर्गःप्रजासंरक्षणेनवै ॥ ३०॥

भाषार्थ-बलकी रक्षासे कोश-और देशकी वृद्धि और शत्रुका क्षय होते हैं ये तीनों और स्वर्ग प्रजाकी रक्षासे होते हैं३०॥

यज्ञार्थंद्रव्यमुत्पन्नंयज्ञःस्वर्गसुखायुषे।
अर्यभावोबलंकोशोराष्ट्रवृद्ध्यैत्रयंत्विदं ३१

भाषार्थ-द्रव्य यज्ञके लिये और-यज्ञ-स्वर्ग-सुख-अवस्थाके लिये होते हैं शत्रुका अभाव बल कोश ये तीनों राष्ट्र (देश) वृद्धिके लिये होते हैं ॥ ३१ ॥

तद्वृद्धिर्नीतिनैपुण्यात्क्षमाशीलनृपस्यच।
जायतेतोयतैतैवयावद्बुद्धिवलोदयं ॥३२॥

भाषार्थ-क्षमाशील राजाकी नीतिनिपुणतासे उनकी वृद्धि होती है इससे जितनी बुद्धि और बलका उदय हो तितने कोशवृद्धिका यत्न करे ॥ ३२ ॥

मालाकारस्यवृत्त्यैवस्वप्रजारक्षणेनच।
शत्रुंहिकरदीकृत्यतद्धनैःकोशवर्धनं ॥ ३३

भाषार्थ-जो राजा मालिकी वृत्ति और अपनी प्रजाकी रक्षासे और शत्रुओंको कर देनेवाले बनाकर शत्रुओंके धनसे कोशको बढावे ॥ ३३ ॥

करोतिसनृपःश्रेष्ठोमध्यमोवैश्यवृत्तितः।
अधमःसेवयादंडतीर्थदेवकरग्रहैः ॥ ३४॥

भाषार्थ-वह राजा उत्तम होता है और जो वैश्यवृत्ति करे वह मध्यम और सेवा करे वा दण्ड तीर्थ-और देवतासे करले वह अधम होता है ॥ ३४ ॥

प्रजाहीनधनारक्ष्याभृत्यामध्यधनाःसदा।
यथाधिकृत्प्रतिभुवोधिकद्रव्यास्तथोत्तमाः

भाषार्थ-जो प्रजा धनहीन हों उनकी जो भृत्योंके मध्यम धन हो उनको सदैव रक्षा करे और साक्षि जितने अधिक धनी हों उतनेही उत्तम होते हैं ॥ ३५ ॥

धनिकाश्चोत्तमधनानहिनानाधिकानृपैः।
द्वादशाब्दप्रपूर्यंयद्धनंतन्नीचसंज्ञकं ॥३६॥

भाषार्थ-और जो धनी उत्तम धनवाले हों और न नहो न अधिक हों उनको राजा रक्खे जिस धनसे १२ वर्षतक निर्वाह होसके वह धन नीच होता है ॥ ३६ ॥

पर्याप्तंषोडशाब्दानांमध्यमंतद्धनंस्मृतं।
त्रिंशदब्दप्रपूर्यंयत्कुटुंबस्योत्तमंधनं ॥३७॥

भाषार्थ-और जिससे १६ वर्षतक कुटुम्बकी पालना हो वह धन मध्यम कहा है और जिससे ३० वर्षतक पालना हो वह उत्तम धन होता है॥३७ ॥

क्रमादर्धंरक्षयेद्वास्वापत्तौनृपएपुवै ।
मूलैर्व्यवहरन्त्यर्धैर्नवृध्यावणिजःक्वचित् ॥

भाषार्थ-राजा अपने आपत्तिके लिये इन धनिक आदिकोंमें क्रमसे आधे धनकी रक्षा करे जो व्यापारी आधेमूल धनसे (जमासे) शूद्रके लिये व्यापार करता है वह कभी व्यापारी नही होता ॥ ३८ ॥

विक्रीणंतिमहार्घेतुहीनार्घेसंचयंतिहि ।
व्यवहारेधृतंवैश्यैस्तद्धनेनविनासदा ॥ ३९

भाषार्थ-और जो द्रव्य व्यवहारमें लग रहा है उसके विना सदैव महंगेमें वेचते हैं और मंदेमे लेते हैं ॥ ३९ ॥

अन्यथास्वप्रजातापोनृपंदहतिसान्वयं ।
धान्यानांसंग्रहःकार्योवत्सरत्रयपूर्तिदः ४०

भाषार्थ-अन्यथा प्रजाका सन्ताप वंशसहित राजाको नष्ट करता है-और इतने अन्नका संग्रह करे जिससे ३ वर्ष पूरा पड जाय ॥ ४० ॥

तत्तत्कालेस्वराष्ट्रार्थंनृपेणात्मंहितायच ।
चिरस्थायीसमृद्धानामधिकोवापिचेष्यते ॥

भाषार्थ-तिस २ समयमें अपने देशके और अपने लिये अन्नसंग्रह रक्खे और जो समृद्ध हैं उनको चिरकालतक रहने योग्य अथवा अधिक अन्नभी अच्छा है ॥ ४१ ॥

सुपुष्टंकांतिमज्जातिश्रेष्ठंशुष्कंनवीनकं ।
सुसुगंधवर्णरसंधान्यंसंवीक्ष्यरक्षयेत् ॥४२

भाषार्थ-जो वस्तु पुष्ट वा कान्तिवाली है वे सूखी और नवीन अच्छी होती है और जो सुगंध वर्ण रसवाली हैं उनकी देख २ कर रक्षा करे ॥ ४२ ॥

सुसमृद्धंचिरस्थायीमहार्घमपिनान्यथा ।
विषवन्हिहिमव्याप्तंकीटजुष्टंनधारयेत् ॥ ४३

निःसारतांनहिप्राप्तंव्ययेतावन्नियोजयेत् ।
व्ययीभूतंतुयद्दृष्टातत्तुल्यंतुनवीनकं ॥ ४४ ॥

भाषार्थ-जो वस्तु अधिक हो और चिरकालतक रहसके वह महंगीभी अच्छी अन्यथा नही और जो वस्तु विष अग्नि-शीत-जीव इनकी मारी हो उसे नरक्खे ४३ और जिस वस्तुका सार वनरहाहो उसेही खर्चमें लावे-और जितनी खर्च होचुकी हो उसकी तुल्य नवीन ॥ ४४ ॥

गृण्हीयात्सुप्रयत्नेनवत्सरेवत्सरेनृपः ।
औषधीनांचधातूनांतृणकाष्ठादिकस्यच ॥

भाषार्थ-वर्ष २में वडे यत्नसे ग्रहण करता रहे और औषधी तृणकाष्ठादिकाभी संचय रक्खे ॥ ४५ ॥

यन्त्रशस्त्रास्त्राग्निचूर्णभांडादेर्वाससांतथा ।
यद्यच्चसाधकंद्रव्यंयद्यत्कार्येभवेत्सदा ॥ ४६

भाषार्थ-जो शस्त्र-अस्त्र-अग्नि-चूर्ण-(दारू) भाण्ड-वस्त्र-इनकाभी संचय रक्खे और कार्यमें जो जो द्रव्य साधक हो सदैव ॥ ४६ ॥

संग्रहस्तस्यतस्यापिकर्तव्यःकार्यसिद्धिदः ॥
संरक्षयेत्प्रयत्नेनसंगृहीतंधनादिकं ॥ ४७ ॥

भाषार्थ-उस २का कार्य सिद्धिके लिये संग्रह करना और संग्रह किये हुये धन आदिकी प्रयत्नसे रक्षा करे ॥ ४७ ॥

अर्जनेतुमहद्दुःखंरक्षणेतच्चतुर्गुणं ।
क्षणंचोपेक्षितंयत्तद्विनाशंद्राक्समाप्नुयात् ॥

भाषार्थ-धनके संचयमें महादुःख और उसकी रक्षामें उससे चौगुना दुःख होता है यदि क्षणमात्रभी धनरक्षाकी उपेक्षा की जाय तो शीघ्रही नष्ट हो जाता है ॥ ४८ ॥

अर्जकस्यैवयद्दुःखंस्याद्यर्जितनाशने ।
स्त्रीपुत्राणामपितथानान्येषांतुकथंभवेत् ॥

भाषार्थ-संचय करनेवाले मनुष्यको संचित धनके नाशमें जो दुःख होता है वह दुःख स्त्री-पुत्र-और अन्योंको कैसे हो सक्ता है४९

स्वकार्येशिथिलोयःस्यात्किमन्येनभवंतिहि
जागरूकःस्वकार्येयस्तत्सहायाश्चतत्समाः

भाषार्थ-जो मनुष्य अपने कार्यमें शिथिल होता है तो अन्य क्यों न होंगे और जो अपने काममें जागता है उसके सहायकभी जागते हैं ॥ ५० ॥

योजानात्यर्जितुंसम्यगर्जितंनहिरक्षितुं ।
नातःपरतरोमूर्खोवृथातस्यार्जनाश्रमः ॥

भाषार्थ-जो मनुष्य संचय करना जानता है और संचयकी रक्षा भली प्रकार नहीं कर सक्ता उससे परे कोई मूर्ख नहीं उसका संचय करना वृथा है ॥ ५१ ॥

एकस्मिन्नधिकारेतुयोद्वावधिकरोतिसः ।
मूर्खोजीवद्विभार्यश्चह्यतिविस्रंभवांस्तथा ॥

भाषार्थ-जो मनुष्य एक काममें दोको अधिकार देता है जिसके पहिलीके जीवते दूसरी स्त्री हो और जिसको अत्यन्त विश्वास हो उससे परे कोई मूर्ख नहीं ॥ ५२ ॥

महाधनाशीरसतःस्त्रीभिर्निर्जितएवहि ।
तथायःसाक्षितांपृच्छेच्चौरजाराततायिषु५३

भाषार्थ-जो मनुष्य महालोभी हो और जिसको हावभावसे स्त्रियोंने जीत लिया हो और जो मनुष्य-चोर-जार-आततायी-(हिंसक) इनको साक्षी पूछे वह भी मूर्ख है ५३

संरक्षयेत्कृपणवत्कालेदद्याद्विरक्तवत् ।
वस्तुयाथात्म्यविज्ञानेस्वयमेवयतेत्सदा५४

भाषार्थ-कृपणके समान धनकी रक्षा करे और समयपर विरक्तके समान दे और वस्तुके यथार्थ जाननेके लिये सदैव स्वयं यत्न करे५४

परीक्षकैः स्वयंराजारत्नादीन्वीक्ष्यरक्षयेत् ।
वज्रंमुक्ताप्रवालंचगोमेदश्चेंद्रनीलकः ५५॥

भाषार्थ-और राजा परीक्षकों (जौहरी) से और स्वयं परीक्षा करके रत्न आदिकी रक्षा करे कि वज्र-मोती-मूंगा-गोमेद इंद्रनील५५

वैदूर्यःपुष्करागश्चपाचिर्माणिक्यमेवच ।
महारत्नानिचैतानिनवप्रोक्तानिसूरिभिः ॥

भाषार्थ-वैदूर्य्य-पुष्कराज-पाची-माणिक्य सूरियोंने ये नौ ९ महारत्न कहे हैं ॥५६॥

रवेःप्रियंरक्तवर्णमाणिक्यंत्विंद्रगोपरुक् ।
रक्तपीतसितश्यामच्छविर्मुक्ताप्रियाविधोः

भाषार्थ-लाल वर्णका इन्द्रगोपके समान जिसकी कान्तिहो ऐसा माणिक्य सूर्यको प्यारा है लाल-पीला-सपेद-शाम-कान्तिवाला मोती चन्द्रमाको प्रिय है ॥ ५७ ॥

सपीतरक्तरुग्भौमप्रियंविद्रुममुत्तमं ।
मयूरचापपत्राभापाचिर्बुधहिताहरित् ५८॥

भाषार्थ-पीला जिसकी रक्त कांति हो ऐसा मूंगा मंगलको प्रिय है-मोर वा चासके पंखोंके समान जिसका वर्ण हो ऐसी पाची बुधको हित होती है ॥ ५८ ॥

स्वर्णच्छविःपुष्करागःपीतवर्णोगुरुप्रियः ।
अत्यंतविशदंवज्रंतारकाभंकवेःप्रियम् ५९

भाषार्थ-स्वर्णकी जिसमें झलक हो ऐसा पीला पुखराज गुरुको प्यारा है और तारोंके समान जिसकी कांति हो ऐसा वज्र शुक्रको प्रिय है ॥ ५९ ॥

हितःशनेरिंद्रनीलोह्यसितोघनमेघरुक् ।
गोमेदःप्रियकृद्राहोरीषत्पीतारुणप्रभः ॥ ६०

भाषार्थ-सजल मेघके समान जिसकी कांति हो ऐसा कृष्ण इंद्रनील शनैश्चरको प्रिय है किंचित् पीला लाल कांतिवाला गोमेद राहुको प्रिय है ॥ ६० ॥

ओत्वक्षाभश्चलत्कंतुवैदूर्यःकेतुप्रीतिकृत् ।
रत्नश्रेष्ठतरंवज्रंनीचंगोमेदविद्रुमं ॥६१॥

भाषार्थ-बिलावके नेत्रोंके समान जिसकी कांति हो और जिसमें लकीर हों ऐसा वैदूर्य केतुको प्रिय है-रत्नोंमें वज्र श्रेष्ठतर है और गोमेद और मूंगा नीच होते हैं ॥६१ ॥

गारुत्मतंचमाणिक्यंमौक्तिकंश्रेष्ठमेवहि ।
इंद्रनीलपुष्करागौवैदूर्यंमध्यमंस्मृतं ॥ ६२॥

भाषार्थ-गारुत्मत (पाची) माणिक्य-मोति ये श्रेष्ठ कहे हैं-इंद्रनील-पुखराज-वैदूर्य ये मध्यम कहाते हैं ॥ ६२ ॥

रत्नश्रेष्ठोदुर्लभश्चमहाद्युतिरहेर्मणिः ।
अजालगर्भंसद्वर्णंरेखाविंदुविवर्जितं ॥६३॥

भाषार्थ-सर्पकी मणिरूप जो रत्नोंमें श्रेष्ठ है वह कांतिवाली दुर्लभ होती है-जिसके गर्भमें जालनहो उत्तम वर्ण हो-जिसमें रेखा और बिंदुसे वर्जित हो ॥ ६३ ॥

सत्कोणंसुप्रभंरत्नंश्रेष्ठंरत्नविदोविदुः ।
शर्कराभंदलाभंचचिपिटंवर्तुलंहितत् ॥ ६४

भाषार्थ-जिसमें कोण अच्छीहों और कांतिभी अच्छी हो और जो खांडकी आकृति हो वा कमलदल तुल्य हो चिकना और गोलहो ऐसे रत्नोंको रत्नके ज्ञाता श्रेष्ठ जानते हैं ॥ ६४ ॥

वर्णाःप्रभाःसितारक्तपीतकृष्णास्तुरत्नजाः
यथावर्णंयथाछायंरत्नंयद्दोषवर्जितं ॥ ६५॥

भाषार्थ-रत्नके रंग सपेद-रक्त-पीला कृष्ण-होते हैं जिस रत्नकी शास्त्रोक्त कांति और वर्ण हों और दोषसे जो रहित हो ॥ ६५ ॥

श्रीपुष्टिकीर्तिशौर्यायुःकरमन्यदसत्स्मृतं ।
पद्मरागस्तुमाणिक्यभेदःकोकनदच्छविः ॥

भाषार्थ-वह रत्न-लक्ष्मी-पुष्टि-कीर्ति-शूरता अवस्था-इनको करता है और अन्य रत्न असत् कहा है-कमलके समान जिसकी कांति हो ऐसा पद्मराग माणिक्यकाही एक भेद कहा है ॥ ६६ ॥

नधारयेत्पुत्रकामानारीवज्रंकदाचन ।
कालेनहीनंभवतिमौक्तिकंविद्रुमंघृतं । ६७

भाषार्थ-पुत्रकी कामना जिसे हो वह स्त्री वज्रको कभीभी धारण न करै-और बहुत धारण कियों मोती और मूंगा हीन हो जाते हैं ॥ ६७ ॥

गुरुत्वात्प्रभयावर्णाद्विस्ताराद्दाश्रयादपि ।
आकृत्याह्याधिमूल्यंस्याद्रत्नंयद्दोषवर्जितं ॥

भाषार्थ-गुरु (भारीपन) कांति-वर्ण-विस्तार और आश्रय आकृति-इनसे रत्नका अधिक मोल हो जाता है जो दोषोंसे वर्जित हो ॥ ६८ ॥

नायसोल्लिख्यतेरत्नंविनामौक्तिकविद्रुमात् ।
पाषाणेनापिचप्रायइतिरत्नविदोविदुः ६९॥

भाषार्थ-मोति और मूंगेसे अन्य जितने रत्न हैं उनपर लोहे और पत्थरकी लकीर प्रायः नहीं होती यह रत्नोंके ज्ञाताओंने कहा है ॥ ६९ ॥

मूल्याधिक्यायभवतियद्रत्नंलघुविस्तृतं ।
गुर्वल्पंहीनमौल्यंस्याद्रत्नंयदिचसद्गुणं ७०।

भाषार्थ-जो रत्न हलके और बडे होते हैं उनका मोल अधिक होता है-और सद्गुण भी जो रत्न गुरु भारी और अल्प होता है उसका मोल कम होता है ॥ ७० ॥

शर्कराभंहीनमौल्यंचिपिटंमध्यमंस्मृतं ।
दलाभंश्रेष्ठमूल्यंस्याद्यथाकामाच्चवर्तुलं ७१

भाषार्थ-खांडके समान जिसकी कांति हो वह कम मोलका-और चिपटा मध्यम मोलका होता है कमलदलके समान जिसकी कांति हो और यथोचित गोलहो वह श्रेष्ठ मोलका होता है ॥ ७१ ॥

नजरांयांतिरत्नानिविद्रुमंमौक्तिकंविना ।
राजदौष्ट्याच्चरत्नानांमूल्यंहीनाधिकंभवेत्।

भाषार्थ-विद्रुम मूंगा और मोती इनके विना सब रत्नों वृद्धावस्था (हनिपना) को नहीं प्राप्त होतेहैं और राजाके मूर्खपनासे रत्नोंका मौल्य न्यूनाधिक होता है ॥ ७२ ॥

मत्स्याहिशंखवाराहवेणुजीमूतशुक्तितः ।
जायतेमौक्तिकंतेपुभूरिशुक्त्युद्भवंस्मृतं।७३।

भाषार्थ-मत्स्य-सर्प-शंख-वाराह-बांस-मेघ-शुक्ति (सींप) इनसे मोती पैदा होता है-परंतु शुक्तिसे अधिक पैदा होता है

कृष्णंसितंपीतरक्तंद्विचतुःसप्तकंचुकं ।
कनिष्ठंमध्यमंश्रेष्ठंक्रमाच्छुक्त्युद्भवंविदुः ॥

भाषार्थ-काला-सपेद-पीला- रक्त जिसमें दो चार सात कंचुक (पडदे) हों ऐसा मोती कनिष्ठ-मध्यम श्रेष्ठ शुक्तिसे उत्पन्न कहा है ॥ ७४ ॥

तदेवहिभवेद्वेध्यमवेध्यानीतराणितु ।
कुर्वंतिकृत्रिमंतद्वत्सिंहलद्वीपवासिनः ।७५।

भाषार्थ-और वह वींधने योग्य होता है और इतर नहीं वींधे जाते हैं-और सिंहलद्वीपके वासी कृत्रिमभी मोती वनाते हैं ७५॥

तत्संदेहविनाशार्थंमौक्तिकंसुपरीक्षयेत् ।
उष्णेसलवणस्नेहजलेनिश्युषितंहितत्।७६।

भाषार्थ-उस संदेहकी निवृत्तिके लिये-मोतीकी परीक्षा भलीप्रकार करै- उष्ण-लवण वा स्नेहसंयुक्त जलमें रात्रिमें वसकर ७६॥

व्रीहिभिर्मर्दितेनेयाद्वैवर्ण्यंतदकृत्रिमं ।
श्रेष्ठाभंशुक्तिजंविद्यान्मध्याभांत्वितरद्विदुः

भाषार्थ-जो मोती धानोंमें मलनेसे विवर्ण (मैला) न हो जाय-वह अकृत्रिम (असल) होता है जो शुक्तिसे पैदा होता है उसकी कांति श्रेष्ठ और अन्यकी मध्यम कांति होती है ॥ ७७ ॥

तुलाकल्पितमूल्यंस्याद्रत्नंगोमेदकंविना ।
क्षुमाविंशतिभीरक्तीरत्नानांमौक्तिकंविना ॥

भाषार्थ-गोमेदके विना सब रत्नोंका तोलसे मोल होता है- वीस अलसीयोंकी रत्ती सब रत्नोंकी होती है एक मोतीके विना ७८

रक्तित्रयंतुमुक्तायाश्चतुःकृष्णलकैर्भवेत् ।
चतुर्विंशतिभिस्ताभीरत्नटंकस्तुरक्तिभिः ॥

भाषार्थ-मोतीकी तीन रत्ती चार कृष्णलोंकी होती है और २४ चौवीस रत्तियोंका एक टंक रत्नोंका होता है ॥ ७९ ॥

टंकैश्चतुर्भिस्तोलःस्यात्स्वर्णविद्रुमयोःसदा।
एकस्यैवहिवज्रस्यरत्वेकरक्तिमितस्यच ॥

भाषार्थ-चार टंकोंका एक तोला-सोने और मूंगेका सदैव होताहै-जो वज्र एक रत्तीभर का एकहो ॥ ८० ॥

सुविस्तृतदलस्यैवमूल्यंपंचसुवर्णकं ।
रक्तिकादलविस्ताराच्छ्रेष्ठंपंचगुणंयदि ८१॥

भाषार्थ-और जिसके दलका विस्तारभी अच्छाहो उसका मोल पांच सुवर्ण होताहै जो रत्तिके दलसे पांच गुना विस्तारहो ८१॥

यथायथाभवेन्न्यूनंहीनमौल्यंतथातथा ।
अत्राष्टरक्तिकोमाषोदशमाषैःसुवर्णकः ८२

भाषार्थ-जितना न्यूनहो उतना २ ही कम मोल होताहै और यहां ८ रत्तियोंका १ माषा और दशमाषोंका एक सुवर्ण होताहै ॥८२॥

मूल्यंपंचसुवर्णानांराजताशीतिकर्षकं ।
यथागुरुतरंवज्रंतन्मूल्यंरक्तिवर्गतः ॥८३॥

भाषार्थ-और पांच सुवर्णोंका मोल चांदीके अस्सी कर्षक (रुपैया) होता है जितना भारी वज्र हो उसका मोलभी रत्तियोंके समूहसे होता है ॥ ८३ ॥

त्रितीयांशविहीनंतुचिपिटस्यप्रकीर्तितं ।
अर्धंतुशर्कराभस्यचोत्तमंमूल्यमीरितं ॥

भाषार्थ-जो तृतीयांश कमहो उसका मोल चिपटसे कहा है-जो शर्कराकी कांतिवालेसे तोलमें आधा हो उसका मोल उत्तम कहा है ॥ ८४ ॥

रक्तिकायाश्चद्वेवज्रेतदर्धंमूल्यमर्हतः ।
तदर्धंवहवोर्हंतिमध्याहीनायथागुणैः॥८५॥

भाषार्थ-जो दोर वज्र एकरत्तीके हो उनका उससे आधा मोल कहा है और जो गुणोंसे जैसे मध्य वा हीनहों वे उससेभी आधे मोल योग्य होते हैं ॥ ८५ ॥

उत्तमार्धंतदर्धंवाहीरकागुणहीनतः ।
शतादूर्ध्वंरक्तिवर्गाद्ध्रसेद्विंशतिरक्तिकाः ॥

भाषार्थ-जो हीरे गुणहीन होनेसे उत्तमसे आधे वा उस आधेसेभी आधे हों उनमें सौ १०० रत्तियेंसे ऊपर वीस २० रत्ती कम समझले अर्थात् २० का मोल कम करदे ॥ ८६ ॥

प्रतिशतात्तुवज्रस्यसुविस्तृतदलस्यच ।
तथैवचिपिटस्यापिविस्तृतस्यचह्रासयेत् ॥

भाषार्थ-और जिसका दल विस्तार अच्छा हो वज्रके प्रति सौ और विस्तृत चिपिटके भी २० रत्ती कम करदे ॥ ८७ ॥

शर्कराभस्यपंचाशच्चत्वारिंशच्चवैकतः ।
रत्नंनधारयेत्कृष्णंरक्तविंदुयुतंसदा ॥८८॥

भाषार्थ-और शर्करा (कंकर) के वज्रकी पचास वा चालीस रत्ती मोल कम करै और काले और रक्तविंदुवाले रत्नको कभी न धारे ॥ ८८ ॥

गारुत्मकंतूत्तमंचेन्माणिक्यंमूल्यमर्हतः ।
सुवर्णरक्तिमात्रंचयथारक्तिततोगुरु ॥८९॥

भाषार्थ-जो उत्तम गारुत्मत होय तो माणिक्यके मोल योग्य होता है-यदि रत्तीमात्र सुवर्णसे रत्तीमात्र भारी हो ॥ ८९ ॥

रक्तिमात्रःपुष्करागोनीलःस्वर्णार्धमर्हतः ।
चलत्रिसूत्रीवैदूर्यश्चोत्तमंमूल्यमर्हति॥९०

भाषार्थ-एक रत्तीका नीला पुखराजका आधा सुवर्ण मोल होता है जिस वैदूर्यमें तीन सूत्रहों वह उत्तम मोलके योग्य होता है९०

प्रवालंतोलकमितंस्वर्णार्धंमूल्यमर्हति ।
अत्यल्पमूल्योगोमेदोनोन्मानंतुयतोर्हति ॥

भाषार्थ-एक तोला मूंगेका आधा सुवर्ण मोलयोग्य होता है अतिअल्प मोलका गोमेद उन्मान (तोलना) के योग्य नहीं होता ॥ ९१ ॥

संख्यातःस्वल्परत्नानांमूल्यंस्याद्धीरकाद्विना ।
अत्यंतरमणीयानांदुर्लभानांचकामतः १२

भाषार्थ-छोटे रत्नोंका मोल हीरेको छोडकर गिनतीसे होता है जो अति रमणीय वा यथार्थमें दुर्लभ हैं ॥ १२ ॥

भवेन्मूल्यंनमानेनतथातिगुणशालिनां ।
व्यंघ्रिश्चतुर्दशहतोवर्गोमौक्तिकरत्तिजः १३

भाषार्थ- और तैसेही अत्यंत गुणवालोंका मोल मानसे नहीं होता-और मोतियोंकी रत्तियोंके समूहको चौथाई कम करके चौदहगुना करै ॥ १३ ॥

चतुर्विंशतिभिर्भक्तोलब्धान्मूल्यंप्रकल्पयेत्
उत्तमंतुसुवर्णार्धमूनमूनंयथागुणं॥ १४ ॥

भाषार्थ-फिर चौवीसका भाग दे उसमें जो लब्धहो उससे मोलकी कल्पना करै-उत्तमका मोल आधा सुवर्ण और न्यून न्यूनका गुणके अनुसार होता है ॥ १४ ॥

मुक्तायारत्तिवर्गस्यप्रतिरत्तौकलानव ।
कल्पयेत्पंचभागान्हित्रिंशद्भिःभागभजेच्च तान् ॥ १५ ॥

भाषार्थ-मोतियोंकी रत्तीयोंके समूहमें प्रति रत्ती नौं ९ कला समझे उनमेंसे पांचभागोंमें तीसका भागदे ॥ १५ ॥

लब्धंकलासुसंयोज्यकलाःषोडशभिर्भजेत्।
मूल्यंतल्लब्धतोयोज्यंमुक्तायावायथागुणं ॥

भाषार्थ-जो लब्ध हो उसे कलाओंमें मिलादे और कलाओंमें सोलहका भागदे-उससे जो लब्धहो उसीसे मोतिका मोल जाने वा गुणके अनुसार ॥ १६ ॥

रक्तंपीतंवर्तुलंचेन्मौक्तिकंचोत्तमंसितं ।
अधमंचिपटंशर्कराभमन्यत्तुमध्यमं ॥१७॥

भाषार्थ-जो मोती रक्त-पीला-सपेद हो और गोलहो वह उत्तम और जो कंकरके समान वा चिपटा हो वह अधम-और अन्य मध्यम होता है ॥ १७ ॥

रत्नेस्वाभाविकादोषाःसंतिधातुषुकृत्रिमाः ।
अतोधातून्संपरीक्ष्यतन्मूल्यंकल्पयेद्बुधः ॥

भाषार्थ-रत्नमें दोष स्वाभाविक और धातुओंमें दोष कृत्रिम होते हैं-इससे बुद्धिमान् मनुष्य धातुओंकी परीक्षा करके उनके मोलकी कल्पना करै ॥ १८ ॥

सुवर्णरजतंताम्रंवंगंसीसंचरंजकं ।
लोहंचधातवःसप्तह्येषामन्येतुसंकराः १९॥

भाषार्थ-सुवर्ण-चांदी-तांबा-वंग-सीसा-रांग-लोहा-ये सात धातु होती हैं और वाकी तो संकर (मेलजोल) ॥ १९ ॥

यथापूर्वंतुश्रेष्ठंस्यात्स्वर्णंश्रेष्ठतरंमतं ।
वंगताम्रभवंकांस्यंपित्तलंताम्ररंगजं२००॥

भाषार्थ-ये पूर्व २ की श्रेष्ठ होती हैं और इनमें सोना अत्यंत श्रेष्ठ होता है वंग और तांबेसे कांसी-और तांबा और रांग मिलाकर पीतल होती है ॥ २०० ॥

मानसममपिस्वर्णंतनुस्यात्पृथुलाःपरे ।
एकच्छिद्रसमाकृष्टेसमखंडेद्वयोर्यदा ॥१॥

भाषार्थ-सोना मानके समानभी पतला होसकता है और धातु पृथुल (मोटी) रहती है-एक छिद्रमें खींचनेसे जब दोनोंके खंड समान हो जाय ॥ १ ॥

धातोःसूत्रंमानसमंनिर्दुष्टस्यभवेत्तदा ।
यंत्रशस्त्रास्त्ररूपंयन्महामूल्यंभवेदयः ॥२॥

भाषार्थ-तब-निर्दुष्ट (शुद्ध) धातुका सूत मानके समान होता है-और जिस लोहेके यंत्र शस्त्र अस्त्र बनें वहभी बहुत मोलका होता है ॥ २ ॥

रजतंषोडशगुणंभवेत्स्वर्णस्यमूल्यकं ।
ताम्रंरजतमूल्यंस्यात्प्रायोशीतिगुणंतथा ॥

भाषार्थ-सोनेका मोल चांदीसे सोलह गुना होता है और चांदीसे अस्सी गुणा (भाग) तांबेका मोल होता है ॥ ३ ॥

ताम्राधिकंसार्धगुणंवंगंवंगात्तथापरे ।
रंगसीसेद्वित्रिगुणेताम्राल्लोहंतुषड्गुणं ॥४॥

भाषार्थ-तांबेसे डेढगुणा अधिक वंग और तैसेही वंगसे अन्य धातु होती हैं-वंग और सीसा क्रमसे दूने तिगुने और तांबेसे छःगुना लोहा होता है ॥ ४ ॥

मूल्यमेतद्विशिष्टंतुह्युक्तंप्राङ्मूल्यकल्पनं ।
सुशृंगवर्णासुदुघावहुदुग्धासुवत्सका ॥५॥

भाषार्थ-यह विशिष्ट (उत्तम) मोल कहा और मोलकी कल्पना तो पहिले कह आये और जिसके अच्छे सींग-दुहने में सुशील-बहुत दूधदे-बछडा अच्छा हो ५

तरुण्यल्पाथमहतीमूल्याधिक्यायगौर्भवेत् ।
पीतवत्साप्रस्थदुग्धातन्मूल्यंराजतंपलं ॥ ६

भाषार्थ-जवान हो-चाहै वह छोटी हो चाहै बडी-पर वह गौ अधिक मोलकी होती है-जिसका दूध वत्सने पीलियाहो और प्रस्थभर दूधदे उस गौका मोल एकपल चांदी होता है ॥ ६ ॥

अजायाश्वगवार्धंस्यान्मेष्यामूल्यमजार्धकं।
दृढस्ययुद्धशीलस्यपलंमेषस्यराजतं ॥७॥

भाषार्थ-बकरीका मोल गौसे आधा और भेडका मोल बकरीसे आधा होता है और जो मींढा दृढ और युद्धके योग्य हो उसका मोल एक पल चांदी होताहै ॥ ७ ॥

दशवाष्टौपलंमूल्यंराजतंतूत्तमंगवां ।
पलंमेष्याअवेश्चापिराजतंमूल्यमुत्तमं ॥८॥

भाषार्थ-दश वा आठ पल चांदी गौऊका उत्तम मूल होता है और मेषी और भेढ का मोल एकपल चांदी उत्तम होता है ॥८॥

गवांसमंसार्धगुणंमहिष्यामूल्यमुत्तमं ।
सुशृंगवर्णवलिनोवोढुःशीघ्रगमस्यच ॥९॥

भाषार्थ-गौओंके समान वा डेढगुना भैंसका उत्तम मोल उत्तम है-जिस बैलके सींग अच्छे हों-बलवान्हो-बोझ लेजानेमें समर्थ हो और तेज चलता हो ॥ ९ ॥

अष्टतालवृषस्यैवमूल्यंषष्टिपलंस्मृतं ।
महिषस्योत्तमंमूल्यंसप्तचाष्टौपलानिच १०

भाषार्थ-और आठ ताल (बिलस्त) ऊंचाहो ऐसे बैलका मोल ६० साठपल चांदी है-और भैंसेका उत्तम मोल-सात वा आठ पल चांदी है ॥ १० ॥

द्वित्रिचतुःसहस्रंवामूल्यंश्रेष्ठंगजाश्वयोः ।
उष्ट्रस्यमाहिषसमंमूल्यमुत्तममीरितं ॥११

भाषार्थ-हाथी और अश्वका उत्तम मोल दो तीन वा चार-सहस्र पल हैं-और ऊंटका मोल भैंसेके समान उत्तम कहा है ॥ ११ ॥

योजनानांशतंगंताचैकेनाह्नाश्वउत्तमः ।
मूल्यंतस्यसुवर्णानांश्रेष्ठंपंचशतानिहि॥१२

भाषार्थ-जो घोडा सौ योजन एक दिनमें चलै वह उत्तम होता है उसका उत्तम मोल पांच शत ५०० सुवर्ण होता है ॥ १२ ॥

त्रिंशद्योजनगंतावैउष्ट्रःश्रेष्ठस्तुतस्यवै ।
पलानांतुशतंमूल्यंराजतंपरिकीर्तितं॥१३॥

भाषार्थ-तीस योजन चलनेवाला ऊंट उत्तम होता है उसका उत्तम मोल चांदीके सौ पल कहा है ॥ १३ ॥

चतुर्माषमितंस्वर्णंनिष्कइत्यभिधीयते ।
पंचरक्तिमितोमाषोगजमौल्येप्रकीर्तितः ॥

भाषार्थ-चार माषे सोनेको निष्क कहते हैं हाथीके मोलमें पांचरत्तीका माषा कहा है ॥ १४ ॥

रत्नभूतंतुतत्तत्स्याद्यद्यदप्रतिमंभुवि ।
यथादेशंयथाकालंमूल्यंसर्वस्यकल्पयेत् १५

भाषार्थ-और जो २ वस्तु पृथ्वीपर अप्रतिम (नायाव) हो वह सब रत्न रूप है और देश वा समयके अनुसार सबके मोल की कल्पना करले ॥ १५ ॥

नमूल्यंगुणहीनस्यव्यवहाराक्षमस्यच ।
नीचमध्योत्तमत्वंचसर्वस्मिन्मूल्यकल्पने ॥

भाषार्थ-जो वस्तु गुणसे हीन वा व्यवहार के अयोग्यहो उसका कुछ मोल नहीं-सब जगह मूल्यकी कल्पनामें नीच मध्यम उत्तमहै ॥ १६ ॥

चिंतनीयंबुधैर्लोकाद्वस्तुजातस्यसर्वदा ।
विक्रेतृक्रेतृतोराजभागःशुल्कमुदाहृतं १७

भाषार्थ-बुद्धिमान् मनुष्य लोकसे वस्तुओंके मूल्यकी सदैव चिन्ता करे बेचनेवाले और लेनेवालेसे जो राजभाग लिया जाय उसको शुल्क कहते हैं ॥ १७ ॥

शुल्कदेशाहट्टमार्गाःकरसीमाःप्रकीर्तिताः ।
वस्तुजातस्यैकवारंशुल्कंग्राह्यंप्रयत्नतः १८

भाषार्थ-शुल्कके देश-हट्टके मार्ग-करकी सीम कही है और वस्तुओंका शुल्क एक वारही ग्रहण करे ॥ १८ ॥

क्वचिन्नैवासकृच्छुल्कंराष्ट्रेग्राह्यंनृपैःच्छलात्।
द्वात्रिंशांशंहरेद्राजाविक्रेतुःक्रेतुरेववा १९॥

भाषार्थ-और देशमेंसे वारंवार शुल्कको राजा छलसे कभी ग्रहण न करे और राजा बेचनेवाले वा लेनेवालेसे ३२ बत्तीस भाग ग्रहण करे ॥ १९ ॥

विंशांशंवाषोडशांशंशुल्कंमूलाविरोधकं ॥
नहीनसममूल्याद्धिशुल्कंविक्रेतृतोहरेत् २०

भाषार्थ-अथवा २० वीसमा वा १६ मा भाग लाभमेंसे ग्रहण करे मूल धनका नाश न करे और मोलसे कम वा बराबर बेचनेवालेसे न ले ॥ २० ॥

लाभंदृष्ट्वाहरेच्छुल्कंक्रेतृतश्चसदानृपः ।
बहुमध्याल्पफलितांभुवंमानमितांसदा।२१

भाषार्थ-और राजा लाभको देखकर खरीदनेवालेसे शुल्कले और अधिक मध्यम-अल्प-फलको पृथ्वीमें प्रमाणसे सदैव ॥२१॥

ज्ञात्वापूर्वंभागमिच्छुःपश्चाद्भागंविकल्पयेत्।
हरेच्चकर्षकाद्भागंयथानष्टोभवेन्नसः ॥२२॥

भाषार्थ-पहिले जानकर भागका अभिलाषी राजा पीछेसे भागकी कल्पना करे और किशानसे ऐसा मांगले जिससे किशान न विगडे ॥ २२ ॥

मालाकारइवग्राह्योभागोनांगारकारवत् ।
बहुमध्याल्पफलतस्तारतम्यंविमृश्यच २३।

भाषार्थ-और मालीके समान भागको ले कोले करनेवालेके समान न ले और पहिले बहुत-मध्यम अल्प फलकी न्यूनाधिकको विचारले ॥ २३ ॥

राजभागादिव्ययतोद्विगुणंलभ्यतेयतः ।
कृषिकृत्यंतुतच्छ्रेष्ठंतन्न्यूनंदुःखदंनृणां२४ ।

भाषार्थ-जिस खेतीमें राजाका भाग और खर्चसे दूना लाभ हो वह श्रेष्ठ और उससे न्यून मनुष्योंको दुःखदाई होती है ॥ २४ ॥

तडागवापिकाकूपमातृकोद्दवमातृकात् ।
देशान्नदीमातृकात्तुराजानुक्रमतःसदा।२५

भाषार्थ-जिनदेशोंमे तलाव-बावडी-कूप नदी-बहुत हो उनमेंसे क्रमसे सदैव ॥२५॥

तृतीयांशंचतुर्थांशमर्धांशंतुहरेत्फलं ।
षष्ठांशमुखरात्तद्वत्पाषाणादिसमाकुलात् ॥

भाषार्थ-तीसरा-चौथा-आधा-छठा-भाग राजा ग्रहण करे जो भूमि ऊखर वा पत्थरोंसे व्याकुल युक्त हो उससे छटाभाग ग्रहण करे

राजभागस्तुरजतशतकर्षमितोयतः ।
कर्षकाल्लभ्यतेतस्मैविंशांशमुत्सृजेन्नृपः ॥

भाषार्थ-और जिस भूमिमें १०० कर्ष चांदीके पैदा हों उसमें खेत किशानके पास २० भाग राजा छोडदें ॥ २७ ॥

स्वर्णादथचरजतात्तृतीयांशंचताम्रतः ।
चतुर्थांशंतुषष्ठांशंलोहाद्वंगाच्चसीसकात् ॥

भाषार्थ-सोने और चांदीसे तीसरा भाग तांबेसे चौथा लोहा वंग शिसेसे छठाभाग ग्रहण करे ॥ २८ ॥

रत्नार्धंचैवक्षारार्धंखनिजाद्व्ययशेषतः ।
लाभाधिक्यंकर्षकादेर्यथादृष्ट्वाहरेत्फलं ॥

भाषार्थ-रत्न-और खार-(लवणादि) इनका आधा खर्चसे बचाकर ग्रहण करे और किशानके अधिक लाभको देखकर करले ॥ २९ ॥

त्रिधावापंचधाकृत्वासप्तधादशधापिवा ।
तृणकाष्ठादिहरकाद्विंशत्यंशंहरेत्फलं ॥

भाषार्थ-तीन-पांच-सात-दश भाग करके भूमिसे करले तृण काष्ठ आदिके बेचने वालोंसे २० वीसमा भाग करले ॥ ३० ॥

अजाविगोमहिष्यश्ववृद्धितोष्टांशमाहरेत् ।
महिष्यजाविगोदुग्धात्षोडशांशंहरेन्नृपः३१

भाषार्थ-बकरी-भेड-गौ-भैंस इनकी वृद्धिसे आठवां भाग ले और इनके दूधमेंसे राजा सोलहवा भागले ॥ ३१ ॥

कारुशिल्पगणात्पक्षेदैनिकंकर्मकारयेत् ।
तस्यवृद्ध्यैतडागंवावापिकांकृत्रिमांनदीं ॥

भाषार्थ-कारीगर शिलिप इनके समूहसे पक्षमें एक दिन काम करले और ये बहुत हों-तलाव बावडी-कृत्रिम नदी (नहर) इनको ॥ ३२ ॥

कुर्वंत्यन्यंताद्दिधंवाकर्षंत्यभिनवांभुवं ।
तद्व्ययद्विगुणंयावन्नतेभ्योभागमाहरेत् ३३

भाषार्थ-बनाते हों वा अन्य ऐसाही काम करते हों अथवा नई भूमिको खोदते हों उनसे तबतक कर नले जबतक उनके खर्चसे दूना लाभ हो ॥ ३३ ॥

भूविभागंभृतिशुल्कंवृद्धिमुत्कोचकंकरं ॥
सद्यएवहरेत्सर्वंनतुकालविलंबनैः ॥३४॥

भाषार्थ-भूमिका भाग-भृतिका शुल्क-व्याज-उत्कोच-(रूसवत्) इनके करको उसी समयले विलम्ब न करे ॥ ३४ ॥

दद्यात्प्रतिकर्षकायभागपत्रंसचिन्हितं ।
नियम्यग्रामभूभागमेकस्माद्धनिकाद्धरेत् ॥

भाषार्थ-और किशानको मोहर लगाकर करका पत्र (रसीद) दे ग्रामकी भूमिके करको नियत करके एक धनी (चौधरी) सेले ॥ ३५ ॥

गृहीत्वातत्प्रतिभुवंधनंप्राक्तत्सुमंतुना ।
विभागशोगहीत्वापिमासिमासिक्रृतौऋतौ ॥

षोडशद्वादशदशाष्टांततोवाधिकारिणः ।
स्वांशात्पष्ठांशभागेनग्रामपान्सन्नियोजयेत्

भापार्थ–और उस धनीके प्रतिभू (जामिन) को पहिले ग्रहण करले और जिसके पास उसकी बराबर धन हो उसे प्रतिभू न करे और महीने २ वा ऋतु २ में विभागसे ग्रहण करके १६–१२–१०–८–अधिकारी नियत करे अपने अंशमेंसे छठा भाग ग्रामके अधिपतिको नियुक्त करे ॥ ३६ ॥ ॥ ३७॥

गवादिदुग्धान्नफलंकुटुंवार्थाद्धरेन्नृपः ।
उपभोगेधान्यवस्त्रक्रेतृतोनाहरेत्फलं॥ ३८॥

भापार्थ–गौ आदिका जो दूध कुटुम्बकेही लायक हो उससे और जो उपभोगके लिये अन्न वस्त्र खरीदे उससे राजा कर न ले ॥ ३८ ॥

वार्धुषिकान्नकौसीदाद्द्वात्रिंशांशंहरेन्नृपः ।
गृहाद्याधारभूशुल्कंकृष्टभूमिरिवाहरेत् ।३९

भापार्थ–व्यापारी और व्याज लेनेवालेसे ३२ मा भाग राजा ले जिस भूमिमें घर हों उसका कर (छ्युटी) भूमिके समान ग्रहण करे ॥ ३९ ॥

तथाचापणिकेभ्यस्तुपण्यभूशुल्कमाहरेत् ।
मार्गसंस्काररक्षार्थंमार्गगेभ्योहरेत्फलं४०॥

भापार्थ–और हाटवालोंसे हाटकी भूमिके करको ले और मार्ग चलनेवालोंसे मार्ग (सड़क) की रक्षाकेलिये कर ले ॥ ४० ॥

सर्वतःफलभुग्भूत्वादासवत्स्यात्तुरक्षणे ।
इतिकोशप्रकरणंसमासात्कथितंकिल। ४१।

भापार्थ–और सबसे कर लेकर दासके समान रक्षा करे यह कोशका प्रकरण संक्षेपसे कहा ॥ ४१ ॥

अथमिश्रेतृतीयंतुराष्ट्रंवक्ष्येसमासतः ।
स्थावरंजंगमंवापिराष्ट्रशब्देनगीयते ॥४२॥

भापार्थ–अब मिश्र प्रकरणमें राष्ट्र (देश) को संक्षेपसे कहते हैं स्थावर और जंगम भेदसे दो प्रकारका कहा है ॥ ४२ ॥

यस्याधीनंभवेद्यावत्तद्राष्ट्रंतस्यवैभवेत् ।
कुवेरताशतगुणाधिकासर्वगुणात्ततः॥४३॥

भापार्थ–जितना देश जिसके आधीन हो और उससे सौगुनी और सब गुणवाली कुवेरता होती है ॥ ४३ ॥

ईशताचाधिकतरासानाल्पतपसःफलं ।
सदीव्यतिपृथिव्यांतुनान्योदेवोयतःस्मृतः

भापार्थ–और ईशता (राजाहोना) उससेभी अधिक है और वह अल्प तपका फल नहीं वह पृथ्वीमें क्रीडा करता है इससे राजासे अन्य पृथ्वीमें देवता नहीं कहा ॥४४॥

तस्याश्रितोभवेल्लोकस्तद्वदाचरतिप्रजा ।
भुंक्तेराष्ट्रफलंसम्यगतोराष्ट्रकृतंत्वघं ॥४५॥

भापार्थ–जगत् उसके आश्रय होता है प्रजा उसीके समान आचरण करती है राजा देशके फल (पुण्य) और पापको भोगता है ॥ ४५ ॥

स्वस्वधर्मपरोलोकोयस्यराष्ट्रेप्रवर्तते ।
धर्मनीतिपरोराजाचिरंकीर्तिंसचाश्नुते४६॥

भापार्थ–जिसके राज्यमें प्रजा अपने २ धर्ममें तत्पर रहे धर्म और नीतिमें तत्पर राजा चिरकालतक कीर्तिको भोगता है ४६

भूमौयावद्यस्यकीर्तिस्तावत्स्वर्गेसतिष्ठति ।
अकीर्तिरेवनरकोनान्योस्तिनरकोदिवि ॥

भापार्थ–जिसकी कीर्ति जबतक भूमिमें टिकती है तबतक वह स्वर्गमें रहता है अ-

कीर्तिही नरक है दूसरा नरक परलोकमें नहीं ॥ ४७ ॥

नरदेहाद्भिन्नात्वन्योदेहोनरकएवसः ।
महत्पापफलंविद्यादाधिव्याधिस्वरूपकं ॥

भाषार्थ—मनुष्यके देहसे जो अन्यदेह वही नरक है क्योंकि वह आधी और व्याधी रूप महा पापका फल होता है ॥ ४८ ॥

स्वयंधर्मपरोभूत्वाधर्मेसंस्थापयेत्प्रजाः ।
प्रमाणभूतंधर्मिष्ठमुपसर्पत्यतःप्रजाः ॥४९॥

भाषार्थ—स्वयं धर्ममें तत्पर होकर प्रजाको धर्ममें टिकावे और प्रामाणिक और धर्मिष्ठ राजाके समीप सब प्रजा प्राप्त होती है ॥४९

देशधर्माजातिधर्माःकुलधर्माःसनातनाः ।
मुनिप्रोक्ताश्चयेधर्माःप्राचीनानूतनाश्चये ॥

भाषार्थ—देशके धर्म—जातिके धर्म—और सनातन जो कुलके धर्म जो मुनियोंने कहे हैं और जो प्राचीन और नवीन धर्म हैं५०॥

तेराष्ट्रगुप्त्यैसंधार्याज्ञात्वायत्नेनसन्नृपैः ।
धर्मसंस्थापनाद्राजाश्रियंकीर्तिमविंदति ५१

भाषार्थ—वे जानकर यत्नसे उत्तम राजा देशरक्षाके लिये धारण करे धर्मकी स्थापनासे राजाको लक्ष्मी और कीर्ति मिलती है ॥ ५१ ॥

चतुर्धाभेदिताजातिर्ब्रह्मणाकर्मभिःपुरा ।
तत्तत्सांकर्यसांकर्यात्प्रतिलोमानुलेमतः ॥

भाषार्थ—प्रथम कर्मोंसे ब्रह्माने चार प्रकार जातिका विभाग किया उनके प्रतिलोम और अनुलोम संकर और संकरोंके संकरसे५२॥

जात्यानंत्यंतुसंप्राप्तंतद्वक्तुंनैवशक्यते ।
मन्यंतेजातिभेदंयेमनुष्याणांतुजन्मना ॥

भाषार्थ—अनंत जाती होगई जिनको कह नहीं सक्ते जो मनुष्योंके जन्मसे जातिभेदको मानते हैं ॥ ५३ ॥

तएवहिविजानंतिपार्थक्यंनामकर्मभिः ।
जरायुजांडजाःस्वेदोद्भिज्जाजातिसुसंग्रहात्

भाषार्थ—वेही पृथक् २ नाम कर्मसे जातिभेदको जानते हैं जरायुज—अण्डज स्वेदज उद्भिज्ज जाति संग्रहसे होती है ॥ ५४ ॥

उत्तमोनीचसंसर्गाद्भवेन्नीचस्तुजन्मना ।
नीचोभवेन्नोत्तमस्तुसंसर्गाद्वापिजन्मना ॥

भाषार्थ—जो जन्मसे उत्तम है वह नीचके संसर्गसे नीच हो जाता है और जो जन्मसे नीच है वह संसर्गसे उत्तम कभी नहीं होता ॥ ५५ ॥

कर्मणोत्तमनीचत्वंकालतस्तुभवेद्गुणैः ।
विद्याकलाश्रयेणैवतन्नाम्नाजातिरुच्यते ॥

भाषार्थ—गुण और समयसे कर्मके द्वारा उत्तम नीच होता है विद्या और कलाके आश्रयसे उसी नामकी जाति कहाती है५६

इज्याध्ययनदानानिकर्माणितुद्विजन्मनां ।
प्रतिग्रहोध्यापनंचयाजनंब्राह्मणेधिकं ५७॥

भाषार्थ—यज्ञ करना—पढना—दानदेना—ये द्विजातियोंके कर्म हैं और ब्राह्मणके ये तीन कर्म अधिक हैं प्रतिग्रह—यज्ञकराना और पढाना ॥ ५७ ॥

सद्रक्षणंदुष्टनाशःस्वांशादानंतुक्षत्रिये ।
कृषिगोगुप्तिवाणिज्यमधिकंतुविशांस्मृतं ॥

भाषार्थ—सज्जनोंकी रक्षा—दुष्टोंका नाश—अपने भागका लेना ये काम क्षत्रियके और खेती गौओकी रक्षा व्यवहार ये वैश्योंके अधिक कहा है ॥ ५८ ॥

दानंसेवेवशूद्रादेर्नीचकर्मप्रकीर्तितं ।
क्रियाभेदस्तुसर्वेषांभृतिवृत्तिरनिंदिता ॥

भाषार्थ-शूद्र आदिका कर्म दान और सेवाही नीचकर्म कहा है और कामके भेदसे भृति (नोकरी) सबकीही निंदासे रहित वृत्ति है ॥ ५९ ॥

सीरभेदैःकृषिःप्रोक्तामन्वाद्यैर्ब्राह्मणादिषु ।
ब्राह्मणैःषोडशगवंचतुरूनंयथापरैः ॥६०॥

भाषार्थ-मनुआदि ऋषियोंने ब्राह्मण आदिकोंके लिये सीर (हल) के भेदसे खेती कही है कि ब्राह्मण एक हलपर सोलह बैल और अन्यवर्ण चार २ बैल कम बैलोंको रक्खे ॥ ६० ॥

द्विगवंवांत्यजैःसीरंदृष्ट्वाभूमार्दवंतथा ।
ब्राह्मणेनविनान्येषांभिक्षावृत्तिर्विगर्हिता ॥

भाषार्थ-और अंत्यज दो बैल रक्खें अथवा जैसी भूमि कोमलहो वैसीही बैलोंकी संख्या कम रक्खे और ब्राह्मणके विना अन्यवर्णोंको भिक्षाकी वृत्ति निंदित है ॥६१॥

तपोविशेषैर्विविधैर्व्रतैश्चविधिचोदितैः ।
वेदःकृत्स्नोधिगंतव्यःसरहस्योद्विजन्मना ॥

भाषार्थ-तपोंके भेदोंसे-शास्त्रोक्त विविध व्रतोंसे रहस्यों सहित संपूर्ण वेदोंको द्विजाति पढै ॥ ६२ ॥

योधीतविद्यःसकलःससर्वेषांगुरुर्भवेत् ।
नचजात्यानधीतोयोगुरुर्भवितुमर्हति॥६३॥

भाषार्थ-जिसने संपूर्ण विद्या पढी हो वह सबका गुरु होता है जो पढाहुआ नहो वह जातिसे गुरु नहीं होता ॥ ६३ ॥

विद्याह्यनंताश्चकलाःसंख्यातुंनैवशक्यते ।
विद्यामुख्याश्चद्वात्रिंशच्चतुःषष्टिकलाःस्मृताः

भाषार्थ-विद्या और कला अनंत हैं वे गिननेको शक्य नहीं है और मुख्य विद्या बत्तीस ३२ हैं और चौसठ कला मुख्य हैं ॥ ६४ ॥

यद्यत्स्याद्वाचिकंसम्यक्कर्मविद्याभिसंज्ञकं
शक्तोमूकोपियत्कर्तुंकलासंज्ञंतुतत्स्मृतं।६५

भाषार्थ-जो २ कर्म वाणीका विषय हैं उसकाही नाम विद्या है और जिसको मूक (मूगा) भी करसके उसको कला कहते हैं ॥ ६५ ॥

उक्तंसंक्षेपतोलक्ष्मविशिष्टंपृथगुच्यते ।
विद्यानांचकलानांचनामानितुपृथक्पृथक्।

भाषार्थ-संक्षेपसे यह लक्षण कहा अब पृथक् २ विशेष लक्षण कहते हैं-और विद्या और कलाओंके पृथक् २ नामभी कहते हैं ॥ ६६ ॥

ऋग्यजुःसामचाथर्ववेदाआयुर्धनुःक्रमात्।
गांधर्वश्चैवतंत्राणिउपवदोःप्रकीर्तिताः ६७॥

भाषार्थ-ऋक्-यजु-साम-अथर्व ये चार वेद हैं-आयुर्वेद-धनुर्वेद-गांधर्ववेद और तंत्र ये चार उपवेद कहे हैं ॥ ६७ ॥

शिक्षाव्याकरणंकल्पोनिरुक्तंज्यौतिषंतथा ।
छंदःषडंगानीमानिवेदानांकीर्तितानिहि ॥

भाषार्थ-व्याकरण-शिक्षा-कल्प-निरुक्त-ज्योतिष-छंद-ये छः वेदोंके अंग कहे हैं ६८

मीमांसातर्कसांख्यानिवेदांतोयोगएवच ॥
इतिहासाःपुराणानिस्मृतयोनास्तिकंमतं

भाषार्थ-मीमांसा-तर्क (न्याय) सांख्य-वेदांत-योग-इतिहास-पुराण-स्मृति-नास्तिकोंका मत ॥ ६९ ॥

अर्थशास्त्रंकामशास्त्रंतथाशिल्पमलंकृतिः
काव्यानिदेशभाषावसरोक्तिर्यवनंमतं ७०

भाषार्थ-अर्थशास्त्र-कामशास्त्र-शिल्पशास्त्र-अलंकार-काव्य -देशभाषा -अवसरकी उक्ति-यवनोंका मत ॥ ७० ॥

देशादिधर्मोद्वात्रिंशदेताविद्याभिसंज्ञिताः ।
मंत्रब्राह्मणयोर्वेदनामप्रोक्तमृगादिषु॥७१॥

भाषार्थ-बत्तीस देश आदिके धर्म इनका विद्या नाम है और ऋक् आदिकोंमें मंत्र और ब्राह्मणकाभी वेद नाम कहा है ॥७१॥

जपहोमार्चनंयस्यदेवताप्रीतिदंभवेत् ।
उच्चारान्मंत्रसंज्ञंतद्विनियोगिचब्राह्मणं७२॥

भाषार्थ-जिसके उच्चारणसे जप होम पूजन देवताको प्रसन्न करै उसको मंत्र कहते हैं और जिसमें विनियोग हो उसे ब्राह्मण कहते हैं ॥ ७२ ॥

ऋग्रूपायत्रयेमंत्राःपादशोर्धर्चशोपिवा ।
येषांहौत्रंसऋग्भागःसमाख्यानंचयत्रवा ॥

भाषार्थ-ऋग्वेदरूप जो मंत्र हैं चाहै वे पादहों चाहै आधीऋचाके हों जिनसे होता के करनेका कर्म होता है अथवा जिसमें इतिहास हों वह ऋग्वेदका भाग है ॥ ७३ ॥

प्रश्लिष्टपठितामंत्रावृत्तगीतविवर्जिताः ।
आध्वर्यवंयत्रकंर्मत्रिगुणंयत्रपाठनं ॥७४॥

भाषार्थ-जो मंत्र भिन्न २ पढे हैं और जिनमें वृत्तांत और गीत नहो-और जिसमें अध्वर्युका कर्म हो और जो तिगुना पढा जाय ॥ ७४ ॥

मंत्रब्राह्मणयोरेवयजुर्वेदःसउच्यते ।
उद्गीथंयस्यशस्त्रादेर्यज्ञेतरसामसंज्ञकं ७५॥

भाषार्थ-वह मंत्र और ब्राह्मण रूप यजुर्वेद कहा है जिसमें यज्ञके बीच शस्त्रआदिका ऊंचेस्वरसे गाना है उसको सामवेद कहते हैं ॥ ७५ ॥

अथर्वांगिरसोनामह्युपास्योपासनात्मकः ।
इतिवेदचतुष्कंतुह्युद्दिष्टंचसमासतः ॥७६॥

भाषार्थ-जिसमें उपासना (पूजा) और उपास्य (पूजा के योग्य) वर्णन हो वह अथर्व और अंगिरा है ये संक्षेपसे चारों वेद कहे ॥ ७६ ॥

विंदत्यायुर्वेत्तिसम्यगाकृत्यौषधिहेतुतः ।
यस्मिन्ऋग्वेदोपवेदःसचायुर्वेदसंज्ञकः ७७

भाषार्थ-जिसमें आकृति और हेतुसे भली प्रकार अवस्थाका ज्ञान हो वह ऋग्वेदका उपवेद आयुर्वेद कहाता है ॥ ७७ ॥

युद्धशस्त्रास्त्रकुशलोरचनाकुशलोभवेत् ।
यजुर्वेदोपवेदोयंधनुर्वेदस्तुयेनसः ॥ ७८ ॥

भाषार्थ-जिससे युद्ध शस्त्र अस्त्र रचना आदिमें कुशल हो वह यजुर्वेदका उपवेद धनुर्वेद होता है ॥ ७८ ॥

स्वरैरुदात्तादिधर्मैस्तंत्रीकंठोत्थितैःसदा ।
सतालैर्गानविज्ञानंगांधर्वोवेदएवसः ॥७९॥

भाषार्थ-स्वर और उदात्त आदि स्वरोंके धर्मोंसे जो वीणा वा कंठसे निकसते हैं और ताल सहित हैं इनसे जिसमें गानेका ज्ञान हो वह गांधर्व वेद है ॥ ७९ ॥

विविधोपास्यमंत्राणांप्रयोगास्तुविभेदतः ।
कथिताःसोपसंहारास्तद्धर्मनियमैश्चषट्८०

भाषार्थ-जिसमें अनेक प्रकारकी पूजाके मंत्रोंके प्रयोग और उनकी समाप्ति धर्मनियमों सहित कही हो वे छः ॥ ८० ॥

अथर्वणांचोपवेदस्तंत्ररूपःसएवहि ।
स्वरतःकालतःस्थानात्प्रयत्नानुप्रदानतः ॥

भाषार्थ—अथर्व वेदका उपवेद तंत्र रूपहै जिसमें स्वर—काल—स्थान—प्रयत्न—और अनुप्रदानसे और ॥ ८१ ॥

सवनाद्यैश्चसाशिक्षावर्णानांपाठशिक्षणात् ।
प्रयोगोयत्रयज्ञानामुक्तोब्राह्मणशेषतः ८२

भाषार्थ—सवन आदिसे वर्णोंके पढनेकी शिक्षाहो वह शिक्षा होती है—और ब्राह्मणके शेषभागसे यज्ञोंका प्रयोग (विधान) हो ८२

श्रौतकल्पःसविज्ञेयःस्मार्तकल्पस्तथेतरः ।
व्याकृताप्रत्ययाद्यैश्चधातुसंधिसमासतः ॥

भाषार्थ—वह श्रौतकल्प जानना और उससे भिन्न स्मार्त कल्प होता है—जिसमें प्रत्यय आदि धातु संधि—समाससे ॥ ८३ ॥

शब्दापशब्दव्याकरणंएकद्विबहुलिंगतः ।
शब्दनिर्वचनंयत्रवाक्यार्थैकार्थसंग्रहः ८४॥

भाषार्थ—शब्द और अपशब्दका व्याख्यान हो और एक दो बहुत लिंगके भेदसे शब्दोंका वर्णन हो वह व्याकरण कहा है और जिसमें वाक्यार्थोंसे एक अर्थका संग्रह हो ॥ ८४ ॥

निरुक्तंतत्समाख्यानाद्वेदांगंश्रौत्रसंज्ञकं ।
नक्षत्रग्रहगमनैःकालोयेनविधीयते॥ ८५ ॥

भाषार्थ—वह श्रौत नामका वेदांग कहा है और जिसमें नक्षत्रों और ग्रहोंकी गतिसे समयकी विधि हो ॥ ८५ ॥

संहिताभिश्चहोराभिर्गणितंज्यौतिषंहितत् ।
म्यरस्तजभ्नगैर्लोतैःपद्यान्यत्रप्रमाणत ८६

भाषार्थ—संहिता और होरासे गणितहो वह ज्योतिष होता है—और जहां मगण-यगण—रगण—सगण—तगण—जगण—भगण—नगण गुरु और लघुके प्रमाणसे पद्य (श्लोक) हों ॥ ८६ ॥

कल्पांतेछंदःशास्त्रंतद्वेदानांपादरूपधृक् ।
यत्रव्यवस्थिताचार्थकल्पनाविधिभेदतः८७

भाषार्थ—वह कल्प रूप छंदः शास्त्र वेदोंका अंग है जहां अर्थकी कल्पना विधिके भेदसे अर्थकी कल्पना हो ॥ ८७ ॥

मीमांसावेदवाक्यानांसैवन्यायश्चकीर्तितः।
भावाभावपदार्थानांप्रत्यक्षादिप्रमाणतः ८८

भाषार्थ—वह मीमांसा और वेदवाक्योंका न्याय कहा है—भाव और अभाव रूप पदार्थों प्रत्यक्ष आदि प्रमाणसे ॥ ८८

सविवेकोयत्रतर्कःकणादादिमतंचयत् ।
पुरुषोष्टौप्रकृतयोविकाराःषोडशेतिच ॥८९

भाषार्थ—विवेक सहित वर्णन हो वह कणाद आदिका मत तर्कशास्त्र है—और जिसमें पुरुष (ईश्वर)—आठप्रकृति और सोलह विकार ८९

तत्वादिसंख्यावैशिष्ट्यात्सांख्यमित्यभिधीयते ।
ब्रह्मैकमद्वितीयंस्यान्नानानेहास्तिकिंचन ॥

भाषार्थ—और तत्व आदिकोंकी संख्या युक्त होनेसे वह सांख्य कहाता है—और ब्रह्महो एक अद्वितीय है और नाना (माया) कुछभी नहीं है ॥ ९० ॥

मायिकंसर्वमज्ञानाद्भातिवेदांतिनांमतं ।
चित्तवृत्तिनिरोधस्तुप्राणसंयमनादिभिः ॥

भाषार्थ—संपूर्ण अज्ञानसे मायारूपही भासता है यह वेदांतियोंका मत है—और जिसमें प्राणोंके संयम आदिसे चित्तकी वृत्तिका निरोध ॥ ९१ ॥

तद्योगशास्त्रंविज्ञेयंयस्मिन्ध्यानसमाधितः ।
प्राग्वृत्तकथनंचैकराजकृत्यमिषादितः ९२

भाषार्थ-वा ध्यान समाधिसे चित्तवृत्तिका अवरोध हो वह योगशास्त्र कहाता है राजाके कर्म आदिके मिषसे जिसमें प्राचीन वृत्तांत का कथन हो ॥ ९२ ॥

यस्मिन्सइतिहासःस्यात्पुरावृत्तःसएवहि ।
सर्गश्चप्रतिसर्गश्चवंशोमन्वंतराणिच ॥९३॥

भाषार्थ-वह इतिहास और पुरा वृत्त कहा है-और जिसमें सर्ग-प्रतिसर्ग वंश और मन्वंतर ॥ ९३ ॥

वंशानुचरितंयस्मिन्पुराणंतद्विकीर्तितं ।
वर्णादिधर्मस्मरणंयत्रवेदाविरोधकं ॥९४॥

भाषार्थ-और वंशोंके चरित्रोंका वर्णन हो वह पुराण कहाहै-और जिसमें वेदके अनुकूल वर्ण आदिकोंके धर्मका स्मरण हो ॥ ९४ ॥

कीर्तनंचार्थशास्त्राणांस्मृतिःसाचप्रकीर्तिता
युक्तिर्बलीयसीयत्रसर्वंस्वाभाविकंमतं ॥

भाषार्थ-और अर्थशास्त्रका जिसमें कीर्तन हो वह स्मृति कही है-और जिसमें युक्ति बलवान् हो और अन्य सब वर्णन स्वाभाविक हो ॥ ९५ ॥

कस्यापिनेश्वरःकर्तानवेदोनास्तिकंमतं ।
श्रुतिस्मृत्यविरोधेनराजवृत्तांहिशासनम् ॥

भाषार्थ-और ईश्वर किसीकाभी कर्ता न हीहै और न वेद है वह नास्तिक मत है-और श्रुति और स्मृतिके अनुकूल जिसमें राजाके वृत्तांतकी शिक्षा हो ॥ ९६ ॥

सुयुक्त्यार्याजनंयत्रह्यर्थशास्त्रंतदुच्यते ।
शशादिभेदतःपुंसामनुकूलादिभेदतः ॥

भाषार्थ-और युक्तिसे धनके संचयका वर्णन हो वह अर्थशास्त्र कहाता है-और जिसमें शश आदिके भेद और अनुकूल आदि भेदसे पुरुषोंके ॥ ९७ ॥

पद्मिन्यादिप्रभेदेनस्त्रीणांस्वीयादिभेदतः ।
तत्कामशास्त्रंसत्वादिलक्ष्मयत्रास्तिचोभयोः

भाषार्थ-और पद्मिनी आदिभेद और स्वीय आदि भेदसे स्त्रियोंके लक्षण और सत्व आदि दोनोंके लक्षणोंका वर्णन हो वह कामशास्त्र कहाहै ॥ ९८ ॥

प्रासादप्रतिमारामगृहवाप्यादिसत्कृतिः ।
कथितायत्रतच्छिल्पशास्त्रमुक्तंमहर्षिभिः ॥

भाषार्थ-जिसमें प्रासाद (मंदिर) प्रतिमा-आराम-(बगीचा) घर-और बावडी आदिका बनाना कहाहो वह बडे २ ऋषियोंने शिल्पशास्त्र कहा है ॥ ९९ ॥

समन्यूनाधिकत्वेनसारूप्यादिप्रभेदतः ।
अन्योन्यगुणभूषादिवर्ण्यतेलंकृतिश्चसा ॥

भाषार्थ-सम-न्यून-अधिक-आदिसे और सारूप्य आदिके भेदसे जहां परस्परके गुण और भूषा (शोभा) आदिका वर्णन हो वह अलंकारशास्त्र कहाता है ॥ ३०० ॥

सरसालंकृतादुष्टशब्दार्थंकाव्यमेवतत् ॥
विलक्षणचमत्कारबीजंपद्यादिभेदतः ॥१॥

भाषार्थ-जिसमें रसों सहित अलंकार और शब्दोंका शुद्ध अर्थ हो और पद्य (श्लोक) आदिके भेदसे विलक्षण चमत्कारका बीजहो वह काव्य कहाता है ॥ १ ॥

लोकसंकेततोर्थानांसुग्रहावाक्तुदैशिकी ॥
विनाकौशिकशास्त्रीयसंकेतैःकार्यसाधिका॥

भाषार्थ-जिसमें जगत्की रीतिसे देशकी वाणीका ज्ञान भली प्रकारहो और कोश और

शास्त्रके संकेतोंके विना कार्योंकी सिद्धि जिससे हो ॥ २ ॥

यथाकालोचितावाग्यावसरोक्तिश्चसास्मृता
ईश्वरःकारणंयत्रादृश्योस्तिजगतःसदा ॥

भाषार्थ-ऐसी समयके अनुसार जो वाणी उसे अवसरोक्ति कहते हैं-जिसमें जगत्का कारण ईश्वर सदैव अदृश्य माना है ॥ ३ ॥

श्रुतिस्मृतिविनाधर्माधर्मोस्तस्तत्त्वयावनं ।
श्रुत्यादिभिन्नधर्मोस्तियत्रतद्यावनंमतं ४॥

भाषार्थ-श्रुति और स्मृतिके विना धर्म अधर्मका वर्णन हो वह यावन (यवनोंका शास्त्र फारसी) माना है और श्रुति आदिसे भिन्न धर्म जिसमें हो वह यवनोंका मत है ४

कल्पितश्रुतिमूलोवामूलेलोकैर्धृतःसदा
देशादिधर्मःसज्ञेयोदेशेदेशेकुलेकुले ॥२॥

भाषार्थ-कल्पित हो वा श्रुतिके अनुसार हो और जिसको लोकोंने मूल (सत्य) मान रक्खाहो वह देश आदिका धर्म कहाहै और देश २ और कुल २ में ॥ ५ ॥

पृथक्पृथक्तुविद्यानांलक्षणंसंप्रकाशितं ॥
कलानांनपृथङ्नामलक्ष्मचास्तीहकेवलं ६

भाषार्थ-भिन्न २ होता है-यह विद्याओंका लक्षण प्रकाश किया-कलाओंका पृथक् २ नाम नहीं है केवल लक्षण है ॥ ६ ॥

पृथक्पृथक्क्रियाभिर्हिकलाभेदस्तुजायते
यांयांकलांसमाश्रित्यतन्नाम्नाजातिरुच्यते

भाषार्थ-भिन्न २ कर्मोंसे क्रियाका भेद होता है और जिस २ कलाका आश्रय हो उसी २ नामसे जाति कहाती है ॥ ७ ॥

हावभावादिसंयुक्तंनर्तनंतुकलास्मृता ।
अनेकवाद्यविकृतौज्ञानंतद्वादनेकला ॥८॥

भाषार्थ-हाव भाव आदि सहित जो नृत्य उसे कला कहते हैं और अनेक प्रकारके बाजोंके विकारका ज्ञान हो वहां उसके बजानेमें कला होती है ॥ ८ ॥

अनेकरूपाविर्भावकृतिज्ञानंकलास्मृता
वस्त्रालंकारसंधानंस्त्रीपुंसोश्चकलास्मृता९॥

भाषार्थ-अनेक रूपोंके आविर्भाव (प्रकटता) से जिसमें कार्योंका ज्ञानहो वह कलाकही-स्त्री-और पुरुषके वस्त्र और भूषणोंके संधान (धारण) कोंभी कला कहते हैं ९

शय्यास्तरणसंयोगेपुष्पादिग्रथनंकला
द्यूताद्यनेकक्रीडाभीरंजनंतुकलास्मृता १०

भाषार्थ-शय्या और बिछोने पर पुष्प आदिके गूंथनको कला कहते हैं-और द्यूत आदि अनेक क्रीडासे जो रंजन उसे कला कहते हैं ॥ १० ॥

अनेकासनसंधानैरतेर्ज्ञानंकलास्मृता ।
कलासप्तकमेतद्धिगांधर्वेसमुदाहृतं ॥११॥

भाषार्थ-अनेक आसनोंसे रति (मैथुन) के संधानके ज्ञानको कला कहते हैं-ये सात कला गांधर्वोने कही हैं ॥ ११ ॥

मकरंदासवादीनांमद्यादीनांकृतिःकला ।
शल्यमूढाहृतौज्ञानंशिराव्रणव्यधेकला १२

भाषार्थ-मकरंद और आसव आदि मद्योंके आकारको कला कहते हैं-छिपे हुये शल्य (घाव) के निकासनेके ज्ञानको औरन सोंके वींधनेको कला कहते हैं ॥ १२ ॥

हीनाधिरससंयोगेन्नादिसंपाचनंकला ।
वृक्षादिप्रसवारोपपालनादिकृतिःकला १३

भाषार्थ-हीन और अधिक रसके संयोगसे अन्न आदिके पचानेको कला कहते हैं-और

वृक्ष आदिके पेडोंके लगाने और पालनेको कला कहते हैं ॥ १३ ॥

पाषाणादिद्रुतिर्धातोस्तद्भस्मकरणेकला ।
यावदिक्षुविकाराणांकृतिज्ञानंकलास्मृता ॥

भाषार्थ-पत्थर आदि धातुओंको गलाना और उनकी भस्म करनेकी कला-और संपूर्ण इक्षुओंके गुड आदि विकारोंको जाननेकी कला कहीहै ॥ १४ ॥

धात्वौषधीनांसंयोगक्रियाज्ञानंकलास्मृता ।
धातुसांकर्यपार्थक्यकरणंतुकलास्मृता १५

भाषार्थ-धातु औषधि इनके संयोगकी क्रियाके ज्ञानकी कला-और मिलीहुयी धातुओंके पृथक् करनेकी कला कहीहै- ॥१५॥

संयोगापूर्वविज्ञानंधात्वादीनांकलास्मृता ॥
क्षारनिष्कासनज्ञानंकलासंज्ञंतुतत्स्मृतं १६

भाषार्थ-धातु आदिके अपूर्व संयोगके ज्ञानको कला और क्षार आदिके निकासनेके ज्ञानको कला कहतेहैं ॥१६॥

कलादशकमेत्तद्धिह्यायुर्वेदागमेषुच ।
शस्त्रसंधानविक्षेपःपदादिन्यासतःकला १७

भाषार्थ-ये दश कला आयुर्वेदके आगमोंमें होतीहैं- और शस्त्रको लगाना और चरण आदिके न्यास (रखने) से फेंकनेको कला कहते हैं- ॥१७॥

संध्याघाताकृष्टिभेदैर्मल्लयुद्धंकलास्मृता ।
कलाभिर्लक्षितेदेशेयंत्राद्यस्त्रनिपातनं॥१८

भाषार्थ-संधि (मेल) आघात (पटकना) और आकृष्टि (खींचने) के भेदसे मल्लयुद्धको और कलाओंसे जाने हुये देशमें अस्त्रके निपातन (गेरने) को कला कहते हैं-१८॥

वाद्यसंकेततोव्यूहरचनादिकलास्मृता ।
गजाश्वरथगत्यादियुद्धसंयोजनंकला॥१९

भाषार्थ-बाजेके संकेतसे व्यूह (सेना) की रचनाको कला कहतेहैं-और गज-अश्व-रथ आदिकी गतिके द्वारा युद्धके मेलको कला कहतेहै ॥ १९ ॥

कलापंचकमेतद्धिधनुर्वेदागमेस्थितं ।
विविधासनमुद्राभिर्देवतातोषणंकला २०॥

भाषार्थ-ये पांचकला धनुर्वेदके आगम (ग्रंथो) में स्थितहैं-और अनेक प्रकारके आसन और मुद्राओंसे देवताकी प्रसन्नताको कला कहतेहैं ॥ २० ॥

सारथ्यंचगजाश्वादेर्गतिशिक्षाकलास्मृता ।
मृत्तिकाकाष्ठपाषाणधातुभांडादिसत्क्रिया

भाषार्थ-गज अश्व आदिकी गति (चलने)की शिक्षा और सारथिके कामको कला कहतेहैं मट्टी-काष्ठ-पत्थर-धातु-इनके अच्छे २ पात्र बनानेको कला कहतेहैं २१॥

पृथक्कलाचतुष्कंतुचित्राद्यालेखनंकला ॥
तडागवापीप्रासादसमभूमिक्रियाकला २२

भाषार्थ-ये चारकला पृथक्है चित्र आदिके लिखनेको कला कहतेहैं-और तलाव बावडी-प्रासाद इनकी समभूमिका जो करना उसकोभी कला कहतेहैं ॥ २२ ॥

घट्याद्यनेकयंत्राणांवाद्यानांतुकृतिःकला॥
हीनमध्यादिसंयोगवर्णाद्यैरंजनंकला ॥२३

भाषार्थ-घटी आदिके अनेकयंत्र और बाजोंके बनानेको कला कहतेहैं -और अल्प मध्य आदि वर्णो (रंगों) से रंगनेको कला कहतेहैं ॥ २३ ॥

जलवाय्वग्निसंयोगनिरोधैश्चक्रियाकला ।
नौकारथादियानानांकृतिज्ञानंकलास्मृता॥

भाषार्थ-जल-वायु-अग्नि इनके संयोग और निरोधको कला कहतेहैं- और नाव-रथ- आदि यानोंके बनानेकी रीतिको कला कहतेहैं ॥ २४ ॥

सूत्रादिरज्जुकरणंविज्ञानंतुकलास्मृता ।
अनेकतंतुसंयोगैःपटबंधःकलास्मृता ॥२५

भाषार्थ-सूत आदिकी रज्जु करनेका जो ज्ञान उसेभी कला कहतेहैं अनेक तंतुओंके संयोगसे जो पट(कपडा) का बुनना उस-को कला कहतेहैं ॥२५ ॥

वेधादिसदसज्ज्ञानंरत्नानांचकलास्मृता ।
स्वर्णादीनांतुयाथात्म्यविज्ञानंचकलास्मृता

भाषार्थ-रत्नोंके वींधनेमें सत् असत् का जो ज्ञान वहभी कला और सोने आदि धा-तुओंके यथार्थ स्वरूपका जो विज्ञान उसको कला कहतेहैं ॥ २६ ॥

कृत्रिमस्वर्णरत्नादिक्रियाज्ञानंकलास्मृता ।
स्वर्णाद्यलंकारकृतिःकलालेपादिसत्कृतिः

भाषार्थ-कृत्रिम (नकली) सुवर्ण रत्न आदिकी क्रियाका जो ज्ञान उसको कला-और सुवर्ण आदिके भूषणोंको बनाने और लेप आदिके भली प्रकार करनेको कला कहते हैं ॥ २७ ॥

मार्दवादिक्रियाज्ञानंचर्मणांतुकलास्मृता ।
पशुचर्मांगनिर्हारक्रियाज्ञानंकलास्मृता २८

भाषार्थ-चर्म आदिकी कोमलताके ज्ञान-को कला कहते हैं-और पशुके चर्म और अंगके निर्हार (स्वच्छता) करनेके ज्ञान-को कला कहते हैं ॥ २८ ॥

दुग्धदोहादिविज्ञानेघृतांतंतुकलास्मृता ।
सीवनंकचुकादीनांविज्ञानंहिकलात्मकं२९।

भाषार्थ-दूधके दुहने और घीके निकासने आदिके ज्ञानको कला कहते हैं-और कंचु-क आदिके सीनेका जो अच्छा ज्ञान उसको भी कला कहते हैं ॥ २९ ॥

बाह्वादिभिश्चतरणंकलासंज्ञंजलेस्मृतं ।
मार्जनंगृहभांडादेर्विज्ञानंतुकलास्मृता ।३०

भाषार्थ-जलमें भुजा आदिसे तरना उस-कोभी कला-और घरके पात्र आदिके मांज-नेका जो ज्ञान उसकोभी कला कहते हैं ३०

वस्त्रसंमार्जनंचैवक्षुरकर्मकलेह्युभे ।
तिलमांसादिस्नेहानांकलानिष्कासनेकृतिः

भाषार्थ-वस्त्रोंका धोना और क्षुरकर्म (केशछेदन) ये दोनोंभी कला-और तिल मांस आदिके स्नेह (तेल) आदिका जो ज्ञान उसकोभी कला कहते हैं ॥ ३१ ॥

सीराद्याकर्षणज्ञानंवृक्षाद्यारोहणंकला ।
मनोनुकूलसेवायाःकृतिज्ञानंकलास्मृता ॥

भाषार्थ-हल चलानेका ज्ञान-और वृक्ष-पर चढना इनको कला-और स्वामीके मन-के अनुकूल सेवाका जो ज्ञान उसको कला कहते हैं ॥ ३२ ॥

वेणुतृणादिपात्राणांकृतिज्ञानंकलास्मृता ।
काचपात्रादिकरणविज्ञानंतुकलास्मृता। ३३

भाषार्थ-बांस-और तृण आदिके पात्रोंका जो ज्ञान उसको कला-और कांचके पात्र करनेको कला कहते हैं ॥ ३३ ॥

संसेचनंसंहरणंजलानांतुकलास्मृता ॥
लोहाभिसारशस्त्रास्त्रकृतिज्ञानंकलास्मृता ।

भाषार्थ-जलोंका सींचने और निकासने-के ज्ञानको कला कहते हैं और लोहा और अभिसारके शस्त्र अस्त्रके बनानेका जो ज्ञान उसको कला कहते हैं ॥ ३४ ॥

गजाश्ववृषभोष्ट्राणांपल्याणादिक्रियाकला।
शिशोःसंरक्षणेज्ञानंधारणेक्रीडनेकले।३५॥

भाषार्थ-हाथी-अश्व-बैल-उंट-इनके पल्याण आदिके करनेका जो ज्ञान उसको कला-और बालककी रक्षाके ज्ञानमें बालक धारण और क्रीडा ये दोनों कला हैं ॥३५॥

सुयुक्तताडनज्ञानमपराधिजनेकला।
नानादेशीयवर्णानांसुसम्यग्लेखनेकला ॥

भाषार्थ-अपराधीकी ताडनामें उचित ताडनाके ज्ञानको कला-और नाना देशके अक्षरोंको अच्छी तरह लिखनेका जो ज्ञान उसको कला कहते हैं ॥ ३६ ॥

तांबूलरक्षादिकृतिविज्ञानंतुकलास्मृता।
आदानमाशुकारित्वंप्रतिदानंचिरक्रिया ॥

भाषार्थ-पानोंकी रक्षा करनेकी जो विधि उसकोभी कला कहते हैं-सीखना और शीघ्र करना-प्रतिदान (सिखाना) और विलंबसे करना ॥ ३७ ॥

कलासुद्वौगुणौज्ञेयौद्विकलेपरिकीर्तिते।
चतुःषष्टिकलाह्येताःसंक्षेपेणनिदर्शिताः ३८

भाषार्थ-ये पूर्वोक्त जो कलाओंमें दो गुण हैं येभी दो कला कही हैं-ये पूर्वोक्त चोसठ कला संक्षेपसे दिखाई ॥ ३८ ॥

यांयांकलांसमाश्रित्यतांतांकुर्यात्सएवहि
ब्रह्मचारीगृहस्थश्चवानप्रस्थोयतिःक्रमात्॥

भाषार्थ-जो जिस २ कलाका आश्रयले उस २ कोही वह करै-ब्रह्मचारी-गृहस्थ-वानप्रस्थ-और यति (संन्यासी) क्रमसे ३९

चत्वारआश्रमाश्चैतेब्राह्मणस्यसदैवहि।
अन्येषामंत्यहीनाश्चक्षत्रविट्शूद्रकर्मणां४०

भाषार्थ-ये चार आश्रम ब्राह्मणके सदैव कहे हैं-और संन्यासको छोडकर क्षत्री वैश्य शूद्रोंके तीन आश्रम होते हैं ॥ ४० ॥

विद्यार्थंब्रह्मचारीस्यात्सर्वेषांपालनेगृही।
वानप्रस्थःसंदमनेसंन्यासीमोक्षसाधने ४१

भाषार्थ-विद्याके लिये ब्रह्मचर्य और सबकी पालनाके लिये गृहस्थ और इंद्रियोंके दमन करनेके लिये वानप्रस्थ और मोक्षकी सिद्धिके लिये संन्यास-आश्रम-है ४१

वर्तयंत्यन्यथादंड्यायावर्णाश्रमजातयः।
जपस्तपस्तीर्थसेवाप्रव्रज्यामंत्रसाधनं ४२॥

भाषार्थ-जो २ वर्ण और आश्रमकी जाति जप-तप-तीर्थ सेवा-संन्यास-मंत्रकी सिद्धि अन्यथा वर्ताव करतीहैं वे दंड देनेयोग्यहैं ॥ ४२ ॥

यदिराज्ञोपेक्षितानिदण्डतोऽशिक्षितानिच।
कुलान्यकुलतांयांतिह्यकुलानिकुलीनताम्

भाषार्थ-यदिराजा दंड और शिक्षा नदे तो कुलभी अकुल और अकुलही कुलीन होजाते हैं ॥ ४३ ॥

देवपूजांनैवकुर्यात्स्त्रीशूद्रस्तुपतिंविना।
नविद्यतेपृथक्स्त्रीणांत्रिवर्गविधिसाधनम् ॥

भाषार्थ-देवताकी पूजा स्त्री और शूद्र अपने पतिकी आज्ञा विना न करैं पतिसे पृथक् स्त्रियोंको धर्म अर्थ काम संबंधी कोई विधि नहीं है ॥ ४४ ॥

पत्युःपूर्वंसमुत्थायदेहशुद्धिंविधायच।
उत्थाप्यशयनीयानिकृत्वावेश्मविशोधनम्

भाषार्थ-स्त्री पतिसे पहिले उठकर देहकी शुद्धि करके शय्याके वस्त्रोंको उठावे और घरको शुद्ध करै (बुहारै) ॥ ४५ ॥

मार्जनेलेपनैःप्राप्यसानलंयवसाङ्गणं ।
शोधयेद्यज्ञपात्राणिस्निग्धान्युष्णेनवारिणा॥

भापार्थ—मार्जन—लीपनेसे अग्निशाला और आंगनको शुद्ध करे और चिकने यज्ञके पात्रोंको उष्ण जलसे धोवे ॥ ४६ ॥

प्रोक्षणीयानितान्येवयथास्थानंप्रकल्पयेत् ।
शोधयित्वातुपात्राणिपूरयित्वातुधारयेत् ॥

भापार्थ—और इनको धोकर जहांके तहां रखदे और पात्रोंको शुद्धकरके जलभर कर रखदे ॥ ४७ ॥

महानसस्थपात्राणिबहिःप्रक्षाल्यसर्वशः ।
मृद्भिस्तुशोधयेच्चुल्लींतत्राग्निंसेंधनंन्यसेत् ॥

भापार्थ—महानस (रसोईके) सब पात्रोंकों बाहिर धोवे और चुल्हीको लीपकर अग्नि और इंधन उसमें रखदे ॥ ४८ ॥

स्मृत्वानियोगपात्राणिरसान्नद्रविणानिच ।
कृतपूर्वाह्णकार्य्येयंश्वशुरावभिवादयेत्॥४९

भापार्थ—जोडके पात्रोंका और रस अन्न द्रव्य इनका स्मरण और प्रातः कालके कामको करके सास और श्वशुरको नमस्कार करे ॥ ४९ ॥

ताभ्यांभर्त्रापितृभ्यांवाभ्रातृमातुलबांधवैः।
वस्त्रालंकाररत्नानिप्रदत्तान्येवधारयेत्॥५०

भापार्थ—जो वस्त्र सास ससुर माता पिता भाई मातुल बांधव इन्होंने वस्त्र वा भूषण दिये हों उनकोही धारण करे ॥ ५० ॥

मनोवाक्कर्मभिःशुद्धापतिदेशानुवर्तिनी।
छायेवानुगतास्वच्छासखीवहितकर्मसु ५१

भापार्थ—मन वाणी कर्मसे शुद्ध और पतिकी आज्ञा कारिणी— छायाके समान अनुकूल सखीके समान हित कारिणी रहै ५१॥

दासीवदिष्टकार्य्येषुभार्याभर्तुःसदाभवेत् ।
ततोऽन्नसाधनंकृत्वापतयेविनिवेद्यसा ॥५२

भापार्थ—इष्ट कामोंमें दासीके समान ही स्त्री अपने भर्ताकी सदा रहै फिर अन्नको सिद्ध करके और पतिको निवेदन करके५२

वैश्वदेवोद्धृतैरन्नैर्भोजनीयांश्चभोजयेत् ।
पतिंचतदनुज्ञाताशिष्टमन्नाद्यमात्मना ।
भुक्त्वानयेदहःशेषंसदाऽऽयव्ययचिंतया

भापार्थ—वैश्वदेवसे बचे हुये अन्नोंसे कुटुंबके मनुष्योंको जिमावे— पतिको जिमाकर उसकी आज्ञासे शेष अन्नको खा भोजन करके शेष दिनको आय और व्यय (खर्च) की चिंतामें ही बितावे ॥ ५३ ॥

पुनःसायंपुनःप्रातर्गृहशुद्धिंविधायच ।
कृतान्नसाधनासाध्वीसभृत्यंभोजयेत्पतिम्

भापार्थ—फिर सायंकाल फिर प्रातःकाल घरकी शुद्धि करके और भोजन बनाकर भृत्यों समेत पतिको जिमावे ॥ ५४ ॥

नातितृप्तास्वयंभुक्त्वागृहनीतिंविधायच ।
आस्तृत्यसाधुशयनंततःपरिचरेत्पतिम् ५५

भापार्थ—आप अधिक न खाकर और घरकी नीतिको करके और भली प्रकार शय्याको बिछाकर पतिकी सेवाकरे ॥५५॥

सुप्तेपत्यौतदध्यास्यस्वयंतद्गतमानसा ।
अनग्नाचाप्रमत्ताचनिष्कामाचजितेंद्रिया ॥

भापार्थ—जब पति सोजांय तब आपभी उनके समीप उनमें ही मन लगाकर सौ जाय नंगी नसोवै मतवाली न रहै कामदेवको त्यागै इंद्रियोंको जीतै ॥ ५६ ॥

नोच्चैर्वदेन्नपरुषंनवहूनरुतिमप्रियम् ।
नकेनचिच्चविवदेदप्रलापविवादिनी॥५७॥

भाषार्थ–पतिके संग ऊंचे स्वरसे कड़वा चिल्लाकर–कुप्यारा वचन न बोले किसीके संग विवाद लडाई न करै और वृथा न बकै ॥५७॥

नचास्यव्ययशीलास्यान्नधर्म्मार्थविरोधिनी प्रमादोन्मादरोषेर्ष्यावचनान्यतिनिंद्यतां ॥

भाषार्थ–पतिके धनमेंसे वहुत खर्च नकरै और धर्मको वा धनको न विगाडे और प्रमाद–उन्माद–रुसना–ईर्ष्या इनको न कहै और निंदा न करै ॥ ५८ ॥

पैशून्यहिंसाविषयमोहाहंकारदर्पताम् । नास्तिक्यसाहसस्तेयदम्भान्साध्वीविवर्जयेत् ॥ ५९ ॥

भाषार्थ– चुगली–हिंसा–मोह अहंकार अभिमान –नास्तिकता–साहस अविचारसे करना चोरी दंभ इन सवको साध्वी स्त्री त्यागदे ॥५९ ॥

एवंपरिचरन्तीसापतिंपरमदैवतं । यशस्यमिहयात्येवपरत्रैषासलोकताम् ६०

भाषार्थ–इस प्रकार परदेवतारूप अपने पतिकी जो सेवा करतीहै वह इसलोकमें यश और मरकर पतिलोकमें जातीहै॥६०॥

योषितोनित्यकर्मोक्तंनैमित्तिकमथोच्यते । रजंसोदर्शनादेषासर्वमेवपरित्यजेत् ॥६१॥

भाषार्थ–यह स्त्रीका नित्यकर्म कहा अव नैमित्तिक कर्म कहतेहैं रजके दर्शनसे स्त्री सवको त्यागदे ॥ ६१ ॥

सर्वैरलक्षिताशीघ्रंलज्जितांतर्गृहेवसेत् । एकांवराकृशादीनास्नानालंकारवर्जिता ॥ स्वपेद्भूमावप्रमत्ताक्षपेदेवमहस्त्रयं ॥६२॥

भाषार्थ–ऐसे भीतरके घरमें वसै जहां कोई न देखै और एक वस्त्र धारै और स्नान भूषणोंको त्यागदे भूमिमें सोवे प्रमाद न करै ऐसे जव तीन दिन वीतजांय ॥ ६२ ॥

स्नायीतसात्रिरात्रांतेसचैलाभ्युदितेरवौ । विलोक्यभर्तृवदनंशुद्धाभवतिधर्मतः ६३॥

भाषार्थ–चौथें दिन सूर्योदय होने पर स्नानकरै और पतिके मुखको देखकर शुद्ध होतीहै ॥ ६३ ॥

कृतशौचापुनःकर्मपूर्ववच्चसमाचरेत् । द्विजस्त्रीणामयंधर्मःप्रायोऽन्यासामपीष्यते

भाषार्थ–इसप्रकार शुद्ध होकर स्त्री पूर्ववत् कर्म आचरे यह धर्म द्विजाति स्त्रियोंकाहै और प्रायः अन्योंकाभीहै ॥ ६४ ॥

कृषिपण्यादिकृत्येषुभवेयुस्ताःप्रसाधिकाः संगीतैर्मधुराऽऽलापैःस्वायत्तस्तुपतिर्यथा ॥

भाषार्थ–और वे जाति खेती व्यापारके कृत्योंमें चतुर होतीहै–उत्तम गाना–मीठा वचन–इनसे जिस प्रकार अपना पति अपने आधीनरहै ॥ ६५ ॥

भवेत्तथाऽऽचरेयुर्वैमायाभिःकार्यकेलिभिः । नास्तिभर्तृसमोनाथोनास्तिभर्तृसमंसुखं ॥

भाषार्थ–तिसप्रकार ही माया और कार्यों की केलीसे स्त्री आचरण करै क्योंकि पतिके समान नाथ नही और पतिके समान सुख नही ॥ ६६ ॥

विसृज्यधनसर्वस्वंभर्तावैशरणंस्त्रियः । मितंददातिहिपितामितंभ्रातामितंसुतः ६७

भाषार्थ–संपूर्ण धन और सर्वस्वको छोडकर स्त्रीका शरण भर्ता ही है–पिता–भाई पुत्र–ये सब मित (थोडासा) ही देते हैं ॥ ६७ ॥

अमितस्यप्रदातारंभर्तारंकानपूजयेत् ।
शूद्रोवर्णचतुर्थोपिवर्णत्वाद्धर्ममर्हति॥ ६८॥

भाषार्थ-अमित (अनतुले) के देनेवाले भर्ताको कोन स्त्री न पूजेगी-चौथावर्ण शूद्रभी वर्ण होनेसे धर्मके योग्य है ॥ ६८ ॥

वेदमंत्रस्वधास्वाहावषट्कारादिभिर्विना ।
पुराणाद्युक्तमंत्रैश्चनमोंतैःकर्मकेवलं॥ ६९॥

भाषार्थ-वेदकेमंत्र-स्वधा-स्वाहा- वषट्कार आदिके विना केवल पुराण आदिके नमोंत मंत्रोंसेही शूद्रका कर्म होता है ॥ ६९ ॥

विप्रवद्विप्रविन्नासुक्षत्राविन्नासुक्षत्रवत् ।
प्रजाताःकर्मकुर्युर्वैश्यविन्नासुवैश्यवत् ७०

भाषार्थ-ब्राह्मणने विवाहीमें पैदा हुये ब्राह्मणके समान-और क्षत्रियने विवाहीमें पैदा हुये क्षत्रियके समान-और वैश्यने विवाहीमें पैदाहुये वैश्यकेही समान कर्मोंको करै अर्थात् जिस वर्णकी स्त्री हो उस वर्णके कर्म न-करै ॥ ७० ॥

वैश्यासुक्षत्रविप्राभ्यांजातःशूद्रासुशूद्रवत् ।
अधमादुत्तमायांतुजातःशूद्राधमःस्मृतः७१

भाषार्थ-क्षत्रिय और ब्राह्मणसे वैश्या वा शूद्रा में पैदा हुये माताके समान कर्मोंको करै और अधम वर्णसे उत्तमवर्णकी स्त्रीमें पैदा हुआ तो शूद्रसेभी अधम कहाहै ॥७१॥

सशूद्रादनुसरकुर्यान्नाममंत्रेणसर्वदा ।
ससंकरचतुर्वर्णाएकत्रैकत्रयावनाः ॥७२॥

भाषार्थ-वह शूद्रके अनुसारही नाममंत्रसे कर्मको सदैव करै-संकरजातियों सहित चारों वर्ण एक २ जगह यवन होते हैं ॥७२॥

वेदभिन्नप्रमाणास्तेप्रत्यगुत्तरवासिनः ।
तदाचार्यैश्चतच्छास्त्रंनिर्मितंतद्धितार्थकं७३

भाषार्थ-उनके मतमें वेदप्रमाण नही है और पश्चिम और उत्तरमें वसते हैं-उनकेही आचार्योंने उनके हितके लिये उनका शास्त्र रचाहै ॥ ७३ ॥

व्यवहाराययानीतिरुभयोरविवादिनी ।
कदाचिद्बीजमाहात्म्यक्षेत्रमाहात्म्यतःक्वचित् ॥ ७४ ॥

भाषार्थ-जो नीतिव्यवहारके लिये विवाद वाली नहो वह नीतिहै कदाचित् बीजके माहात्म्यसे और कदाचित् क्षेत्र (स्त्री) के माहात्म्यसे ॥ ७४ ॥

नीचोत्तमत्वंभवतिश्रेष्ठत्वंक्षेत्रबीजतः ।
विश्वामित्रश्चवासिष्ठोमातंगोनारदादयः७५

भाषार्थ-नीचता और उत्तमता होती है-क्षेत्र वा बीजसे श्रेष्ठता होतीहै जैसे विश्वामित्र वासिष्ठ मातंग और नारद आदि ॥७५

स्वस्वजात्युक्तधर्मोयःपूर्वैराचरितःसदा ।
तमाचरेच्चसाजातिर्दंड्यास्यादन्यथानृपैः७६

भाषार्थ-अपनी२ जातिके लिये कहाहुआ जो२ धर्म बडोंनें सदासे कियाहो वह जाति उसको ही करें अन्यथा करैं तो राजानें दंड देने योग्य है ॥ ७६ ॥

जातिवर्णाश्रमान्सर्वान्पृथक्चिन्हैःसुलक्षयेत्
यंत्राणिधातुकाराणांसंरक्षेन्निशिसर्वदा ७७

भाषार्थ-जाति वर्ण आश्रम इन सबको पृथक् चिन्होंसे भलीप्रकार चिन्हवाले करै और धातु बनानेवालोंके यंत्रोंकी रात्रिमें सदैव रक्षा करै ॥ ७७ ॥

कारुशिल्पिगणान्राष्ट्रेरक्षेत्कार्यानुमानतः ।
अधिकान्कृषिकृत्सेवाभृत्यवर्गेनियोजयेत्

भाषार्थ-कारीगर और शिल्पी इनके समूह की देशमें कार्यके अनुमानसे रक्षा करै-यदि

अधिक होजांय तो खेती सेवा भृत्योंमें नियुक्त करदे ॥ ७८ ॥

चौराणांपितृभूतास्तेस्वर्णकारादयस्त्वतः ।
गंजागृहंपृथग्ग्रामात्तस्मिन्रक्षेत्तुमद्यपान् ॥

भाषार्थ-क्यों कि सुनार आदि वे सब चोरोंके पितारूप होते हैं-और मदिरा बनाने के या पीनेके घरको गांवसे पृथक् करै और मदिरापीनेवालोंकी उसमें रक्षा करै ॥ ७९ ॥

नदिवामद्यपानंहिराष्ट्रेकुर्यात्क्वचिहिंचित् ।
ग्रामेग्राम्यान्वनेवन्यान्वृक्षान्संरोपयेन्नृपः ॥

भाषार्थ-और अपने राज्यमें मदिराका पान दिनमें कभी न करावे-और गांवमे गांवके वृक्षोंको औरवनमें वनके वृक्षोंको राजा लगवावे ॥ ८० ॥

उत्तमान्विंशतिकरैर्मध्यमांस्तिथिहस्ततः ।
सामान्यान्दशहस्तैश्चकनिष्ठान्पंचभिःकरैः ॥

भाषार्थ-बहुत वडे उत्तम २ वृक्षों वीसहाथके मध्यम वृक्षोंको पंद्रह हाथके सामान्य वृक्षोंको दश हाथके और छोटे २ वृक्षोंको पांच हाथके अंतर पर लगवावे ॥ ८१ ॥

अजाविगोशकृद्भिर्वाजलैर्मांसैश्चपोषयेत्
उदुंबराश्वत्थवटचिंचाचंदनजंभलाः ॥ ८२

भाषार्थ-और उनको बकरी भेड गौके गोवरसे और जल और मांससे पुष्ट करावे गूलर-पीपल-वड-इमली-चंदन-जंभल और ॥ ८२ ॥

कदंबाशोकबकुलबिल्वाम्रातकपित्थकाः ।
राजादनाम्रपुन्नागतुदकाष्ठाम्रचंपकाः ॥ ८३ ॥

भाषार्थ-कदंब-अशोक-वकुल-बेल-आम्रातक-कैथ-राजादनाम्र-(मालदाआदि) पुन्नाग-तुदकाष्ठ-आम्र-चंपा और ॥ ८३ ॥

नीपकोकाम्रसरलदाडिमाक्षोटभिःसटाः ॥
शिंशिपाशिंशुबदरनिंबजंभीरक्षीरिकाः ८४

भाषार्थ-नीप-को काम्र-सरल-अनार-अखरोट-भिस्सट-शीसम-शिंशु-वेरी-निंब जंभीरी-क्षीरिक और ॥ ८४ ॥

खर्जूरदेवकरजफल्गुतापिच्छसिंभलाः ।
कुद्दालोलवलीधात्रीकुमकोमातुलुंगकः ८५

भाषार्थ-खजूर-देवकरंज-फल्गु-तापिच्छ (तमाल) सेंभल-कुद्दाल-लवली-आवला-कुमक-मातुलुंग (सुपारी) और ॥ ८५ ॥

लकुचोनारिकेलश्चरंभान्येसत्फलाद्रुमाः ।
सुपुष्पाश्चैवयेवृक्षाग्रामाभ्यर्णेनियोजयेत् ॥

भाषार्थ-वहेडा-नारियल-रंभा (केला) ये सब और जो अच्छे फलवाले वृक्षहैं अथवा अच्छे पुष्पवाले वृक्षहैं इन सबको ग्रामके समीपमें लगवावे ॥ ८६ ॥

येचकंटकिनोवृक्षाः खदिराद्यास्तथापरे ।
आरण्यकास्तेविज्ञेयास्तेषांतत्रनियोजनं ८७

भाषार्थ-और जो कांटेवाले और खदिर (खैर) आदि अन्य जो वृक्षहैं वे वनके समझने इससे उनको वनमें लगवावे ॥ ८७ ॥

खदिराश्मंतशाकाग्निमंथस्योनाकवञ्जुलाः ।
तमालशालकुटजधवार्जुनपलाशकाः ८८ ॥

भाषार्थ-खैर अश्मंतक-शाक-अग्निमंथ (अमलतास) स्योनाक-वञ्जुल-तमाल-शाल-कुटज-धव-अर्जुन-ढाक-और ॥ ८८ ॥

सप्तपर्णशमीतूनदेवदारुविकंकताः ।
करमर्देंगुदीभूर्जविषमुष्टिकरीरकाः ॥ ८९ ॥

भाषार्थ-सप्तपर्ण-शमी-छोंकर-तून-देवदारु-विकंकत-करमर्द-इंगुदी-भोजपत्र-विषमुष्टि-करीर और ॥ ८९ ॥

शल्लकीकाश्मरीपाठातिंदुकोबीजसारकः।
हरीतकीचभल्लातःशम्याकोर्कश्चपुष्करः९०

भाषार्थ-शल्लकी-काश्मरी -पाठा-तेंदु-विजयसार-हरडे-भिलावे-शम्याक आक-पोहकर मूल और ॥ ९० ॥

अरिमेदश्चपीतद्रुःशाल्मलिश्चविभीतकः।
नरवेलोमहावृक्षोऽपरेयेमधुकादयः॥ ९१ ॥

भाषार्थ-अरिमेद-पीतवृक्ष-शाल्मली-विभीतक-नरवेल-महावृक्ष-और अन्य जो मधुक (महुआ) आदि हैं ॥ ९१ ॥

प्रतानवंत्यःस्तंबिन्योगुल्मिन्यश्चतथैवच।
ग्राम्याग्रामेवनेवन्यानियोज्यास्तेप्रयत्नतः

भाषार्थ-फलनेवाली-और गुच्छेवाली-और गुल्मवाली जो लता हैं-इन सबको गावके योग्य गांवोंमें और वनमें लगाने योग्य वनमें प्रयत्नसे लगावे ॥ ९२ ॥

कूपवापीपुष्करिण्यस्तडागाःसुगमास्तथा।
कार्याः खाताद्द्वित्रिगुणविस्तारपद्धानिकाः

भाषार्थ-और कूप-वावडी-पुष्करिणी-तलाव-इनको सुगम करे और खोदनेसे दूनी वा तिगुनी इनकी पद्धानी (मणघाटआदि) वनवावे ॥ ९३ ॥

यथातथाह्यनेकाश्चराष्ट्रेस्याद्विपुलंजलं।
नदीनांसेतवःकार्याविवंधाः सुमनोहराः ॥

भाषार्थ-जैसे २ देशमें वहुत जलहो ऐसे २ अनेक कूप आदि वनावे-और नदीयोंके पुल और वांध अच्छे मनोहर करावे ॥९४॥

नौकादिजलयानानिपारगानिनदीषुच।
यज्जातिपूज्योयोदेवस्तद्विद्यायाश्चयोगुरुः

भाषार्थ-और नदीयोंमें पार जानेके लिये नाव और जलके यान आदि करावे-जिस जातिके पूजने योग्य जो देव हो और उस जातिकी विद्याका जो गुरु हो ॥ ९५ ॥

तदालयानितज्जातिगृहपंक्तिमुखेन्यसेत्।
शृंगाटकेग्राममध्येविष्णोर्वाशंकरस्यच ९६

भाषार्थ-उनके स्थान उसी जातिके घरोंकी पंक्तिके सन्मुख वसावे-शृंगाटकमें और गांवके मध्यमें विष्णु वा शिवका वा ॥९६॥

गणेशस्यरवेर्देव्याःप्रासादाःक्रमतोन्यसेत्।
मेर्वादिषोडशविधलक्षणान्सुमनोहरान् ॥

भाषार्थ-गणेश-सूर्य-देवी-इनके मंदिर क्रमसे वनवावे-मेरु आदि सोलह प्रकारके और वडे मनोहर-और ॥ ९७ ॥

वर्तुलांश्चतुरस्रान्वायंत्राकारान्समंडपान्।
प्राकारगोपुरगणयुतान्द्वित्रिगुणोच्छ्रितान्॥

भाषार्थ-गोल-चतुष्कोण-मंडपसहित-यन्त्रोंके आकार-और परकोटा-गोपुरके समूहोंसे युक्त-दूने वा तिगुने ऊंचे वनवावे९८॥

यथोक्तांतःसुप्रतिमाञ्जलमूलान्विचित्रितान्।
रम्यःसहस्रशिखरःसपादशतभूमिकः॥९९

भाषार्थ-और जिनके भीतर शास्त्रोक्त प्रतिमा हो ऐसे विचित्र जलके मूल (वडे २ तलाव) जो रमणीक हो-सहस्र जिसकी शिखर हों-सवासौ हाथ जिसकी भूमिहो९९

सहस्रहस्तविस्तारोच्छ्रायःस्यान्मेरुसंज्ञकः
ततस्ततोष्टांशहीनाअपरेमंदरादयः १००॥

भाषार्थ-सहस्र हाथका जिसका विस्तार और उंचायी हो-उसका मेरु नाम है-उससे आठ २ अंशसे जो कम हों वे क्रमसे मंदर आदि होते हैं ॥ १०० ॥

मंदरऋक्षमालीचद्युमणिश्चंद्रशेखरः ।
माल्यवान्वापारियात्रोरत्नशीर्षोहिधातुमान्

भाषार्थ-मंदर -ऋक्षमाली -द्युमणि-चंद्र-शेखर-माल्यवान्-पारियात्र-रत्नशीर्ष-धातु-मान् ॥ १०१ ॥

पद्मकोशःपुष्पहासःश्रीकरःस्वस्तिकाभिधः
महापद्मःपद्मकूटःषोडशोविजयाभिधः २॥

भाषार्थ-पद्मकोश-पुष्पहास-श्रीकर-स्व-स्तिक-महापद्म-पद्मकूट-विजय ये सोलह मेरु आदि लक्षण होते हैं ॥ १०२ ॥

तन्मंडपश्चतत्तुल्यःपादन्यूनोच्छ्रितःपुरः ।
स्वाराध्यदेवताध्यानैःप्रतिमास्तेपुयोजयेत्

भाषार्थ-इनका मंडपभी इनकेही तुल्य होता है-इनसे चौथाई कम जिसकी ऊंचाई हो वह पुर होता है-और अपनी २ आरा धनाके योग्य देवताओंके ध्यानसे इनमें प्रतिमा नियत करे ॥ ३ ॥

सात्विकीराजसीदेवप्रतिमातामसीत्रिधा ।
विष्णवादीनांचयायत्रयोग्यापूज्यातुतादृशी

भाषार्थ-सात्विकी-राजसी-तामसी यह तीन प्रकारकी विष्णु आदिकी प्रतिमा होती है जो जहां योग्य हो उसकोही वहां पूजे॥४

योगमुद्रान्वितास्वस्थावराभयकरान्विता ।
देवेंद्रादिस्तुतनुतासात्विकीसाप्रकीर्तिता५॥

भाषार्थ-जिस प्रतिमामें योगमुद्रा हों जो स्वस्थ हो-और जिसके सुंदर और भयरहित कर हों और जिसकी देव और इंद्र आदि स्तुति करैं वह प्रतिमा सात्विकी कही है ५॥

तिष्ठंतीवाहनस्थावानानाभरणभूषिता ।
याशस्त्रास्त्राभयवरकरासाराजसीस्मृता ॥६

भाषार्थ-जो प्रतिमा खडी हो वा वाहन परस्थित हो-नाना भूषणोंसे भूषित हो और शस्त्र अस्त्र अभय वर दायक जिसके कर हो वह राजसी कही है ॥ ६ ॥

शस्त्रास्त्रैर्दैत्यहंत्रीयाह्युग्ररूपधरासदा ।
युद्धाभिनंदिनीसातुतामसीप्रतिमोच्यते७॥

भाषार्थ-जो शस्त्र अस्त्रोंसे दैत्योंको हतने वाली और सदैव उग्ररूप धारे हो-और युद्ध जिसको प्रिय हो वह प्रतिमा तामसी कही है ॥ ७ ॥

संक्षेपतस्तुध्यानादिविष्ण्वादीनांतथोच्यते
प्रमाणंप्रतिमानांचतदंगानांसुविस्तरं ॥८॥

भाषार्थ-अब संक्षेपसे विष्णु आदिकोंका यथार्थ ध्यान और प्रतिमा और उनके अंगों का विस्तारसे प्रमाण वर्णन करते हैं ॥ ८ ॥

स्वस्वमुष्टेश्चतुर्थांशोह्यंगुलंपरिकीर्तितं ।
तदंगुलैर्द्वादशभिर्भवेत्तालस्यदीर्घता ॥९॥

भाषार्थ-अपनी २ मुष्टिके चौथे भागको अंगुल कहते हैं-और बारह अंगुलकी एक ताल दीर्घता (बिलस्त) होती है ॥ ९ ॥

वामनीसप्ततालास्यादष्टतालातुमानुषी ।
नवतालास्मृतादैवीराक्षसीदशतालिका १०

भाषार्थ-वामन साततालकी-और मानुषी आठ तालकी-नौ तालकी दैवी-और दश तालकी राक्षसी-प्रतिमा कही है ॥ ११० ॥

सप्ततालाह्युच्चतावामूर्तीनांदेशभेदतः ।
सदैवस्त्रीःसप्ततालासप्ततालश्चवामनः ११

भाषार्थ-अथवा देशके भेदसे मूर्तियोंकी उंचाई साततालकी होती है-और स्त्री और वामन सदैव सात तालके होते हैं ॥ ११ ॥

नरोनारायणोरामोनृसिंहोदशतालकः ।
दशतालाकृतयुगेत्रेतायांनवतालिका ॥ १२

भाषार्थ-नर-नारायण-राम-नृसिंह-ये सब दश तालके होते हैं-परन्तु सत्ययुगके दश तालके-त्रेतामें नौ तालके और॥१२॥

अष्टतालाद्वापरेतुसप्ततालाकलौस्मृता ।
नवतालप्रमाणेतुमुखंतालमितंस्मृतं ॥ १३

भाषार्थ-द्वापरमें आठ तालके कलियुगमें सात तालके कहे हैं नौ तालकी मूर्तिके प्रमाणमें एक तालका मुख कहा है ॥ १३॥

चतुरंगुलंललाटंस्यादधोनासातथैवच ।
नासिकाधश्चहन्वंतंचतुरंगुलमीरितं ॥ १४॥

भाषार्थ-और चार अंगुलका मस्तक और नाकका अधोभाग कहा है-नासिकासे नीचें हनु (ठोडी) तक चार अंगुलका कहा है ॥ १४ ॥

चतुरंगुलाभवेद्ग्रीवातालेनहृदयंपुनः ।
नाभिस्तस्मादधःकार्यातालेनैकेनशोभिता

भाषार्थ-चार अंगुलकी ग्रीवा और एक तालका हृदय कहा है-और हृदयके नीचे एक तालकी शोभायमान नाभी करनी॥१५॥

नाभ्यधश्चभवेन्मेढ्रंभागेनैकेनवापुनः ।
द्वितालौह्यायतावूरूजानुनीचतुरंगुले १६॥

भाषार्थ-नाभिके नीचे एक भागसे लिंग इंद्रिय और दो ताल लंबे ऊरू और चार अंगुलके जानु बनवावे ॥ १६ ॥

जंघेऊरूसमेकार्येगुल्फाधश्चतुरंगुलं ।
नवतालात्मकमिदमूर्ध्वमानंबुधैःस्मृतं १७

भाषार्थ-नीचेकी जंघा (पींडि) ऊरूके समान करने-गुल्फके नीचेका भाग चार अंगुलका करना-नौताल ऊंची मूर्तिका प्रमाण पंडितोंने यह कहा है ॥ १७ ॥

शिखावधितुकेशांतंत्र्यंगुलंसर्वमानतः ।
दिशानयाचविभजेत्सप्ताष्टदशतालिकं १८

भाषार्थ-केशोंसे शिखा पर्यंत संपूर्ण भाग तीन अंगुलके मानसे करना-इसी रीतिसे सात आठ दश तालकी मूर्तिमेंभी अंगोंके मान समझने ॥ १८ ॥

चतुस्तालात्मकौबाहूह्यंगुल्यंतावुदाहृतौ ।
स्कंधादिकूर्परांतंचविंशत्यंगुलमुत्तमं १९॥

भाषार्थ-अंगुली पर्यंत चार तालकी भुजा कही है और स्कंधसे कूर्पर (ताल) पर्यंत वीस अंगुलका प्रमाण उत्तम कहा है ॥१९॥

त्रयोदशांगुलंचाधःकक्षायाःकूर्परांतकं ।
अष्टाविंशत्यंगुलस्तुमध्यमांतःकरःस्मृतः ॥

भाषार्थ-कुक्षिके नीचेसे कूर्परपर्यंत तेरा अंगुलका और मध्यमा अंगुलीके अंततक अठाईस अंगुलका कर कहा है ॥ २० ॥

सप्तांगुलंकरतलंमध्यापंचांगुलामता ।
सार्धत्रयांगुलोंगुष्ठस्तर्जनीमूलपूर्वभाक् २१

भाषार्थ-सात अंगुलका हाथका तल और पांच अंगुलका मध्यम कहा है-साढेतीन अंगुलका अँगूठा तर्जनीके मूलके पूर्वभागसे होता है ॥ २१ ॥

पर्वद्वयात्मकोन्यासांपर्वाणित्रीणित्रीणितु ।
अर्धांगुलेनांगुलेनहीनानामाचतर्जनी २२॥

भाषार्थ-अँगूठेके दो पर्व होते हैं अन्य अंगुलियोंके तीन २ पर्व होते हैं अनामिका और तर्जनी आधा अंगुल और अंगुल कम होती है ॥ २२ ॥

कनिष्ठिकानामिकातोंगुलोनाचप्रकीर्तिता ।
चतुर्दशांगुलौपादौह्यंगुष्ठोद्व्यंगुलोमतः २३

भाषार्थ-कनिष्ठिका अनामिकासे एक अंगुल कम होती है चौदह अंगुलका पाद और दो अंगुलका अँगूठा होता है ॥ २३ ॥

प्रदेशिनीद्व्यंगुलातुसार्धांगुलमथेतराः ।
शिरोज्झितौपाणिपादौगूढगुल्फौप्रकीर्तितौ

भाषार्थ-प्रदेशिनी (अंगूठेके पासकी अंगुली) दो अंगुलकी अन्य अंगुलियां डेढ अंगुलकी होती हैं-शिरके विना हाथ और पैर ऐसे अच्छे होते हैं जिनके गुल्फ छिपे हुये हों ॥ २४ ॥

तद्विज्ञःप्रस्तुतायेयेमूर्तेरवयवाःसदा ।
नहीनानाधिकामानात्तेतेज्ञेयाःसुशोभनाः ॥

भाषार्थ-जो २शरीरके अवयवहैं वे २ विद्वानोंकी प्रशंसा योग्य और शोभित तभी होते हैं जब मानसे न्यून न हों न ज्यादे॥२५॥

नस्थूलानकृशावापिसर्वेसर्वमनोरमाः ।
सर्वांगैःसर्वरम्योहिकश्चिल्लक्षेप्रजायते॥२६

भाषार्थ-जो न अधिक स्थूल हो न कृश हो और सबप्रकारसे उत्तमहों और ऐसा लक्ष्योंमे कोईही होता है जो सबप्रकारसे संपूर्ण अंगोंमें रमणीक हो ॥ २६ ॥

शास्त्रमाने नयोरम्यःसरम्योनान्यएवहि ।
शास्त्रमानविहीनंयदरम्यंतद्विपश्चितां॥२७

भाषार्थ-शास्त्रके मानसे जो रमणीकहो अर्थात् जिसके अंगोंका प्रमाण शास्त्रोक्त हो और अन्य नहीं जो शास्त्रोक्त मानसे हीन है वह विद्वानोंकी अपेक्षा रमणीक नहीं ॥२७

एकेषामेवतद्रम्यंलग्नंयत्रचयस्यहृत् ।
अष्टांगुलंललाटंस्यात्तावन्मात्रौभ्रुवौमतौ ॥

भाषार्थ-जिसमनुष्यमें जिसका हृदा लग्न (आसक्त) हो जाइ यह बात किसीकोही प्रतीत होती है-आठ २ अंगुलको मस्तक और दोनों भ्रुकुटी होती हैं ॥ २८ ॥

अर्धांगुलाभ्रुवोर्लेखामध्येधनुरिवायता ।
नेत्रेचत्र्यंगुलायामद्व्यंगुलेविस्तृतेशुभे २९॥

भाषार्थ-ऐसी हो जिसका और भ्रुकुटी की लेखाके मध्यमें धनुषके समान विस्तार हो और आधा अंगुल चौडी हो तीन अंगुल लंबे और दो अंगुल चौड़े शुभ होते हैं ॥२९

तारकातत्तृतीयांशानेत्रयोःकृष्णरूपिणी ।
द्व्यंगुलंतुभ्रुवोर्मध्यंनासामूलमथांगुलं ॥३०

भाषार्थ-नेत्रोंके तारे कृष्ण और नेत्रोंकेसरे हिस्सके होते हैं भ्रुकुटियोंका मध्य दो अंगुल और नासिकाका मूल १ एक अंगुलका होता है ॥ ३० ॥

नासाग्रविस्तरंतद्वद्द्व्यंगुलंतद्बिलद्वयं ।
शुकमुखाकृतिर्नासासरलावाद्विधाशुभा ॥

भाषार्थ-नासिकाके अग्रभागका विस्तार और दोनों बिल दो अंगुलके होते हैं तोतेके मुखके समान जिसका आकार अथवा सीधी जो हो वह दो प्रकारकी नासिका शुभ होती है ॥ ३१ ॥

निष्पावसदृशंनासापुटयुग्मंसुशोभनं ।
कर्णौचभ्रूसमौज्ञेयौदीर्घौतुचतुरंगुलौ ॥ ३२

भाषार्थ-निष्पावके तुल्य जो हो ऐसे नासिकाके दोनों पुट श्रेष्ठ कहे हैं और भ्रुकुटियोंके समान और दीर्घ (लंबे) चार अंगुल कान उत्तम होते हैं ॥ ३२ ॥

कर्णपालीद्व्यंगुलास्यात्स्थूलाचार्धांगुलामता
नासावंशोर्धांगुलस्तुश्लक्ष्णाग्रःकिंचिदुन्नतः

भाषार्थ-कानोंकी पाली (पिछली) त्वचा दो अंगुल लंबी और आधा अंगुल मोटी कही है और नाकका बांस आधाअंगुल मोटा

और आगेसे चिकना और कुछ ऊंच हो तो अच्छा है ॥ ३३ ॥

ग्रीवामूलाच्चस्कंधांतमष्टांगुलमुदाहृतं ।
बाव्हंतरंद्वितालंस्यात्तालमात्रंस्तनांतरं ३४

भाषार्थ–ग्रीवाके मूलसे स्कंधतक जो भाग है वह आठ अंगुल होना चाहिये दोनों भुजाओंका अंतर (बीच) दो ताल और स्तनोंका अंतर एक ताल होता है ॥ ३४ ॥

षोडशांगुलमात्रंतुकर्णयोरंतरंस्मृतं ।
कर्णहन्वग्रांतरंतुसदैवाष्टांगुलंमतं ॥ ३५ ॥

भाषार्थ–दोनों कानोंका अंतर सोलह अंगुलका कहा है और कान और हनु (ठोडी) इनका अंतर सदैव आठ अंगुलका कहा है ॥ ३५ ॥

नासाकर्णांतरंतद्वत्तदर्धंकर्णनेत्रयोः ।
मुखंतालीतृतीयांशमोष्ठावर्धांगुलौमतौ ३६

भाषार्थ–इसी प्रकार आठ अंगुलका अंतर नाक और कानोंका होता है और इससे आधा अंतर कान और नेत्रोंका होता है तालका तीसरा भाग मुखका होता है और आधा अंगुलके ओष्ठ होते हैं ॥ ३६ ॥

द्वात्रिंशदंगुलःप्रोक्तःपरिधिर्मस्तकस्यच ।
दशांगुलाविस्तृतिस्तुद्वादशांगुलदीर्घता ॥

भाषार्थ–मस्तक (शिर) की परिधि बत्तीस अंगुलकी कही है और दश अंगुलका विस्तार और बारह अंगुलकी लंबाई कही है ॥ ३७ ॥

ग्रीवामूलस्यपरिधिर्द्वाविंशत्यंगुलात्मकः ।
हृन्मूलेपरिधिर्ज्ञेयश्चतुःपंचाशदंगुलः ३८॥

भाषार्थ-ग्रीवाके मूलकी परिधि बाईस अंगुलकी कही है हृदयके मूलकी परिधि (फेर) चम्मन ५४ अंगुल कही है ॥ ३८ ॥

हीनांगुलचतुस्तालपरिधिर्हृदयस्यच ।
आस्तनात्पृष्ठदेशांतापृथुताद्वादशांगुला ॥

भाषार्थ–और चार अंगुल कम एकताल परिधि हृदयकी होती है और स्तनोंसे लेकर पृष्ठ देशतक बारह अंगुलकी मोटाई होती है ॥ ३९ ॥

सार्धत्रितालपरिधिःकट्याश्चद्व्यंगुलाधिकः ।
चतुरंगुलउत्सेधोविस्तारःस्यात्षडंगुलः४०

भाषार्थ–दो अंगुल ऊपर साढ़ेतीन ताल परिधि कटी (कमर) की होती है और चार अंगुल ऊँचाई और छः अंगुलका विस्तार होता है ॥ ४० ॥

पश्चाद्भागेनितंबस्यस्त्रीणामंगुलतोधिकः ।
बाव्हग्रमूलपरिधिःषोडशाष्टादशांगुलः ४१

भाषार्थ–और स्त्रियोंके पश्चात्भाग (नितंब)के एक अंगुल अधिक होते हैं और भुजाओंके अग्र भागकी परिधि सोलह अंगुल और मूल भागकी अठारह अंगुल होती है ॥ ४१ ॥

हस्तमूलाग्रपरिधिश्चतुर्दशदशांगुलः ।
पंचांगुलापादकरतलयोर्विस्तृतिःस्मृता४२

भाषार्थ–और हाथके मूलकी परिधि चौदह अंगुल और अग्रभागकी परिधि दश अंगुल होती है और हाथ और पादोंके तलका विस्तार पांच अंगुलका होता है ॥ ४२ ॥

ऊरुमूलस्यपरिधिर्द्वात्रिंशदंगुलात्मकः ।
ऊनविंशत्यंगुलःस्यादूर्वग्रपरिधिःस्मृतः४३

भाषार्थ–ऊरु (रान) के मूलकी परिधि बत्तीस अंगुलकी होती है और अग्रभागकी परिधि उन्नीस अंगुलकी होती है ॥ ४३ ॥

जंघामूलाग्रपरिधिःषोडशद्वादशांगुलः।
मध्यमामूलपरिधिर्विज्ञेयश्चतुरंगुलः ४४॥

भाषार्थ-जंघाके मूलकी परिधि सोलह अंगुल और अग्रभागकी परिधि बारह अंगुल कही है और मध्यमाके मूलकी परिधि चार अंगुलकी होती है ॥ ४४ ॥

तर्जन्यनामिकामूलपरिधिःसार्धत्र्यंगुलः ।
कनिष्ठिकायाःपरिधिर्मूलेत्र्यंगुलएवहि ४५

भाषार्थ-तर्जनी और अनामिकाके मूलकी परिधि साढेतीन अंगुल होती है और कनिष्ठिकाके मूलकी परिधि तीन अंगुल होती है॥

स्वमूलपरिधेःपादहीनोग्रेपरिधिःस्मृतः।
हस्तपादांगुष्ठयोश्चचतुःपंचांगुलंक्रमात् ॥

भाषार्थ-और अपने मूलकी परिधिसे चौथाई कम अग्रभागकी परिधि होती है हाथ और पैरके अंगूठोंकी परिधि क्रमसे चार पांच अँगुलकी होती है ॥ ४६ ॥

पादांगुलीनांपरिधिस्त्र्यंगुलःसमुदाहृतः ।
मंडलंस्तनयोर्नाभेःसार्धांगुलमथांगुलं॥४७

भाषार्थ-पैरकी अंगुलियोंकी परिधि तीन अंगुल होती है स्तनोंका मंडल डेढ अंगुल और नाभिका मंडल एक अंगुल होता है४७

सर्वांगानांयथाशोभिपाटवंपरिकल्पयेत्
नोर्ध्वदृष्टिमधोदृष्टिंमीलिताक्षींप्रकल्पयेत् ॥

भाषार्थ-संपूर्ण अंगोंका पाटव (उत्तमता) शोभाके अनुसार बनावें-और ऊपर और नीचेको जिसकी दृष्टि हो और जिसके नेत्र मिचे हो ऐसी प्रतिमा न बनावै ॥ ४८ ॥

नोग्रदृष्टिंतुप्रतिमांप्रसन्नाक्षींविचिंतयेत्।
प्रतिमायास्तृतीयांशमर्धांशंतत्तुपीठकं४९॥

भाषार्थ-जिसकी दृष्टि उग्रहो ऐसीभी न बनावे-और जिसके नेत्र प्रसन्नहों ऐसी बनावे-और प्रतिमाके प्रमाणसे साढेतीन अंश कम पीठ (आसन) बनावे ॥ ४९ ॥

द्विगुणंत्रिगुणंद्वारंप्रतिमायाश्चतुर्गुणं ।
एकद्वित्रिचतुर्हस्तंपीठंदेवालयस्यच॥५०॥

भाषार्थ-प्रतिमासे दूना व तिगुना वा चौगुना मंदिरका द्वार बनावे-एक दो तीन वा चार हात देवायतनका पीठ बनावे ॥ ५० ॥

पीठतस्तुसमुच्छ्रायोभित्तेर्दशकरात्मकः ।
द्वारात्तुद्विगुणोच्छ्रायःप्रासादस्योर्ध्वभूमिभाक् ॥ ५१ ॥

भाषार्थ-और पीठसे दशहाथ ऊंची भींत बनावें-और द्वारसे द्विगुण ऊंचा मंदिरका ऊपरका भाग बनावे ॥ ५१ ॥

शिखरंचोच्छ्रायसमंद्विगुणंत्रिगुणंतुवा ।
एकभूमिंसमारभ्यसपादशतभूमिकं॥५२॥

भाषार्थ-ऊंचाईके समान द्विगुना वा तिगुना शिखर बनावे और एक भूमि (मंजिल) से लेकर सवासे भूमितक ॥ ५२ ॥

प्रासादंकारयेच्छक्त्याह्यष्टास्रपद्मसन्निभं ।
चतुर्दिक्षुमंडपंवापिचतुःशालंसमंततः५४॥

भाषार्थ-शक्तिके अनुसार अष्टपद्मके समान मंदिरको बनावे और चारों दिशाओंमें मंडप और धर्मशाला बनावे ॥ ५३ ॥

सहस्रस्तंभसंयुक्तश्चोत्तमोन्यःसमोधमः।
प्रासादेमंडपेवापिशिखरंयदिकल्प्यते५५॥

भाषार्थ-जिसमें सहस्र स्तंभ हो ऐसा मंदिर उत्तम और अन्य मध्यम और अधम होते हैं यदि प्रासाद वा मंडपमें शिखर बनाया जाय तो ॥ ५४ ॥

स्तंभास्तत्रनकर्तव्याभित्तिस्तत्रसुखप्रदा।
प्रासादमध्यविस्तारःप्रतिमायाःसमंततः ॥

भाषार्थ–वहां स्तंभ न बनावै भीतिही वहाँ सुखदायक होती है और मंदिरके मध्यका विस्तार प्रतिमाके चारों तरफ ॥ ५५ ॥

षड्गुणोष्टगुणोवापिपुरतोवासुविस्तरः।
वाहनंमूर्तिसदृशंसार्धंवाद्विगुणंस्मृतं ॥५७॥

भाषार्थ–छहगुणा वा आठगुणा अथवा प्रतिमाके आगे विस्तारपूर्वक बनाना चाहिये और मूर्तिके तुल्य डेढ गुण वा दूना वाहन कहा है ॥ ५६ ॥

यत्रनोक्तंदेवतायारूपंतत्रचतुर्भुजं।
अभयंचवरंदद्याद्यत्रनोक्तंयदायुधं ॥५८॥

भाषार्थ-जहां देवताका रूप न कहाहो वहां चतुर्भुजी रूप और जहां आयुध न कहाहो वहां अभय और वर आयुध बनावै ॥ ५७॥

अधःकरेतूर्ध्वकरेशंखंचक्रंतथांकुशं।
पाशंवाडमरुंशूलंकमलंकलशंस्रजं ॥५९॥

भाषार्थ–हाथके नीचे और ऊपर शंख–चक्र–अंकुश –पाश–डमरू –शूल –कमल-माला ॥ ५८ ॥

लड्डुकंमातुलुंगंवावीणांमालांचपुस्तकं।
मुखानांयत्रबाहुल्यंतत्रपङ्क्त्यानिवेशनं ॥

भाषार्थ–लड्डू–मातुलिंग–वीणा-माला–और पुस्तक बनावै और जहां मुख बहुतहों वहां पंक्तिसे मुख बनावै ॥ ५९ ॥

तत्पृथग्ग्रीवमुकुटंसुमुखंस्वक्षिकर्णयुक्।
भुजानांयत्रबाहुल्यंनतत्रस्कंधभेदनं॥६२॥

भाषार्थ–और उन मुखोंकी–ग्रीवा–और मुकुट पृथक् २ हों और जिसमें नेत्र मुख कान ये अच्छे हो वही अच्छा होताहै और जिसकी भुजा बहुत हों वहां स्कंध भेद न करे ॥ ६० ॥

कूर्परोर्ध्वंतुसूक्ष्माणिचिपिटानिदृढानिच।
भुजमूलानिकार्याणिपक्षमूलानिवैयथा॥६१

भाषार्थ–कूर्पर (कुक्षि) के ऊपर सूक्ष्म–चिकने दृढ–भुजाओंके मूल इस प्रकारके बनावै जैसे पंखोंके मूल होते हैं ॥ ६१ ॥

ब्रह्मणस्तुचतुर्दिक्षुमुखानांविनियोजनं।
हयग्रीवोवराहश्चनृसिंहश्चगणेश्वरः॥ ६२॥

भाषार्थ–ब्रह्माके मुख चारों दिशाओंमें बनावे–हयग्रीव–वराह–नृसिंह–गणेशजी॥६२॥

मुखैर्विनानराकारान्नृसिंहश्चनखैर्विना।
तिष्ठंतींसूपविष्टांवास्वासनेवाहनास्थितां ६३

प्रतिमामिष्टदेवस्यकारयेदुक्तलक्षणां।
हीनश्मश्रुनिमेषांचसदाषोडशवार्षिकीं ६४

भाषार्थ–इनका आकार मुखके विना मनुष्यके समान बनावे और नृसिंहकी मूर्त्ति नखोंके विना मनुष्याकारकी बनावै और सुंदर आसन और वाहनपै बैठी अथवा खडी हुई इष्टदेवकी प्रतिमाको उक्त रीतिसे बनवावे–और जिसके श्मश्रु और निमेष नहो और सदा सोलह वर्षकी प्रतीतिहो ऐसी प्रतिमाको बनावै ॥ ६३ ॥ ६४ ॥

दिव्याभरणवस्त्राढ्यांदिव्यवर्णक्रियांसदा।
हीनांग्योनाधिकांग्यश्चकर्त्तव्यादेवताःकचित् ॥ ६५ ॥

भाषार्थ–जिसके भूषण–वस्त्र–वर्ण–क्रिया सदैव दिव्य हो ऐसी बनावै और अंगहीन और अधिकांगी देवप्रतिमा कदाचित् न बनावै ॥ ६५ ॥

हीनांगीस्वामिनंहंतिह्यधिकांगीचशिल्पिनं।
कृशादुर्भिक्षदानित्यंस्थूलारोगप्रदासदा ॥

भाषार्थ-अंगहीन प्रतिमा स्वामीको और अधिकांगी शिल्पी (वनानेवाले) को नष्ट करती है-और कृश प्रतिमा दुर्भिक्षको स्थूल रोगको सदैव देती है ॥ ६६ ॥

गूढसंध्यस्थिधमनीसर्वदासौख्यवर्धिनी ।
वराभयाब्जशंखाढ्यहस्ताविष्णोश्चसात्विकी ॥ ६७ ॥

भाषार्थ-जिस प्रतिमाकी संधि-अस्थि-नाड़ी ये छिपेहुए हो वह सर्वदा सुखकी वृद्धि करती है और जिसके हाथमें -वर-अभय-शंख हों ऐसी विष्णुकी प्रतिमा सत्वगुणी होती है ॥ ६७ ॥

मृगवाद्याभयवरहस्तासोमस्यसात्विकी ।
वराभयाब्जलड्डूकहस्तेभास्यस्यसात्विकी

भाषार्थ-मृग वाद्य अभय वर जिसके हाथ में हों ऐसी शिवजीकी प्रतिमा सत्वगुणी होती है-और वर अभय कमल लड्डू जिसके हाथमें हों ऐसी गणेशजीकी प्रतिमा सत्वगुणी होती है ॥ ६८ ॥

पद्ममालाभयवरकरासत्वाधिकारवेः ।
वीणालुंगाभयवरकरासत्वगुणाश्रियाः ६९

भाषार्थ-पद्म माला अभय वर जिसके हाथमें हों ऐसी सूर्यप्रतिमा सत्वगुणी होती है-वीणा लुंग अभय वर जिसके हाथमें हों ऐसी लक्ष्मीकी प्रतिमा सत्वगुणी होती है ६९.

शंखचक्रगदापद्मैरायुधैरादितःपृथक् ।
षट्षट्भेदाश्चमूर्तीनांविष्ण्वादीनांभवंतिहि

भाषार्थ-शंख चक्र गदा पद्म और आयुधोंसे विष्णुआदिकोंकी मूर्तियोंके पृथक् छः २ भेद होते हैं ॥ ७० ॥

यथोपाधिप्रभेदेनससंयोगविभागतः ।
समस्तव्यस्तवर्णादिभेदज्ञानंप्रजायते७१॥

भाषार्थ-और यथोचित उपाधिके भेद और संयोग विभागसे समस्त और व्यस्त वर्ण आदि भेदका ज्ञान होता है ॥ ७१ ॥

लेख्यालेप्यासैकतीचमृन्मयीपैष्टिकीतथा ।
एतासांलक्षणाभावेनकैश्चिद्दोषईरितः ७२

भाषार्थ-लिखी-लिपी-रेतेकी-और मिट्टीकी चूर्णकी प्रतिमाओंमें लक्षणोंके अभावमेंभी कोई दोष नहीं कहा है ॥ ७२ ॥

बाणलिंगेस्वयंभूतेचंद्रकांतसमुद्भवे ।
रत्नजेगंडिकोद्भूतेमानदोषोनसर्वथा ॥७३॥

भाषार्थ-स्वयमेव पैदा हुये अथवा चंद्रकांतमणिसे पैदा हुये बाणलिंगमें रत्नसे पैदा हुये अथवा गंडकीनदीसे पैदा हुयों में प्रमाणका दोष सर्वथा नहीं है ॥ ७३ ॥

पाषाणधातुजायांतुमानदोषान्विचिंतयेत् ।
श्वेतपीतारक्तकृष्णपाषाणैर्युगभेदतः ७४॥

भाषार्थ-पाषाण और धातुसे पैदाहुई प्रतिमाओंमें प्रमाणके दोषोंकी चिंता करै और युगोंके भेदसे श्वेत पीत रक्त कृष्ण पाषाणके भेदसे ॥ ७४ ॥

प्रतिमांकल्पयेच्छिल्पीयथारुच्यपरैःस्मृता।
श्वेतास्मृतासात्विकीतुपीतारक्तातुराजसी ॥

भाषार्थ-प्रतिमाकी कल्पना शिल्पी करै अन्य पाषाणोंकी यथारुचि करनी कही है श्वेत प्रतिमा सत्वगुणी पीत और रक्त रजोगुणी होती है ॥ ७५ ॥

तामसीकृष्णवर्णातुह्युक्तलक्ष्मयुतायदि ।
सौवर्णीराजतीताम्रीरैतिकीवाक्रुतादिषु ७६

भाषार्थ–कृष्णवर्ण प्रतिमा तमोगुणी होती है यदि उक्तलक्षणोंसे युक्त हो अथवा सतयुग आदिमें सुवर्ण चांदी तांबा पीतलकी प्रतिमा कही है ॥ ७६ ॥

शांकरीश्वेतवर्णावाकृष्णवर्णातुवैष्णवी ।
सूर्यशक्तिगणेशानांताम्रवर्णास्मृतापिच ॥

भाषार्थ–शिवजीकी प्रतिमा श्वेतवर्ण–और विष्णुकी कृष्णवर्ण और सूर्य देवी गणेश इनकी तांबेके समान वर्ण प्रतिमा कही है ॥ ७७ ॥

लौहीससिमयीवापियथोद्दिष्टास्मृताबुधैः ।
चलार्चायांस्थिरार्चायांप्रासादाद्युक्तलक्षणां

प्रतिमांस्थापयेन्नान्यांसर्वसौख्यविनाशिनीं
सेव्यसेवकभावेपुप्रतिमालक्षणंस्मृतं॥७९॥

भाषार्थ–लोहे वा सीसेकी शास्त्रोक्तरीतिसे विद्वानोंने कही है–चलकी पूजा वा स्थिरकी पूजामें प्रासाद (मंदिर) आदिके उक्त लक्षणवाली प्रतिमाको स्थापन करे और सबसुखोंको नष्ट करनेवाली अन्य प्रतिमाको स्थापन न करे और सेव्यसेवक भावमें भी प्रतिमाका लक्षण कहाहै७८॥७९॥

प्रतिमायाश्चयेदोषाह्यर्चकस्यतपोबलात् ।
सर्वत्रेश्वराचित्तस्यनाशंयांतिक्षणात्किल ८०

भाषार्थ–जो प्रतिमाके दोष हैं वे ईश्वरमें है चित्त जिसका ऐसे पूजा करनेवालेके तपोबलसे क्षणमात्रमेंही निश्चयसे नष्ट होजाते हैं ॥ ८० ॥

देवतायाश्चपुरतोमंडपेवाहनंन्यसेत् ।
द्विबाहुर्गरुडः प्रोक्तः सुचंचुःस्वक्षिपक्षयुक्

भाषार्थ–देवताके आगे मंडपमे वाहनोंका न्यास (स्थापन) करे दो भुजावाला श्रेष्ठ चंचु नेत्र–पक्ष वाला गरुड कहा है ॥ ८१॥

नराकृतिश्चंचुमुखोमुकुटीकवचांगदी ।
बद्धांजलिर्नम्रशीर्षः सेव्यपादाब्जलोचनः

भाषार्थ–नरके समान आकार–चंचु जिसके मुखमेंहो–मुकुट कवच अंगद धारणाकियेहो–हाथ जोडेहो नम्रशिरहो सेव्य (देवता) के चरणकमलमें जिसके नेत्रहों ऐसा गरुड आदि वाहनहो ॥ ८२ ॥

वाहनत्वंगतायेयेदेवतानांचपक्षिणः ।
कामरूपधरास्तेतेतथासिंहवृषादयः॥८३॥

भाषार्थ–जो पक्षी देवताओंके वाहन हुये हैं वे सब कामरूपधारी अथवा सिंह वृष आदि ॥ ८३ ॥

स्वनामाकृतयश्चैतेकार्यादिव्यायुधैःसदा ।
सुभूषितादेवताग्रमंडपेध्यानतत्पराः॥८४॥

भाषार्थ–अपने नामकी आकृतिके दिव्य (सुंदर) आयुधों सहित सदैव करने और ऐसे बनाने जो भलीप्रकार भूषित और देवताके आगे मंडपमें ध्यानके विषय तत्पर हों८४॥

मार्जाराकृतिकःपीतःकृष्णचिन्होबृहद्वपुः ।
असटोव्याघ्रइत्युक्तःसिंहःसूक्ष्मकटिर्महान्

भाषार्थ–बिलावके समान जिसका आकार पीला–कृष्णचिह्न–बडाशरीरहो और सट नहो वह व्याघ्र कहाहै और कटि पतली और रूप महान् हो वह सिंह कहाहै ॥ ८५ ॥

बृहद्भ्रूगंडनेत्रस्तुभालरेखोमनोहरः ।
सटावान्धूसरोऽकृष्णलांछनश्चमहाबलः ॥

भाषार्थ–जिसकी भ्रुकुटि–गंडस्थल–नेत्र बडे हों–मस्तक पर रेखाहो–और जो मनोहर हो और जिसके ऊपर सटा हो–धूसर रंगहो और काला चिह्न नहो और महाबली हो ऐसा सिंह होता है ॥ ८६ ॥

भेदःसटाऽलांछनतोनकृत्याव्याघ्रसिंहयोः।
गजाननंनराकारंध्वस्तकर्णपृथूदरं ॥ ८७॥

भाषार्थ-सटाचिह्नसे इतर व्याघ्र सिंहका कोई भेद नहीं है-गजाननकी मूर्ति नराकार की हो जिसके कान ध्वस्त हों और पेट बडाहो ॥ ८७ ॥

बृहत्संक्षिप्तगहनपीनस्कंधांघ्रिपाणिनं ।
बृहच्छुंडंभग्नवामरदमिच्छितवाहनं॥८८॥

भाषार्थ-बडे-संक्षिप्त-गहन-पुष्ट-हैं स्कंध-चरण-हाथ जिसके-और बडी शुंड और टूटा वाम दांत-और यथेच्छ है वाहन जिसका-ऐसी ॥ ८८ ॥

ईषत्कुटिलदंडाग्रवामशुंडमदक्षिणं ।
संध्यस्थिधमनीगूढंकुर्यान्मानमितंसदा ८९

भाषार्थ-कुछेक कुटिल शुंडका अग्र हों-वामभुजा पर शुंडहो दक्षिण पर नहीं और संधि अस्थि-धमनी (नाडी) ये सब जिसकी ढकीहों ऐसी गणेशकी मूर्ति सदैव प्रमाणसे बनावे ॥८९ ॥

सार्धश्चतुस्तालमितःशुंडादंडःसमस्ततः ।
दशांगुलंमस्तकंचभ्रूगंडश्चतुरंगुलः ॥९०॥

भाषार्थ-और संपूर्ण शुंडका दंड साढे चार तालकाहो और दश अंगुलका मस्तक और चार अंगुलका भ्रुकुटियोंका गंडस्थल हो ॥ ९० ॥

नासोत्तरोष्ठरूपाचशेषाशुंडासपुष्करा ।
दशांगुलंकर्णदैर्घ्यंतदष्टांगुलविस्तृतं॥९१॥

भाषार्थ-नासिका और ऊपरके ओष्ठ रूप जो शुंड वह पुष्कर सहित हो-कानोंकी लंबाई दश अंगुल और चौडाई आठ अंगुल हो ॥ ९१ ॥

कर्णयोरंतरेव्यासोद्व्यंगुलस्तालसंमितः ।
मस्तकेऽस्यैवपरिधिर्ज्ञेयःषट्त्रिंशदंगुलः९२

भाषार्थ-कानोंके मध्यका व्यास दो अंगुल ऊपर एक ताल होता है और इसके मस्तक की परिधि छत्तीस अंगुल होती है ९२॥

नेत्रोपांतेचपरिधिःशीर्षतुल्यःसदामतः ।
सद्व्यंगुलद्वितालःस्यान्नेत्राधःपरिधिःकरे९३

भाषार्थ-नेत्रोंके समीपकी परिधि शिरके तुल्य कही है और हाथीके नेत्रोंके नीचकी परिधि दो अंगुल और दो ताल होती है ॥ ९३ ॥

कराग्रेपरिधिर्ज्ञेयःपुष्करेचदशांगुलः ।
त्र्यंगुलंकंठदैर्घ्यंतत्परिधिस्त्रिंशदंगुलः॥९४

भाषार्थ-और हाथके और पुष्करके अग्रभागकी परिधि दश अंगुल होती है और कंठकी लंबाई तीन अंगुल होती है और उस कंठ की परिधि तीस अंगुल होती है ॥ ९४ ॥

परिणाहस्तूदरेचचतुस्तालात्मकःसदा।
षडंगुलोनियोक्तव्योष्टांगुलोवापिशिल्पिभिः

भाषार्थ-और उदरका विस्तार सदैव चारतालका होता है परंतु शिल्पी उसमें छः अंगुल वा आठ अंगुल और मिलादें ॥ ९५ ॥

दंतःषडंगुलोदीर्घस्तन्मूलपरिधिस्तथा ।
षडंगुलश्चाधरोष्ठःपुष्करंकमलान्वितं ९६॥

भाषार्थ-छः अंगुलका मोटा दंत होता है और उसके मूलकी परिधिभी तैसीही होती है और नीचेका ओष्ठ छः अंगुल हो और पुष्कर (शुंड) कमल सहित बनानी चाहिये ॥ ९६ ॥

ऊरुमूलस्यपरिधिःषट्त्रिंशदंगुलोमतः ।
त्रयोविंशत्यंगुलःस्यादूर्वग्रपरिधिस्तथा १७

भाषार्थ—ऊरूके मूलकी परिधि छत्तीस अंगुल मानी है और ऊरूके अग्रभागकी परिधि तेईस अंगुलकी होती है ॥ १७ ॥

जंघामूलेतुपरिधिर्विंशत्यंगुलसंमितः ।
परिधिर्बाहुमूलादेरधिकोद्व्यंगुलांगुलः ॥१८

भाषार्थ—जंघाके मूलकी परिधि बीस अंगुलकी होती है और बाहुके मूल और अग्रभागकी परिधि दो अंगुल वा क्रमसे एक अंगुल अधिक बीस अंगुल होती है॥१८ ॥

कर्णनेत्रांतरंनित्यंविज्ञेयंचतुरंगुलं ।
मूलमध्याग्रांतरंतुदशसप्तषडंगुलं ॥ १९ ॥

भाषार्थ—कान और नेत्रोंका अंतर सदैव चार अंगुलका होता है और नेत्रोंके मूल मध्य अग्रका अंतर क्रमसे दश सात छः अंगुल होता है ॥ १९ ॥

नेत्रयोःकथितंतज्ज्ञैर्गणपस्याविशेषतः ।
उत्सेधःपृथुतास्त्रीणांस्तनेपंचांगुलामता ॥

भाषार्थ-तिसके ज्ञाताओंने गणेशके नेत्रोंकी ऊंचाई विशेष कर पूर्वोक्त कही है और स्त्रियोंके स्तनोंकी ऊंचाई और लंबाई पांच अंगुल मानी है ॥ ५०० ॥

स्त्रीकट्यांपरिधिःप्रोक्तस्त्रितालेद्व्यंगुलाधिकः ।
स्त्रीणामवयवान्सर्वान्सप्ततालैर्विभावयेत् १

भाषार्थ—स्त्रियोंकी कमरकी परिधि दो अंगुल ऊपर तीन तालकी और स्त्रियोंके संपूर्ण अवयव सात तालके होते हैं॥ १ ॥

सप्ततालादिमानेपिमुखंस्वद्वादशांगुलं ।
बालादीनामपिसदादीर्घतातुपृथक्पृथक्२॥

भाषार्थ—सप्त तालके प्रमाणमेंभी मुख बारह अंगुलका होता है और बाल (केश) आदिकी दीर्घताभी पृथक् २होती है ॥ २ ॥

शिशोस्तुकंधराह्रस्वापृथुशीर्षप्रकीर्तितं ।
कंठाधोवर्धतेयावत्तावच्छीर्षंनवर्धते ॥ ३

भाषार्थ—बालककी ग्रीवा छोटी और शिर बडा होता है और कंठसे नीचे जितना बालक बढताहै उतना शिर नहीं बढता॥३॥

कंठाधोमुखमानेनवृत्तसार्धचतुर्गुणं ।
द्विगुणःशिश्नपर्यंतोह्यधःशेषंतुसक्थितः॥४

भाषार्थ—कंठके नीचे मुखके प्रमाणसे साढेचार गुना और नीचेका शेष सक्थिसे लेकर लिंग पर्यंत दोगुना बढता है॥ ४ ॥

सपादाद्विगुणौहस्तौद्विगुणौवामुखेनहि ।
स्थौल्येतुनियमोनास्तियथाशोभिप्रकल्पयेत् ॥ ५ ॥

भाषार्थ—और मुखसे सवादो गुने वा दुगुने हाथ बढते हैं और स्थूलता (मोटाई) में नियम नाहि उसको शोभाके अनुसार बनावे ॥ ५ ॥

नित्यंप्रवर्धतेबालःपंचाब्दात्परतोभृशं ।
स्यात्षोडशेब्देसर्वांगःपूर्णास्त्रीविंशतौपुमान्

भाषार्थ—पांच वर्षसे ऊपरकी अवस्थामें बालक अत्यंत बढता है और सोलह वर्षमें स्त्री और बीस वर्षमें पुरुष संपूर्ण अंगोंसे पूर्ण होजाता है ॥ ६ ॥

ततोर्हतिप्रमाणंतुसप्ततालादिकंसदा ।
कश्चिद्बाल्येपिशोभाढ्यस्तारुण्येवार्धकेक्वचित् ॥ ७ ॥

भाषार्थ—फिर सप्तताल आदि प्रमाणके योग्य होजाता है और बाल्य अवस्थामें

और कोई यौवनमें और वृद्ध अवस्थामें शोभासे युक्त होता है ॥ ७ ॥

मुखाधस्त्र्यंगुलाग्रीवाहृदयंतुनवांगुलं ।
तथोदरंचवस्तिश्चसक्थित्वष्टादशांगुलं ॥ ८

भाषार्थ-मुखके नीचे ग्रीवा तीन अंगुल हृदय नव अंगुल होता है तिसी प्रकार उदर वस्ति सक्थि अठारह अंगुल होती है ॥ ८ ॥

त्र्यंगुलंतुभवेज्जानुजंघात्वष्टादशांगुला ।
गुल्फाधस्त्र्यंगुलंज्ञेयंसप्ततालस्यसर्वदा ॥ ९

भाषार्थ-जानु तीन अंगुल और जंघा अठारह अंगुल और गुल्फके नीचे का भाग तीन अंगुलका सात तालके मनुष्यका सदैव होता है ॥ ९ ॥

वेदांगुलाभवेद्ग्रीवाहृदयंतुदशांगुलं ।
दशांगुलंचोदरंस्याद्वस्तिश्चैवदशांगुलः १०

भाषार्थ-और चार अंगुलकी ग्रीवा दश अंगुलका हृदा और उदर वास्ति दश अंगुलकी हो और ॥ १० ॥

एकविंशांगुलंसक्थिजानुस्याच्चतुरंगुलं ।
एकविंशांगुलाजंघागुल्फाधश्चतुरंगुलं ॥ ११

भाषार्थ-इकीस अंगुल सक्थि चार अंगुल जानु इकीस अंगुल जंघा गुल्फ (टकने) के नीचे चार अंगुल का प्रमाण ॥ ११ ॥

अष्टतालप्रमाणस्यमानमुक्तामिदंसदा ।
त्रयोदशांगुलंज्ञेयंमुखंचहृदयंतथा ॥ १२ ॥

भाषार्थ-आठ तालके मनुष्यका सदैव कहा है मुख और हृदय तीरै अंगुलका होता है ॥ १२ ॥

उदरंचतथावस्तिर्दशतालेपुसर्वदा ।
गुल्फाधश्चतथाग्रीवाजानुपंचांगुलंस्मृतं १३

भाषार्थ-उदर और वस्ति दश अंगुल की दश तालके मनुष्य की होती हैं गुल्फ की नीचेका भाग और जानु और ग्रीवा पांच अंगुलके कहे हैं ॥ १३ ॥

षड्विंशत्यंगुलंसक्थितथाजंघाप्रकीर्तिता ।
एकांगुलोमूर्ध्निमणिर्दशतालेप्रकल्पयेत् १४

भाषार्थ-छव्वीस सक्थि और दश जं कही हैं तालके मनुष्यमें मस्तककी मणि चार अंगुल की कही है ॥ १४ ॥

पंचाशदंगुलौवाहूदशतालेस्मृतौसदा ।
द्व्यंगुलौद्व्यंगुलौचोनौततोहीनप्रमाणके ॥ १५

भाषार्थ-और दश तालके मनुष्यकी भुजा पचास अंगुलकी होती है और उससे अल्प प्रमाणके मनुष्यकी भुजा दोदो अंगुल कम होती हैं ॥ १५ ॥

पाटवंतुयथाशोभिसर्वमानेपुकल्पयेत् ।
नवतालप्रमाणेनह्यूनाधिक्यंप्रकल्पयेत् १६

भाषार्थ-और सब प्रमाणके मनुष्योंमें शाभाके अनुसार चतुराईकी कल्पना करे और नो तालके मनुष्यके न्यूनाधिककी कल्पना न करे ॥ १६ ॥

दशतालेतुविज्ञेयौपादौपंचदशांगुलौ ।
एकैकांगुलहीनौस्तस्ततोन्यूनप्रमाणके १७

भाषार्थ-दश तालके मनुष्यमें चौदह अंगुलके पैर जानने और उससे न्यून मनुष्यके प्रमाणमें एक २ अंगुल कम होते हैं ॥ १७ ॥

नपंचांगुलतोहीनानषडंगुलतोधिका ।
करस्यमध्यमाप्रोक्तान्युरुमानेपुसद्विदैः १८

भाषार्थ-और हाथकी मध्यमा अंगुली अंगुलसे कम और छः अंगुलसे अधिक वि-

द्वानोंने अधिकसे अधिक मानमें नहीं कहीहै ॥ १८ ॥

क्वचित्तुबालसदृशंसदैवतरुणंवयः ।
मूर्तीनांकल्पयेच्छिल्पीनवृद्धसदृशंक्वचित् ॥

भाषार्थ–और कहीं तरुण अवस्थाभी बालके सदृश होतीहै और शिल्पी वृद्धके सदृश मूर्त्तियोंके कल्पना कभी न करे ॥१९॥

एवंविधान्नृपोराष्ट्रेदेवान्संस्थापयेत्सदा ।
प्रतिसंवत्सरंतेषामुत्सवान्सम्यगाचरेत् २०

भाषार्थ–राजा ऐसे देवताओंका स्थापन अपने राज्यमें सदैव करै प्रतिवर्ष उनके उनके उत्सवोंकूं भली प्रकार करे ॥ २० ॥

देवालयेमानहीनांमूर्तिंभग्नांनधारयेत् ।
प्रासादांश्चतथादेवाञ्जीर्णानुद्धृत्ययत्नतः

भाषार्थ–प्रमाणसे रहित और टूटी फूटी मूर्त्तिकूं देवालयमें न रहनेदे और जीर्ण मंदिर और देवताओंका यत्नसे उद्धार करके २१

देवतांतुपुरस्कृत्यनृत्यादीन्वीक्ष्यसर्वदा ।
नमत्तःस्वोपभोगार्थंविदध्याद्यत्नतोनृपः ॥

भाषार्थ–और देवदर्शन और नृत्यकू देखकर प्रसन्नचित्त राजा अपने उपभोगके लिये यत्न न करे ॥ २२ ॥

प्रजाभिर्विधृतायेयेह्युत्सवास्तांश्चपालयेत् ।
प्रजानंदेनसंतुष्येत्तद्दुःखैर्दुःखितोभवेत् २३

भाषार्थ–और जिनर उत्सवोंको प्रजा करतीहो तिनकी सदैव पालना करे प्रजाके आनन्दसे और दुःखसे दुःखित हो ॥ २३ ॥

दुष्टनिग्रहणंकुर्याद्व्यवहारानुदर्शनैः ।
स्वाज्ञयावर्तितुंशक्याऽधीनाजाताचसाप्रजा

भाषार्थ–और व्यवहारोंके देखनेसे दुष्टोंको दण्डदे क्योंकि जो प्रजा अपने आधीनहो वह अपनी आज्ञामें रह सकतीहै॥२४॥

स्वेष्टहानिकरःशत्रुर्दुष्टःपापप्रचारवान् ।
इष्टसंपादनंन्याय्यंप्रजानांपालनंहितत् २५

भाषार्थ–जो अपने इष्टकी हानि करे पापाचारी हो वह शत्रु होताहै इष्ट (वांछित) की संपत्ति करना उचित हो क्योंकि उसीकू प्रजाका पालन कहतेहैं ॥ २५ ॥

शत्रोरनिष्टकरणान्निवृत्तिःशत्रुनाशनं ।
पापाचारनिवृत्तिर्येर्दुष्टनिग्रहणंहितत् ॥२६

भाषार्थ–शत्रुको अनिष्ट न करना देना उसकू शत्रुनाशन कहते हैं और जिनसे पापाचरणोंकी निवृत्ति हो उसे दुष्टनिग्रहण कहते हैं ॥ २६ ॥

स्वप्रजाधर्मसंस्थानंसदसत्प्रविचारतः ।
जायतेचार्थसंसिद्धिर्व्यवहारस्तुयेनसः॥२७

भाषार्थ–साधु असाधुके विचारसे अपनी प्रजाकू धर्ममें स्थापन करे और जिसे अर्थ सिद्ध होंय उसे व्यवहार कहतेहैं ॥ २७ ॥

धर्मशास्त्रानुसारेणक्रोधलोभविवर्जितः ।
सप्राड्विवाकःसामात्यःसब्राह्मणपुरोहितः

भाषार्थ–क्रोध लोभसे रहित और प्राड्विवाक (वकील) मन्त्री ब्राह्मण पुरोहित इन करके सहित राजा धर्मशास्त्रके अनुसार ॥ २८ ॥

समाहितमतिःपश्येद्व्यवहारानुक्रमात् ।
नैकःपश्येच्चकार्याणिवादिनोःशृणुयाद्वचः॥

भाषार्थ–सावधानमन होकर क्रमसे व्यवहारों (मुकदमे) को देखे और वादियों (मुदई मुद्दाले) के कार्य्योंको अकेला न देखे और उनके वचनको ॥ २९ ॥

रहसिचनृपःप्राज्ञःसभ्याश्चैवकदाचन ।
पक्षपाताधिरोपस्यकारणानिचपंचवै ॥ ३० ॥

भाषार्थ-बुद्धिमान् राजा और सभासद एकांतमें कदाचित् न सुने पक्षपात करनेके ये पांच कारण होते हैं कि ॥ ३० ॥

रागलोभभयद्वेषावादिनोश्चरहःश्रुतिः ।
पौरकार्याणियोराजानकरोतिसुखेस्थितः॥

भाषार्थ-राग (प्रीत) लोभ भय वैर और एकांतमें वादी प्रतिवादीका वचन सुनना जो राजा सुखमें स्थित हुआ पुरवासिओंके काय्र्योंको नही करता ॥ ३१ ॥

व्यक्तंसनरकेघोरेपच्यतेनात्रसंशयः ।
यस्त्वधर्मेणकार्याणिमोहात्कुर्यान्नराधिपः॥

भाषार्थ-यह प्रकट है इसमें संशय नही वह घोर नरकमें पडता है जो राजा विनाजाने अधर्मसे काय्र्योंको करता है ॥ ३२॥

अचिरात्तंदुरात्मानंवशेकुर्वंतिशत्रवः ।
अस्वर्ग्यलोकनाशायपरानीकभयावहाः ॥

भाषार्थ-उस दुरात्माकूं शत्रुजन थोडेही कालमे वसकर लेते हैं नरककी दाता जगत्की नाशक शत्रुसेनाको भय देने वाली ॥ ३३ ॥

आयुर्बीजहरीराज्ञामस्तिवाक्येस्वयंकृतिः ।
तस्माच्छास्त्रानुसारेणराजाकार्याणिसाधयेत् ॥ ३४ ॥

भाषार्थ-अवस्थाके बीजको नाशक शक्ति राजाओंके वाक्यमें स्वयं सिद्ध होता है तिससे राजा शास्त्रोंके अनुसार काय्र्योंको सिद्ध करे ॥ ३४ ॥

यदानकुर्यान्नृपतिःस्वयंकार्यविनिर्णयं ।
तदातत्रनियुंजीतब्राह्मणंवेदपारगं ॥३५॥

भाषार्थ-जिस समय राजा कार्योंका निर्णय न करे उस समय काय्र्यनिर्णयके लिये ऐसे ब्राह्मणको नियत करे जो वेदोंको पारगामी हो ॥ ३५ ॥

दांतंकुलीनंमध्यस्थमनुद्वेगकरंस्थिरं ।
परत्रभीरुंधर्मिष्ठमुद्युक्तंक्रोधवर्जितं ॥३६॥

भाषार्थ-और दान्त (जितेन्द्रिय) कुलीन मध्यस्थ (समबुद्धि)अनुद्वेगकारी (कोमलवचन) स्थिरबुद्धि परलोकसे भीरु (डरनेवाला) धर्मिष्ठ उद्योगी और क्रोधसे रहित हो ॥ ३६ ॥

यदाविप्रोनविद्वान्स्यात्क्षत्रियंतन्नियोजयेत्
वैश्यंवाधर्मशास्त्रज्ञंशूद्रंयत्नेनवर्जयेत् ॥ ३७

भाषार्थ-यदि विद्वान् ब्राह्मण न मिले तो क्षत्री क्षत्री न मिले तो धर्मशास्त्रके ज्ञाता वैश्यको उस पदपर नियत करे शूद्रको तो यत्नसे वर्जिदे ॥ ३७ ॥

यद्वर्णजोभवेद्राजायोज्यस्तद्वर्णजःसदा ।
तद्वर्णएवगुणिनःप्रायशःसंभवंतिहि ॥ ३८॥

भाषार्थ-जिस वर्णका राजाहो उसी वर्णके मनुष्यको नियत करे क्योंकि उसी वर्णमें प्रायः गुणवान् मनुष्य होते हैं ॥३८ ॥

व्यवहारविदःप्राज्ञावृत्तशीलगुणान्विताः ।
रिपौमित्रेसमायेचधर्मज्ञाःसत्यवादिनः ३९

भाषार्थ-व्यवहारके ज्ञाता आचारशील और गुणोंसे संयुक्त शत्रु और मित्रमें समान धर्मज्ञ सत्यवादी जो हो ॥ ३९ ॥

निरालसाजितक्रोधकामलोभाःप्रियंवदाः ।
राज्ञानियोजितव्यास्तेसभ्याःसर्वासुजातिषु

भाषार्थ-निरालसी क्रोध काम लोभ ये जिनोंने जीतेहो प्रियवादी हो ऐसे सभासद सबजातियोंमेंसे राजाकू नियुक्त करने ४०॥

कीनाशाःकारुकाःशिल्पकुसीदिश्रेणीनर्तकाः ।
लिंगिनस्तस्कराःकुर्युःस्वेनधर्मेणनिर्णयं॥

भाषार्थ–किसान–कारीगर (शिल्पी) व्यवहारी नर्तक संन्यासी चोर ये सब अपने धर्मसे निर्णयको करे॥ ४१ ॥

अशक्योनिर्णयोह्यन्यैस्तज्जैरेवतुकारयेत् ।
आश्रमेषुद्विजातीनांकार्येविवदतांमिथः४२

भाषार्थ–क्योंकि इनके निर्णयको अन्य नही करसक्ते इनीकी जातिसे निर्णय करावे जो द्विजाति अपने आश्रमोंके कार्योंमें परस्पर विवाद् करतेहो ॥ ४२ ॥

नविब्रूयान्नृपोधर्मंचिकीर्षुर्हितमात्मनः ।
तपस्विनांतुकार्याणित्रैविद्यैरेवकारयेत् ४३

भाषार्थ-वहां अपने हित चाहने वाला राजा धर्मके विरुद्ध नकहै और तपस्वियोंके कार्यों-के तीनों वेदपाठी ब्राह्मणसे करावे ॥ ४३ ॥

मायायोगविदांचैवनस्वयंकोपकारणात् ।
सम्यग्विज्ञानसंपन्नेनोपदेशंप्रकल्पयेत् ४४

भाषार्थ–और मायावी और योगियोंके कार्योंको क्रोधके डरसे राजा स्वयं नकरै और भलीप्रकार ज्ञानवान् मनुष्यको उपदे-श नकरे और उत्तमजाति और शीलवाले और गुरु आचार्य तपस्वी ॥ ४४ ॥

उत्कृष्टजातिशीलानांगुर्वाचार्यतपस्विनां ।
आरण्यास्तुस्वकैःकुर्युःसार्थिकाःसार्थिकैः सह ॥ ४५ ॥

भाषार्थ-इनकूभी उपदेश नकरै वनके वासी और सार्थिक (सीती) इनके कार्य्य इन-केही सङ्ग मिलकर करे ॥ ४५ ॥

सैनिकाःसैनिकैरेवग्रामेप्युभयवासिभिः ।
अभियुक्ताश्चयेयत्रयन्निबंधंनियोजयेत् ॥

भाषार्थ–सैनिकों (सेनाके योद्धा) के कार्य्य सैनिकोंके संग और ग्रामवासियोंके कार्य्य ग्राम और वनवासियोंके संग बैठकर करे जिसपदपर जो नियुक्तहो उनका निबंध जो राजाने नियत करदिया हो ॥ ४६ ॥

तत्रत्यगुणदोषाणांतएवहिविचारकाः ।
राजातुधार्मिकान्सभ्यान्नियुंज्यात्सुपरीक्षि-तान् ॥ ४७ ॥

भाषार्थ–उसके गुण और दोषोंके विचार करनेवाले वेही होतेही परंतु राजा धार्मिक और भलीप्रकार परीक्षा करनेवाले सभासदों-को नियत करे ॥ ४७ ॥

व्यवहारधुरंवोढुंयेशक्ताःपुंगवाइव ।
लोकवेदज्ञधर्मज्ञाःसप्तपंचत्रयोपिवा ॥४८॥

भाषार्थ–जो व्यवहारके वोझा उठानेमें ऐसे समर्थ होकि जैसे वैल और जो लोक वेद धर्म इनके ज्ञाता हो और सात पांच तीन हो ॥ ४८ ॥

यत्रोपविष्टाविप्राःस्युःसायज्ञसदृशीसभा ।
श्रोतारोवणिजस्तत्रकर्तव्याःसुविचक्षणाः॥

भाषार्थ–जिससभामें ब्राह्मण बैठेहो वह सभा यज्ञसमान होतीहै और उससभामें अच्छे पण्डित कार्योंके सुननेवाले वैश्य राजाकू नियत करले ॥ ४९ ॥

अनियुक्तोनियुक्तोवाधर्मज्ञोवक्तुमर्हति ।
दैवींवाचंसवदतियःशास्त्रमुपजीवति ॥५०

भाषार्थ–राजाको नियुक्त हो वा अनियुक्त धर्मज्ञाता सभामें वोल सक्ता है क्योंकि जो शास्त्रको जानता है वह दैवीवाणीको कह-ता है ॥ ५० ॥

सभावानप्रवेष्टव्यावक्तव्यंवासमंजसं ।
अब्रुवन्विब्रुवंश्चापिनरोभवतिकिल्बिषी ॥

भाषार्थ-यातो मनुष्य सभामें जायनहि और जाय तो यथार्थ कहै क्योंकी न बोलने विरुद्ध बोलनेसे मनुष्यको पातक लगता है ॥ ५१ ॥

राज्ञायेविदिताःसम्यक्कुलश्रेणिगणादयः ।
साहसस्तेयवर्जानिकुर्युःकार्याणितेनृणां ॥

विचार्यश्रेणिभिःकार्यंकुलैर्यन्नविचारितं ।
गणैश्चश्रेण्यविज्ञातंगणाज्ञातंनियुक्तकैः ॥

भाषार्थ-जिन कुलश्रेणी गण आदिको राजाभली प्रकार जानता हो वे मनुष्योंके उन कार्योंको करे जिनमे साहस (हित) चोरीका सम्बध न हो॥५२॥जिस कार्य्यका विचार कुलवालोंकी बुद्धिमें न आयाहोजा य उस कार्यको विचारकर श्रेणी करे श्रेणीयोंके विना जाने कार्य्यको गण करे गणके विना जानेको राजाके अधिकारी पुरुष करे ॥ ५३ ॥

कुलादिभ्योधिकाःसभ्यास्तेभ्योऽध्यक्षोधिकःकृतः ।
सर्वेषामधिकोराजाधर्माधर्मनियोजकः ॥

भाषार्थ-कुलसे अधिक सभासद और सभासदोंसे अधिक अधिपति (मन्त्री) और सबसे अधिक धर्म अधर्मका नियुक्त करनेवाला राजा होता है ॥ ५४ ॥

उत्तमाऽधममध्यानांविवादानांविचारणात् ।
उपर्युपरिवुद्धीनांचरंतीश्वरबुद्धयः ॥ ५५ ॥

भाषार्थ-उत्तम मध्यमं अधम जो विवाद उनके विचार करनेसे सब बुद्धियोंके ऊपर २ ईश्वर (राजा) की बुद्धि विचरती है ५५

एकंशास्त्रमधीयानोनविंद्यात्कार्यनिर्णयं ।
तस्माद्बह्वागमःकार्योविवादेषूत्तमोनृपैः ॥

भाषार्थ-एक शास्त्रका पढा हुआ मनुष्य कार्यके निर्णयको नहीं जानसकता तिससे राजा विवादोंके निर्णयार्थ ऐसे उत्तम मनुष्यको नियत करै जिसने वहुत शास्त्र पढे हों ॥ ५६ ॥

सब्रूतेयंःसधर्मस्यादेकोवाध्यात्मचिन्तकः ।
एकद्वित्रिचतुर्वारंव्यवहारानुचिंतनं ॥५७॥

भाषार्थ-वह और अध्यात्म (ब्रह्म) की चिंता करनेवाला एकभी जिसको कहै वह धर्म होता है-और एक दो तीन वार व्यवहारोंका अनुचिंतन ॥ ५७ ॥

कार्यंपृथक्पृथक्सभ्यैराज्ञाश्रेष्ठोत्तरैःसह ।
अर्थिप्रत्यर्थिनौसभ्यैर्लेखकप्रेक्षकांश्चयः ॥

भाषार्थ-पृथक् २ क्रमसे श्रेष्ठ सभासदोके संग बैठ कर करै-और अर्थिप्रत्यर्थी (मुदई मुद्दाले) सभासद-लेखक और देखने वालोंको जो ॥ ५८ ॥

धर्मवाक्यैरंजयतिसभ्यस्तारयिताभयात् ।
नृपोधिकृतसभ्याश्चस्मृतिर्गणकलेखकौ ॥

भाषार्थ-धर्मके वाक्योंसे प्रसन्न करै वह सभासदोंको भयसे निवृत्त करता है-राजा अधिकारी (मंत्री)सभासद्-धर्मशास्त्र-गणक-लेखक ॥ ५९ ॥

हेमाग्न्यंबुस्वपुरुषाःसाधनांगानिवैदश ।
एतद्दशांगकरणंयस्यामध्यस्यपार्थिवः ॥

भाषार्थ-सुवर्ण-अग्नि-जल-और राजाके पुरुष (सिपाही) ये दश कार्यसिद्धिके अंग हैं इस दश अंगरूप सामग्री सहित राजा जिसमें बैठ कर ॥ ६० ॥

न्याय्यान्याय्येकृतमतिःसासभाध्वरसन्निभा
दशानामपिचैतेषांकर्मप्रोक्तंपृथक्पृथक् ॥

भाषार्थ–न्याय और अन्यायमें बुद्धिको करता है कि वह सभा यज्ञके तुल्य है और इन दशोंका कर्मभी पृथक् २ कहा है॥६१॥

वक्ताध्यक्षोनृपःशास्तासभ्याःकार्यपरीक्षकाः
स्मृतिर्विनिर्णयंब्रूतेजयंदानंदमंतथा ॥ ६२॥

भाषार्थ–अध्यक्ष (मंत्री) पढकर सुनावे राजा शिक्षादे–सभासद कार्यकी परीक्षा करें धर्मशास्त्र उसके निर्णयको और जय दान दमको कहता है ॥ ६२ ॥

शपथार्थेहिरण्याग्नीअंबुतृषितक्षुब्धयोः ।
गणकोगणयेदर्थंलिखेन्न्याय्यंचलेखकः ॥

भाषार्थ–शपथ (सौगंध) के लिये सुवर्ण अग्नि और तृषावान् और क्रोधीके लिये जल गणक अर्थ (द्रव्य आदि) को गिने और लेखक न्यायको लिखै ॥ ६३ ॥

शब्दाभिधानतत्वज्ञौगणनाकुशलौशुची ।
नानालिपिज्ञौकर्तव्यौराज्ञागणकलेखकौ ॥

भाषार्थ–शब्द बोलनेके तत्वको जानने वाले–गिनतीमें कुशल–और शुद्ध अनेक लिपिके ज्ञाता जो हों ऐसे गणक और लेखक राजाको नियत करने ॥ ६४ ॥

धर्मशास्त्रानुसारेणअर्थशास्त्रविवेचनं ।
यत्राधिक्रियतेस्थानेधर्माधिकरणंहितत् ॥

भाषार्थ–जिस स्थानमें धर्मशास्त्रके अनुसार अर्थशास्त्र (व्यवहार) का विवेचन होनेका अधिकरण (प्रस्ताव) हो उस स्थानको धर्माधिकरण कहते हैं ॥ ६५ ॥

व्यवहारान्दिदृक्षुस्तुब्राह्मणैःसहपार्थिवः ।
मंत्रज्ञैर्मंत्रिभिश्चैवविनीतःप्रविशेत्सभां ।

भाषार्थ–व्यवहार देखनेका अभिलाषी राजा नम्र होकर ब्राह्मण और मंत्रके ज्ञाता मंत्रियों सहित सभामें प्रवेश करै ॥ ६६ ॥

धर्मासनमधिष्ठायकार्यदर्शनमारभेत् ।
पूर्वोत्तरसमोभूत्वाराजापृच्छेद्विवादिनोः ॥

भाषार्थ–धर्मासन (राजगद्दी) पर बैठ कर कार्योंके देखनेका प्रारंभ करै–और राजा प्रारंभ और अंतमें समान (इकसा) होकर विवादियोंको पूछे ॥ ६७ ॥

प्रत्यहंदेशदृष्टैश्चशास्त्रदृष्टैश्चहेतुभिः ।
जातिजानपदान्धर्मान्छ्रेणिधर्मांस्तथैवच ॥

भाषार्थ–और प्रतिदिन देशमें–शास्त्रमें देखे हेतुओंसे जाति देश और श्रेणियोंके धर्मोंको ॥ ६८ ॥

समीक्ष्यकुलधर्मांश्चस्वधर्मंप्रतिपालयेत् ।
देशजातिकुलानांचयेधर्माःप्राक्प्रवर्तिताः

भाषार्थ–और कुलके धर्मोंको देखकर अपने धर्मकी पालना करै–और देश जाति कुल इनके जो धर्म पूर्व वर्णन किये हैं६९॥

तथैवतेपालनीयाःप्रजाप्रक्षुभ्यतेन्यथा ।
उदूह्यतेदाक्षिणात्यैर्मातुलस्यसुताद्विजैः ॥

भाषार्थ–उनकी पालना उसी प्रकार करै क्योंकि उनके अन्यथा करनेसे प्रजा क्षोभको प्राप्त हो जाती है–दक्षिण देशके द्विज मातुलकी कन्याको विवाह लेते हैं ॥ ७० ॥

मध्यदेशेकर्मकराःशिल्पिनश्चगराशिनः ।
मत्स्यादाश्चनराःसर्वेव्यभिचाररताःस्त्रियः

भाषार्थ–मध्यदेशके द्विज कर्म (सेवा) करे हैं और शिल्पी हैं और विषको खाते हैं और सब नर मत्स्योंको खाते हैं–स्त्री व्यभिचारमें रत हैं ॥ ७१ ॥

उत्तरेमद्यपानार्यःस्पृश्यानृणांरजस्वला ।
खशजाताःप्रगृह्लंतिभ्रातृभार्यामभर्तृकां ७२

भाषार्थ-उत्तरकी स्त्री मदिरा पीती हैं-मनुष्य रजस्वला स्त्रियोंको स्पर्श करते हैं खश देशके मनुष्य अपने भ्राताकी विधवा स्त्रीको ग्रहण करलेते हैं ॥ ७२ ॥

अनेनकर्मणानैतेप्रायश्चित्तदमार्हकाः ।
येषांपरंपराप्राप्ताःपूर्वजैरप्यनुष्ठिताः ७३ ॥

भाषार्थ-इस पूर्वोक्त अपने २ कर्मसे ये प्रायश्चित्त और दंडके योग्य नहीं हैं जिनके जो कर्म परंपरासे चले आये हों और पहिले पुरुषोंनेभी किये हों ॥ ७३ ॥

तंएवतैर्नदुष्येयुराचारान्नेतरस्यतु ।
न्यायान्पश्येत्तुमध्यान्हेपूर्वाण्हेस्मृतिदर्शनं

भाषार्थ-उन्हीं कर्मोंसे वे दूषित नहीं होते और इतरके कर्मोंसे दूषित होतेही हैं-राजा मध्याह्नके समय न्याय देखे और पूर्वाह्नमें स्मृति (धर्मशास्त्र) को देखै ॥ ७४ ॥

मनुष्यमारणेस्तेयेसाहसेस्तेयिकेसदा ।
नकालनियमस्तत्रसद्यएवविवेचनं ॥७५॥

भाषार्थ-मनुष्य मारना-चोरी-साहस और आवश्यक कार्य में समयका कोई नियम नहीं है किन्तु उसी समय विवेचन करै ७५

धर्मासनगतंदृष्ट्वाराजानंमंत्रिभिःसह ।
गच्छेन्निवेद्यमानंयत्प्रतिरुद्धमधर्मतः ॥७६

भाषार्थ-मंत्रियों सहित राजाको धर्मासन पर बैठा देख कर जाय और जो निवेदन करना हो उसको अधर्मके त्यागपूर्वक (सत्य २) कहै ॥ ७६ ॥

यथासत्यंचिंतयित्वालिखित्वावासमाहितः
नत्वावाप्रांजलिःप्रन्होह्यर्थीकार्यंनिवेदयेत् ॥

भाषार्थ-सत्यके अनुसार विचार कर और सावधानीसे लिखकर और नवकर हाथ जोड कर नमस्कार करके अर्थी (मुद्दई) अपने कार्यको निवेदन करे ॥ ७७ ॥

यथार्हमेनमभ्यर्च्यब्राह्मणैःसहपार्थिवः ।
सांत्वेनप्रशमय्यादौस्वधर्मंप्रतिपादयेत् ॥

भाषार्थ-इस अर्थीको ब्राह्मणों सहित राजा यथायोग्य सत्कार करके और प्रथम शांतिके वाक्यों समझाकर अपने धर्मको कहै७८

कालेकार्यार्थिनंपृच्छेत्प्रणतंपुरतःस्थितं ॥
किंकार्यंकाचतेपीडामाभैषीर्ब्रूहिमानव ॥

भाषार्थ-और नमन किये और आगे खडे हुये कार्यार्थीको समयपर पूछे कि तेरा क्या कार्य है और तुझे क्या पीडा (दुःख) है तू कह और हे मनुष्य भय मत करै ॥७९॥

केनकस्मिन्कदाकस्मात्पीडितोसिदुरात्मना
एवंपृष्टःस्वभावोक्तंतस्यसंशृणुयाद्वचः ॥

भाषार्थ-और किस दुरात्माने किस जगहे किस समय और किस कारणसे तुझे दुःख दिया है-इस प्रकार पूछकर उस अर्थीके स्वभावसे कहे हुये वचनको भली प्रकार सुने ॥ ८० ॥

प्रसिद्धलिपिभाषाभिस्तदुक्तंलेखकोलिखेत्
अन्यदुक्तंलिखेदन्यद्योर्थिप्रत्यर्थिनांवचः ॥

भाषार्थ-प्रसिद्ध लिपि (अक्षर) और भाषामें उस अर्थीके कहे हुएको लेखक लिखै जो अर्थिपत्यर्थिके अन्य कहे वचनको अन्य लिखै ॥ ८१ ॥

चौरवत्त्रासयेद्राजालेखकंद्रागतंद्रितः ।
लिखतंतादृशंसभ्यानविद्युःकदाचन ८२

भापार्थ-उस लेखकको राजा चोरके समान उसी समय सावधान होकर दंड दे-और सभासदभी जो लिखा हो उसके विरुद्ध कदाचित् न कहे ॥ ८२ ॥

बलाद्गृह्णंतिलिखितंदंडयेत्तांस्तुचौरवत् ।
प्राड्विवाकोनृपाभावेपृच्छेदेवसभागतं ८३॥

भापार्थ-जो बलसे लिखकर ग्रहण करें उन सभासदोंको चोरके समान दंड दे और राजाके न होनेपर सभामें आये मनुष्यको प्राड्विवाक पूछे ॥ ८३ ॥

वादिनौपृच्छतिप्राड्वाविवाकोविविनक्त्यतः
विचारयतिसभ्यैर्वाधर्माऽधर्मौविवक्तिवा ॥

भापार्थ-वादी विवादीको पूछनेसे प्राड् और सत्य असत्यके विवेक करनेसे विवाक अथवा सभासदोंके संग विचार और धर्म अधर्मके विवेकसे प्राड्विवाक (वकील) कहते हैं ॥ ८४ ॥

सभायांयेहितायोग्याःसभ्यास्तेचापिसाधवः
स्मृत्याचारव्यपेतेनमार्गेणाधर्षितःपरैः ८५

भापार्थ-जो सभासद सभामें हित और योग्य हो वे साधु (अच्छे) होते हैं धर्मशास्त्र और लोकाचारसे भिन्न जो मार्ग उस रीतिसे-अन्य मनुष्य जिसको दुःख दे और८५

आवेदयतिचेद्राज्ञेव्यवहारपदंहितत् ।
नोत्पादयेत्स्वयंकार्यंराजानाप्यस्यपूरुषः॥

भापार्थ-वह राजाके यहां आकर निवेदन करै वही व्यवहार (झगडा) का स्थान होता है और राजा वा राजाका कोई मनुष्य स्वयं व्यवहारको पैदा न करै ॥ ८६ ॥

नरागेणनलोभेननक्रोधेनग्रसेन्नृपः ।
परैरप्रापितानर्थान्नचापिस्वमनीषया ८७॥

भापार्थ-राजाभी प्रीति लोभ क्रोधसे व्यवहार न ग्रसे (छिपावे) और दूसरोंने नही प्राप्तहुये अर्थोंको अपनी बुद्धिसे न उठावे ८७

छलानिचापराधांश्चपदानिनृपतेस्तथा ।
स्वयमेतानिगृण्हीयान्नृपस्त्वावेदकैर्विना ॥

भापार्थ-छल-और अपराध और राजाके पदवी इनको तो राजा निवेदन करनेवालों के विनाभी ग्रहण करले ॥ ८८ ॥

सूचकस्तोभकाभ्यांवाश्रुत्वाचैतानितत्त्वतः।
शास्त्रेणनिंदितस्त्वर्थीनापिराज्ञाप्रचोदितः॥

भापार्थ-सूचक (चुगल) स्तोभक (वह कानेवाला) से इनके यथार्थ तत्वको सुन कर-जो अर्थी शास्त्रसे निंदित और राजाने जिसको कुछ कहा नहो ॥ ८९ ॥

आवेदयतियत्पूर्वंस्तोभकःसउदाहृतः ।
नृपेणविनियुक्तोयःपरदोषानुवीक्षणे॥९०॥

भापार्थ-और राजाके प्रति प्रथमही निवेदन करै उसे स्तोभक कहते हैं-और राजाने जिसको दूसरोंके अपराध देखनेके लिये नियत कर रक्खाहो ॥ ९० ॥

नृपंसंसूचयेज्ज्ञात्वासूचकःसउदाहृतः ।
पथिभंगीपराक्षेपीप्राकारोपरिलंघकः॥९१॥

भापार्थ-और जो जानकर राजाको बता देता है वह सूचक कहाहै-मार्गका भंजक-दूसरेकी निंदा-परकोटेका लंघन इनको जो करै ॥ ९१ ॥

विपानस्यविनाशीचतथाचायतनस्यच ।
परिखापूरकश्चैवराजच्छिद्रप्रकाशकः॥९२

भाषार्थ-जो चोबच्चा और घरको नष्ट करै और खाईकी मिट्टीसे भरदे और जो राजाके छिद्र (बुराई) को प्रकाश करै ॥ ९२ ॥

अतःपुरंवासगृहंभांडागारंमहानसम् ।
प्रविशत्यनियुक्तोयोभोजनंचानिरीक्षते॥९३

भाषार्थ-अंतःपुर (रणवास) वसनेका स्थान-पात्रोंका घर और भोजन वनानेका स्थान इनमें जो विना कहे चलेजाय और जो भोजनको देखै ॥ ९३ ॥

विण्मूत्रश्लेष्मवातानांक्षेप्ताकामान्नृपाग्रतः ।
पर्यंकासनबंधीचाप्यग्रस्थानविरोधकः ॥

भाषार्थ-और जो विष्ठा मूत्र थूक अधोवायु इनको जानकर राजाके आगे फेंके और पलंगपर आसन लगाकर बैठे और राजाके मुख्य स्थानका विरोध करै ॥ ९४ ॥

नृपातिरिक्तवेषश्चविधृतःप्रविशेत्तुयः ।
यश्चोपद्वारेणविशेदवेलायांतथैवच ॥९५॥

भाषार्थ-राजाके विरुद्ध वेषको धारण करै और धारण करके प्रवेश करै और जो प्रसिद्ध द्वारसे अन्यद्वारसे अथवा असमयपर जो प्रवेश करै ॥ ९५ ॥

शय्यासनेपादुकेचशयनासनरोहणे ।
राजन्यासन्नशयनेयस्तिष्ठतिसमीपतः ॥

भाषार्थ-और जो राजाके शय्यापर सोतेके समय शय्या आसन खडाऊं अपने शय्या पर राजाके समीप बैठे ॥ ९६ ॥

राज्ञोविद्विष्टसेवीचाप्यदत्तविहितासनः ।
अन्यवस्त्राभरणयोःस्वर्णस्यपरिधायकः ॥

भाषार्थ-जो राजाका विरोध करै और विना दिये आसनपर बैठे अन्यके वस्त्र भूषण सुवर्ण इनको धारण करै ॥ ९७ ॥

स्वयंग्राहेणतांबूलंगृहीत्वाभक्षयेत्तुयः ।
अनियुक्तप्रभाषीचनृपाक्रोशकएवच॥९८

भाषार्थ-और जो पानको विना दिये स्वयं लेकर भक्षण करै और राजाकी आज्ञाके विना संभाषण करै और राजाकी निंदा जो करै ॥ ९८ ॥

एकवस्त्रस्तथाभ्यक्तोमुक्तकेशोवगुंठितः ।
विचित्रितांगःस्रग्वीचपरिधानविधूनकः ॥

भाषार्थ-एकवस्त्र धारण किये-और उवटना किये-केशोंको खोलकर-घूंगट लगायकर अंगको चीतकर-माला पहनकर वस्त्रोंको हिलाकर जो राजाके समीप जाय ॥९९॥

शिरःप्रच्छादकश्चैवच्छिद्रान्वेषणतत्परः ।
आसंगीमुक्तकेशश्चघ्राणकर्णाक्षिदर्शकः ॥

भाषार्थ-शिरको ढके छिद्रोंको जो ढूंढे जिसका मन दूसरे काममें लगा हो जिसके केश खुले हों जो नाक कान नेत्र इनको दिखावे ॥ ६०० ॥

दंतोल्लेखनकश्चैवकर्णनासाविशोधकः ।
राज्ञःसमीपेपंचाशच्छलान्येतानिसंतिहि १

भाषार्थ-दांतोंके मैलको जो निकासे कान नाकके मैलको निकासे-ये पूर्वोक्त पचास ५० छल राजाके समीप होते हैं ॥ १०१ ॥

आज्ञोल्लंघनकर्तारःस्त्रीवधोवर्णसंकरः ।
परस्त्रीगमनंचौर्यंगर्भश्चैवपतिंविना ॥ २ ॥

भाषार्थ-आज्ञाका अवलंघन करनेवाले-स्त्रीकी हत्या-वर्णोंका संकर-पराई स्त्रीका गमन- चोरी-पतिके विना गर्भकी स्थिति ॥

वाक्पारुष्यमवाच्यायदंडपारुष्यमेवच ।
गर्भस्यपातनंचैवेत्यपराधादशैवतु ॥ ३ ॥

भाषार्थ-कठोर वाणी निंदाके अयोग्य को कठोर दंड-गर्भका पातन ये दश अपराध होते हैं ॥ ३ ॥

उत्कृतीसस्यघातीचाप्यग्निदश्चतथैवच।
राज्ञोद्रोहप्रकर्ताचतन्मुद्राभेदकस्तथा ॥४॥

भाषार्थ-अन्नको जो काटे सस्य (घास) को नष्ट करे अग्नि लगावे-राजाका जो द्रोह करे राजाकी मुद्रा (मोहर) को जो नष्ट करे॥४

तन्मंत्रस्यप्रभेत्ताचबद्धस्यचविमोचकः।
अस्वामिविक्रयंदानंभागंदंडंविचिन्वति ५॥

भाषार्थ-राजाके मंत्रको जो नष्ट करे बद्ध (कैदी) को जो छोडदे-विना स्वामीके जो वेचदे वा दान करे-दंडके भागको जोड़ दे ॥ ५ ॥

पटहाघोषणाच्छादिद्रव्यमस्वामिकंचयत्।
राजावलीढद्रव्यंचयश्चैवागोविनाशनं ॥६॥

भाषार्थ-ढंढोरेके शब्दको जो छिपावे-विना स्वामी के द्रव्यको और राजाके मिलने योग्य द्रव्य (कर आदि) को जो ले और जो अपराधीके अपराधको नष्ट करे ॥ ६ ॥

द्वाविंशतिपदान्याहुर्नृपज्ञेयानिपंडिताः।
उद्धतःक्रूरवाग्वेषोगर्वितश्चंडएवहि ॥ ७ ॥

भाषार्थ-हे पंडितो ये बाइश२२ पद राजाके जानने योग्य हैं-और जो उद्धत (उद्दंड) कठोर जिसकी वाणी वेष हो-अभिमानी और जो क्रोधी हो ॥ ७ ॥

सहासनश्चातिमानीवादीदंडमवाप्नुयात्।
अर्थिनाकथितंराज्ञेतदावेदनसंज्ञकं ॥ ८ ॥

भाषार्थ-जो एक आसनपर बैठे अति अभिमानी-विवादी-हो वह दंड देने योग्यहै जो अर्थी राजाके आगे आकर कहै उसे आवेदन (अर्जी) कहते हैं ॥ ८ ॥

कथितंप्राड्विवाकाद्यैःसाभाषाखिलवोधिनी।
सपूर्वपक्षःसभ्यादिस्तंविमृश्ययथार्थतः ॥९

भाषार्थ-और जो प्राड्विवाक आदिसे कहै उसे भाषा कहते हैं उसीसे सबको बोध होता है उसी पूर्वपक्षको सभ्य आदि यथार्थ रीतिसे विचार कर ॥ ९ ॥

अर्थितःपूरयेद्धीनंततसाध्यमधिकंत्यजेत्।
वादिनश्चिन्हितंसाक्ष्यंकृत्वाराजाविमुद्रयेत्

भाषार्थ-और फिर पूजाहुआ उसमें जो कम हो उसको पूर्ण करे और उसकी अधिक साक्षियोंको त्यागदे वादीके हस्ताक्षरसे चिन्हित कराकर राजाकी मुद्रासे अंकित करै (मोहरलगादे) ॥ १० ॥

अशोधयित्वापक्षंयेह्युत्तरंदापयंतितान्।
रागाल्लोभाद्भयाद्वापिस्मृत्यर्थैवाधिकारिणः

भाषार्थ-विना पूर्व पक्षको शुद्धकिये जो उत्तर दिवाते हैं उनको और प्रीति लोभ भयसे जो धर्मशास्त्रके अधिकारी विरुद्ध करै ॥ ११॥

सभ्यादीन्दंडयित्वातुह्यधिकारान्निवर्तयेत्
ग्राह्याग्राह्यंविवादंतुसुविमृश्यसमाश्रयन् १२

भाषार्थ-उन सभासदआदिकोंको दंड दिवाकर उनके अधिकारोंको छीनले और ग्रहण करने योग्य और अयोग्य विवादको भली प्रकार विचार कर राजा करै ॥ १२ ॥

संजातपूर्वपक्षंतुवादिनंसंनिरोधयेत्।
राजाज्ञयासत्पुरुषैःसत्यवाग्भिर्मनोहरैः १३

भाषार्थ-जब वादिका पूर्वपक्ष पूरा होले तब उस वादीको राजाकी आज्ञाके अनुसार सज्जन सत्यवादि मनोहर पुरुष उसको रोंकदें ॥ १३ ॥

निरालसैंगितज्ञैश्चदृढशस्त्रास्त्रधारिभिः।
वक्तव्येयेंह्यतिष्ठंतमुत्क्रामंतंचतद्वचः १४॥

भाषार्थ-और जो आलस्य रहित चेष्टाके ज्ञाता-दृढ शस्त्रअस्त्रोंको जो धारण किये हों-जो वादी कहने योग्य अर्थमें न टिकै अथवा अपने कहे वचनका अवलंघन करै ॥ १४ ॥

आसेधयेद्विवादार्थीयावदाह्वानदर्शनं ।
प्रत्यर्थिनंतुशपथैराज्ञयावानृपस्यच ॥ १५॥

भाषार्थ-उसको तवतक रोकदे जवतक राजाकी आज्ञा नहो-और प्रत्यर्थी (मुद्दाले) को सौगंद-और राजाके आज्ञासे रोकै १५

स्थानासेधःकालकृतःप्रवासात्कर्मणस्तथा ।
चतुर्विधःस्यादासेधोनासिद्धस्तंविलंघयेत्

भाषार्थ-और वह आसेध स्थान-काल-परदेश-और कर्मसे पैदा होनेसे चारप्रकारका होता है-उस आसेधको प्राप्तहुआ मनुष्य आसेधका अवलंघन न करै ॥१६॥

यस्त्विंद्रियनिरोधेनव्याहारोच्छ्वासनादिभि
आसेधयेदनासेधैःसदंड्योनत्वतिक्रमी १७

भाषार्थ-जो मनुष्य इंद्रियोंके रोकने वाणी ऊर्ध्वश्वास आदि अनासेधरूपोंसे आसेध करै वही दंड देने योग्य होता है और अवलंघन करनेवाला दंड्य नही होता ॥१७॥

आसेधकालआसिद्धआसेधंयोनिवर्तते ।
सविनेयोन्यथाकुर्वन्नासेद्धादंडभाग्भवेत् १८

भाषार्थ-आसेधके समयपर आसेधको प्राप्तहुआ जो मनुष्य आसेधसे हटताहै अन्यथा करने पर वह दंड देने योग्य होता है आसेध करानेवाला दंडका भागी नही होता ॥ १८ ॥

यस्याभियोगंकुरुतेतत्वेनाशंकयाथवा ।
तमेवाह्वानयेद्राजामुद्रयापुरुषेणवा ॥ १९॥

भाषार्थ-जिस मनुष्यपर अपराधकी शंका हो वा जो यथार्थ अपराधी हो उस मनुष्यकोही राजा अपने पुरुष अथवा मुद्रासे बुलावे ॥ १९ ॥

शंकाऽसतांतुसंसर्गादनुभूतकृतेस्तथा ।
वोढाभिदर्शनात्तत्वंविज्ञास्यतिविचक्षणः २०

भाषार्थ-दुष्टोंके संवंधसे अथवा वारंवार कार्यके देखनेसे शंका होती है और अपराधियोंके संग गमनसे पंडितजन तत्वको जानलेते हैं ॥ २० ॥

अकल्पवालस्थविरविषमस्थक्रियाकुलान् ।
कार्यातिपातिव्यसनिनृपकार्योत्सवाकुलान्

भाषार्थ-असमर्थ-बालक-वृद्ध-कठिनकाममें व्याकुल-कार्यमें अत्यंत आसक्त-व्यसनी-राजाके कार्य और उत्सवोंमें व्याकुल ॥ २१ ॥

मत्तोन्मत्तप्रमत्तार्तभृत्यान्नाह्वानयेन्नृपः ।
नहीनपक्षांयुवतींकुलेजातांप्रसूतिकां ॥२२

भाषार्थ-मत्त-उन्मत्त-प्रमत्त-रोगी ऐसे भृत्योंसे अपराधियोंको राजा न बुलावे और हीन (दुर्बल) जिसका पक्ष हो उस स्त्रीको और कुलीन स्त्री और प्रसूता स्त्रीकोभी राजा न बुलावे ॥ २२ ॥

सर्ववर्णोत्तमांकन्यांनज्ञातिप्रमुखाःस्त्रियः ।
निर्वेष्टुकामोरोगार्तोयियक्षुर्व्यसनेस्थितः ॥

भाषार्थ-ब्राह्मणकी कन्या-और जातिमें मुख्य स्त्री इनकोभी न बुलावे विवाहमें उद्यत (लगा) रोगसे दुःखी-यज्ञका कर्ता-विपत्तिमें स्थित ॥ २३ ॥

अभियुक्तस्तथान्येनराजकार्योद्यतस्तथा ।
गवांप्रचारेगोपालाःसस्यावापेकृषीवलाः ॥

भाषार्थ–और अन्यके संग जिसका विरोध हो और जो राजाके काममें लगा हो–जो गोपालगौओंको चुगा रहे हों–और जो किसान खेत वो रहे हों ॥ २४ ॥

शिल्पिनश्चापितत्कालमायुधीयाश्चविग्रहे ॥
अव्यापृतव्यवहारश्चदूतोदानोन्मुखोव्रती२५

भाषार्थ–जो शिल्पी हो और जो तत्कालमें लडाईमें आयुध धारण किये हों जो व्यवहारको न जानता हो–दूत–दान देनेको जो उद्यत हो–और जो व्रतमें आसक्त हो ॥ २५ ॥

विषमस्थाश्चनासेध्यानचैतानाव्हयेन्नृपः ।
नदीसंतारकांतारदुर्देशोपप्लवादिषु ॥२६॥

भाषार्थ–जो विषम (भयानक) स्थानमें बैठे हों–इनका आसेध न करै (न पकडे) और न राजा इनको बुलावे–नदीका तिरना वन और भयानक देशके उपद्रव आदिमें२६

असिद्धस्तंपरासेधमुत्क्रामन्नापराध्नुयात् ।
कालंदेशंचविज्ञायकार्याणांचबलाबलं॥२७

भाषार्थ–जो मनुष्यको पकडे और वह उसके पकडनेको रोके तो अपराधी नही होता कार्य और देशको और कार्योंके वल अवलको जानकर ॥ २७ ॥

अकल्पादीनपिशुनान्यानैराव्हानयेन्नृपः ।
ज्ञात्वाभियोगंयेपिस्युर्वनेप्रव्राजितादयः २८

भाषार्थ–असमर्थ और धनी–अपिशुन (मुकवा) इनको राजा यान (सवारी) में बुलवावे और जो वनमें संन्यासी आदि हों अपराध जानकर ॥ २८ ॥

तानप्याव्हानयेद्राजागुरुकार्येष्वकोपयन् ।
व्यवहारानभिज्ञेनह्यन्यकार्याकुलेनच २९॥

भाषार्थ–उनकोभी गुरु (भारी)कामके लिये इस प्रकार बुलावे जैसे वे कुपित नहीं जो व्यवहारको न जानता हो अथवा अन्य कार्यमें व्याकुल हो ॥ २९ ॥

प्रत्यर्थिनार्थिनातज्ज्ञःकार्यःप्रतिनिधिस्तदा
अप्रगल्भजडोन्मत्तवृद्धस्त्रीबालरोगिणां ॥

भाषार्थ–ऐसा प्रत्यर्थी और अर्थी व्यवहारके ज्ञाता प्रतिनिधि (मुखत्यार) को सदैव करलें–जो प्रगल्भ न हो जड–उन्मत्त वृद्ध–स्त्री–बालक–रोगी ॥ ३० ॥

पूर्वोत्तरंवदेद्बंधुर्नियुक्तोवाथवानरः ।
पितामातासुहृद्बंधुर्भ्रातासंबंधिनोपिच३१॥

भाषार्थ–इनके पूर्व और उत्तर पक्षको वंधु अथवा नियुक्त (मुखत्यार) मनुष्य अथवा पिता–माता–मित्र–भ्राता वा संबंधी क हैं ॥ ३१ ॥

यदिकुर्युरुपस्थानंवादंतत्रप्रवर्तयेत् ।
यःकश्चित्कारयेत्किंचिन्नियोगाद्येनकेनचित्

भाषार्थ–जो ये उपस्थान (पूर्वपक्ष)ठीक २ करदें तो वहां विवादको प्रवृत्त करै–जो मनुष्य जिस किसीसे नियुक्त करके अपने किंचित् कार्यको कराले ॥ ३२ ॥

तत्तेनैवकृतंज्ञेयमनिवर्त्यंहितत्स्मृतं ।
नियोगितस्यापिभृतिंविवादात्षोडशांशिकीं

भाषार्थ–वह कार्य उसीका किया समझना वह हट नहीं सकता–और जिस मनुष्यको नियत करै उसको सोलहमा भाग भृति (नोकरी) दे ॥ ३३ ॥

अन्यथाभृतिगृण्हंतंदंडयेच्चानियोगिनं ।
कार्योनित्योनियोगीचनृपेणस्वमनीषया३४

भाषार्थ—जो नियुक्त किया मनुष्य अन्यथा भृतिको ग्रहण करता है उसको दंडदे और राजाभी सदाके लिये अपनी बुद्धिसे एक नियुक्त मनुष्य करै ॥ ३४ ॥

लोभेनत्वन्यथाकुर्वन्नियोगीदंडमर्हति ।
योनभ्रातानचपितानपुत्रोननियोगकृत् ३५

भाषार्थ—यदि नियुक्त मनुष्य लोभसे अन्यथा करै तो दंडके योग्य होता है—जो भ्राता-पिता-पुत्र ये नियोगको न करैं और ॥ ३५ ॥

परार्थवादीदंड्यःस्याद्व्यवहारेषुविब्रुवन् ।
तदधीनकुटुंबिन्यःस्वैरिण्योगणिकाश्रयाः॥

भाषार्थ—पराये अर्थको कहै व्यवहारमें विरुद्ध कहता हुआ वह दंडके योग्य होता है और जिन स्त्रियोंके आधीन कुटुंब हो और जो व्यभिचारिणी और वेश्या हों॥३६

निष्कुलायाश्चपतितास्तासामाह्वानमिष्यते
प्रवर्तयित्वावादंतुवादिनौतुमृतौयदि॥ ३७॥

भाषार्थ—जिनके कुल न हो और जो पतित हों ऐसी स्त्रियोंका बुलाना श्रेष्ठ है यदि विवादको लगा कर दोनों वादी मरगये हों३७

तत्पुत्रोविवदेत्तज्ज्ञोह्यन्यथातुनिवर्तयेत् ।
मनुष्यमारणेस्तेयेपरदाराभिमर्शने ३८ ॥

भाषार्थ—तो व्यवहारका ज्ञाता उसका पुत्र विवाद करै यदि पुत्र न करै तो विवादको निवृत्त करदे—मनुष्यके मारना चोरी—पराई स्त्रीके स्पर्शमें ॥ ३८ ॥

अभक्ष्यभक्षणेचैवकन्याहरणदूषणे ।
पारुष्येकूटकरणेनृपद्रोहेचसाहसे ॥ ३९ ॥

भाषार्थ—अभक्ष्य वस्तुके भक्षणमें कन्याके हरने या दोष लगानेमें—कठोर वचन कहने झूंठ करने—राजाके द्रोह और साहसमें३९॥

प्रतिनिधिर्नदातव्यःकर्तातुविवदेत्स्वयं ।
आहूतोयत्रनागच्छेद्दर्पाद्बंधुबलान्वितः ४०

भाषार्थ—प्रतिनिधिको न दे किंतु अपराध करनेवाला स्वयं विवाद करै—जो बंधु और बलसे संयुक्त मनुष्य बुलाने पर न जाय४०

अभियोगानुरूपेणतस्यदंडंप्रकल्पयेत् ।
दूतेनाह्वानितंप्राप्तंधर्षकंप्रतिवादिनं ४१॥

भाषार्थ—तो अपराधके अनुसार उसके दंडकी कल्पना करै—दूतके बुलानेसे प्राप्त हुये जो अपराधी और प्रतिवादी उनको ४१

दृष्ट्वाराज्ञातयोश्चिंत्योयथार्हप्रतिभूस्त्वतः ।
दास्याम्यदत्तमेतेनदर्शयामितवांतिके४२

भाषार्थ—देखकर राजा इन दोनोंके यथोचित साक्षीकी चिंता करै—जो यह न देगा तौ मैं दूंगा और आपके समीप पहुंचा दूंगा ॥ ४२ ॥

एनमाधिंपादयिष्येह्यस्मात्तेनभयंक्वचित्
अकृतंचकरिष्यामिह्यनेनायंचवृत्तिमान् ॥

भाषार्थ—और इससे आधि (धरोर) को दिवा दूंगा इससे आपको कदाचित्-भी भय न होगा और जो इसने नहीं किया है उसे करादूंगा और यहभी करेगा ॥ ४३ ॥

अस्तीतिनचमिथ्यैतदंगीकुर्यादतंद्रितः ।
प्रगल्भोबहुविश्वस्तश्चाधीनोविश्रुतोधनी ॥

भाषार्थ—यह बात है मिथ्या नहीं इस बातको निरालस होकर स्वीकार करै जो धनी प्रगल्भ हो जिसका अधिक विश्वास हो जो आधीन हो और विख्यात धनवान् हो ॥ ४४ ॥

उभयोःप्रतिभूर्ग्राह्यःसमर्थःकार्यनिर्णये ।
विवादिनौसंनिरुध्यततोवादंप्रवर्तयेत् ४५

भाषार्थ-वादी और प्रतिवादीके ऐसे साक्षीको राजा ग्रहण करे जो कार्य निर्णय करनेमें समर्थ हो दोनों वादी प्रतिवादी-योंको रोककर वादकी प्रवृत्ति को राजा करे ॥ ४५ ॥

स्वपुष्टोराजपुष्टोवास्वभृत्यापुरक्षकौ ॥
ससाधनोतत्त्वमिच्छुःकूटसाधनशंकया ४६

भाषार्थ-जो स्वयं पोषण करे वा राजा जिसका पोषण करे अथवा अपनी भृति (नोकरी) से जो पोषण और रक्षा करे इन सबके साधन सहित तत्त्वकी इच्छाको राजा करे क्योंकि कोई साधन झूंठा नहो जाय४६

प्रतिज्ञादोपनिर्मुक्तंसाध्यंसत्कारणान्वितं ।
निश्चितंलोकसिद्धंचपक्षंपक्षविदोविदुः ।४७

भाषार्थ-प्रतिज्ञाके दोषोंसे रहित अच्छे कारणों सहित जो निश्चय किया और लोक सिद्धसाध्य पक्षके जाननेवाले उसको पक्ष कहते हैं ॥ ४७ ॥

अन्यार्थमर्थहीनंचप्रमाणागमवर्जितं ।
लेख्यहीनाधिकंभ्रष्टंभाषादोषाउदाहृताः ॥

भाषार्थ-जो अन्य अर्थवाला हो अथवा अर्थसे हीन (रहित) हो प्रमाण औरआगमसे वर्जित हो लिखने योग्य बातसे हीन हो वा अधिक हो वा भ्रष्टहो-ये भाषा (अर्जी) के दोष कहे हैं ॥ ४८ ॥

अप्रसिद्धंनिराबाधंनिरर्थंनिष्प्रयोजनं ।
असाध्यंवाविरुद्धंवापक्षाभासंविवर्जयेत्४९

भाषार्थ-जो प्रसिद्ध नहो निराबाधहो निरर्थक हो निष्प्रयोजनहो असाध्यहो वा विरुद्धहो ऐसे पक्षाभास (नामका पक्ष) को वर्जदे ॥ ४९ ॥

नकेनचिच्छ्रुतोदृष्टःसोऽप्रसिद्धउदाहृतः ।
अहंमूकेनसंशप्तोवंध्यापुत्रेणताडितः । ५०

भाषार्थ-जो किसीने सुना हो न देखाहो उसको अप्रसिद्ध कहतेहैं जैसे कि मुझे गूंगेने गालीदी और वंध्याके पुत्रने मुझे मारा ॥ ५० ॥

अधीतेसुस्वरंगातिस्वेगेहेविहरत्ययं
धत्तेमार्गमुखद्वारंममगेहसमीपतः ।५१ ॥

भाषार्थ-यह मनुष्य मेरे घरके समीप अपने घरमें बड़े ऊंचे स्वरसे पढताहै गाताहै और अपने घरका दरवाजा भेडकर क्रीडा करता है ॥ ५१ ॥

इतिज्ञेयंनिराबाधंनिष्प्रयोजनमेवतत् ।
सदामद्दत्तकन्यायांजामाताविहरत्ययं ।५२

भाषार्थ-इसको निराबाध जानना और वही निष्प्रयोजन होताहै-यह मेरा जमाई मेरी दीहुई कन्यामें सदैव विहार करताहै ५२

गर्भंधत्तेनवंध्येयंमृतोयंनप्रभाषते ।
किमर्थमितितज्ज्ञेयमसाध्यंचविरुद्धकं ५३

भाषार्थ-और गर्भधारण करतीहै क्योंकि मेरी कन्या वंध्या नहीहै और मेरे संग मरा यह बोलता क्योंनही इसको असाध्य और विरुद्ध कहतेहैं ॥ ५३ ॥

मद्दत्तदुःखसुखतोलोकोदुप्यतिनंदति ।
निरर्थमितिवाज्ञेयंनिष्प्रयोजनमेववा ॥५४

भाषार्थ-मेरे दिये दुःखसे जगत् दुःखी और सुखसे प्रसन्न होताहै इसको निरर्थक वा निष्प्रयोजन जानना ॥ ५४ ॥

श्रावयित्वातुयत्कार्यंत्यजेदन्यद्वदेदसौ ।
अन्यपक्षाश्रयाद्वादीहीनोदंड्यश्चसस्मृतः

भाषार्थ–जो यह पुरुष एक कार्यको सुना कर त्यागदे और अन्य कार्यको कहने लगे वह वादी अन्यपक्षके आश्रयसे हीन और दंड देने योग्य कहाहै ॥ ५५ ॥

विनिश्चितेपूर्वपक्षेग्राह्याग्राह्यविशोधिते ।
प्रतिज्ञार्थेस्थिरीभूतेलेखयेदुत्तरंततः ॥५६

भाषार्थ–जब पूर्वपक्ष (अर्जी) का निश्चय हो जाय और ग्रहण करने योग्य वा अयोग्यका निश्चय होजाय और प्रतिज्ञा कियाहुआ अर्थ स्थिर होजाय उसके अनंतर उत्तरको लिखै ॥ ५६ ॥

तत्राभियोक्ताप्राक्पृष्टोह्यभियुक्तस्त्वनंतरं ।
प्राड्विवाकसदस्याद्यैर्दाप्यतेह्युत्तरंततः ॥

भाषार्थ–उस समय वादीको प्रथम पूछे और प्रतिवादीको उसके अनंतर और फिर प्राड्विवाक और सभासद आदिसें उत्तर दिवावें ॥ ५७ ॥

श्रुतार्थस्योत्तरंलेख्यंपूर्वविदकसंनिधौ ।
पक्षस्यव्यापकंसारमसंदिग्धमनाकुलं ॥

भाषार्थ–और सुने हुये अर्थका उत्तर वादीके सन्मुख लिखना चाहिये जो संपूर्ण पक्षका व्यापक (पूरा) हो और सार–संदेहरहित–और व्याकुलतासे न दिया हो॥५८॥

अव्याख्यागम्यमित्येतन्निर्दुष्टंप्रतिवादिना।
संदिग्धमन्यत्प्रकृतादत्यल्पमतिभूरिच ॥

भाषार्थ–जो टीकाके विना समझाय और प्रतिवादी जिसमें कोई दोष नदे और जो उचित उत्तरसे भिन्न हो अथवा अत्यन्त अल्प और अत्यंत अधिक हो वह संदिग्ध उत्तर कहाता है ॥ ५९ ॥

पक्षैकदेशेव्याप्यंयत्तत्तुनैवोत्तरंभवेत् ।
नवाहूतोवदेत्किंचिद्धीनोदंड्यश्चसःस्मृतः

भाषार्थ–जो उत्तर 'पूर्वपक्षके एकदेशका हो वह उत्तर नहीं होता और प्रतिवादी बुलाने पर कुछ न कहे वह हीन और दंड देने योग्य कहाहै ॥ ६० ॥

पूर्वपक्षेयथार्थेतुनदद्यादुत्तरंतुयः ।
प्रत्यर्थीदापनीयःस्यात्सामादिभिरुपक्रमैः

भाषार्थ–जो प्रतिवादी यथार्थभी पूर्वपक्षका उत्तर न दे वह शांति आदि उपायोंसे दंड देने योग्य होताहै ॥ ६१ ॥

मोहाद्वायदिवाशाठ्याद्यन्नोक्तंपूर्ववादिना।
उत्तरांतर्गतंवातत्प्रश्नैर्ग्राह्यंद्वयोरपि ॥६२॥

भाषार्थ–मोह वा शठतासे जो बात पूर्ववादीने न कहीहो–अथवा जो उत्तरमें ही आजाय वह बात पूछकर दोनोंकी ग्रहण करने योग्य है ॥ ६२ ॥

सत्यंमिथ्योत्तरंचैवप्रत्यवस्कंदनंतथा ।
पूर्वन्यायविधिश्चैवमुत्तरंस्याच्चतुर्विधं ॥ ६३

भाषार्थ–सत्य–मिथ्या–उत्तर और प्रत्यवस्कन्दन–और पूर्वन्यायका विधान इन भेदोंसे उत्तर चारप्रकारका होताहै ॥ ६३ ॥

अंगीकृतंयथार्थंयद्वाद्युक्तंप्रतिवादिना ।
सत्योत्तरंतुतज्ज्ञेयंप्रतिपत्तिश्चसास्मृता ॥

भाषार्थ–जिस वादीके कथनको प्रतिवादीने यथार्थ मानलियाहो उसको सत्योत्तर कहते हैं और वही प्रतिपत्ति कही है॥६४॥

श्रुत्वाभाषार्थमन्यस्तुयदितंप्रतिषेधति ।
अर्थतःशब्दतोवापिमिथ्यातज्ज्ञेयमुत्तरं६५

भाषार्थ–भाषा (अर्जी) के अर्थको सुनकर यदि उसका कोई अर्थ वा शब्दसे निषेध करे वह उत्तर मिथ्या जानना ॥ ६५ ॥

मिथ्यैतन्नाभिजानामितदातत्रनसान्निधिः ।
अजातश्चास्मितत्कालेइतिमिथ्याचतुर्विधं॥

भाषार्थ–यह मिथ्या हैं–मैं जानता नहीं–उस समय में वहां समीपमें नहीथा–और उस समय में पैदाही नहीं हुआथा–इस प्रकार मिथ्या चारप्रकारका है ॥ ६६ ॥

अर्थिनालिखितेह्यर्थःप्रत्यर्थीयदितंतथा ।
अपद्यकारणंब्रूयात्प्रत्यवस्कंदनंहितत् ॥६७

भाषार्थ–वादीने जो अर्थ लिखा हो उसको यदि वादी मानकर कोई कारण कहे उस उत्तरको प्रत्यवस्कन्दन कहते हैं ॥ ६७ ॥

अस्मिन्नर्थेममानेनवादःपूर्वमभूत्तदा ।
जितोयमस्तिचेद्ब्रयात्प्राङ्न्यायसउदाहृत

भाषार्थ–इस विषयमें मेरा इसके संग पहिले विवाद हुआथा उसमें इसको पराजय कर चुकाहुं उस उत्तरको प्राङ्न्याय कहते हैं ॥ ६८ ॥

जयपत्रेणसभ्यैर्वासाक्षिभिर्भावयाम्यहं ।
मयाजितःपूर्वमितिप्राङ्न्यायस्त्रिविधःस्मृतः

भाषार्थ–और वह प्राङ्न्याय इन भेदोंसे तीन प्रकारका कहा है कि जयके पत्रसे वा सभासदोंसे वा साक्षीयोंसे–मैं भावना (निश्चय) कर सकताहुं ॥ ६९ ॥

अन्योन्ययोःसमक्षंतुवादिनोःपक्षमुत्तरं ।
नहिगृण्हंतियेसभ्यादंड्यास्तेचौरवत्सदा॥

भाषार्थ–जो सभासद दोनों वादी और प्रतिवादीके समक्ष (सामने) पक्ष वा उत्तरको ग्रहण नकरैं वे सदैव चोरके समान दंड देने योग्य हैं ॥ ७० ॥

लिखितेशोधितेसम्यक्सतिनिर्दोषउत्तरे ।
अर्थिप्रत्यर्थिनोर्वापिक्रियाकारणमिष्यते ॥

भाषार्थ–तब दोनों वादी और प्रतिवादीकी क्रिया (मुकद्दमा) का करना अच्छा कहा है जब उत्तर लिखकर और शुद्ध होकर निर्दोप हो जाय ॥ ७१ ॥

पूर्वपक्षःस्मृतःपादोद्वितीयश्चोत्तरात्मकः ।
क्रियापादस्तृतीयस्तुचतुर्थोनिर्णयाभिधः ॥

भाषार्थ–और इन भेदोंसे न्याय चार प्रकारसें होता है प्रथम पाद पूर्वपक्ष–दूसरा पाद उत्तर–तीसरा पाद क्रिया–और चौथा पाद निर्णय कहा हैं ॥ ७२ ॥

कार्यंहिसाध्यमित्युक्तंसाधनंतुक्रियोच्यते ।
अर्थीतृतीयपादेतुक्रियायाःप्रतिपादयेत् ॥

भाषार्थ–कार्यको साध्य कहते हैं और क्रियाको साधन–और वादी क्रियारूप तीसरे पादमें साधनको कहे ॥ ७३ ॥

चतुष्पाद्व्यवहारःस्यात्प्रतिपत्त्युत्तरंविना ।
क्रमागतान्विवादांस्तुपश्येद्वाकार्यगौरवात्

भाषार्थ–और प्रतिपत्ति उत्तरके विना व्यवहारके चार पाद होते हैं–और सभामें क्रमसे आये जो विवाद उनको कार्यके गौरवानुसार राजा देखैं ॥ ७४ ॥

यस्यवाभ्यधिकापीडाकार्यंवाभ्यधिकंभवेत्।
वर्णानुक्रमतोवापिनयेत्पूर्वंविवादयेत् ॥७५

भाषार्थ–जिसको अधिक पीडाहो अथवा जिसका कार्य अधिक हो अथवा जो चारों वर्णोंमें उत्तम हो उसकाही प्रथम न्याय वा विवादका निर्णय करै ॥ ७५ ॥

कल्पयित्वोत्तरंसभ्यैर्दातव्यैकस्यभावना ।
साध्यस्यसाधनार्थंहिनिर्दिष्टायस्यभावना ॥

भाषार्थ–सभासद उत्तरकी कल्पना करके यह देखैं कि देने योग्य वस्तुमें भावना

किसकी है और साध्य वा साधनके लिये जिसकी भावना देखी हो ॥ ७६ ॥

विभावयेत्प्रतिज्ञातंसोऽखिलंलिखितादिना।
नचैकस्मिन्विवादेतुक्रियास्याद्वादिनोर्द्वयोः

भाषार्थ-वही मनुष्य संपूर्ण प्रतिज्ञा कियेका लिखने आदिसे निश्चय करादे-और एक विवादमें दो वादियोंकी क्रिया नहि होती ॥ ७७ ॥

मिथ्याक्रियापूर्ववादेकारणप्रतिवादिनि ।
प्राङ्न्यायकारणोक्तौतुप्रत्यर्थीनिर्दिशेत्क्रियां ॥ ७८ ॥

भाषार्थ-पूर्व वादमें जो प्रतिवादी कारण को कहै वहां मिथ्याक्रिया होती है-और प्रथम न्यायके कारणको प्रतिवादी कहे वहां प्रतिवादीही उसका कारण दिखावे ॥ ७८ ॥

तत्वाच्छलानुसारित्वाद्भूतंभव्यंद्विधास्मृतं ।
तत्वंसत्यार्थाभिधायिकूटाद्यभिहितंछलं ७९

भाषार्थ-यथार्थ और छलके अनुसार भूत और भव्य दो प्रकारका कहा है-जो सत्य अर्थका अभिधायी हो वह तत्व और जो कूटादिअर्थोंका अभिधायी हो वह छल कहाहै ॥ ७९ ॥

कारणात्पूर्वपक्षोपिउत्तरत्वंप्रपद्यते ।
ततोर्थीलेखयेत्सद्यःप्रतिज्ञातार्थसाधनं ८०

भाषार्थ-किसी कारणसे पूर्वपक्षभी उत्तर होजाता है-फिर अर्थी (वादि) अपने प्रतिज्ञाकिये अर्थके साधनको लिखै ॥ ८० ॥

तत्साधनंतुद्विविधंमानुषंदैविकंतथा ।
त्रिधास्याल्लिखितंभुक्तिःसाक्षिणश्चेतिमानुषं ॥ ८१ ॥

भाषार्थ-वह साधन मानुष और दैविकभेदसे दो प्रकारका है तिनमें मानुष साधन इनभेदोंसे तीन प्रकारका होता है कि लिखाहुआ-वा भोगाहुआ अथवा जिसमें कोई साक्षी हो ॥ ८१ ॥

दैवंघटादितद्भव्यंभूतालाभेनियोजयेत् ।
युक्त्यानुमानतोनित्यंसामादिभिरुपक्रमैः ॥

भाषार्थ-घट (तोल) आदि दैव होता है उसको भूत और भव्यके न मिलनेपर युक्ति अनुमान और साम आदि उपायोंसे नियुक्त करे ॥ ८२ ॥

नकालहरणंकार्यंराज्ञासाधनदर्शने ।
महान्दोषोभवेत्कालाद्धर्मव्यापत्तिलक्षणः॥

भाषार्थ-राजा साधनके देखनेमें विलंब न करै क्यों कि समयके विलंबसे धर्मका नाशरूप महान् दोष होता है ॥ ८३ ॥

अर्थीप्रत्यर्थिप्रत्यक्षंसाधनानिप्रदर्शयेत् ।
अप्रत्यक्षंतयोर्नैवगृण्हीयात्साधनंनृपः॥८४

भाषार्थ-वादी अपने साधनों (सबूत) को प्रतिवादीके सामने दिखावे और राजा वादी और प्रतिवादीके अप्रत्यक्ष (पीछे) साधनको स्वीकार नकरै ॥ ८४ ॥

साधनानांचयेदोषावक्तव्यास्तेविवादिना ।
गूढास्तुप्रकटाःसभ्यैःकालशास्त्रप्रदर्शनात्

भाषार्थ-और प्रतिवादीके साधनोंमें जो दोष हों उनको वादी कहै और जो दोष गुप्तहों उनको काल और शास्त्रके अनुसार सभासद प्रकट करैं ॥ ८५ ॥

अन्यथादूषयन्दंड्यः साध्यार्थादेवहीयते ।
विमृश्यसाधनंसम्यक्कुर्यात्कार्यविनिर्णयं ॥

भाषार्थ-यदि वादी अन्यथा (झूंठा) ही दोष दिखावे तो दंडदेने योग्य है और अपने साध्य अर्थको प्राप्त नहि होता और राजा साधनको भलीप्रकर विचार कर कार्यका निर्णय करे ॥ ८६ ॥

कूटसाधनकारीतुदंड्यःकार्यानुरूपतः ।
द्विगुणंकूटसाक्षीतुसाक्ष्यलोपीतथैवच८७॥

भाषार्थ-झूंठा साधन करनेवालेको कार्यके अनुसार राजा दंड दे-और झूंठे साक्षी और साक्षी के लोप करनेवालेको दूना दंड दे ॥ ८७ ॥

अधुनालिखितंवच्मियथावदनुपूर्वशः ।
अनुभूतस्मारकंतुलिखितंब्रह्मणाकृतं८८॥

भाषार्थ-अभी लिखे हुयेको क्रमसे यथार्थ कहताहुं और जो अनुभूत (वीती) का जतानेवाला है वह लेख ब्रह्माका किया समझना ॥ ८८ ॥

राजकीयंलौकिकंचद्विविधंलिखितंस्मृतं ।
स्वहस्तलिखितंवान्यहस्तेनापिविलेखितं ॥

भाषार्थ-लेख दोप्रकारका होता है एक राजकीय और दूसरा लौकिक वह चाहे अपने हाथसे लिखाहो वा अन्यके हाथसे लिखाया हो॥ ८९ ॥

असाक्षिमत्साक्षिमच्चसिद्धिर्देशस्थितेस्तयोः
भोगदानक्रियाधानसंविद्दासऋणादिभिः ॥

भाषार्थ-और चाहे वह साक्षीसे युक्तहो वा अयुक्तहो और उसकी सिद्धि देशरीतिके अनुसार होती है-और भोगना दान क्रिया आधान (धरोर) संवित् (करार) दास-और ऋण आदि भेदसे ॥ ९० ॥

सप्तधालौकिकंचैतत्त्रिविधंराजशासनं
शासनार्थंज्ञापनार्थंनिर्णयार्थंतृतीयकं९१॥

भाषार्थ-लौकिक सात प्रकारका और राजाका शासन तीन प्रकारका है की शिक्षाके लिये-जतानेके लिये और तीसरा निर्णयके लिये ॥ ९१ ॥

राज्ञास्वहस्तसंयुक्तंस्वमुद्राचिन्हितंतथा ।
राजकीयंस्मृतंलेख्यंप्रकृतिभिश्चमुद्रितं९२

भाषार्थ-जो राजाने अपने हाथसे लिखा-हो अथवा जिसपर राजाके प्रकृति (मंत्री) आदिने अपनी राजमुद्रा लगादी हो अथवा९२

निवेश्यकालंवर्षंचमासंपक्षंतिथिंतथा ।
वेलाप्रदेशंविषयंस्थानंजात्याकृतिंवयः९३॥

भाषार्थ-जिसमें संवत् ऋतु महीना पक्ष-तिथि समय देश विषय स्थान जाति आकार और अवस्था और ॥ ९३ ॥

साध्यंप्रमाणंद्रव्यंचसंख्यांनामतथात्मनः ।
राज्ञांचक्रमशोनामनिवासंसाध्यनामच ९४

भाषार्थ-साध्य (दावेका द्रव्य आदि) प्रमाण द्रव्य-संख्या और अपना नाम और क्रमसे राजाओंका नाम निवास और साध्यका नाम और ॥ ९४ ॥

क्रमात्पितॄणांनामानिपितामहतृतीयकं ।
क्षमालिंगानिचान्यानिपक्षेसंकीर्त्यलेखयेत्

भाषार्थ-पितरोंके नाम और पितामह-और प्रपितामहके नाम और क्षमाआदिके अन्य चिह्न इन सबको पक्ष (अर्जी) में कहकर लिखवावे ॥ ९५ ॥

यत्रैतानिनलिख्यंतेहीनंलेख्यंतदुच्यते ।
भिन्नक्रमंव्युत्क्रमार्थंप्रकीर्णार्थंनिरर्थकं॥९६-

भाषार्थ-जिसमें ये सब न लिखेजांय उसको हीनलेख कहते हैं और क्रमरहित और जिसका क्रम उलटा हो वा जिसका

अर्थ प्रकीर्ण (कम) हो अथवा निरर्थक हो ॥ ९६ ॥

अतीतकाललिखितंनस्यात्तत्साधनक्षमं ।
अप्रगल्भेणचस्त्रियाबलात्कारेणयत्कृतं ९७

भाषार्थ-जो समय (म्याद) विताकर लिखा हैं वह लेख साधनके योग्य नही होता और जो अप्रगल्भ मनुष्यने अथवा स्त्रीने किया हो वहभी साधनयोग्य नही ॥ ९७ ॥

सद्भिर्लेख्यैःसाक्षिभिश्चभोगैर्दिव्यैःप्रमाणतां
व्यवहारेनरोयातिचेहासुप्राप्नुतेसुखं ॥९८॥

भाषार्थ-और अच्छे लेख-साक्षी-भोग (वर्तना वा कवजा) दिव्य इनसे मनुष्य व्यवहारमें प्रमाणताको प्राप्त होता है और चेष्टाओंमें सुखका भागी होता है ॥ ९८ ॥

स्वेतरःकार्यविज्ञानीयःससाक्षीत्वनेकधा ।
दृष्टार्थश्चश्रुतार्थश्चकृतश्चैवाऽकृतोद्विधा ९९

भाषार्थ- अपनेसे भिन्न जो कार्यका ज्ञाता वह साक्षी होताहै उसके अनेक भेदहैं एक वह जिसने देखाहो और जिसने सुनाहो और वह साक्षी दो प्रकारका होताहै- कियाहो वा न कियाहो ॥ ९९ ॥

अर्थिप्रत्यर्थिसान्निध्यादनुभूतंतुप्राग्यथा ।
दर्शनैःश्रवणैर्येनससाक्षीतुल्यवाग्यदि ॥

भाषार्थ-वादी और प्रतिवादीके समीप जैसा प्रथम जिसने देखने वा सुननेसे जानाहो वह साक्षी होताहै यदि उसकी वाणी एकसी रहै ॥ ७०० ॥

यस्यनोपहताबुद्धिःस्मृतिःश्रोत्रंचनित्यशः।
सुदीर्घेणापिकालेनसवैसाक्षित्वमर्हति ॥१॥

भाषार्थ-जिसकी बुद्धि- स्मरण- और श्रोत्र ये सदैव बहुतकालतक नष्ट नहीं वह मनुष्य साक्षी होनेके योग्य होताहै ॥ १ ॥

अनुभूतःसत्यवाग्यःसैकःसाक्षित्वमर्हति ।
उभयानुमतःसाक्षीभवत्यकोपिधर्मवित् ॥२

भाषार्थ-जिसको सब सच्चा जानतेहों वह एकही साक्षी होने योग्य होताहै वादी और प्रतिवादी दोनोंकी संमतिसे एकभी धर्मका जाननेवाला साक्षी होसकताहै ॥२॥

यथाजातियथावर्णसर्वेसर्वेषुसाक्षिणः ।
गृहिणोनपराधीनाःशूरश्चाप्रवासिनः ३॥

भाषार्थ- जाति और वर्णके अनुसार सबही सबके साक्षी होसकतेहैं-और जो गृहस्थी पराधीन नहों और जो शूरवीर परदेशमें न रहतेहों वे और ॥ ३ ॥

युवानःसाक्षिणःकार्याःस्त्रियःस्त्रीषुचकीर्तिताः ।

साहसेषुचसर्वेषुस्तेयसंग्रहणेषुच ॥ ४ ॥

भाषार्थ-जो युवाहों वे साक्षी करने और स्त्रियोंकी साक्षी स्त्री करनी कही है-और संपूर्ण साहस-चोरी और संग्रहणोंमें और ४

वाग्दंडयोश्चपारुष्येनपरीक्षेतसाक्षिणः ।
बालोज्ञानादसत्यात्स्त्रीपापाभ्यासाच्चकूटकृत् ॥ ५ ॥

भाषार्थ-कठोर वाणी और कठोर दंडमें साक्षियोंकी परीक्षा न करे-और अज्ञानसे बालक और झूंठी स्त्री और पापके अभ्याससे छलका कर्ता ॥ ५ ॥

विब्रूयाद्बांधवःस्नेहाद्वैरनिर्यातनादरिः ।
अभिमानाच्चलोभाच्चविजातिश्चशठस्तथा ॥

भाषार्थ-और बंधु स्नेहसे और शत्रु वैरसे विरुद्ध कह सकता है और अभिमानसे लोभसे विजाति और शठभी विरुद्ध कहसकते हैं ॥ ६ ॥

उपजीवनसंकोचाद्भृत्यश्चैतेह्यसाक्षिणः ।
नार्थसंबंधिनोविद्यायोनसंबंधिनोपिन ॥७॥

भाषार्थ–और उपजीवन (नौकरी) के संकोचसे भृत्य–ये सब साक्षी नही हो सकते और धनके संबंधी और विद्या और योनिके संबंधीभी साक्षी नही होसकते ॥ ७ ॥

श्रेण्यादिपुचवर्गेपुकश्चिच्चेद्द्वेष्यतामियात् ।
तस्यतेभ्योनसाक्ष्यंस्याद्द्वेष्टारःसर्वएवते ८॥

भाषार्थ–जो श्रेणी आदि समूहमें कोई वैरभावको प्राप्तहो जाय उनसे उसकी साक्षी नही हो सकती क्योंकि वे सब वैरी होते हैं ॥ ८ ॥

नकालहरणंकार्यंराज्ञासाक्षिप्रभाषणे ।
अर्थिप्रत्यर्थिसान्निध्येसाध्यार्थेपिचसन्निधौ

भाषार्थ–राजा साक्षीके कथनमें समयको न वितावे और वादी प्रतिवादीके साह्मने और साध्य अर्थकीभी समीपतामें ॥ ९ ॥

प्रत्यक्षंवादयेत्साक्ष्यंनपरोक्षंकथंचन ।
नांगीकरोतियःसाक्ष्यंदंड्यःस्याद्दिशितो यदि ॥ १० ॥

भाषार्थ–प्रत्यक्ष साक्षीको कहावे परोक्षमें कदाचित् न कहावे–जो साक्षीको अंगीकार न करे वह साध्यके दंड देनेयोग्य है ॥ १०

यःसाक्षान्नैवनिर्दिष्टोनाहूतोनैवदेशितः ।
ब्रूयान्मिथ्येतितथ्यंवादंड्यःसोपिनराधमः

भाषार्थ–जिसको साक्षी लिये न कहा होय न बुलाया होय न आज्ञादी हो यदि मिथ्या वा सत्य साक्षीदे वह नरोंमें नीच दंडदेनेयोग्य है ॥ ११ ॥

द्वैधेवहूनांवचनंसमेपुगुणिनांवचः ।
तत्राधिकगुणानांचगृण्हीयाद्वचनंसदा१२॥

भाषार्थ–जो साक्षीमें दो प्रकार हो जिस-तरफ बहुतोंका वचन होय उसको सत्य ग्रहण करे यदि दोनों पक्षोंमें साक्षी बराबर होय तो गुणवालोंका वचन ग्रहण करै और गुणवालोंमेंभी जो अधिक गुणवाले हो उनके वचन सदैव ग्रहण करे ॥ १२ ॥

यत्रानियुक्तोपीक्षेतशृणुयाद्वापिकिंचन ।
पृष्टस्तत्रापिसद्ब्रूयाद्यथादृष्टंयथाश्रुतं ॥ १३

भाषार्थ–जहां विनानियुक्त कियाभी पुरुष देखे वा कुछ सुने वहां वहभी अपने देखे और सुनेके अनुसार साक्षीको कह सकता है ॥ १३ ॥

विभिन्नकालेयज्ज्ञातंसाक्षिभिश्चांशतःपृथक्
एकैकंवादयेत्तत्रविधिरेषसनातनः ॥ १४॥

भाषार्थ–और भिन्न २ समयमें साक्षीयोंने जहां पृथक् २ जाना होय वहां एक २ से साक्षीका कथन करावे यह सानातनिक विधि है ॥ १४ ॥

स्वभावोक्तंवचस्तेषांगृण्हीयान्नबलात्क्वचित्
उक्तेतुसाक्षिणासाक्ष्येनप्रष्टव्यंपुनःपुनः १५

भाषार्थ–उनके स्वभावसे कहहुये वचनको ग्रहण करै और बलसे कभी न करै जब साक्षी देनेवाला अपनी साक्षीको कहदे तब वारंवार न पूछे ॥ १५ ॥

आहूयसाक्षिणःपृच्छेन्नियम्यशपथैर्भृशं ।
पौराणैःसत्यवचनधर्ममाहात्म्यकीर्तनैः १६

भाषार्थ–साक्षीयोंको बुलाकर गंगा आदिकी सोगंदे पुराणके सत्य वचन धर्मका माहात्म्य इनको कहकर पूछे ॥ १६ ॥

अनृतस्यातिदोषैश्चभृशमुत्त्रासयेच्छनैः ।
देशेकालेकथंकस्मात्किंदृष्टंवाश्रुतंत्वया १७

भापार्थ-और झूठ बोलनेमें अत्यंत दोषोंसे वारंवार भय दिखावे और शनैः२ इस प्रकार पूछे कि किस देशमें किस कालमें किस प्रकार किस कारणसे तैने इस विषयमें क्या देखा क्या सुना ॥ १७ ॥

लिखितंलेखितंयत्तद्वदसत्यंतदेवहि ।
सत्यंसाक्ष्यंब्रुवन्साक्षीलोकानाप्नोतिपुष्कलान् ॥ १८ ॥

भापार्थ-जो लिखाहो अथवा लिखवायाहो उसीको सत्य कहो साक्षीमें सच बोलता हुआ साक्षी उत्तम २ लोकोंको प्राप्त होता है ॥ १८ ॥

इहचानुत्तमांकीर्तिंवागेषाब्रह्मपूजिता ।
सत्येनपूज्यतेसाक्षीधर्मःसत्येनवर्धते ॥१९

भापार्थ-इस लोकमें उत्तम कीर्ति होती है यह वाणी वेदमेंभी पूजित कही है सत्यसे साक्षी पूजाता है सत्यसे धर्म बढता है १९॥

तस्मात्सत्यंहिवक्तव्यंसर्ववर्णेषुसाक्षिभिः ।
आत्मैवह्यात्मनःसाक्षीगतिरात्मैवह्यात्मनः

भापार्थ-तिससे सब वर्णोंमें साक्षी सत्य कहै अपनी आत्माका साक्षी आपहै अपनी आत्माका गति आत्माही है ॥ २० ॥

मावमंस्यास्त्वमात्मानंनृणांसाक्षित्वमुत्तमं ।
मन्यतेवैपापकारीनकश्चित्पश्यतीतिमां२१

भापार्थ-जिससे मनुष्योकी साक्षी देनेमें अपने आत्माका अपमान सुनकर पाप करनेवाला मनुष्य यह मानता है कि मुझे कोई नही देखता ॥ २१ ॥

तांश्चदेवाःप्रपश्यंतितथाह्यंतरपूरुषः ।
सुकृतंयत्त्वयाकिंचिज्जन्मांतरशतैःकृतं २२

भापार्थ-उसको देवता सबका अंतर्यामी परमेश्वर देखता है जो सो जन्मोमें तैने कुछ पुण्य किया है ॥ २२ ॥

तत्सर्वंतस्यजानीहियंपराजयसेमृषा ।
समाप्नोपिचतत्पापंशतजन्मकृतंसदा ॥२३

भापार्थ-वह सब पुण्य उसका जान जिसकी तू झुठी पराजय कराता है उसने जो सो जन्ममें पाप किया है उसको तू प्राप्त होगा ॥ २३ ॥

साक्षिणंश्रावयेदेवसभायामरहोगतं ।
दद्यादेशानुरूपंतुकालंसाधनदर्शने ॥ २४

भापार्थ-इस प्रकार साक्षीको सभामें सबके सन्मुख सुनावे और देशके अनुसार साधन (सबूत) दिखानेको लिये समयदे॥२४

उपाधिंवासमीक्ष्यैवदैवराजकृतंसदा ।
विनष्टेलिखितेराजासाक्षिभोगैर्विचारयेत् ॥

भापार्थ-और दैव राजाकी उपाधिको देखकर लिखित नष्ट हो जाय तो राजा साक्षी और भोग (कवजा) से विचार करे ॥ २५ ॥

लेखसाक्षिविनाशेतुसद्भोगादेवचिंतयेत् ।
सद्भोगाभावतःसाक्षीलेखतोविमृशेत्सदा ॥

भापार्थ-लेख और साक्षी दोनों न मिले तो उत्तम भोगसेही विचार करे और अच्छा भोग न होय तो सदैव साक्षी और लेखसे सदैव विचार करे ॥ २६ ॥

केवलेनचभोगेनलेखेनापिचसाक्षिभिः ।
कार्यंनचिंतयेद्राजालोकदेशादिधर्मतः२७॥

भापार्थ-केवल भोगसे या केवल लेख अथवा साक्षीयोंसे राजा लोक और देशके धर्मानुसार कार्यकी चिंता करे ॥ २७ ॥

कुशलालेख्यबिंबानिकुर्वंतिकुटिलाःसदा।
तस्मान्नलेख्यसामर्थ्यात्सिद्धिरैकांतिकी मता ॥ २८ ॥

भाषार्थ–कुशल और कुटिल जो लिखने वाले हैं वे संदेव बनावटके लेख करलेते हैं तिससे लेखके बलसे सिद्धिका निर्णय नही-माने ॥ २८ ॥

स्नेहलोभभयक्रोधैःकूटसाक्षित्वशंकया।
केवलैःसाक्षिभिर्नैवकार्यंसिध्यतिसर्वदा २९

भाषार्थ–और स्नेह लोभ–भय–क्रोध इनसे झुठी साक्षीकी शंका होसकती है इससे केवल साक्षियोंसेही कार्यसिद्धि नही होती२९

अस्वामिकंस्वामिकंवाभुक्त्येयद्वलदर्पितः।
इतिशंकितभोगेनकार्यंसिध्यतिकेवलैः॥ ३०

भाषार्थ–बलके अभिमानवाला मनुष्य अपनी और पराईको भोग सकता है इस प्रकार केवल शंकावाले भोगोंसेही कार्य-सिद्धि नही होसकती ॥ ३० ॥

शंकितव्यवहारेषुशंकयेदन्यथानहि।
अन्यथाशंकितान्सभ्यान्दंडयेच्चोरवन्नृपः ॥

भाषार्थ–जिनव्यवहारोमें शंका हो उनमें अन्यथा शंका न करे यदि राजाके सभासद अन्यथा शंका करे तो राजा चोरके समान दंड दे ॥ ३१ ॥

अन्यथाशंकनान्नित्यमनवस्थाप्रजायते।
लोकोविभिद्यतेधर्मोव्यवहारश्चहीयते ॥ ३२

भाषार्थ–अन्यथा शंका करनेसे व्यवहारकी अनवस्था होती है अर्थात् निवटेरानही होता लोकमें धर्म और व्यवहार दोनों नष्ट होते हैं ॥ ३२ ॥

सागमोदीर्घकालश्चविच्छेदोपरमोज्झितः।
प्रत्यर्थिसन्निधानश्चभुक्तोभोगःप्रमाणवत् ॥

भाषार्थ–आगम (लेख) और दीर्घकाल और दूसरेका छोडाहुआ विच्छेद (भोगका अभाव) और प्रत्यर्थीकी समीपता इस प्रकार भोगाहुआ भोग प्रामाणिक होता है ॥३३ ॥

संभोगंकीर्तयेद्यस्तुकेवलंनागमंक्वचित्।
भोगच्छलापदेशेनविज्ञेयःसतुतस्करः ३४

भाषार्थ–जो मनुष्य केवल भोगको बतावे और आगमका बता नदें वह भोगके छलके बहानेसे तस्कर (चोर) जानना ॥ ३४ ॥

आगमेपिबलंनैवभुक्तिस्तोकापियत्रनो।
यंकंचिद्दशवर्षाणिसन्निधौप्रेक्षतेधनी ॥ ३५

भाषार्थ–वह आगमभी बलवान नही होता जहां कुछभी नहोय धनवाला मनुष्य जिस किसीको दश वर्षतक अपने समीप यह देखता हैकि ॥ ३५ ॥

भुज्यमानंपरैरर्थंनसतंलब्धुमर्हति।
वर्षाणिविंशतिर्यस्यभूर्भुक्तातुपरैरिह॥ ३६॥

भाषार्थ–इसमें पैदा हुये धनको दूसरे भोग रहेहैं उस धनको वह धनवान नही लेसकता जिस मनुष्यकी भूमिको २० बीस वर्ष तक भोगाहो ॥ ३६ ॥

सतिराज्ञिसमर्थस्यतस्येहनसिध्यति।
अनागमंतुयोभुंक्तेबहून्यब्दशतान्यपि ॥

भाषार्थ–और राजा विद्यमान और भूमिका स्वामीभी समर्थ होय उसकी वह भूमि सिद्ध नही हो सकती और आगमके विना जो बहुतसे सैंकडो वर्षभी भोगे ॥ ३७ ॥

चौरदंडेनतंपापंदण्डयेत्पृथिवीपतिः।
अनागमापियाभुक्तिर्विच्छेदोपरमोज्झिता॥

भाषार्थ–उस पापीको राजा चोरके समान दंड दे–और विना आगमभी निरंतर जो भोग ॥ ३८ ॥

षष्टिवर्षात्मिकासापहर्तुंशक्यानकेनचित् ।
आधिःसीमाबालधनंनिक्षेपोपनिधिःस्त्रियः

भाषार्थ–साठ वर्षतक होंय उसको कोई नही छीन सकता है आधि (धरोहर) सीमा (ग्रामपर्यान्त) बालकका धन सोपना स्त्री ॥ ३९ ॥

राजस्वंश्रोत्रियस्वंचनभोगेनप्रणश्यति ।
उपेक्षांकुर्वतस्तस्यतूष्णींभूतस्यतिष्ठतः ।४०

कालेतिपन्नेपूर्वोक्तेतत्फलंनाप्नुतेधनी ।
भोगःसंक्षेपतश्चोक्तस्तथादिव्यमथोच्यते ॥

भाषार्थ–और राजा, वेदपाठीका द्रव्य, ये भोग (वर्तना) सेवन नही होता यदि वह उपेक्षा करै और चुपका बैठा रहै ४० तो पूर्वोक्त मर्यादाके वीतनेपरभी धनका स्वामी उसके फलको प्राप्त होता है संक्षेपसे भोग वर्णन किया अब दिव्य वर्णन करते हैं॥४१॥

प्रमादाद्धनिनोयत्रत्रिविधंसाधनंनचेत् ।
अर्थश्चापह्नुतेवादीतत्रोक्तस्त्रिविधोविधिः ॥

भाषार्थ–यदि धनवालेके प्रमादसे जहां पर तीन प्रकारका साधन न होय तो वादी अर्थ (धन) को छिपाया चाहे तो वहां तीन प्रकारकी विधि कहीहै ॥ ४२ ॥

चोदनाप्रतिकालश्चयुक्तिलेशस्तथैवच ।
तृतीयः शपथःप्रोक्तस्तैरेवंसाधयेत्क्रमात् ॥

भाषार्थ–प्रेरणा समयका व्यत्यय, और युक्तिका लेश और तीसरा सपथ (सोगंदे) इनतीनसे कार्यकी सिद्धि राजा करै ॥ ४३ ॥

विशिष्टतर्कितायाचशास्त्रशिष्टाविरोधिनी ।
योजनास्वार्थसंसिद्ध्यैसायुक्तिस्तुनचान्यथा ॥ ४४ ॥

भाषार्थ–जो उत्तम तर्कना होय शास्त्र और शिष्टोंका जिसमें विरोध न होय और अपने अर्थकी सिद्धिका योग होय उसे युक्ति कहते हैं अन्यको नही ॥ ४४ ॥

दानंप्रज्ञापनाभेदःसंप्रलोभक्रियाचया ।
चित्तापनयनंचैवहेतवोहिविभावकाः ॥४५

भाषार्थ–देना, समझाना, फोडना, और उत्तम लोभ देना, और मनको वसमें करना, ये सब कार्यसिद्धिके हेतु होते हैं ॥ ४५ ॥

अभीक्ष्णंचोद्यमानोपिप्रतिहन्यान्नतद्वचः ।
त्रिचतुःपंचकृत्वोवापरतोर्थंसदाप्यते ॥

भाषार्थ–वारंवार प्रेरण करनेसेभी जो अपने वचनको तीन चार पांच वार कहने-से न लोटे तो उसको प्रतिवादीसे धन मिल सकता है ॥ ४६ ॥

युक्तिष्वप्यसमर्थासुदिव्यैरेनंविमर्दयेत् ।
यस्माद्देवैःप्रयुक्तानिदुष्करार्थेमहात्मभिः ॥

भाषार्थ–जहां युक्तिभी असमर्थ होंय(नचले) वहां दिव्योंसे मनुष्यका मर्द्दन करै क्यों-कि देवता और महात्माने दुष्कर कर्मके लि-ये दिव्य कहे हैं ॥ ४७ ॥

परस्परविशुद्ध्यर्थंतस्माद्दिव्यानिवाप्यतः ।
सप्तर्षिभिश्चभीत्यर्थंस्वीकृतान्यात्मशुद्धये ॥

भाषार्थ–परस्पर कार्यकी शुद्धिके लिये दिव्य उपाय होते हैं और डरानेके लिये सप्तर्षियोंनेभी आत्मशुद्धिके लिये दिव्योंको स्वीकार किया है ॥ ४८ ॥

स्वमहत्त्वाच्चयोदिव्यंनकुर्याज्ज्ञानदर्पतः ।
वसिष्ठाद्याश्रितंनित्यंसनरोधर्मतस्करः ४९

भाषार्थ–जो अपने महत्त्वसे और ज्ञानके अभिमानसे वसिष्ठआदि ऋषियोंके स्वी–

कार किये दिव्यको न माने वह मनुष्य धर्मका तस्कर होता है ॥ ४९ ॥

प्राप्तेदिव्येपिनशपेद्ब्राह्मणोज्ञानदुर्बलः ।
संहरंतिचधर्मार्थंतस्यदेवानसंशयः ॥५०॥

भाषार्थ–ज्ञानका दुर्बल ब्राह्मण दिव्यकी प्राप्तिके समय निदान कर जो शाप न करै तो देवता उसके आधे धर्मको हरलेते हैं ५०॥

यस्तुस्वशुद्धिमन्विच्छन्दिव्यंकुर्यादतंद्रितः
विशुद्धोलभतेकीर्तिस्वर्गंचैवान्यथानहि ५१

भाषार्थ–जो मनुष्य अपनी शुद्धिकी इच्छा करताहुआ आलस्यको छोडकर दिव्यका स्वीकार करता है–विशुद्ध हुआ वह कीर्तिको और स्वर्गको प्राप्त होता है और अन्यथा नही होता ॥ ५१ ॥

अग्निर्विषंवटस्तोयंधर्माधर्मौचतंडुलाः ।
शपथाश्चैवनिर्दिष्टामुनिभिर्दिव्यनिर्णये ५२

भाषार्थ–अग्नि–विष–तुला–जल–धर्म–अधर्म–चावल–और सुगंध ये सब दिव्य के निर्णयमें मुनियोंने कहे हैं ॥ ५२ ॥

पूर्वंपूर्वंगुरुतरंकार्यंदृष्ट्वानियोजयेत् ।
लोकप्रत्ययतःप्रोक्तंसर्वंदिव्यंगुरुस्मृतं ५३

भाषार्थ–इनमें पहिला २ अधिक होता है और इनको कार्यको देखकर नियुक्त करै और जगत्की प्रतीतिसे कहाहुआ दिव्य संपूर्णही गुरु कहा है ॥ ५३ ॥

तप्तायोगोलकंधृत्वागच्छेन्नैवपदंकरे ।
तप्तांगारेपुवागच्छेत्पद्भ्यांसप्तपदानिहि ५४

भाषार्थ–तपाया हुआ लोहेको गोलेका चिन्ह यदि हाथ पररखलेनेसे न पडे–अथवा जो मनुष्य सात पदतक तपाये हुये अंगारों पर गमन करै ॥ ५४ ॥

तप्ततैलगतंलोहमाषंहस्तेननिर्हरेत् ।
सुतप्तलोहपत्रंवाजिव्हयासंलिहेदपि॥५५॥

भाषार्थ–तपाये हुये तेलमें डाले हुये मासे भर लोहको हाथसे उठाले अथवा तपायेहुये लोहेके पत्रको जिव्हासे चाटले ॥ ५५ ॥

गरंप्रभक्षयेद्धस्तैःकृष्णसर्पंसमुद्धरेत् ।
कृत्वास्वस्यतुलासाम्यंहीनाधिक्यंविशोधयेत् ॥ ५६ ॥

भाषार्थ–विषको भक्षण करले अथवा हाथसे कालेसापको ले (यदि इन पूर्वोक्तोंसे न मरे अथवा हानि न होय तो जानना कि सच्चा है) अथवा तुलामें अपनी बराबरके पदार्थको रखकर हीन और अधिकताकी जाच करै ॥ ५६ ॥

स्वेष्टदेवस्नपनजमद्यादुदकमुत्तमं ।
यावन्नियमितःकालस्तावदंबुनिमज्जनं ५७

भाषार्थ–अपने इष्ट देवके स्नानके उत्तम जलका पान करै अथवा नियमित कालतक जलमे डूबा रहै ॥ ५७ ॥

अधर्मधर्ममूर्तीनामदृष्टहरणंतथा ।
कर्षमात्रांस्तंडुलांश्चचर्वयेच्चविशंकितः ५८

भाषार्थ–अधर्म और धर्मकी मूर्तियोंको न देखे न हरै और एकतोलाभर चावल शंकाको त्यागकर चावले ॥ ५८ ॥

स्पर्शयेत्पूज्यपादांश्चपुत्रादीनांशिरांसिच ।
धनानिसंस्पृशेद्वाक्तुसत्येनापिशपेत्तथा ॥

भाषार्थ–अपने पूज्य पिता आदिके चरणोंका पुत्र आदिके शिरोका अथवा धनका स्पर्श करै और शीघ्रही सत्यसे सौगंदको ग्रहण करै ॥ ५९ ॥

दुष्कृतंप्राप्नुयामद्यनश्येत्सर्वंतुसत्कृतं ।
सहस्रेपहृतेचाग्निःपादोनेचविषंस्मृतं ॥ ६०

भाषार्थ-मुझे आज पाप प्राप्त हो और संपूर्ण सत्कर्म नष्ट हो जाय हजारकी चोरी-पर अग्नि और इससे चौथाई कमपर विषदेना कहा है ॥ ६० ॥

त्रिभागेनेघटःप्रोक्तोह्यर्धेचसलिलंतथा ।
धर्माधर्मौतदर्धेचह्यष्टमांशेचतंडुलाः ॥६१॥

भाषार्थ-त्रिभागसे क्रममें धट (तुला) आधेमें जल और उससे आधेमें धर्म और अधर्म आठवे अंशकी चोरीमें चावल ॥६१॥

षोडशांशेचशपथाएवंदिव्यविधिःस्मृतः ।
एषांसंख्यानिकृष्टानांमध्यानांद्विगुणास्मृता

भाषार्थ-और सोलहमें भागमें शपथ(सो-गंद) इस प्रकार दिव्य प्रमाणकी विधि कही है और निकृष्टोंकी यह संख्या है मध्यम दिव्योंकी संख्या दूनी कही है ॥ ६२ ॥

चतुर्गुणोत्तमानांचकल्पनीयापरीक्षकैः ।
शिरोवर्तियदानस्यात्तदादिव्यंनदीयते ६३

भाषार्थ-और परीक्षक जन उत्तम दिव्यों-की चौगुनी संख्याकी कल्पना करै जव शिरो वर्त्ति अर्थात् शिरका कापना न होय तो उस समयमें दिव्य प्रमाणको नदे ॥ ६३ ॥

अभियोक्ताशिरःस्थानेदिव्येपुपरिकीर्त्यते ।
अभियुक्तायदातव्यंदिव्यंश्रुतिनिदर्शनात्

भाषार्थ-अभियोक्ता (अर्जी देनेवाला) का शिर भी दिव्योंमें गिना है श्रुतिकी आज्ञा से अभियुक्त (मुद्दायने) कोभी दिव्य देना ॥ ६४ ॥

नकश्चिदभियोक्तारंदिव्येपुविनियोजयेत् ।
इच्छयावितरःकुर्यादितरोवर्तयेच्छिरः ६५

भाषार्थ-अथवा कोईभी न्याय करने वालाभी अभियोक्ता (मुदई) को दिव्य प्रमाणोंमें नियुक्त न करै अर्थात् उससे दिव्य न ले और इतर अपनी इच्छासे दिव्यको करै और दूसरा शिरको हिलादे ॥ ६५ ॥

पार्थिवैःशंकितानांचनिर्दिष्टानांचदस्युभिः।
आत्मशुद्धिपराणांचदिव्यंदेयंशिरोविना ॥

भाषार्थ-जिन मनुष्योंपर राजाओंकी शंका हो और जो चोरोंके संग देखे हों और जो अपराधी अपनी शुद्धि चाहते हो उन सबको दिव्य देना परंतु शिरके विना॥६६॥

परदाराभिशापेचह्यगम्यागमनेपुच ।
महापातकशस्तेचादिव्यमेवचनान्यथा ६७

भाषार्थ-पराई दाराके अभिशाप (गाली देना) गमनके अयोग्य स्त्रीका गमन, महा पातकी, इतने अपराधियोंको दिव्य प्रमाणदे अन्यथा नदे ॥ ६७ ॥

चौर्याभिशंकायुक्तानांतप्तमाषोविधीयते ॥
प्राणांतिकविवादेतुविद्यमानेपिसाधने॥६८

भाषार्थ-जो प्राणी चोरीकी शंकासे युक्त है उनको तपाये हुये मासेभर सोनेका दिव्य कहा है जो विवाद प्राणांतिक (खूनके) हो उनमे चाहे साधनभी विद्यमान हो॥६८

दिव्यमालंवतेवादीनपृच्छेत्तत्रसाधनं ।
सोपधंसाधनंयत्रतद्राज्ञेश्राविर्तयदि ॥६९॥

भाषार्थ-जहां पर वादी दिव्य प्रमाणको आलंवन (स्वीकार) करे तो ऐसे स्थलमें न्याय करनेवाला साधनको न पूछे-यदि कही साधनमें कोई छल प्रतीत होय और वह राजाको सुना दिया होंय तो ॥ ६९ ॥

शोधयेत्तत्तुदिव्येनराजाधर्मासनास्थितः ।
यन्नामगोत्रैर्यल्लेख्यतुल्यंलेख्यंयदाभवेत् ७०

भाषार्थ–धर्मासनपे बैठा हुआ राजा उसको दिव्यसे शोधन करे जो भाषा पत्रिका (अर्जी) लिखना नाम और गोत्रके तुल्य होय ॥ ७० ॥

अगृहीतधनेतत्राकार्योदिव्येननिर्णयः ।
मानुषंसाधनंनस्यात्तत्रदिव्यंप्रदापयेत् ७१

भाषार्थ–और प्रतिवादीने धनको ग्रहण न किया होय तो वहां पर दिव्य प्रमाणसे निर्णय करे और जहां कोई लौकिक साधन न होय वहां परभी दिव्यको दे ॥ ७१ ॥

आरण्येनिर्जनेरात्रावंतर्वेश्मनिसाहसे ।
स्त्रीणांशीलाभियोगेपुसर्वार्थापन्हवेपुच७२

भाषार्थ–निर्ज्जन वनमें, रात्रि, गृहके भीतर, साहस (हिंसा आदि) स्त्रियोंके आचरणका अभियोग, और सर्वथा झूठ, इनमें ॥ ७२ ॥

प्रदुष्टेपुप्रमाणेपुदिव्यैःकार्यविशोधनं ।
महापापाभिशस्तेपुनिक्षेपहरणेपुच ॥ ७३॥

भाषार्थ–और जहां अन्य प्रमाणोंकी दुष्टता होगई हो वहां दिव्य प्रमाणोंसे शोधन करे महान् पापोंके अभिशाप (लगना) में और निक्षेप (धरोहर) हरनेमें ॥ ७३ ॥

दिव्यैःकार्यंपरीक्षेतराजासत्स्वपिसाक्षिपु ।
प्रथमायत्रभिद्यंतेसाक्षिणश्चतथापरे ॥७४॥

भाषार्थ–चाहे साक्षीभी विद्यमान होय तो-भी राजा दिव्योंमेंही झूठे सच्चेकी परीक्षा करे जिस वादमें पहिले साक्षी और दूसरे साक्षी भेदनको प्राप्त होजाय ॥ ७४ ॥

परेभ्यश्चतथाचान्येतंवादंशपथैर्नयेत् ।
स्थावरेपुविवादेपुयुगश्रेणिगणेपुच॥ ७५ ॥

भाषार्थ–और तिसी प्रकार अन्यभी साक्षी टूट जाय ऐसे वादको राजा शपथोंसे निर्णय करे स्थावरोंके विवादोंमें युगश्रेणी (सला) गण ॥ ७५ ॥

दत्तादत्तेपुभृत्यानांस्वामिनांनिर्णयेसति ।
विक्रियादानसंबंधेक्रीत्वाधनमयिच्छति७६

भाषार्थ–और दिये और न दियेमें सेवक और स्वामीके देनेके और न देनेके निर्णयमें वेचने और दानके संबंधमें और पदार्थको खरीदकर धनके न देनेमें ॥ ७६ ॥

साक्षिभिर्लिखितेनाथभुक्त्याचैतान्प्रसाध-येत् ।
विवाहोत्सवद्यूतेपुविवादेसमुपस्थिते॥७७॥

भाषार्थ–इन सबका निर्णय साक्षीयोंके लेखसे अथवा भुक्ति (वर्तना) से करे वि-वाह उत्सव द्यूत (जूआ) यदि इनमें विवाद उपस्थित होयतो ॥ ७७ ॥

साक्षिणःसाधनंतत्रनदिव्यंनचलेखकं ।
द्वारमार्गक्रियाभोग्यजलवाहादिपुतथा ७८

भाषार्थ–वहां साक्षीही निर्णयके साधन होते हैं न दिव्य न लेख. द्वारमार्गका करना और जलके प्रवाह आदिके भोगमें ॥७८ ॥

भुक्तिरेवतुगुर्वीस्यान्नदिव्यंनचसाक्षिणः ।
यद्येकोमानुषींब्रूयादन्योब्रूयात्तुदैविकीं ७९

भाषार्थ–भोगना (वर्तना) ही भारी प्र-माण है और न दिव्यहै न साक्षीहै· जिस वि-वादमें एक मनुष्य मानुषी क्रियाको कहै और दूसरा दिव्य क्रियाको कहै ॥ ७९ ॥

मानुषींतत्रगृण्हीयान्नतुदैवींक्रियांनृपः ।
यद्येकदेशप्राप्तापिक्रियाविद्येतमानुषी॥८०

भाषार्थ-वहांपर राजा मानुषी क्रियाको ग्रहण करै दैवीको नहीं जो किसी एक देशमें भी मानुषी क्रिया मिल जाय तो ॥ ८० ॥

साग्राह्यानतुपूर्णापिदैविकीवदतांनृणां ।
प्रमाणैर्हेतुचरितैःशपथेननृपाज्ञया ॥८१ ॥

भाषार्थ-विवाद करते हुये मनुष्योंमें उस मानुषी क्रियाको राजा ग्रहण करै और पूरी भी दिव्यक्रियाको ग्रहण न करै-प्रमाण हेतु आचरण-शपथ (सोगंध) राजाकी आज्ञा८१

वादिसंप्रतिपत्त्यावानिर्णयोऽष्टविधःस्मृतः ।
लेख्यंयत्रनविद्येतनभुक्तिर्नचसाक्षिणः ॥

भाषार्थ-वादीकी संप्रतिपत्ति (संतोष) इस प्रकार पूर्वोक्त निर्णय आठ तरहका कहाहै जिस विवादमें न लेख होय और न भुक्ति होय और न साक्षीसे होय ॥ ८२ ॥

नचदिव्यावतारोस्तिप्रमाणंतत्रपार्थिवः ।
निश्चेतुंयेनशक्याःस्युर्वादाःसंदिग्धरूपिणः

भाषार्थ-और न दिव्यका कोई निश्चय होय ऐसे स्थलमें राजाही प्रमाण है उसीसे संदेह रूप विवाद निश्चय करनेको शक्य होते हैं ॥ ८३ ॥

सीमाद्यास्तत्रनृपतिःप्रमाणंस्यात्प्रभुर्यतः ।
स्वतंत्रःसाधयन्नर्थान्राजापिस्याच्चकिल्बि-षी ॥ ८४ ॥

भाषार्थ-सीमा आदि संदेहके विवादमें-भी राजाही प्रमाण है क्योंकि वह प्रभु है जो राजा स्वतंत्र होयके अर्थो (विवाद) को सिद्ध करताहै वहभी पापी होता है ॥८४॥

धर्मशास्त्राऽविरोधेनह्यर्थशास्त्रंविचारयेत् ।
राजामात्यप्रलोभेनव्यवहारस्तुदुष्यति ॥

भाषार्थ-धर्मशास्त्रके अविरोधसे राजा नीतिशास्त्रको विचारै जिस व्यवहारमें राजा और मंत्रीको लोभ होताहै वह दूषित हो जाताहै ॥ ८५ ॥

लोकोपिच्यवतेधर्मात्कूटार्थेसंप्रवर्तते ।
अतिकामक्रोधलोभैर्व्यवहारःप्रवर्तते ॥८६

भाषार्थ-और जगत्‌भी धर्मसे गिर जाता है और कपटमें प्रवृत्त होजाता है अत्यंत काम क्रोध लोभ इनसे ही व्यवहार (विवाद) प्रवृत्त होता है ॥ ८६ ॥

कर्तॄनथोसाक्षिणश्चसभ्यान्राजानमेवच ।
व्याप्नोत्यतस्तुतन्मूलंछित्त्वातंविमृशन्नयेत्॥

भाषार्थ-और वह करनेवाला साक्षी सभासद राजा इनसबमें फेलताहै इससे राजा काम क्रोध लोभ मोह जो व्यवहारके मूल हैं उनको दूर करके विचारपूर्वक निर्णय करै ॥ ८७ ॥

अनर्थंचार्थवत्कृत्वादर्शयंतिनृपायये ।
अविचिंत्यनृपस्तथ्यंमन्यतेतैर्निदर्शितः ॥

भाषार्थ-जो सभासद राजाको अनर्थका अर्थ दिखावे और उनके कहे हुयेको राजा सत्य मानले वह अर्थ उनसेही दिलवावे ८८

स्वयंकरोतितद्दत्तौभुज्यतोऽष्टगुणंत्वघं ।
अधर्मतःप्रवृत्तंतंनोपेक्षेरन्सभासदः ॥८९॥

भाषार्थ-जो अर्थको अनर्थको राजा स्वयं करे तो वे दोनों आठगुने पापको भोगते हैं अधर्ममें प्रवृत्त हुये राजाकी सभासद उपेक्षा न करै ॥ ८९ ॥

उपेक्ष्यमाणाःसनृपानरकंयांत्यधोमुखाः ।
धिग्दंडस्त्वथवाग्दंडःसभ्यायत्तौतुतावुभौ ॥

भाषार्थ-यदि उपेक्षा करै तो राजा और सभासद नीचेको मुख कारके नरकमें जाते

है धिक्कारका दंड और वाणीका दंड ये दोनों सभासदोंके आधीन होते हैं ॥ ९० ॥

अर्थदंडवधावुक्तौराजायत्तावुभावपि ।
तीरितंचानुशिष्टंचयोमन्येतविधर्मतः॥९१॥

भाषार्थ–धनका दंड और वध ये दोनों राजाके आधीन होतेहैं जिस तीरित (हुक्म) और शिक्षाको राजा अधर्मसे कीहुईमाने ९१

द्विगुणंदंडमादायपुनस्तत्कार्यमुद्धरेत् ।
साक्षिसभ्यावसन्नानांदूषणेदर्शनंपुनः ॥९२

भाषार्थ–सभासदोंसे दूना दंड लेकर दुवारा उसकार्यका उद्धार (प्रारंभ) करै यदि साक्षी सभासद इनमें कोई दूषण पाया जाय तोभी पुनः उद्धार करै ॥ ९२ ॥

स्वचर्यावसितानांचप्रोक्तःपौनर्भवोविधिः ।
अमात्यःप्राड्विवाकोवायेकुर्युःकार्यमन्यथा

भाषार्थ–जो सभासद अपने कार्यमें भूल जाय तोभी कार्य्यकी विधि पुनः कही है यदि मंत्री वा प्राड्विवाक (वकील) कार्य्यको अन्यथा करदे ॥ ९३ ॥

तंसर्वंनृपतिःकुर्यात्तान्सहस्रंतुदंडयेत् ।
नहिजातुविनादंडंकश्चिन्मार्गेवतिष्ठते ॥

भाषार्थ–उस संपूर्णकार्य्यको राजा करै और उन दोनोंको सहस्रमुद्रा दंडदे क्यों कि विना दंड कोईभी मार्गमें नही टिकता ॥ ९४ ॥

संदर्शितेसभ्यदोषेतदुद्धृत्यनृपोनयेत् ।
प्रतिज्ञाभावनाद्वाहीप्राड्विवाकादिपूजनात्

भाषार्थ–यदि सभासदोंका कोई दोष दिखायाजाय तो उस दोषको निकाल कर राजा स्वयं न्याय करै प्रतिज्ञाकी सत्यता और प्राड्विवाक (वकील) आदिके पूजनसे॥९५

जयपत्रस्यचादानाज्जयीलोकेनिगद्यते ।
सभ्यादिभिर्विनिर्णिक्तंविधृतंप्रतिवादिना ॥

भाषार्थ–और जयपत्रके ग्रहणसे जगत्में जीतने वालेको जई कहते हैं जो सभासदोंने निर्णय कियाहोय और प्रतिवादिने मान लिया होय ॥ ९६ ॥

दृष्ट्वाराजातुजयिनेप्रदद्याज्जयपत्रकं ।
अन्यथाह्यभियोक्तारंनिरुध्याद्बहुवत्सरम् ॥

भाषार्थ–ऐसे जयपत्रको देखकर राजा जीतने वालेको दे अन्यथा (पूर्वोक्त न होय तो) अभियोक्ता (अरजी देनेवालेको) बहुतवर्षतक कैद करै ॥ ९७ ॥

मिथ्याभियोगसदृशमर्हयेदभियोगिनम् ।
कामक्रोधौतुसंयम्ययोर्थान्धर्मेणपश्यति ॥

भाषार्थ–और मिथ्या अभियोग (अर्जी) के समान अभियोगी (मुद्दायले) का पूजन करै जो राजा कामक्रोधको रोककर धर्मपूर्वक अर्थों (दावे) को देखता है ॥९८॥

प्रजास्तमनुवर्तंतेसमुद्रमिवसिंधवः ।
जीवतोरस्वतंत्रःस्याज्जरयापिसमन्वितः९९

भाषार्थ–उस राजाके अनुकूल प्रजा इस प्रकार होती है जैसे समुद्रके नदी माता पिताके जीवते हुये वृद्धभी पुत्र स्वतंत्र नही होता ॥ ९९ ॥

तयोरपिपिताश्रेयान्बीजप्राधान्यदर्शनात्।
अभावेबीजिनोमातातदभावेतुपूर्वजः ८००

भाषार्थ–उन दोनोंमेंभी बीजकी प्राधान्यता देखकर पिता श्रेष्ठ है–और पिताके अभावमें माता और माताके अभावमें जेठा भाई श्रेष्ठ होता है ॥ ८०० ॥

स्वातंत्र्यंतुस्मृतंज्येष्ठेजैष्ठ्यंगुणवयःकृतं ।
याःसर्वाःपितृपत्न्यःस्युस्तासुवर्तेतमातृवत्

भाषार्थ-जेठे भाईको स्वतंत्रता कही है और गुण अवस्थासे ज्येष्ठता होती है जो पिताकी संपूर्ण पत्नी हैं उन सबमें माताके समान वर्ताव करै ॥ १ ॥

स्वसमैकेनभागेनसर्वास्ताःप्रतिपालयन् ।
अस्वतंत्राःप्रजाःसर्वाःस्वतंत्रःपृथिवीपतिः

भाषार्थ-और अपने समान एकसे भागसे उन सबकी अच्छी पालना करै संपूर्णप्रजा अस्वतंत्र (पराधीन) है और राजा स्वतंत्र है ॥ ८०२ ॥

अस्वतंत्रःस्मृतःशिष्यआचार्येतुस्वतंत्रता ।
सुतस्यसुतदाराणांवशित्वमनुशासने ॥३॥

भाषार्थ-शिष्य अस्वतंत्र है-और आचार्य्य स्वतंत्र है शिक्षा देनेके लिये लडके और लडकेकी स्त्री पिताके वसमें होती है ॥३॥

विक्रयेचैवदानेचवशित्वंनसुतेपितुः ।
स्वतंत्राःसर्वएवैतेपरतंत्रेपुनित्यशः ॥ ४ ॥

भाषार्थ-बेचने और दानके लिये लडिका पिताके वसमें नहीं होता पराधीनके विषेभी ये सब स्वतंत्र होते हैं ॥ ४ ॥

अनुशिष्टौविसर्गेवाविसर्गेचेश्वरोमतः ।
मणिमुक्ताप्रवालानांसर्वस्यैवपिताप्रभुः ॥५

भाषार्थ-शिक्षा-दान-और अदान-में ये स्वतंत्र कहे हैं मणि-मोती-मूंगा इन सबका स्वामी (मालिक) पिता होता है ॥ ५ ॥

स्थावरस्यतुसर्वस्यनपितानपितामहः ।
भार्यापुत्रश्चदासश्चत्रयएवाधनाःस्मृताः ६

भाषार्थ-और संपूर्ण स्थावरधनका स्वामी न पिता है न पितामह है भार्या-पुत्र-दास-ये तीनों अधन अर्थात् धनके अस्वामी कहे हैं ॥ ६ ॥

यत्तेसमधिगच्छंतियस्यैतेतस्यतद्धनं ।
वर्ततेयस्ययद्धस्तेतस्यस्वामीसएवन ॥७॥

भाषार्थ-जो इनको मिलता है वहभी धन उसीका होता है जिसके ये तीनों होते हैं जो धन जिसके हाथमें वर्ते उसका स्वामी वही नहीं हो सकता ॥ ७ ॥

अन्यस्वमन्यद्धस्तेपुचौर्याद्यैःकिन्नदृश्यते ।
तस्माच्छास्त्रतएवस्यात्स्वाम्यंनानुभवादपि

भाषार्थ-क्योंकि चोरी करनेसे अन्यका धनभी अन्यके हाथ दीखता है-तिससे शास्त्रसेही धनका स्वामी होता है अनुभवसे नहीं ॥ ८ ॥

अस्यापहृतमेतेननयुक्तंवक्तुमन्यथा ।
विदितोर्थागमःशास्त्रेतथावर्णःपृथक्पृथक्९.

भाषार्थ-अन्यथा यह कहना अयोग्य होगाकि इसका धन इसने हरा धनका आगम और पृथक् २ वर्ण शास्त्रमें विदित है ॥ ९॥

शास्तितच्छास्त्रधर्म्यंयन्म्लेच्छानामपितत्सदा ।
पूर्वाचार्यैस्तुकथितंलोकानांस्थितिहेतवे१०

भाषार्थ-उस शास्त्रने जिस धर्मकी शिक्षा दी है वही धर्म म्लेछ आदिपर्यंत तदासे होता है क्योंकि पहिले आचार्योंने जगत्की मर्यादाके लिये कहा है ॥ १० ॥

समानभागिनःकार्याःपुत्राःस्वस्यचवैस्त्रियः
स्वभागार्धहराकन्यादौहित्रस्तुतदर्धभाक् ॥

भाषार्थ-पिता अपने पुत्र और स्त्रियोंको समान भागदे और कन्याओंको आधाभाग और कन्याओंसे दौहित्रको आधा भाग दे ॥ ११ ॥

मृतेधिपेपिपुत्राद्याउक्तमार्गहराःस्मृताः ।
मात्रेदद्याच्चतुर्थांशंभगिन्यैमातुरर्धकम् १२

भाषार्थ–पिताके मरेपरभी पुत्र आदि सम भाग लेनेवालेही कहे हैं माताको चौथा भाग और मातासे आधा भाग भगिनीको दे ॥ १२ ॥

तदर्धंभागिनेयायशेषंसर्वंहरेत्सुतः ।
पुत्रोनसाधनंपत्नीहरेत्पुत्रीचतत्सुतः ॥१३

भाषार्थ–भगिनीसे आधा भानजेको दे और शेष सबको पुत्र ग्रहण करे पुत्र न होयतो पत्नी पत्नी न होय तो पुत्री पुत्री न होयतो दौहित्र धनको ग्रहण करे ॥ १३ ॥

मातापिताचभ्राताचपूर्वालाभेचतत्सुतः ।
सौदायिकंधनंप्राप्यस्त्रीणांस्वातंत्र्यमिष्यते

भाषार्थ–माता–पिता–भाई भाई न होय तो उसका पुत्र धनको ग्रहण करे जो धन स्त्रियोंको सौदायिक मिलता है उस धनमें स्त्री स्वतंत्र होती है ॥ १४ ॥

विक्रयेचैवदानेचयथेष्टंस्थावरेष्वपि ।
ऊढयाकन्ययावापिपत्युःपितृगृहाच्चयत् ॥

भाषार्थ–चाहे उसे वेचे और दान करे और वह धन स्थावर हों या जंगम विवाही हुई कन्याको पतिसे और पिताके घरसे जो धन मिले ॥ १५ ॥

मातृपित्रादिभिर्दत्तंधनंसौदायिकंस्मृतं ।
पित्रादिधनसंबंधहीनंयद्यदुपार्जितं ॥१६॥

भाषार्थ–अथवा माता–पिता जो दे उस धनको सौदायिक कहते हैं जो पुत्र पिताके धनको न लगाकर धनका संचय करले१६॥

येनसःकाममश्नीयादविभाज्यंधनंहितत् ।
जलतस्करराजाग्निव्यसनेसमुपस्थिते ॥

भाषार्थ–वह पुत्र उस धनको अपनी इच्छाके अनुसार भोगे और अपने भाईयोंको न वांटे यदि जल, चौर, राजा–अग्नि–इनकी विपत्ति पिताके धनपर पडे ॥ १७ ॥

यस्तुस्वशक्त्यासंरक्षेत्तस्यांशोदशमःस्मृतः
हेमकारादयोयत्रशिल्पंसंभूयकुर्वते ।

भाषार्थ–जो पुत्र अपनी शक्तिसे उस धनकी रक्षा करे तो उसको दसवां भाग उसमेंसे मिलना कहा है जो सुनार आदि मिलकर कारीगरी करते हैं ॥ १८ ॥

कार्यानुरूपंनिर्वेशंलभेरंस्तेयथार्हतः ।
संस्कर्तातत्कलाभिज्ञःशिल्पीप्रोक्तोमनीषिभिः॥ १९ ॥

भाषार्थ–वे अपने २ कार्यके अनुसार नोकरीको यथायोग्य प्राप्त होते हैं संस्कार करनेवाला जो कार्य्यकी कलाको भली प्रकार जानता हो उसको बुद्धिमान् शिल्पी कहते हैं ॥ १९ ॥

हर्म्यंदेवगृहंवापिवाटिकोपस्कराणिच ।
संभूयकुर्वतांतेषांप्रमुख्योद्व्यंशमर्हति ॥२०

भाषार्थ–महल–देवताओंका मंदिर–वाटिका–और उपस्कर–इनको जो मनुष्य मिलकर करते हो उनमें जो मुख्य होंय उसे दो भाग मिलने योग्य हैं ॥ २० ॥

नर्तकानामेवधर्मःसद्भिरेवउदाहृतः ।
तालज्ञोलभतेर्धांशंगायनास्तुसमांशिनः ॥

भाषार्थ–नाचनेवालोंका यह सनातन धर्म सज्जनोंने कहा है कि तालके जानने वालेको चौथाईभाग और गानेवालोंको सम (बराबर) मिलता है ॥ २१ ॥

परराष्ट्राद्धनंयत्स्याच्चौरैःस्वाम्याऽज्ञयाहृतं
राज्ञेषष्ठांशमुद्धृत्यविभजेरन्समांशकं ॥२२

पराये राज्यमेंसे जिस धनको अपने स्वामीकी आज्ञासे चौर हरलावे उसका छठा भाग स्वामीको देकर शेष भागको समान बांटले॥

तेषांचेत्प्रसृतानांचग्रहणंसमवाप्नुयात् ।
तन्मोक्षार्थंचयद्दत्तंवहेयुस्तेसमांशतः ॥२३

भाषार्थ-उनके उस कामके करनेमें जो कोई बंधनको प्राप्त हो जाय उसके छुटानेमें जो धन दिया होय उसकोभी समभागसे बांटकर भुगतले ॥ २३ ॥

प्रयोगंकुर्वतेयेतुहेमाद्यन्यरसादिना ।
समन्यूनाधिकैरंशैर्लाभस्तेषांतथाविधः ॥

भाषार्थ-जो मनुष्य सुवर्ण आदि वा अन्य-रस आदिसे प्रयोग (रसोंका बनाना)करते हैं उन सबको समान-न्यून-वा अधिक अंशोंसे उसी प्रकार लाभ होता है कि॥२४

समोन्यूनोधिकोह्यंशोयेनक्षिप्तस्तथैवसः ।
व्ययंदद्यात्कर्मकुर्याल्लाभंगृण्हीतचैवहि ॥

भाषार्थ-जिसने समान न्यून वा अधिक जैसा अंश जो मनुष्य व्ययको दे और काम को करै वह लाभको ग्रहण करै ॥ २५ ॥

वणिजानांकर्षकाणामेषएवविधिःस्मृतः ।
सामान्यंयाचितंन्यासआधिर्दासश्चतद्धनं॥

भाषार्थ-यह विधि व्यापारी और किसानोकी कही है सामान्य-याचित न्यास (सोपाहुआ द्रव्य) आधि (धरोहर) दास (दासका धन) ॥ २६ ॥

अन्वाहितंचनिक्षेपःसर्वस्वंचान्वयेसति ।
आपत्स्वपिनदेयानिनववस्तूनिपंडितैः ॥

भाषार्थ-अन्वाहित-निक्षेप-और सर्वत्र इन वस्तुओंको पंडित जन आपत्तिके समयमेंभी नदें यदि अपने वंशमें कोई संतान होय ॥ २७ ॥

अदेयंयश्चगृण्हातिपश्चाद्देयंप्रयच्छति ।
तावुभौचौरवच्छास्यौदाप्यौचोत्तमसाहसं

भाषार्थ-जो मनुष्य देनेके अयोग्यको ग्रहण करताहै अथवा देताहै वे दोनों चौरके समान शिक्षा देने योग्य हैं-और राजा उनको उत्तम साहसका दंडदे ॥ २८ ॥

अस्वामिकेभ्यश्चौरेभ्योविगृण्हातिधनंतुयः।
अव्यक्तमेवक्रीणातिसदंड्यश्चौरवन्नृपैः २९

भाषार्थ-जिनका कोई स्वामी न होय ऐसे चौरोंसे जो धनको लेताहै और छिपकर खरीदता है उसको राजा चौरके समान दंडदे ॥ २९ ॥

ऋत्विग्याज्यमदुष्टंयस्त्यजेदनपकारिणं ।
अदुष्टश्चर्त्विजोयाज्योविनेयौतावुभावपि ॥

भाषार्थ-जो ऋत्विक् (यज्ञ करानेवाला) निरपराधी और अदुष्ट यज्ञ करनेवालेको त्यागदे और जो यज्ञ करनेवाला अदुष्ट सज्जन ऋत्विजको त्यागदे उन दोनोंको राजा शिक्षादे ॥ ३० ॥

द्वात्रिंशांशंषोडशांशंलाभंपण्येनियोजयेत् ।
नान्यथातद्व्ययंज्ञात्वाप्रदेशाद्यनुरूपतः ॥

भाषार्थ-बत्तीसवां या सोलहवां लाभ पण्य (बाजार) में राजा नियत करै देश और कालके अनुरूप उसके व्यय (खर्च) को जानकर अन्यथा न करै ॥ ३१ ॥

वृद्धिंहित्वाह्यर्धधनैर्वाणिज्यंकारयेत्सदा ।
मूलात्तुद्विगुणावृद्धिर्गृहीताचाधमर्णिकात् ॥

भाषार्थ-वृद्धि (नफा) को छोडकर व्यापारीयोंपर आधे धनसे सदैव व्यापार करावे यदि उत्तमर्ण (देनेवाला) ने अधमर्ण (करज लेनेवाले) से मूलसे दूना व्याजलेलिया हो ॥ ३२ ॥

तदोत्तमर्णमूलंतुदापयेन्नाधिकंततः।
धनिकाश्चक्रवृद्ध्यादिमिपतस्तुप्रजाधनं॥

भाषार्थ–तो उत्तमर्णके मूलकोही राजा दिलवावे उससे अधिक नहीं–क्योंकि धनी मनुष्य चक्रवृद्धि (सूदपरसूद) के वहानेसे प्रजाके धनको॥ ३३॥

संहरंतिह्यतस्तेभ्योराजासंरक्षयेत्प्रजां।
समर्थःसनददातिगृहीतंधनिकाद्धनं॥ ३४॥

भाषार्थ–हरते हैं–इससे राजा उनसे प्रजाकी भली प्रकार रक्षा करै जो समर्थ होकर धनीसे लिये हुये धनको नदे॥ ३४॥

राजासंदापयेत्तस्मात्सामदंडविकर्पणैः।
लिखितंतुयदायस्यनष्टंतेनप्रबोधितं॥ ३५॥

भाषार्थ–उससे राजा साम–दंड–भेदसे धनको दिलवायदे और जिसका लिखाहुआ नष्ट हो जाय उसने नष्ट हुये लिखितको राजाको जता दिया हो॥ ३५॥

विज्ञायसाक्षिभिःसम्यक्पूर्ववद्दापयेत्तदा।
अदत्तंयश्चगृण्हातिसुदत्तंपुनरिच्छति॥ ३६

भाषार्थ–तो साक्षीयोंसे भलीप्रकार जान कर पूर्वके समान राजा दिवादे जो विना दियेको लेले अथवा भलीप्रकार देनेपरभी पुनः इच्छा करे॥ ३६॥

दंडनीयावुभावेतौधर्मज्ञेनमहीक्षिता।
कूटपण्यस्यविक्रेतासदंड्यश्चौरवत्सदा ३७

भाषार्थ–तो धर्मका ज्ञाता राजा इनदोनोंको दंडदे जो खोटी वस्तुको वेचे उसे राजा चोरके समान दंडदे॥ ३७॥

दृष्ट्वाकार्याणिचगुणाञ्छिल्पिनांभृतिमाव
हेत्।
पंचमांशंचतुर्थांशंतृतीयांशंतुकर्षयेत्॥ ३८

भाषार्थ–कारीगरोंके कार्य्य और गुणोंको देखकर भृति (नौकरी) दे पांचवा, –चोथा, वा तीसरा, भाग रुपेका देकर खेती करावे॥ ३८॥

अर्धंवाराजताद्राजानाधिकंतुदिनेदिने।
विद्रुतंनतुहीनंस्यात्स्वर्णपलशतंशुचि॥ ३९

भाषार्थ–अथवा आधा देकर करावे अधिक नहि यह प्रमाण एक दिनकी भृतिका है जो सोपल सोना गलानेसे कम नहोय वह शुद्ध होता है॥ ३९॥

चतुःशतांशंरजतंताम्रंन्यूनंशतांशकं।
वंगंचजसदंसीसंहीनंस्यात्षोडशांशकं ४०

भाषार्थ–और चारसो पल चांदी, सोपल तांबा, और वंग जस्त शीसा सोलह पल गलाये जाय तो प्रत्येकमें एक २ पल कम होजाता है॥ ४०॥

अयोष्टांशंत्वन्यथातुदंड्यःशिल्पीसदानृपैः
सुवर्णेद्विशतांशंतुरजतंचशतांशकं॥ ४१॥

भाषार्थ–और लोहमें आठवां भाग कम होता है इससे आधिक कम होजाय तो राजा शिल्पीको दंड देने योग्य समझे सुवर्णके दोसे तोलेमें और चांदीके सो तोलेमें एक तोला॥ ४१॥

हीनंसुघटितेकार्येसुसंयोगेतुवर्धते।
षोडशांशंत्वन्यथाहिदंड्यःस्यात्स्वर्णकारक

भाषार्थ–कम होता है और उसकी कोई वस्तु (गहना) वनवाया जाय तो सोलहवां भाग बढता है इससे अन्यथा होय तो सुनार दंड देने योग्य समझना॥ ४२॥

संयोगघटनंदृष्ट्वावृद्धिंह्रासंप्रकल्पयेत्।
स्वर्णस्योत्तमकार्येतुभृतिस्त्रिंशांशकीमता॥

भाषार्थ-संयोग जोडोंकी घटनाको देखकर वृद्धि और भृतिकी कल्पना करै सोनेके उत्तम कामोंके बनानेकी भृति (नौकरी) तीसवां भाग कही है ॥ ४३ ॥

षष्ट्यंशकीमध्यकार्येहीनकार्येतदर्धकी ।
तदर्धाकटकेज्ञेयाविद्रुतेतुतदर्धकी ॥ ४४ ॥

भाषार्थ-मध्यमकामकी भृति साठमें भागकी और हीन (सुगम) कामोंकी भृति उससे आधी कही है और उससेभी आधी कडे बनानेकी और उससेभी आधी सोनेके गलानेकी कही है ॥ ४४ ॥

उत्तमेराजतेत्वर्धातदर्धामध्यमास्मृता ।
हीनेतदर्धाकटकेतदर्धासंप्रकीर्तिता॥ ४५ ॥

भाषार्थ-चांदीके उत्तम कामोंकी भृति आधी और मध्यमकामोंकी चौथाई और हीन कामोंकी उससे आधी और उससे भी आधी कडा बनानेमें कही है ॥ ४५ ॥

पादमात्राभृतिस्ताम्रेवंगेचजसदेतथा ।
लोहेर्धावासमावापिद्विगुणात्रिगुणाथवा ४६

भाषार्थ-तांबेके कामोंकी भृति चौथाई-और तिसी प्रकार रांग और जस्तके कामोंमें होती है-लोहेकी भृति आधी वा बराबर दूनी वा तिगुनी होती है ॥ ४६ ॥

धातूनांकूटकारीतुद्विगुणोदंडमर्हति ।
लोकप्रचारैरुत्पन्नोमुनिभिर्विधृतःपुरा ॥ ४७

भाषार्थ-जो कारीगर धातुओंमें कपट करै वह दूनेदंडके योग्य होता है लोकके प्रचारसे उत्पन्न हुआ और मुनियोंने पहिले कहाहुआ ॥ ४७ ॥

व्यवहारोनंतपथःसवक्तुंनैवशक्यते ।
उक्तंराष्ट्रप्रकरणंसमासात्पंचमंतथा ॥४८॥

भाषार्थ-जो व्यवहार उसके मार्ग अनेक हैं उसको कोई नहि कहसकता यह पांचवा राष्ट्र (राज्य) प्रकरण संक्षेपसे वर्णन किया ॥ ४८ ॥

अत्रानुक्तागुणादोषास्तेज्ञेयालोकशास्त्रतः ।
षष्ठंदुर्गप्रकरणंप्रवक्ष्यामिसमासतः ॥४९॥

भाषार्थ-इसमें जो गुण वा दोष नहि कहे वे लोक और शास्त्रसे जानने अब छठे दुर्ग (किला) प्रकरणको संक्षेपसे कहताहूं ॥ ४९ ॥

खातकंटकपाषाणैर्दुष्पथंदुर्गमैरिणं ।
परितस्तुमहाखातंपारिखंदुर्गमेवतत् ५०॥

भाषार्थ-खात-कांटे-पत्थर-गुप्तमार्ग और ऊखरभूमि जिसके समीप होय उसे ऐरिण दुर्ग कहतेहैं जिसके चारों तरफ बडी खाई खुदी होय उसे पारिख दुर्ग कहते हैं ॥५०॥

इष्टकोपलमृद्भित्तिप्राकारंपारिघंस्मृतं ।
महाकंटकवृक्षौघैर्व्याप्तंतद्वनदुर्गमं॥ ५१ ॥

भाषार्थ-ईट-पत्थर-मिट्टी-भीत इनका जिसमें परकोटा होय उसे पारिघ दुर्ग कहते हैं बडे २ कांटोके वृक्षोंके समूहसे जो व्याप्त होय उसे वनदुर्ग कहते हैं ॥ ५१ ॥

जलाभावस्तुपरितोधन्वदुर्गंप्रकीर्तितं ।
जलदुर्गंस्मृतंतज्ज्ञैरासमंतान्महाजलं५२॥

भाषार्थ-जिसके चारोंतरफ जलका अभाव होय उसे धन्वदुर्ग कहते हैं और जिसके चारों तरफ बडा जल होय उसे शास्त्रके ज्ञाता जलदुर्ग कहते हैं ॥ ५२ ॥

सुवारिपृष्ठोच्चधरंविविक्तेगिरिदुर्गमं ।
अभेद्यंव्यूहविद्वीरव्याप्तंतत्सैन्यदुर्गमं ॥५३

भाषार्थ-जो जलके स्थानमें बडा ऊंचा एकांतमें बनाया जाय उसे गिरिदुर्ग कहते

है-जिसमें कवायदके ज्ञाता बहुतसे शूर वीर हों और जो भेदनके अयोग्य होय उसे सैन्यदुर्ग कहते हैं ॥ ५३ ॥

सहायदुर्गतज्ज्ञेयंशूरानुकूलबांधवं ।
पारिखादैरिणंश्रेष्ठंपारिघंतुततोवनं ॥५४॥

भाषार्थ-जिसमें शूरवीरोंके अनुकूल बंधुजन रहते होय उसे सहायदुर्ग कहते हैं पारिखदुर्गसे ऐरिण-और ऐरिणसे पारिघ और उससे वनदुर्ग श्रेष्ठ होता है ॥ ५४ ॥

ततोधन्वंजलंतस्माद्गिरिदुर्गततःस्मृतं ।
सहायसैन्यदुर्गेतुसर्वदुर्गप्रसाधिके ॥५५॥

भाषार्थ-उससे धन्वदुर्ग-धन्वसे जलदुर्ग और उससे गिरिदुर्ग श्रेष्ठ कहा है सहायदुर्ग और सैन्यदुर्ग ये दोनों तो सबदुर्गोंके साधन होते हैं ॥ ५५ ॥

ताभ्यांविनान्यदुर्गाणिनिष्फलानिमहीभुजां
श्रेष्ठंतुसर्वदुर्गेभ्यःसेनादुर्गस्मृतंबुधैः ॥५६

भाषार्थ-क्योंकि इन दोनोंके विना अन्य सब राजाओंके दुर्ग निष्फल होते हैं और सब दुर्गसे श्रेष्ठ तो पंडितजनोंने सेनादुर्ग कहा है ॥ ५६ ॥

तत्साधकानिचान्यानितद्रक्षेन्नृपतिःसदा ।
सेनादुर्गतुयस्यस्यात्तस्यवश्यातुभूरियं ॥

भाषार्थ-अन्य सबदुर्ग सेनाकेही साधक होते हैं इससे राजा सदैव सेनाकी रक्षा करै जिस राजाके सेनादुर्ग होता है उसके वशमेंही यह भूमि होती है ५७ ॥

विनातुसैन्यदुर्गेणदुर्गमन्यत्तुबंधनं ।
आपत्कालेन्यदुर्गाणामाश्रयश्चोत्तमोमतः॥

भाषार्थ-सैन्यदुर्ग विना अन्यदुर्ग बंधन होते हैं और आपत्ति के समयमें अन्यदुर्गोंका आश्रय उत्तम कहा है ॥ ५८ ॥

एकःशतंयोधयतिदुर्गस्थोऽस्त्रधरोयदि ॥
शतंदशसहस्राणितस्माद्दुर्गसमाश्रयेत् ५९

भाषार्थ-यदि दुर्गमें टिका हुआ एक शस्त्रधारी सौ योधाओंके संग युद्ध करै और सौ योधा सहस्रयोधाओंके संग युद्ध करैं इससे राजा दुर्गका आश्रय ले ५९

शूरस्यसैन्यदुर्गस्यसर्वदुर्गमिवस्थलं ।
युद्धसंभारपुष्टानिराजादुर्गाणिधारयेत् ६०

भाषार्थ-और शूरवीर सैन्यदुर्गको तो संपूर्णस्थल (मैदान) भी दुर्ग के समान है-राजा ऐसे दुर्गोंका धारण करै युद्धके संभारों (सामग्री) से पुष्ट (मजबूत) हों ॥ ६० ॥

धान्यवीरास्त्रपुष्टानिकोशपुष्टानिवैतथा ।
सहायपुष्टंयद्दुर्गतत्तुश्रेष्ठतरंमतं ॥ ६१ ॥

भाषार्थ-और अन्न-शूरवीर -अस्त्र-कोश इनसेभी पुष्ट हों-और जो दुर्ग सहाय कोंसे पुष्ट हो वह अत्यंत श्रेष्ठ कहा है ६१॥

सहायपुष्टदुर्गेणविजयोनिश्चयात्मकः ।
यद्यत्सहायपुष्टंतुतत्सर्वसफलंभवेत् ॥६२॥

भाषार्थ-सहायसे पुष्ट जो दुर्ग उससे विजय निश्चयसे होता है और जो २ सहाय से पुष्ट होता है वह संपूर्ण सफल होता है६२

परस्परानुकूल्यंतुदुर्गाणांविजयप्रदं ।
दौर्गसंक्षेपतःप्रोक्तंसैन्यंसप्तममुच्यते ६३॥

भाषार्थ-दुर्गोंकी जो परस्पर अनुकूलता है वह विजय देनेवाली होतीहै-यह संक्षेपसे दुर्ग वर्णन किया अब सातवें सैन्य प्रकरणको कहते हैं ॥ ६३ ॥

सेनाशस्त्रास्त्रसंयुक्तामनुष्यादिगणात्मिका।
स्वगमान्यगमाचेतिद्विधासैवपृथक्त्रिधा ॥

भाषार्थ-शस्त्र अस्त्रोंसे संयुक्त मनुष्यों-के समूहको सेना कहते हैं वह स्वगम (पियादे) और अन्यगम-(सवार) भेदसे दो प्रकारकी और वही पृथक् २ तीन प्रकार की होती है ॥ ६४ ॥

दैव्यासुरीमानवीचपूर्वपूर्वबलाधिका ।
स्वगमायास्वयंगंत्रीयानगाऽन्यगमास्मृता

भाषार्थ-दैवी-आसुरी-मानुषी-इनतीनोंमें पहिली २ सेना बलमें अधिक होती है-जो सेना अपने पैरोंसे चले वह स्वगमा और जो यानमें चलै वह अन्यगमा कहाती है६५

पादातंस्वगमंवान्यद्रथाश्वगजगंत्रिधा ।
सैन्याद्विनानैवराज्यंनधनंनपराक्रमः ॥ ६६

भाषार्थ-अथवा पदातियोंकी सेना स्वगम और दूसरी रथ-अश्व-हाथीपर चलनेसे तीन प्रकारकी होती है-सेनाके विना न राज्य है न धन है और न पराक्रम ॥ ६६ ॥

बलिनोवशगाःसर्वेदुर्बलस्यचशत्रवः ।
भवंत्यल्पजनस्यापिनृपस्यतुनकिंपुनः ६७

भाषार्थ-बलवान् (सेनावाला) के संपूर्ण वशमें होते हैं और दुर्बलके संपूर्ण शत्रु हो जाते हैं चाहै वह साधारणभी मनुष्यहो-राजा के तो क्यों न होंगे ॥ ६७ ॥

शारीरंहिबलंशौर्यबलंसैन्यबलंतथा ।
चतुर्थमास्त्रिकबलंपंचमंधीबलंस्मृतं॥ ६८॥

भाषार्थ-प्रथम बल शरीरका-२बल शूर-वीरताका ३ बल सेनाका-४ बल अस्त्रका-५ बल बुद्धिका कहा है ॥ ६८ ॥

षष्ठमायुर्बलंत्वेतैरुपेतोविष्णुरेवसः ।
नबलेनविनाप्यल्पंरिपुंजेतुंक्षमःसदा ॥६९

भाषार्थ-छठा बल अवस्थाका है-इनछः बलोंसे युक्त राजा साक्षात् विष्णुरूप होता है-और बलके विना अल्पभी शत्रुके जीतने में संदेवसे समर्थ नहीं होता ॥ ६९ ॥

देवासुरनरास्त्वन्योपायैर्नित्यंभवंतिहि ।
बलमेवरिपोर्नित्यंपराजयकरंपरं ॥ ७० ॥

भाषार्थ-देवता असुर और नर ये तीनों तो अन्य २ उपायोंसे नित्य होते हैं और शत्रुकाही बल नित्य पराजय करनेवाला होता है ॥ ७० ॥

तस्माद्बलममोघंतुधारयेद्यत्नतोनृपः ।
सेनाबलंतुद्विविधंस्वीयंमैत्रंचतद्द्विधा ॥७१

भाषार्थ-तिससे राजा अमोघ (सफल) बलका यत्नसे धारण करै और सेनाका बल अपनी और मित्रकी सेनाके भेदसे दो-प्रकारका होता है ॥ ७१ ॥

मौलसाद्यस्कभेदाभ्यांसारासारंपुनर्द्विधा ।
अशिक्षितंशिक्षितंचगुल्मीभूतमगुल्मकं ७२

भाषार्थ-मौल (सदाका) और साद्यस्क (तुरंतका) भेदसे दोप्रकारका है और वे दोनोंभी सार और असार भेदसे दो प्रकार का है १ अशिक्षित (नसीखी) और २ शिक्षित (सीखीहुयी)-और गुल्मवाली और विना गुल्मवाली ॥ ७२ ॥

दत्तास्त्रादिस्वशस्त्रास्त्रंस्ववाहिदत्तवाहनं ।
सौजन्यात्साधकंमैत्रंस्वीयंभृत्याप्रपालितं॥

भाषार्थ-१ दत्तास्त्र (जिसको राजाने अस्त्र दिये हों) २ स्वशस्त्रास्त्र जिसके पास अपनेही शस्त्र अस्त्रहों-१ स्ववाही (जिस पर अपनी सवारी हो) २ दत्तवाहन (जिस को राजाने सवारी दी हो)-जो सेना सौजन्य (स्नेह) से कार्यसिद्धि करै वह मैत्र और जो भृति (नौकरी) देकर पाली हो वह स्वीय (अपनी) कहाती है ॥ ७३ ॥

मौलंचहुवर्षंस्थायिस्यात्साद्यस्कंयत्तदन्यथा ।
सुयुद्धकामुकंसारमसारंविपरीतकं ॥७४ ॥

भापार्थ–जो सेना बहुत दिनकी हो वह मौल और इससे अन्यथा हो वह साद्यस्क कहाती है जो सेना उत्तम युद्धकी इच्छा करे वह सार और इससे जो विपरीत वह असार कहाती है ॥ ७४॥

शिक्षितंव्यूहकुशलंविपरीतमशिक्षितं ।
गुल्मीभूतंसाधिकारिस्वस्वामिकमगुल्मकं॥

भापार्थ–जो सेना व्यूह (कवायद) में कुशल हो वह शिक्षित और इससे विपरीत अशिक्षित होती है–जिसका अधिकारी दूसरा हो वह गुल्मीभूत और जिसका स्वामी अन्य नहो वह अगुल्मी भूत होती है ॥७५॥

दत्तास्त्रादिस्वामिनायत्स्वशस्त्रास्त्रमतो न्यथा ।
कृतगुल्मंस्वयंगुल्मंतद्वच्चदत्तवाहनं ॥७६॥

भापार्थ–स्वामीने जिसको अस्त्र आदिदिये हों वह दत्तास्त्र और इससे विपरीत स्व-शस्त्रास्त्र होती है–कृतगुल्म– २ स्वयंगुल्म– और ३ दत्तवाहन ॥ ७६ ॥

आरण्यकंकिरातादियत्स्वाधीनंस्वतेजसा ।
उत्सृष्टंरिपुणावापिभृत्यवर्गेनिवेशितं॥७७॥

भापार्थ–भील आदि जो अपने तेजसे स्वाधीन होते हैं उनकी सेना आरण्यक (वनकी) होती है–जो सेना शत्रुने छोड-दीहो और अपने भृत्योंमें मिलालीहो॥७७॥

भेदाधीनंकृतंशत्रोःसैन्यंशत्रुबलंस्मृतं ।
उभयंदुर्बलंप्रोक्तंकेवलंसाधकंनतत् ॥७८॥

भापार्थ– वा जो शत्रुकी सेना भेदसे अप ने आधीन करली हो वह शत्रुकी सेना कही है–ये दोनों दुर्बल कही हैं और अकेली ये दोनों कार्यसिद्धिको नहीं कर सकती॥७८॥

समैर्नियुद्धकुशलैर्व्यायामैर्नतिभिस्तथा ।
वर्धयेद्वाहुयुद्धार्थंभोज्यैःशारीरकंबलं ॥७९

भापार्थ–समान जो निरंतर युद्धमें कुशल उनके परस्पर युद्धसे–व्यायाम (कसरत) और नति (प्रार्थना) से और शरीरके पोषक उत्तम २ खानेके पदार्थोंसे बाहुयुद्धके लिये सेनाको बढावे ॥ ७९ ॥

मृगयाभिस्तुव्याघ्राणांशस्त्रास्त्राभ्यासतः सदा ।
वर्धयेच्छरसंयोगात्सम्यक्छौर्यबलंनृपः ॥

भापार्थ–सिंहोंकी मृगया और सदैव शस्त्र-अस्त्रके अभ्यास और बाणोके संयोग(चालना) से शूरवीरोंकी सेनाको सदैव राजा बढावे८०

सेनाबलंसुभृत्यातुतपोभ्यासैस्तथास्त्रिकं ।
वर्धयेच्छास्त्रचतुरसंयोगाद्धीबलंसदा ८१॥

भापार्थ–अच्छि भृति (नौकरी) से सेनाके बलको और तपके अभ्याससे अस्त्रके बलको और शास्त्र और चतुरके सत्संगसे बुद्धिके बलको सदैव बढावे ॥ ८१ ॥

सत्क्रियाभिश्चिरस्थायिनित्यंराज्यंभवेद्यथा
स्वगोत्रेतुतयाकुर्यात्तदायुर्बलमुच्यते ॥८२

भापार्थ–अच्छे २ कर्मोंसे अपने गोत्रकी परंपरामें राज्य चिरकालतक जिस प्रकार स्थिर रहे उस प्रकारही राजा आचरण करै उसको आयुर्बल कहते हैं ॥ ८२ ॥

यावद्गोत्रेराज्यमस्तितावदेवसजीवति ।
चतुर्गुणंहिपादातमश्वतोधारयेत्सदा॥८३॥

भाषार्थ–इतने राजाके गोत्रमें राज्य रहै तवतकही वह राजा जीवता है–और सत्रा

रोंसे चौगुनी पदातियोंकी सेना राजा सदैव रक्खै ॥ ८३ ॥

पंचमांशांस्तुवृषभानष्टांशांश्वक्रमेलकान् ।
चतुर्थांशान्गजानुष्ट्रान्गजार्धांश्वरथान्सदा ॥

भाषार्थ-पांचवें अंशके बैल और आठवें अंशके खीचर चौथाई हाथी और ऊंठ और हाथियोंसे आधे रथ सदैव रक्खै ॥ ८४ ॥

रथात्तुद्विगुणंराजाबृहन्नालद्वयंतथा ।
पदातिवहुलंसैन्यंमध्याश्वंतुगजाल्पकं॥ ८५

भाषार्थ-रथोंसे दूने दो बडे तोफखाने राजा रक्खै-जिसमें पदाति बहुत हों और घोडे मध्यम और हाथी अल्प हों उसे सैन्य कहते हैं ॥ ८५ ॥

तथावृषोष्ट्रसामान्यंरक्षेन्नागाधिकंनहि ।
सवयःसारवेषोच्चशस्त्रास्त्रंतुपृथक्शतं ८६॥

भाषार्थ-तिसी प्रकार बैल और ऊंठ जिसमें सामान्य हों उस सेनाकी राजा रक्षा करै और जिसमें हाथी अधिकहों उसकी नही-जवान-उत्तम वेषधारी-उत्तम २ शस्त्र और अस्त्रधारी ये सब पृथक्२ सौ २ रखने ८६

लघुनालिकयुक्तानांपदातीनांशतत्रयं ।
अशीत्यश्वान्रथंचैकंबृहन्नालद्वयंतथा ॥८७

भाषार्थ-और बंदूकवाले पदाति तीनसौ हों-अस्सी घोडे और एकरथ और बडी दो तोफ ॥ ८७ ॥

उष्ट्रान्दशगजौद्वौतुशकटौषोडशर्षभान् ।
तथालेखकषट्कंहिमंत्रित्रितयमेवच॥८८॥

भाषार्थ-दश ऊंठ-दो हाथी-दो गाडे-सोलह बैल-और छः लिखारी और तीन मंत्री होने चाहिये ॥ ८८ ॥

धारयेन्नृपतिःसम्यक्वत्सरेलक्षकर्षभाक् ।
संभारदानभोगार्थंधनंसार्धसहस्रकं ॥८९॥

भाषार्थ-इन सबको राजा भली प्रकार रक्खे और एक वर्षमें एक लक्ष रुपैयोंका संचय करै और सामान और दान भोगके लिये डेढसहस्र रुपया प्रतिमासमें करै ८९॥

लेखकार्थेशतंमासिमंत्र्यर्थेतुशतत्रयं ।
त्रिशतंदारपुत्रार्थेविद्वदर्थेशतद्वयं ॥ ९० ॥

भाषार्थ-लिखनेके काममें सोरुपै-और मंत्रीके काममें तीनसौ रुपै और स्त्री और पुत्रोंके लिये तीनसौरुपै-और पंडितोंके लिये दो सौ रुपै-प्रति मासमें खर्च करै॥९०

साद्यश्वपदगार्थंहिराजाचतुःसहस्रकं ।
गजोष्ट्रवृषनालार्थंव्ययीकुर्याच्चतुःशतं॥९१

भाषार्थ-सवार-घोडे-पदाति-इनके लिये चार सहस्र रुपै-और हाथी-ऊंठ-बैल-और तोफखाना इनके लिये चारसौ रुपै प्रतिमासमें राजा खर्च करै ॥ ९१ ॥

शेषंकोशेधनंस्थाप्यंव्ययीकुर्यान्नचान्यथा ।
लोहसारमयश्चक्रसुगमोमंचकासनः ॥९२

भाषार्थ-शेष धनको कोश (खजाना) में स्थापन करै और अन्य किसी वृथा रीतिसे खर्च न करै-जिस रथका चक्र लोहसार (उत्तमलोहा) का हो जिसकी गति (चलना) अच्छी हो और जिसमें बैठनेका आसन मंचक (खट्वा) के समान हो॥९२

स्वादोलायितरूढस्तुमध्यमासनसारथिः ।
शस्त्रास्त्रसंधार्युदरइष्टच्छायोमनोरमः॥९३

भाषार्थ-जिसकी दोला (कमानी) ओं पर सारथी बैठे व मध्यम आसन हो और जिस रथके भीतर शस्त्र अस्त्र सब आजाय और जिसकी छाया अच्छी हो और जो देखनेमें सुंदर हो ॥ ९३ ॥

एवंविधोरथोराज्ञारक्ष्योनित्यंसदश्वकः ।
नीलतालुर्नीलजिव्होवक्रदंतोह्यदंतकः ९४

भाषार्थ–ऐसे उत्तम अश्ववाले रथकी राजा सदैव रक्षा करै–और जिसकी तालु और जिव्हा नीली हों और दांत टेढे हों और जिसके दांत न हों ॥ ९४ ॥

दीर्घद्वेषीक्रूरमदस्तथापृष्ठविधूनकः ।
दशाष्टोननखोमंदोभूविशोधनपुच्छकः ९५

भाषार्थ–जिसको वडा वैर हो–जिसमें वहुत मद हो–और जिसकी पीठ कंपती हो और जिसके अठारहसे कम नख हों जो मंदहो और जिसकी पुंछ भूमिपर लटकती हो ॥ ९५ ॥

एवंविधोऽनिष्टगजोविपरीतःशुभावहः ।
भद्रोमंद्रोमृगोमिश्रोगजोजात्याचतुर्विधः ॥

भाषाथ–ऐसा जो हाथी वह अनिष्ट होता है और इससे विपरीत शुभदायी होता है और भद्र मंद्र मृग मिश्र–इन चार जाति-योंसे हाथी चार प्रकारका होता है ॥ ९६ ॥

मध्वाभदंतःसवलःसमांगोवर्तुलाकृतिः ।
सुमुखोवयवश्रेष्ठोज्ञेयोभद्रगजःसदा ॥९७॥

भाषार्थ–जिसके दांत मधुके समान हों–जो वलवान् हो–जिसके अंग सम हों–जिसका आकार गोल हो–सुंदर मुखहो–अंग अच्छे हों–ऐसे गजको सदैवसे भद्र कहते हैं ॥ ९७ ॥

स्थूलकुक्षिःसिंहदृक्चवृहत्त्वग्गलशुंडकः ।
मध्यमावयवोदीर्घकायोमंद्रगजःस्मृतः ९८

भाषार्थ–जिसकी कोख स्थूल हो–सिंहके समान दृष्टि हो–गला और शुंड वडे हों–अंग मध्यम हों–लंवी काया हो उस हाथीको मंद्र कहते हैं ॥ ९८ ॥

तनुकंठदंतकर्णशुंडःस्थूलाक्षएवहि ।
सुहृत्स्वाधरमेंद्रस्तुवामनोमृगसंज्ञकः ॥९९

भाषार्थ–जिसके कंठ–दांत–कान–शुंड–ये सव पतले हों और नेत्र स्थूल (वडे) हों हृदय और ओष्ठ और लिंग ये सव सुंदर हों और जो वामन (छोटा) हो–उस हाथी-को मृग कहते हैं ॥ ९९ ॥

एषांलक्ष्मैर्विमिलितोगजोमिश्रइतिस्मृतः ।
भिन्नंभिन्नंप्रमाणंतुत्रयाणामपिकीर्तितं १००

भाषार्थ–इन सवके चिन्ह जिसमें मिलै वह गज मिश्र कहा है–और तीनोंका प्रमा-णभी भिन्न २ कहा है ॥ १०० ॥

गजमानेह्यंगुलंस्यादष्टभिस्तुयवोदरैः ।
चतुर्विंशत्यंगुलैस्तैःकरःप्रोक्तोमनीषिभिः १

भाषार्थ–हाथीके प्रमाणमें ऐसा अंगुल होता है जिसके वीचमें आठ जौं आजाय उन चौवीस अंगुलोंका वुद्धिमान मनुष्योंने कर (हाथ) कहा है ॥ १०१ ॥

सप्तहस्तोन्नतिर्भद्रेह्यष्टहस्तप्रदीर्घता ।
परिणाहोदशकरउदरस्यभवेत्सदा ॥ २ ॥

भाषार्थ–भद्र हाथीकी उंचाई सात हाथकी चौडाई आठ हाथकी–और उदरका विस्तार दश हाथका सदैव रहता है ॥ १०२ ॥

प्रमाणंमंद्रमृगयोर्हस्तहीनंक्रमादतः ।
कथितंदैर्घ्यसाम्यंतुमुनिभिर्भद्रमंद्रयोः ॥ ३

भाषार्थ–मंद्र और मृग नामके हाथी-योंका प्रमाण इससे एक हाथ कम होता है और चौडाईमें भद्र और मंद्रकी साम्यता (वरावरी) ही मुनियोंने कही है ॥ ३ ॥

वृहद्भ्रूगंडभालस्तुधृतशीर्षगतिःसदा ।
गजःश्रेष्ठस्तुसर्वेषांशुभलक्षणसंयुतः ॥४॥

भाषार्थ-जिसकी भृकुटी गंडस्थळ-और मस्तक ये तीनों बडे हों और शिरकी गति-भी जिसकी सदैव अच्छी हो और जो उत्तम २ लक्षणोंसे युक्त हो ऐसा हाथी सब हाथि-योंमें श्रेष्ठ कहा है ॥ ४ ॥

पंचयवांगुलेनैववाजिमानंपृथक्स्मृतं ।
चत्वारिंशांगुलमुखोवाजीयश्चोत्तमोत्तमः५

भाषार्थ-पांच जोंके अंगुलसे घोडोंका प्रमाणभी पृथक् २ कहा है-चालीस अंगुल-का जिसका मुख हो ऐसा जो घोडा वह उत्तमसे उत्तम होता है ॥ ५ ॥

षट्त्रिंशदंगुलमुखोह्युत्तमःपरिकीर्तितः ।
द्वात्रिंशदंगुलमुखोमध्यमःसउदाहृतः॥६॥

भाषार्थ-छतीस अंगुलका जिसका मुख हो वह उत्तम-और वत्तीस अंगुलका जिस-का मुख हो वह मध्यम कहा है ॥ ६ ॥

अष्टाविंशत्यंगुलोयोमुखेनीचःप्रकीर्तितः ।
वाजीनांमुखमानेनसर्वावयवकल्पना ॥७॥

भाषार्थ-जिस घोडेका मुख अठाईस अंगुलका हो वह नीच कहा है और घोडोंके मुखसेही संपूर्ण अवयवोंकी कल्पना होती है कि ॥ ७ ॥

औच्चंतुमुखमानेनत्रिगुणंपरिकीर्तितं ।
शिरोमणिंसमारभ्यपुच्छमूलांतमेवहि॥८॥

भाषार्थ-मुखके प्रमाणसे तिगुनी उंचाई कही है-और शिरकी मणिसे लेकर पूंछके मूल पर्यंत ॥ ८ ॥

तृतीयांशाधिकंदैर्घ्यंमुखमानाच्चतुर्गुणं ।
परिणाहस्तूदरस्यत्रिगुणस्त्र्यंगुलाधिकः॥९

भाषार्थ-तीसरा अंश अधिक (चौगुनी) लंबाई होती है और वह मुखके प्रमाणसे चौगुनी समझनी-और उदरका विस्तार तिगुना और तीन अंगुल होता है ॥ ९ ॥

श्मश्रुहीनमुखःकांतःप्रगल्भोत्तुंगनासिकः ।
दीर्घोद्धतग्रीवमुखोह्रस्वकुक्षिखुरश्रुतिः १०

भाषार्थ-जिसके मुखपर श्मश्रु (वाल) नहीं-सुंदर-प्रगल्भ हो और जिसकी नासि-का उंची हो-जिसकी ग्रीवा और मुख ऊपर को ऊंचे उठे रहते हो और जिसकी कुक्षि छोटी-हो और जिसके खुरोंका शव्द सुन-ता हो ॥ १० ॥

तुरप्रचंडवेगश्चहंसमेघसमस्वनः ।
नातिक्रूरोनातिमृदुर्देवसत्वोमनोरमः ॥११

भाषार्थ-शीघ्र तरमें जिसका वेग प्रचंड हो-हंस और मेघके समान जिसका शव्द हो और जो न अत्यंत क्रोधी और न अत्यंत कोमल हो और जो देवके समान बलवान् हो और सुंदर हो ॥ ११ ॥

सुकांतिगंधवर्णश्चसद्गुणभ्रमरान्वितः ।
भ्रमतस्तुद्विधावर्त्तोवामदक्षिणभेदतः ॥१२

भाषार्थ-जिसकी कांति-गंध वर्ण ये सुंदर हों और उत्तम गुण और भोंवरी हों-वाम और दक्षिणकी तरफ भ्रमणके समय जिसके दोप्रकार आवर्त (भोंवरी) पडें ॥ १२ ॥

पूर्णोऽपूर्णःपुनर्द्वेधादीर्घोह्रस्वस्तथैवच ।
स्त्रीपुंदेहेवामदक्षौयथोक्तफलदौक्रमात् १३

भाषार्थ-और पूर्ण और अपूर्ण-और तिसी प्रकार दीर्घ और ह्रस्व भोंवरी हैं और घोडी और घोडाके देहमें वाई और दाहिनी तर-फ क्रमसे फल दायक होते हैं ॥ १३ ॥

नतथाविपरीतौतुशुभाशुभफलप्रदौ ।
नीचोर्ध्वतिर्यङ्मुखतःफलभेदोभवेत्तयोः

भाषार्थ-और इससे विपरीत शुभ और अशुभ फलदायक नहींहोते-नीचे-ऊर्ध्व और तिरछे मुखसे उनके फलका भेद हो जाता है ॥ १४ ॥

शंखचक्रगदापद्मवेदिस्वस्तिकसन्निभः।
प्रासादतोरणधनुःसुपूर्णकलशाकृतिः १५॥

भाषार्थ-शंख-चक्र-गदा-पद्म-वेदी-स्वस्तिक (सतिया) इनके समान अथवा मंदिर-तोरण-धनुष्य-पूर्णकलश-इनके तुल्य जिसका आकार हो ॥ १५ ॥

स्वस्तिकस्रङ्मीनखड्ग श्रीवत्साभःशुभो भ्रमः।
नासिकाग्रेललाटेचशंखेकंठेचमस्तके॥१६

भाषार्थ-स्वस्तिक-माला-मीन-खड्ग-श्रीवत्स इनकी कांतिके समान जो हो वह भौंवरी शुभ है-नासिकाके अग्रभागमें लटारमे शंखमें कंठमें और मस्तकमें ॥ १६ ॥

आवर्तोजायतेयेषांतेधन्यास्तुरगोत्तमाः।
हृदिस्कंधेगलेचैवकटिदेशेतथैवच॥ १७ ॥

भाषार्थ-जिन वाजियोंके आवर्त (भ्रमर) हो वे घोडोंमें उत्तम धन्य हैं-हृदयमें स्कंधेपर-गलेमें और कमरमें ॥ १७ ॥

नाभौकुक्षौचपार्श्वाग्रेमध्यमाःसंप्रकीर्तिताः।
ललाटेयस्यचावर्तद्वितयस्यसमुद्भवः ॥१८

भाषार्थ-और नाभि-कुक्षि और पार्श्वोंका अग्रभाग इनमें जिनके आवर्त हो वे घोडे मध्यम कहे हैं-जिसके ललाटमें दो आवर्त हों ॥ १८ ॥

मस्तकेहतृतीयस्यपूर्णहर्षोयमुत्तमः।
पृष्ठवंशेयदावर्तोयस्यैकःसंप्रजायते ॥१९॥

भाषार्थ-और मस्तकमें तीन आवर्त हों और आनंदसे पूर्ण हो वह घोडा उत्तम होता है-जिसकी पीठके वांसमें एक आवर्त हो१९

संकरोत्यश्वसंघातान्स्वामिनःसूर्यसंज्ञकः।
त्रयोयस्यललाटस्थाआवर्तास्तिर्यगुत्तराः

भाषार्थ-वह सूर्य नामका घोडा अपने स्वामीके यहां घोडोंके समूहोंके इकट्ठे करता है-और जिसके-ललाटमें तीन आवर्त हों और वामकी तरफका आवर्त तिरछा हो ॥ २० ॥

त्रिकुटःसपरिज्ञेयोवाजिवृद्धिकरःसदा।
एवमेवप्रकारेणत्रयोग्रीवांसमाश्रिताः ॥२१

भाषार्थ-उस घोडेको त्रिकूट कहते हैं और वहभी सदैव घोडोंकी वृद्धि करनेवाला होता है-इसी प्रकार तीन ग्रीवामें २१

समावर्ताःसवाजीशोजायतेनृपमंदिरे।
कपोलस्थौयदावर्तौदृश्यतेयस्यवाजिनः२२

भाषार्थ-उत्तम आवर्त होय तो वह घोडों का स्वामी वाजी राजाके मंदिरमेंही होता है जिस घोडेके कपोलोंपर दो आवर्त दीखे २२

यशोवृद्धिकरौप्रोक्तौराज्यवृद्धिकरौमतौ।
एकोवायकपोलस्थौयस्यावर्त्तःप्रदृश्यते२३

भाषार्थ-वे दोनों आवर्त यश और राज्यकी वृद्धि करनेवाले कहे हैं अथवा जिसके कपोलपर एकही आवर्त दीखे ॥ २३ ॥

शर्वनामासविख्यातःसइच्छेत्स्वामिनाशनं
गंडसंस्थोयदावर्तोवाजिनोदक्षिणाश्रितः॥

भाषार्थ-उस घोडेका नाम शर्वा विख्यात है और वह अपने स्वामीका नाश करता है-जिस घोडेके दक्षिण गंडस्थलपर आवर्त हो ॥ २४ ॥

संकरोतिमहासौख्यंस्वामिनःशिवसंज्ञकः।
तद्वद्वामाश्रितःक्रूरःप्रकरोतिधनक्षयम्२५

भाषार्थ-शिवनामक वह घोडा अपने स्वामीको महान् सुख करता है और जिसके बांये गंडस्थलमें आवर्त हो क्रूरनामक वह घोडा स्वामीके धनका नाश करता है॥

इंद्राभौतावुभौशस्तौनृपराजविवृद्धिदौ।
कर्णमूलेयदावर्तौस्तनमध्येतथापरौ॥२६॥

भाषार्थ-यदि ये दोनों गंडोंके आवर्त इंद्रके समान होंय तो उत्तम राजाकी वृद्धिके देनेवाले होतेहैं-जिसके कान और स्तनोंके मध्यमें दो २ आवर्त हों॥ २६॥

विजयाख्यावुभौतौतुयुद्धकालेयशप्रदौ।
स्कंधपार्श्वेयदावर्तौसभवेत्पद्मलक्षणः२७॥

भाषार्थ-विजय नामके वे दोनों घोडे युद्धके समय यशके दाता होते हैं-स्कंध और पार्श्वोंमें जो आवर्त हो उसको पद्म लक्षण कहते हैं॥ २७॥

करोतिविविधांपद्मांस्वामिनःसततंसुखं।
नासामध्येयदावर्तएकोवायदिवात्रयम् २८

भाषार्थ-वह घोडा अपने स्वामीके यहां नानाप्रकारकी लक्ष्मी और निरंतर सुख करताहै-जिसकी नाकमें एक वा तीन आवर्त हों॥ २८॥

चक्रवर्तीसविज्ञेयोवाजीभूपालसंज्ञकः।
कंठेयस्यमहावर्तोएकःश्रेष्ठःप्रजायते॥२९

भाषार्थ-उस घोडेका नाम भूपाल होता है और वह राजा चक्रवर्ती जानना-जिसके कंठमें एक उत्तम आवर्त हो॥ २९॥

चिंतामणिःसविज्ञेयश्चिंतितार्थसुखप्रदः॥
शुक्राख्यौभालकंबुस्थौआवर्तौवृद्धिकीर्तिदौ

भाषार्थ-उस घोडेको चिंतामणि कहते हैं वह घोडा चिंतित अर्थ और सुख देनेवाला होताहै-यदि मस्तक और ग्रीवामें सपेद आवर्त होंय तो वृद्धि और कीर्तिके दाता होते हैं॥ ३०॥

यस्यावर्तौवक्त्रगतौकुक्ष्यंतेवाजिनोयदि।
सनूनंमृत्युमाप्नोतिकुर्याद्वास्वामिनाशनम्॥

भाषार्थ-जिस घोडेकी कुक्षिके अंतमें तिरछे आवर्त हों वह घोडा या तो निश्चय मर जाय अथवा अपने स्वामीका नाश करे ३१

जानुसंस्थाअथावर्ताःप्रवासक्लेशकारकाः।
वाजिमेढ्रेयदावर्तोविजयश्रीविनाशनः ३२

भाषार्थ-जिसके गोडोंपर तीन आवर्त हों वह घोडा प्रवास (परदेश) में क्लेशकारक होता है-यदि घोडेके लिंगमें आवर्त होय तो विजय और श्रीका नाश करता है॥ ३२॥

त्रिकसंस्थोयदावर्तस्त्रिवर्गस्यप्रणाशनः।
पुच्छमूलेयदावर्तोधूमकेतुरनर्थकृत्॥३३॥

भाषार्थ-जिसके त्रिकमें आवर्त हो वह धर्मअर्थकामका नाश करता है यदि पूछके मूलमें आवर्त हो धूमकेतु वह घोडा अनर्थ को करता है॥ ३३॥

गुह्यपुच्छत्रिकावर्तीसकृतांतोभयप्रदः।
मध्यदंडात्पार्श्वगमासैवशतपदीकचैः ३४॥

भाषार्थ-जिसकी गुदा पूंछमें तीन आवर्त होंय तो कालरूप वह घोडा भयका दाता होता है-जिस घोडेकी शतपदी (पूंछ) के बाल मध्य दंडसे पार्श्वोंकी तरफ जांय ३४

अतिदुष्टांगुष्ठमितादीर्घाऽदुष्टायथायथा।
अश्रुपाताहनुगंडहृद्गलप्रोथबस्तिषु॥३५॥

भाषार्थ-और वह अंगूठेके समान पतली होय तो अत्यंत दुष्ट होती है और जितनी२

मोटी हो इतनीही उत्तम होती है-जिसकी ठोडी-गंडस्थल-हृदय-गला-प्रोथ (पेड़) और वस्तिपर आंसू गिरें ॥ ३५ ॥

कटिशंखजानुमुष्ककककुन्नाभिगुदेपुच ।
दक्षकुक्षौदक्षपादेत्वशुभोभ्रमरःसदा॥ ३६॥

भाषार्थ-कमर -शंख-गोंडे-अंडकोश -डांट-नाभि-गुदा -दक्षिणकोख -दक्षिणपाद इनमें भ्रमर होयतो सदैव अशुभ कहा है ३६

गलमध्येपृष्ठमध्येउत्तरोष्ठेधरेतथा ।
कर्णनेत्रांतरेवामकुक्षौचैवतुपार्श्वयोः॥ ३७॥

भाषार्थ-गलेमें और पीठ-और दोनों ओष्ठ-कान-नेत्र-और वांईकोख और दोनों पार्श्व-इनमें ॥ ३७ ॥

ऊरूपुचशुभावर्तौवाजिनामग्रपादयोः ।
आवर्तौसांतरौभालेसूर्यचंद्रौशुभप्रदौ ॥ ३८

भाषार्थ-दोनों ऊरू (जंघा) ओंमें और अगले पैरोंमें जो आवर्त हैं वे शुभ कहे हैं और मस्तकके जो बीचमें खाली आवर्त हैं वे सूर्यचंद्र कहाते हैं और शुभदायक होते हैं ॥ ३८ ॥

मिलितौतौमध्यफलौह्यतिलग्नौतुदुष्फलौ ।
आवर्तत्रितयंभालेशुभंचोर्ध्वंतुसांतरम् ॥३९

भाषार्थ-जो वे दोनों आवर्त आपसमें कुछ मिले होंय तो मध्यमफल और अत्यंत मिले होंय तो बुराफल देते हैं-और मस्तकके ऊपर तीन आवर्त फरकसे होंय तो शुभ होते हैं ॥ ३९ ॥

अशुभंचातिसंलग्नमावर्तद्वितयंतथा ।
त्रिकोणत्रितयंभालेआवर्तानांतुदुःखदम् ॥

भाषार्थ-और अत्यंत मिले हुये अशुभ होते हैं और ऐसे ही दो आवर्त समझने और मस्तकमें तिकोने तीन आवर्त दुःखदायी होते हैं ॥ ४० ॥

गलमध्येशुभस्त्वेकःसर्वाशुभनिवारणः ।
अधोमुखःशुभःपादेभालेचोर्ध्वमुखोभ्रमः ॥

भाषार्थ-गलेके मध्यमें एक आवर्त संपूर्ण अशुभोंका नाशक होनेसे शुभ होता है और पैरोंमें अधोमुख और मस्तकमें ऊर्ध्वमुख आवर्त शुभ होते हैं ॥ ४१ ॥

नचैवात्यशुभापृष्ठमुखीशतपदीमता ।
मेढ्रस्यपश्चाद्भ्रमरीस्तनीवाजीसचाशुभः ॥

भाषार्थ-और पीछेको मुखवाली पूंछ अत्यंत अशुभ नहीं कही-जिसके लिंगके पीछे और स्तनोंमें भौंरी हो वह घोडाभी अशुभ होता है ॥ ४२ ॥

भ्रमःकर्णसमीपेतुशृंगीचैकःसनिंदितः ।
ग्रीवोर्ध्वपार्श्वभ्रमरीह्येकरश्मिःसचैकतः ४३

भाषार्थ-जो कानोंके समीप एक सींगवाला आवर्त होय तो वहभी निंदित है ग्रीवाके ऊपरके पार्श्वमें जो एक रस्सीकी भौंरी हो और वह एक तरफ होय तो निंदित होती है ४३ ॥

पादोर्ध्वमुखभ्रमरीकीलोत्पाटीसनिंदितः ॥
शुभाशुभौभ्रमौयस्मिन्सवाजीमध्यमःस्मृतः

भाषार्थ-पैरोंमें जो ऊर्ध्व मुखभौंरी है उसको कीलोत्पाटी कहते हैं और वहभी निंदित होती है-जिस घोडेमें शुभ और अशुभ दोनों आवर्त हों वह घोडा मध्यम है ॥ ४४ ॥

मुखेपत्सुसितःपंचकल्याणोश्वःसदामतः ।
सएवहृदयेस्कंधेपुच्छेश्वेतोष्टमंगलः॥४५॥

भाषार्थ-जिसका मुख और पैर सपेद हों वह घोडा सदैव पंचकल्याण कहा है यदि-वही हृदय-स्कंध-और पुच्छमें सपेद होय तो अष्टमंगल होता है ॥ ४५ ॥

कर्णेश्यामःश्यामकर्णःसर्वतस्त्वेकवर्णभाक्
तत्रापिसर्वतःश्वेतोमध्यःपूज्यःसदैवहि ४६

भाषार्थ-जिसके कर्ण श्यामहों और सब एकही रंगहो वह श्यामकर्ण उसमेंभी जो संपूर्ण श्वेत हो वह मध्यम और सदैव पूजने योग्य होता है ॥ ४६ ॥

वैडूर्यसन्निभेनेत्रेयस्यस्तोजयमंगलः ।
मिश्रवर्णस्त्वेकवर्णःपूज्यःस्यात्सुंदरोयदि

भाषार्थ-जिसके नेत्र वैडूर्य मणिके तुल्य हों वह जयमंगल होता है और जो घोडा अनेक वर्ण हो अथवा एकही वर्ण हो और सुंदरभी होय तो पूजनेयोग्य होता है ॥४७॥

कृष्णपादोहरिर्निंद्यस्तथाश्वेतैकपादपि ।
रुक्षोधूसरवर्णश्चगर्दभाभोपिनिंदितः ४८॥

भाषार्थ-जिस घोडेके पैर काले हों अथवा एकही पैर सपेद होय तो वहभी निंदित होता है और जो रूखा गधेके समान धूसर वर्णकाहो वहभी निंदित होता है॥ ४८ ॥

कृष्णतालुःकृष्णजिह्वःकृष्णोष्ठश्चविनिंदितः
सर्वतःकृष्णवर्णोयःपुच्छेश्वेतःसनिंदितः ॥

भाषार्थ-जिसके-तालु-जिह्वा-और ओष्ठ ये सबकाले हों वहभी अत्यंत निंदित होता है और जो सब कृष्णवर्ण और पूंछमें सपेद हो वहभी निंदित हैं ॥ ४९ ॥

उच्चैःपदंन्यासगतिर्द्विपन्याघ्रगतिश्चयः ।
मयूरहंसतित्तीरपारावतगतिश्चयः ॥ ५० ॥

भाषार्थ-जिस घोडेकी गति (चाल) ऊंचे २ पैर उठाकर हो अथवा गैंडा-सिंह-मोर हंस-तित्तिर-और कबूतर इनके समान जिसकी गति हो ॥ ५० ॥

मृगोष्ट्रवानरगतिःपूज्योवृषगतिर्हयः ॥
अतिभुक्तोतिपीतोऽपियथासादीनपीडयेत्

भाषार्थ-मृग-ऊंट-बन्दर-अथवा बैल इनके समान जिसकी गति हो वह घोडा पूजने योग्य होता है-जो घोडा अत्यंत भूखा वा अत्यंत प्यासा अपने सवारको पीडा न दे ५१

श्रेष्ठागतिस्तुसाज्ञेयासश्रेष्ठस्तुरगोमतः ।
सुश्वेतभालतिलकोविद्धोवर्णांतरेणच ५२॥

भाषार्थ-वह गति उत्तम जाननी और वही घोडा श्रेष्ठ माना है जिस घोडेके मस्तकका सपेद तिलक दूसरे रंगसे विंधाहो अर्थात् उसमें कोई अन्य वर्णभी हो ॥५२॥

सवाजीदलभंजीतुयस्यतस्यातिनिंदितः ।
संहन्याद्वर्णजान्दोषान्स्निग्धवर्णोभवेद्यदि

भाषार्थ-वह घोडा सेनाके नष्ट करनेवाला होता है और जिसका वह घोडा हो वहभी अत्यंत निंदित होता है-यदि घोडेका वर्ण स्निग्ध (चिकना) होय तो वर्णके जितने दोष हैं उन सबको नष्ट करता है ॥ ५३ ॥

बलाधिकश्चसुगतिर्महान्सर्वांगसुंदरः ।
नातिक्रूरःसदापूज्योभ्रमाद्यैरपिदूषितः५४

भाषार्थ-जिस घोडेमें बल अधिक हो और अच्छी गति हो और मोटा और सब अंगोंमें सुंदरहो जो अत्यंत क्रोधी नहो वह चाहै आवर्त आदिसे दूषितभी हो तोभी सदैव पूजनेयोग्य है ॥ ५४ ॥

वाजिनामत्यवहनात्सुदोषाःसंभवंतिहि ।
कृशोव्याधिपरीतांगोजायतेत्यंतवाहनात्॥

भाषार्थ-घोडोंसे जो सवारी न लेना उससे बहुतसे दोष होते हैं-जो घोडा दुबला-रोगी अत्यंत जोतनेसे हो जाय ॥ ५५ ॥

अवाहितोभवेन्मंदःसर्वकर्मसुनिंदितः ।
अपोषितोभवेत्क्षीणोरोगीचात्यंतपोषणात् ।

भाषार्थ-और विना जोते मंद होजाय वह सब कामोंमें निंदित होता है-और जो विना पोषण (खवाये) क्षीण (थकना) होजाय और अत्यंत पोषणसे रोगी होजाय ॥ ५६ ॥

सुगतिर्दुर्गतिर्नित्यंशिक्षकस्यगुणागुणैः ।
जात्वधश्चलपादस्यादृजुकायःस्थिरासनः

भाषार्थ-और जिसकी शिक्षकके गुण और अवगुनसे सुगति और दुर्गति होजाय-और गोडेके नीचे जिसके पैर हलते हों और काया कोमल और आसन स्थिरहो ॥ ५७ ॥

तुलाधृतखलीनःस्यात्कालेदेशेसुशिक्षकः ।
मृदुनानातितीक्ष्णेनकशाघातेनताडयेत् ॥

भाषार्थ-जो समय और देशके अनुसार एकसी खलीन (लगाम) को धारण करे वह अच्छा शिक्षक होता है जो कशा (कोरडा) कोमल हो और अतिकठिन नहो उससेही घोडेकी ताडना करै ॥५८॥

ताडयेन्मध्यघातेनस्थानेस्वश्वंसुशिक्षकः ।
हेषितेकक्षयोर्हन्यात्स्खलितेपक्षयोस्तथा ॥

भाषार्थ-उत्तम शिक्षा देनेवाला श्रेष्ठघोडे-को मध्यमरीतिसे उचित अंगमें ताडना दे-हिंसनेमें कोख और गिरनेके समय पंखो-में ताडना दे ॥ ५९ ॥

भीतिकर्णांतरेग्रैवग्रीवासुन्मार्गगामिनि ।
कुपितेबाहुमध्येचभ्रांतचित्तेतथोदरे ॥ ६०

भाषार्थ-डरनेपर कानोंमें कुमार्गचलनेपर ग्रीवामें क्रोध होनेपर भुजाके मध्यमें-चित्तके भ्रम होनेपर पेटमें घोडेको ताडना दे ॥६०॥

अश्वःसंताड्यतेप्राज्ञैर्नान्यस्थानेषुकर्हिचित्
अथवाहेषितेस्कंधेस्खलितेजघनांतरम् ६१

भाषार्थ-बुद्धिमान् मनुष्य किसी अन्य स्थानमें कभीभी ताडनानदे अथवा हिंसने पर स्कंधोंमें और पडनेपर जंघाओंके मध्यमें ताडना दे ॥ ६१ ॥

भीतेवक्षस्थलंहन्याद्वक्त्रमुन्मार्गगामिनि ।
कुपितेपुच्छसंध्येतेभ्रांतेजानुद्वयंतथा ६२॥

भाषार्थ-घोडेके डरजानेपर छातीपर-कुमार्ग चलनेपर मुखमें-कोप होनेपर पूछ-के समीपमें और भ्रम होनेपर दोनों गोडों-में ताडनादे ॥ ६२ ॥

नासकृत्ताडयेदश्वमकालेचविदेशके ।
अकालास्थानघातेनवाजीदोषांस्तनोतिच

भाषार्थ-वारंवार और कुसमयमें और कोमल देशमें अश्वको ताडना नदे क्योंकि कुसमय और विदेशकी ताडना देने-पर घोडा दोषोंको करता है अर्थात् अपने सवारके दावमें न रहता है ॥ ६३ ॥

तावद्भवंतितेदोषायावज्जीवत्यसौहयः ।
दुष्टंदंडेनाभिभवेन्नारोहेद्दंडवर्जितः ॥६४॥

भाषार्थ-और वे दोष तबतक रहते हैं जबतक यह घोडा जीवता है-दुष्ट घोडेका दंडसे तिरस्कार करै और दंडके विना सवारभी नहो ॥ ६४ ॥

गच्छेत्षोडशमात्राभिरुत्तमोश्वोधनुःशतं ।
यथायथान्यूनगतिरश्वोहीनस्तथातथा॥६५

भाषार्थ-जो घोडा सोलह मात्राओंके उच्चारण कालमें सौ धनुष चलै वह उत्तम होता है इससे जितनी २ न्यूनगति जिसकी हो उतना २ ही वह हीन होता है ॥ ६५ ॥

सहस्रचापप्रमितंमंडलंगतिशिक्षणे ।
उत्तमंवाजिनोमध्यंनीचमर्धंतदर्धकं॥६६॥

भाषार्थ-और गतिकी शिक्षा देनेके समय सहस्र मंडल धनुषकी गतिका प्रमाण उत्तम घोडेका है उससे आधी गतिवाला मध्यम और उससेभी आधी गति जिसकी हो वह घोडा नीच होता है ॥६६॥

अल्पंशतधनुःप्रोक्तमत्यल्पंचतदर्धकं ।
शतयोजनगंतास्याद्दिनैकेनयथाहयः ६७॥

भाषार्थ-सौ धनुषकी गति अल्प और पचासधनुषकी गति अत्यल्प होती है जैसे घोडा एक दिनमें सौ योजन चलनेवाला होजाय ॥ ६७ ॥

गतिंसंवर्धयेन्नित्यंतथामंडलविक्रमैः ।
सायंप्रातश्चहेमंतेशिशिरेकुसुमागमे ॥६८॥

भाषार्थ-इस प्रकार नित्य गतिको मंडल और बढावे विक्रम (चाल) से हेमंत (जाडा) ऋतुमें सायंकाल और प्रातः-काल-और शिशिर और वसंत ऋतुमें ६८॥

सायंग्रीष्मेतुशरदिप्रातरश्वंवहेत्सदा ।
वर्षासुनवहेदीषत्तथाविषमभूमिषु॥ ६९ ॥

भाषार्थ-सायंकालको और ग्रीष्म (गरमी) और शरद ऋतुमें प्रातःकालके समय घोडेको नित्य चलावे और वर्षा और विषम भूमिमें कदाचित्भी न चलावे ॥ ६९ ॥

सुगत्याग्निबलंदार्ढ्यमारोग्यंवर्धतेहरेः ।
भारमार्गपरिश्रांतंशनैश्चंक्रामयेद्धयम्७०॥

भाषार्थ-उत्तम गतिसे घोडेकी अग्नि-बल दृढता और आरोग्य बढते हैं और भार और मार्गसे थके हुये घोडेको शनैः २ चलावे (फेरै) ॥ ७० ॥

स्नेहंसंपादयेत्पश्चाच्छर्करासक्तुमिश्रितं ।
हरिमंथाश्चमाषाश्चभक्षणार्थंमकुष्टकान् ७१

भाषार्थ-फिर खांड और सत्तुओंमें मिलाकर घीको खुलावे और चणे और उडद और मठा ये सब घोडेके भक्षणके लिये हित हैं ॥ ७१ ॥

शुष्कानार्द्रांश्चमांसानिसुस्विन्नानिप्रदापयेत्
यद्यत्रस्खलितंगात्रंतत्रदंशंप्रपातयेत् ॥७२

भाषार्थ-सूखे और गीले पके हुये मांसोंकोभी दे जो गात्र घोडेका घाव आदिसे गिर जाय उस जगह मांसको भरदें ॥ ७२

नावतीरितपल्याणंहयंमार्गसमागतं ।
दत्त्वागुडंसलवणंवलसंरक्षणायच ॥ ७३॥

भाषार्थ-जिस घोडेका पलाण नावसे उतारा हो और मार्गसे चलकर आया हो उसको लवण और गुडबलकी रक्षाके लिये देकर ॥ ७३ ॥

गतस्वेदस्यशांतस्यसुरूपमुपातिष्ठतः ।
मुक्तपृष्ठादिबंधस्यखलीनमवतारयेत् ॥७४

भाषार्थ-जब स्वेद (पसीना) शांत होजाय और अपने स्वरूपमें स्थित होजाय और उसकी पीठका बंधन तारकर खलीन (लगाम) को उतार लैं ॥ ७४ ॥

मर्दयित्वातुगात्राणिपांसुमध्येविवर्तयेत् ।
स्नानपानावगाहैश्चततःसम्यक्प्रपोषयेत्॥

भाषार्थ-और गातोंको मलकर ऐसी जगह फैरे जहां धूली हो फिर स्नान-पान और मलकर भली प्रकार पुष्ट करै ॥ ७५ ॥

सर्वदोषहरोश्वानांमद्यजांगलयोरसः ।
शक्त्यासंपादयेत्क्षीरंघृतंवावारिसक्तुकं७६॥

भाषार्थ-मदिरा और जंगलीमांसका रस घोडोंके सब रोगोंको हरता है और यथा शक्ति दूध-घी और जलमिले सत्तुओंको खिलावे ॥ ७६ ॥

अन्नंभुक्त्वाजलंपीत्वातत्क्षणाद्वाहितोहयः ।
उत्पद्यंततदाश्वानांकासश्वासादिकागदाः॥

भाषार्थ–अन्नको खिलाकर और जलको पिलाकर उसी क्षणमें चलायाहुआ जो घोडा उसके कास और श्वास आदि अनेक रोग पैदा होते हैं ॥ ७७ ॥

यावाश्चचणकाःश्रेष्ठामध्यामाषामकुष्टकाः
नीचामसूरामुद्गाश्चभोजनार्थतुवाजिनः ७८

भाषार्थ–घोडेको जौं और चणे श्रेष्ठ और उडद् और मठा मध्यम होते हैं और मसूर और मूंग भोजनके लिये निंदित होते हैं ॥ ७८ ॥

पादैश्चतुर्भिरुत्प्लुत्यमृगवत्साप्लुतागतिः ।
असंवलितपद्भ्यांतुसुव्यक्तंगमनंतुरं ॥ ७९

भाषार्थ–जो घोडा चारों पैरोंसे मृगके समान कूदकर चले वह गति प्लुत होती है और पैरोंको नहीं मिलाकर जो प्रकट रीतिसे चले उस गतिको तुर (वेगवती) कहते हैं ॥ ७९ ॥

धौरीतकंचतज्ज्ञेयंरथसंवाहनेवरं ।
असंवलितपद्भ्यांयोमयूरोद्धृतकंधरः ॥८०

भाषार्थ–जो घोडा रथके ले चलनेमें उत्तम हो उसे धौरितक कहते हैं जो घोडा मिले हुये पैरोंसे कंधरा उठाये ले उसे मयूर कहते हैं ॥ ८० ॥

दोलायितशरीरार्धकायोगच्छतिवाल्गितं ।
गतयःषड्विधाधारास्कंदितंरेचितंप्लुतम् ८१

भाषार्थ–जो घोडा आधे शरीरको हिंडोलेके समान उठाकर चले उसकी गति को वल्गित कहते हैं–और घोडेकी गति छः प्रकारकी होती है–धारा आस्कंदित–रेचित–प्लुत ॥ ८१ ॥

धौरीतकंवल्गितंचतासांलक्ष्मपृथक्पृथक् ।
धारागतिःसाविज्ञेयायातिवेगतरामता॥८२

भाषार्थ–और धौरीतक और वल्गित–उनके लक्षणभी पृथक् २ हैं–जो अत्यंत वेगसे हो वह गति धारा जाननी ॥ ८२ ॥

पार्ष्णितोदातिनुदितोयस्यांभ्रांतोभवेद्धयः।
आकुंचिताग्रपादाभ्यामुत्प्लुत्योत्प्लुत्ययागतिः

भाषार्थ–पार्ष्णि (रोडी) के लगानेसे अत्यंत प्रेरित किया घोडा अत्यंत भ्रांत होजाता है–किंचित् झुकडे हुये अगले पैरों से जो कूद २ कर जो गति है ॥ ८३ ॥

आस्कंदिताचसाज्ञेयागतिविद्भिस्तुवाजिनां
ईषदुत्प्लुत्यागमनमखंडरेचितंहितत्॥८४॥

भाषार्थ–उसको घोडोंकी गतिके ज्ञाता आस्कंदित कहते हैं–किंचित् कूदकर जो अखंड गति है उसको रेचित कहते हैं ८४॥

परिणाहोवृषमुखादुदरेतुचतुर्गुणः ।
सककुत्त्रिगुणोच्चस्तुसार्धत्रिगुणदीर्घता८५

भाषार्थ–बैलके मुख विस्तारसे उदरका चौगुना विस्तार होता है और ककुद (ढांठ) सहित तिगुनी ऊंचाई और साढेतीन गुनी लंबाई होती है ॥ ८५ ॥

सप्ततालोवृषःपूज्योगुणैरेभिर्युतोयदि ।
नस्थायीनचवैमंदःसुवोढाह्यंगसुंदरः ॥८६

भाषार्थ–यदि पूर्वोक्त गुणोंसे युक्त होय तो सात तालका बैल पूजने योग्य होता है और जो नस्थायी (खडारहे)हो और न मंद हो और जिसके सब अंग सुंदर हों ॥ ८६ ॥

नातिक्रूरःसुपृष्ठश्चवृषभःश्रेष्ठउच्यते ।
त्रिंशद्योजनगंतावाप्रत्यहंभारवाहकः॥ ८७

भाषार्थ–और जो भारको लेचले जो न अत्यंत क्रूर हो और जिसकी पीठ सुंदर हो वह बैल श्रेष्ठ कहा है और प्रतिदिन तीस योजन भारको लेकर चलसके ॥ ८७ ॥

नवतालश्चसुदृढःसुमुखोष्ट्रःप्रशस्यते ।
शतमायुर्मनुष्याणांगजानांपरमंस्मृतं॥८८

भाषार्थ–नो ताल जिसका प्रमाण हो और मुख सुंदर हो ऐसा ऊंठ श्रेष्ठ कहा है–मनुष्य और हाथियोंकी अवस्था सौ वर्षकी परम कही है ॥ ८८ ॥

मनुष्यगजयोर्बाल्यंयावद्विंशतिवत्सरं ।
नृणांहिमध्यमंयावत्षष्टिवर्षवयःस्मृतं॥ ८९

भाषार्थ–मनुष्य और हाथीकी बाल्य अवस्था वीस वर्षतक होती है और मनुष्योंकी मध्यम अवस्था साठवर्षतक कही है॥८९॥

अशीतिवत्सरंयावद्गजस्यमध्यमंवयः ।
चतुस्त्रिंशत्तुवर्षाणामश्वस्यायुःपरंस्मृतम् ॥

भाषार्थ–अस्सी वर्षतक हाथीकी मध्यम अवस्था होती है चोतीस वर्षकी अवस्था घोडेकी परम पूरी होती है ॥ ९० ॥

पंचविंशतिवर्षंहिपरमायुर्वृषोष्ट्रयोः ।
बाल्यमश्ववृषोष्ट्राणांपंचसंवत्सरंमतं॥९१॥

भाषार्थ–बैल–और ऊंटकी पूरी अवस्था पच्चीस वर्षकी होती है और घोडा बैल ऊंट इनकी बाल्य अवस्था पांच वर्षकी कही है९१

मध्यंयावत्षोडशाब्दंवार्धक्यंतुततःपरं ।
दंतानामुद्गमैर्वर्णैरायुर्ज्ञेयंवृषाश्वयोः॥९२॥

भाषार्थ–सोलह वर्षतक मध्यम आयु और उससे परे वृद्ध अवस्था होती है और दांतोंके निकसने और वर्ण (आकार) से बैल, और घोडेकी अवस्था जाननी॥९२॥

अश्वस्यषट्सितादंताःप्रथमाब्देभवंतिहि ।
कृष्णलोहितवर्णास्तुद्वितीयेब्देह्यधोगताः॥

भाषार्थ–घोडेके छःदांत सपेद पहिले वर्षमें और दूसरे वर्षमें काले और लाल वर्णके और नीचेकी तरफही होते हैं॥९३॥

तृतीयेब्देतुसंदंशौक्रमात्कृष्णौपडब्दतः ।
नवमाब्दात्क्रमात्पीतौसितौद्वादशाब्दतः

भाषार्थ–तीसरे वर्षमें क्रमसे वरावर हो जाते हैं और छठे वर्ष काले हो जाते हैं और नवे वर्षमें पीले और बारहमें वर्षमें सपेद हो जाते हैं ॥ ९४ ॥

दशपंचाब्दतस्तौतुकाचाभौक्रमतःस्मृतौ ।
अष्टादशाब्दतस्तौहिमध्वाभौभवतःक्रमात्

भाषार्थ–और पंद्रहमें वर्षमें वे दोनों दांत काचके समान और अठारहमें वर्षमें मधु(सहत) के समान क्रमसे होजाते हैं ॥९५॥

शंखाभौचैकविंशाब्दाच्चतुर्विंशाब्दतःसदा ।
छिद्रंसंचलनंपातोदंतानांचत्रिकेत्रिके ॥९६

भाषार्थ–इक्कीसमें वर्षमें शंखके समान हो जाते है और चोवीस वर्षसे तीसरे २ वर्षमें दांतोंमें छेद हिलना और पडना होने लगता है ॥ ९६ ॥

प्रोथेसवलयास्तिस्रःपूर्णायुर्यस्यवाजिनः ।
यथायथातुहीनास्ताहीनमायुस्तथातथा ॥

भाषार्थ–जिस घोडेकी नाकके आगे तीन त्रविली होय उसकी पूर्ण अवस्था होती है और जैसी २ त्रविली कम होय उतनीही कम होती है ॥ ९७ ॥

जानुस्थातात्वोष्ठवाद्योधूतपृष्ठोजलासनः ।
गतिमध्यासनःपृष्ठपातीपश्चाद्गमोर्ध्वपात् ॥

भाषार्थ–गोडेसे जो घोडा खडा होय और होठ जिसके वजे पीठ कंपे जलमें बैठ

जाय गति जिसकी मध्यम हो पीठ जिसकी लगती होय पीछेकू हटता होय ऊपरकू पैर उठाता होय और ॥ ९८ ॥

सर्पजिव्हश्वर्क्षकांतिर्भीरुरश्वोतिनिंदितः ।
सच्छिद्रभालतिलकीनिंद्यआश्रयकृत्तथा ॥

भाषार्थ–सापके समान जिव्हा और रीछकीसी कांति डरपोका होय ऐसा घोडा अत्यंत निंदित होता है जिसके मस्तकके तिलकमें छिद्र होय और जो ढीला और आश्रय चाहता होय वह घोडाभी निंदित होता है९९

वृषस्याष्टौसितादंताश्चतुर्थेब्देऽखिलाःस्मृता
द्वावंत्यौपतितोत्पन्नौपंचमेब्देहितस्यवै ॥

भाषार्थ–बैलके दांत चौथे वर्षमें आठ और सपेद होते हैं और पांचवे वर्षमें पिछले दो टूटकर पैदा होते हैं ॥ १००० ॥

षष्ठेतूपांत्यौभवतःसप्तमेतत्समीपगौ ।
अष्टमेपतितोत्पन्नौमध्यमौदशनौखलु॥१॥

भाषार्थ–और उनके पासके दो दांत छठे वर्षमें और उनकेभी पासके दो दांत सातवे वर्षमें और बीचके दोनों आठवे वर्षमें गिरकर दुबारा पैदा होते हैं ॥ १०१ ॥

कृष्णपीतासितारक्तशंखच्छायौद्विकेद्विके ।
क्रमादब्देचभवतश्चलनंपतनंततः ॥ २ ॥

भाषार्थ–और दो दो वर्षके अंतरसे दांतोंकी कांति काली पीली–सपेद–लाल–और शंखके समान हो जाती है और उसके वाद दांतोका हिलना और पडना होने लगता है ॥ १००२ ॥

उष्ट्रस्योक्तप्रकारेणवयोज्ञानंतुवाभवेत् ।
प्रेरकाऽऽकर्षकमुखोंऽकुशोगजविनिग्रहे ३॥

भाषार्थ–ऊंटकीभी अवस्थाका ज्ञान पूर्वोक्त प्रकारसे होता है–हाथीकू शिक्षा देनेके लिये ऐसा अंकुश होय जिसका मुख तिरछा होय और जो घुसिसके ॥ ३ ॥

हास्तिपकैर्गजस्तेनविनेयःसुगमोयदि ।
खालीनस्योर्ध्वखंडौद्वौपार्श्वगौद्वादशांगुलौ

भाषार्थ–उस अंकुशसे भली प्रकार चलनेके लिये पीलवान् हाथीको शिक्षादे खलीन (लगाम) के ऊपर लोखंडके दोनों बाजू बारह २ अंगुलके होते हैं ॥ ४ ॥

तत्पार्श्वांतर्गताभ्यांतुसुदृढाभ्यांतथैवच ।
वारकाकर्षखंडाभ्यांरज्ज्वर्थवलयैर्युतौ ५॥

भाषार्थ–और वे दोनों ऐसे होय जिनके पासमें लगे हुये और वडे दृढ हटाने और खीचनेके खंडलगे होय और रस्सीको डोरभी लगी होय ॥ ५ ॥

एवंविधखलीनेनवशीकुर्यात्तुवाजिनं ।
नासिकाकर्षरज्ज्वातुवृषोष्ट्रंविनयेद्वशं॥६॥

भाषार्थ–ऐसे खलीनसे घोडेको वसमें करै और नासिकामें लगी हुई खीचनेकी रस्सीसे वैल और ऊंटको वसमें करै ॥ ६॥

तीक्ष्णाग्रकःसप्तफालःस्याद्देषांमलशोधने ।
सुताडनैर्विनेयाहिमनुष्यैःपशवःसदा ॥७॥

भाषार्थ–और इनकी मलशुद्धिके लिये तीखे अग्रवाला सात फालोंकी दंताली करना मनुष्य पशुओंको सदैव भली प्रकार ताडनासे शिक्षादे ॥ ७ ॥

सैनिकास्तुविशेषेणनतेवैधनदंडतः ।
अनूपेतुवृषाश्वानांगजोष्ट्राणांतुजांगले ॥८

भाषार्थ–और सेनाके मनुष्योंको तो विशेष कर ताडनासे शिक्षित करै और घन दंडसे नही वैल और घोडोंको जलवाले देशमें हाथी और ऊंटोंको जंगलमें ॥ ८ ॥

साधारणेपदातीनांनिवेशाद्रक्षणंभवेत् ।
शतंशतंयोजनांतेसैन्यंराष्ट्रेनियोजयेत् ॥९

भाषार्थ-और पदाति मनुष्योंको साधारण देशमें निवास करनेसे रक्षा होती है राजा अपने राज्यमें योजनके अंतर पर सोसो सेनाको नियुक्त करै अर्थात् छावनी डाले ॥ ९॥

गजोष्ट्रवृषभाश्वाःप्राक्श्रेष्ठाःसंभारवाहने ।
सर्वेभ्यःशकटाःश्रेष्ठावर्षाकालंविनास्मृताः

भाषार्थ-हाथी-ऊंट-बैल-घोडे-इनमें पहिला २ बोझ लेचलनेमें श्रेष्ठ होता है और वर्षाके समयको छोडकर सबसे उत्तम बोझलेचलनेमें शकट (गाडी) होते हैं ॥ १० ॥

नचाल्पसाधनोगच्छेदपिजेतुमरिंलघुं ।
महतात्यंतसाध्यस्तुबलेनैवसुबुद्धियुक् ॥

भाषार्थ-थोडे सामानवाला राजा छोटेभी शत्रुके जीतनेके लिये गमन न करै वा बुद्धिमान् मनुष्य बडी सेनासे शत्रुओंके अंतको प्राप्त होता है ॥ ११ ॥

अशिक्षितमसारंचसाद्यस्कंबलवच्चतत् ।
युद्धंविनान्यकार्येषुयोजयेन्मतिमान्सदा ॥

भाषार्थ-और बुद्धिमान् राजा ऐसी सेनाको युद्धसे भिन्न कार्योंमें नियुक्त करै जो अशिक्षित, असार, साद्यस्क, (नवीन) बलवान् होय ॥ १२ ॥

विकर्तुंयततेऽल्पेपिप्राप्तेप्राणात्ययेऽनिशं ।
नपुनःकिंतुबलवान्विकारकरणक्षमः ॥ १३

भाषार्थ-छोटाभी शत्रु प्राणोंका नाश होना देखकर विरोध करनेके लिये जब यत्न करता है तो बलवान् मनुष्य विकार करनेको क्यों न समर्थ होगा ॥ १३ ॥

अपिबहुबलोऽशूरोनस्थातुंक्षमतेरणे ।
किमल्पसाधनाच्छूरःस्थातुंशक्तोऽरिणासमं

भाषार्थ-अशूर (कायर) भी मनुष्य अधिक सेना होने पर संग्राममें टिकनेको समर्थ नहीं और अल्प सामनावाला शूर शत्रुके संग टिकनेको समर्थ क्या हो सकता है अर्थात् नहीं हो सकता ॥ १४ ॥

सुसिद्धाल्पबलःशूरोविजेतुंक्षमतेरिपुं ।
महान्सुसिद्धबलयुक्छूरःकिन्नविजेष्यति ॥

भाषार्थ-भली प्रकार सन्नद्ध थोडीभी सेनावाला शूरवीर शत्रुके जीतनेको समर्थ होता है और भलीप्रकार सन्नद्ध सेनावाला और महान् शूरवीर शत्रुकी सेनाको क्यों नहीं जीतेगा ॥ १५ ॥

मौलशिक्षितसारेणगच्छेद्राजारणेरिपुं ।
प्राणात्ययेपिमौलंनस्वामिनंत्यक्तुमिच्छति

भाषार्थ-मौल (पुस्तेनीनोकर) और सखी सेनाको लेकर राजा रणमें शत्रुपर चढे क्योंकि मौल सेना प्राणोंके नाश समयमंभी अपने स्वामीको त्यागना नहीं चाहती१६

वाग्दंडपरुषेणैवभृतिह्रासेनभीतितः ।
नित्यंप्रवासायासाभ्यांभेदोवश्यंप्रजायते ॥

भाषार्थ-कटु वचन और भृति (नोकरी) की न्यूनता करनेके भयसे और प्रतिदिन परदेशमें भेजने और परिश्रमसे सेनाका अवश्य भेद (फटना) हो जाता है ॥१७॥

बलंयस्यतुसंभिन्नंमनागपिजयःकुतः ।
शत्रोःस्वल्पापिसेनायाअतोभेदंविचिंतयेत्

भाषार्थ-जिस राजाकी थोडीही सेना भिन्न होगई होय उसकी जय कहां-इससे शत्रुके थोडीभी सेनाके भेदकी चिंता करै ॥ १८ ॥

यथाहिशत्रुसेनायाभेदोवश्यंभवेत्तथा ।
कौटिल्येनप्रदानेनद्राक्कुर्यान्नृपतिःसदा १९

भाषार्थ–जैसी शत्रुकी सेनाका अवश्य भेद होय तिसप्रकार कुटिलाई और द्रव्यके देनेसे राजा शीघ्र आचरण करै ॥ १९ ॥

सेवयाऽत्यंतप्रवलंनत्याचारिंप्रसाधयेत् ॥
प्रवलंमानदानाभ्यांयुद्धैर्हीनबलंतथा २०॥

भाषार्थ–अत्यंत प्रवल शत्रुको सेवा और नाति (नवना) से साधे और प्रवलको मान और दानसे और हीन वलको युद्धसे सिद्ध करे ॥ २० ॥

मैत्र्याजयेत्समवलंभेदैःसर्वान्वशंनयेत् ।
शत्रुसंसाधनोपायोनान्यःसुवलभेदतः २१

भाषार्थ–समान वलवाले शत्रुको मित्रतासे जीते और सव प्रकारके शत्रुओंको भेदोंसे वसमें करे सेनाके भलीप्रकार भेदसे इतर शत्रुओंके जीतनेका उपाय नहीं है ॥ २१ ॥

तावत्परोनीतिमान्स्याद्यावत्सुवलवान्स्वयं
मित्रंतावच्चभवतिपुष्टाग्नेःपवनोयथा ॥२२॥

भाषार्थ–इतने राजा दृढ वलवान् रहे इतने नीतिमें तत्पर रहे और इतनेही मित्र होता है जैसे प्रवल अग्निका पवन ॥ २२ ॥

त्यक्तंरिपुवलंधार्यंनसमूहसमीपतः ।
पृथङ्नियोजयेत्प्राग्वायुद्धार्थंकल्पयेच्चतत्

भाषार्थ–शत्रुकी त्यागी हुई सेनाके समूहको अपने समीप न रक्खै यातो उसे अपनी सेनासे पृथक् काममें लगावे अथवा सबसे पहिले युद्धमें नियुक्त करै ॥ २३ ॥

मैत्र्यमारारपृष्ठभागेपार्श्वयोर्वाबलंन्यसेत् ।
अस्यतेक्षिप्यतेयत्तुमंत्रयंत्राग्निभिश्चतत् २४

भाषार्थ–मित्रकी सेनाको अपने समीप पीठके भागमें अथवा पार्श्व (आसपास) भागोंमें रक्खें जो मंत्र यंत्र अग्नि इन तीनोंसे चलाया जाय उसे ॥ २४ ॥

अस्त्रंतदन्यतःशस्त्रमसिकुंतादिकंचयत् ।
अस्त्रंतुद्विविधंज्ञेयंनालिकंमांत्रिकंतथा॥२५

भाषार्थ–अस्त्र कहते हैं उससे जो भिन्न तलवार भाला आदि हैं उनको शस्त्र कहते हैं अस्त्र दो प्रकार के होता हैं १ नालिक २ मांत्रिक ॥ २५ ॥

यदातुमांत्रिकंनास्तिनालिकंतत्रधारयेत् ।
सहशस्त्रेणनृपतिर्विजयार्थंतुसर्वदा ॥२६॥

भाषार्थ–जो मांत्रिक अस्त्र न होय तो नालिक अस्त्रको शस्त्र सहित राजा विजयके लिये सदैव धारण करै ॥ २६ ॥

लघुदीर्घाकारधाराभेदैःशस्त्रास्त्रनामकं ।
प्रथयंतिनवंभिन्नंव्यवहारायतद्विदः ॥२७॥

भाषार्थ–लघु और वडे हो आकार और धारा भेदसे शस्त्र और अस्त्रोंको संग्रामके जाननेवाले नवीन २ भिन्न २ नामोंसे विस्तार करते हैं ॥ २७ ॥

नालिकंद्विविधंज्ञेयंबृहत्क्षुद्रविभेदतः ।
तिर्यगूर्ध्वच्छिद्रमूलंनालंपंचवितस्तिकं २८

भाषार्थ–वडे और क्षुद्र (छोटेके) भेदसे नालिक दो प्रकारका है तिरछा ऊपरको छिद्र और जडके भेदसे पांच विलस्तका नाल होता है ॥ २८ ॥

मूलाग्रयोर्लक्ष्यभेदीतिलबिंदुयुतंसदा ।
यंत्राघाताग्निकृद्ग्रावचूर्णमूलककर्णकं २९॥

भाषार्थ–मूल और अग्र भागसे जो ऐसे लक्ष्य (निसाने) को जो तिल और बिन्दु के समान होय जिसमें यंत्रके दवानेसे अग्नि लगे और पिसाहुआ चून (दारू) पडा होय ॥ २९ ॥

सुकाष्ठोपांगबुध्नंचमध्यांगुलबिलांतरं ।
स्वांतेग्निचूर्णसंधात्रीशलाकासंयुतंदृढं ॥ ३०

भाषार्थ–दृढ जिसमें काठ होय भीतरसे एक अंगुल पीली होय जिसमें अग्निचूर्ण पडा होय और शलाका (लोहेका गज) सेभी युक्त और दृढ होय ॥ ३० ॥

लघुनालिकमप्येतत्प्रधार्यंपत्तिसादिभिः ।
यथायथातुत्वक्सारंयथास्थूलबिलांतरं ३१

भाषार्थ–ऐसी लघुनालिका (बंदूक) के पदाति और सवार धारण करै और जितनी २ मोटी त्वचा होय और बीचका जितना २ बिल जिसका मोटा हो ॥ ३१ ॥

यथादीर्घंबृहद्गोलंदूरभेदितथातथा ।
मूलकीलोद्गमाल्लक्ष्यसमसंधानभाजियत् ॥

भाषाथ–जितनी लंबी होय और जितना बडा गोला आवे और दूरके निसानेकोभी भेदन करै और मूलकी कील उखाडनेसे जो निसानेके समान लगे ॥ ३२ ॥

बृहन्नालिकसंज्ञंतत्काष्ठबुध्नविवर्जितं ।
प्रवाह्यंशकटाद्यैस्तुसुयुक्तंविजयप्रदं ॥ ३३॥

भाषार्थ–ऐसी बृहन्नालिका (तोप) जो काष्ठ बुध्न (ऊपरका काठ) से वर्जित होय और भलीप्रकार लगानेसे विजयको देनेवाली वह शकट आदिसे चलाने योग्य होती है ॥ ३३ ॥

सुवर्चिलवणात्यंतपलानिगंधकात्पलं ।
अंतर्धूमविपक्वार्कस्नुह्याद्यंगारतःपलं ३४॥

भाषार्थ–जिसमें पांचपल सोरेका लवण एकपल गंधक और अग्निसे पके हुये आक-स्नुही (सेहुड) वा केले इनके पलभर कोइले होय ॥ ३४ ॥

शुद्धात्संग्राह्यसंचूर्ण्यसंमील्यप्रपुटेद्रसैः ।
शुद्धार्काणांरसोतस्यशोषयेदातपेनच ३५॥

भाषार्थ–इन सबको शुद्ध २ लेकर पीसले और केलेके रसमें मिलाकर पुटदें और धूपमें सुखाले ॥ ३५ ॥

पिष्ट्वाशर्करवच्चैतदग्निचूर्णंभवेत्खलु ।
सुवर्चिलवणाद्भागाःषड्वाचत्वारएववा ३६

भाषार्थ–यह अग्निचूर्ण पिसकर खांडके समान होजाता है सोरेके लवण के ६ छः वा चार भाग ले ॥ ३६ ॥

नालास्त्रार्थाग्निचूर्णेतुगंधांगारौतुपूर्ववत् ।
गोलोलोहमयोगर्भगुटिकःकेवलोपिवा ॥

भाषार्थ–गंधक और कोले पूर्वके समान तोपके लिये जो दारुके बनानेकी यह रीति है और डालनेका गोला सब लोहेका होय अथवा जिसके भीतर छोटी २ गोली होय ऐसा होय ॥ ३७ ॥

सीसस्यलघुनालार्थेह्यन्यधातुभवोपिवा ।
लोहसारमयंवापिनालास्त्रंत्वन्यधातुजं ॥

भाषार्थ–बन्दूकके लिये सीसेका अथवा अन्यधातुका गोला होता है और तोपके लिये लोहसारका अथवा अन्यधातुका होता है ॥ ३८ ॥

नित्यसंमार्जनस्वच्छमस्त्रपातिभिरावृतं ।
अंगारस्यैवगंधस्यसुवर्चिलवणस्यच ॥ ३९

भाषार्थ–और उसको नित्य माजना स्वच्छ रखना और गोलंदाजोंसे युक्त रखना चाहिये और कोलेगंधक सोरेका नोन ३९

सिलायाहरितालस्यतथासीसमलस्यच ।
हिंगुलस्यतथाकांतरजसःकर्पूरस्यच ४०॥

भाषार्थ—मनासिल हरताल—सीसेका मेल—हिंगुल—कांतिसार—लिहा—खपरिया ॥ ४० ॥

जतोर्नील्याश्चसरलनिर्यासस्यतथैवच ।
समन्यूनाधिकैरंशैरग्निचूर्णान्यनेकशः ॥४१

भाषार्थ—लाख वा राल नील—(देवदारु) सरलका गोंद-इन सबके समान वा कमजादे अंशोंसे अनेक प्रकारकी दारु बनती है ४१

कल्पयंतिचतद्विद्याश्चंद्रिकाभादिमंतिच ।
क्षिपंतिचाग्निसंयोगाद्गोलंलक्ष्येसुनालगं ॥

भाषार्थ—और दारूके जाननेवाले चांदनीके समान प्रकाश करनेवाली अनेक प्रकारकी दारुओंको कल्पना करते हैं और तोपके गोलेको अग्निके संयोगसे निसाने पर फेकते हैं ॥ ४२ ॥

नालास्त्रंशोधयेदादौदद्यात्तत्राग्निचूर्णकं ।
निवेशयेत्तंदंडेननालमूलेयथादृढं ॥ ४३ ॥

भाषार्थ—पहिले तोपको भलीप्रकार शुद्ध करे फिर उसमें दारूको डालदें फिर उस दारूको दंड (गज) से तोपकी जडमें दृढतासे जमादे ॥ ४३ ॥

ततःसुगोलकंदद्यात्ततःकर्णेग्निचूर्णकं ।
कर्णचूर्णाग्निदानेनगोलंलक्ष्येनिपातयेत् ॥

भाषार्थ—फिर उसके ऊपर गोला रखदे फिर तोपके कानमें दारुको रखदे फिर कानके दारुमें अग्निको लगाकर गोलेको निसाने पर फेकदे ॥ ४४ ॥

लक्ष्यभेदीयथाबाणोधनुर्ज्याविनियोजितः।
भवेत्तथातुसंधायद्विहस्तश्चशिलीमुखः ४५

भाषार्थ—जैसे बाण धनुष्य ज्यापर लगाया हुआ निसानेको वींधे इसप्रकार दो हाथके बाणको धनुष्यपर रक्खै ॥ ४५ ॥

अष्टास्त्रापृथुबुध्नातुगदाहृदयसंमिता ।
पट्टीशात्मसमोहस्तबुध्नश्चोभयतोमुखः ४६

भाषार्थ—आठ कोनकी मोटी छातीकी बराबर गदा होती है—और पट्टा अपनी बराबर दोनों तरफ मुखवाला हाथमें रखनेके लिये होता है ॥ ४६ ॥

ईषद्वक्रश्चैकधारोविस्तारेचतुरंगुलः ।
क्षुरप्रांतोनाभिसमोदृढमुष्टिःसुचंद्ररुक् ४७

भाषार्थ—कुछ टेढा एक धारवाला और चार अंगुल चोडा नाभितक ऊंचा छुरिके समान पैना और दृढ जिसकी मूठ होय चंद्रमाके समान कांति होय ॥ ४७ ॥

खड्गःप्रासश्चतुर्हस्तदंडबुध्नःक्षुराननः ।
दशहस्तमितःकुंतःफालाग्रःशंकुबुध्नकः ४८

भाषार्थ—ऐसा खड्ग होता है चार हाथ लंबा छुरेके समान मुखवाला मोटा प्रास (फरसा) होता है दस हाथका भालेके समान जिसके अग्रभाग आगेसे पैना कुन्त (भाला) होता है ॥ ४८ ॥

चक्रंषड्ढस्तपरिधिःक्षुरप्रांतंसुनाभियुक् ।
त्रिहस्तदंडस्त्रिशिखोलोहरज्जुःसपाशकः ॥

भाषार्थ—छः हाथकी जिसकी परिधी (फेर) हो छुरीके समान जिसका प्रान्त होय और अच्छी नाभि (धुरेकी जगे) होय ऐसा चक्र होता है तीन हाथका जिसका दंड होय तीन शिखा होय और फांसी जिसमें होय ऐसी लोहेकी रज्जु होती है ॥ ४९ ॥

गोधूमसंमितस्थूलपत्रंलोहमयंदृढं ।
कवचंसशिरस्त्राणमूर्ध्वकायविशोभनं ॥५०

भाषार्थ—गेहूंके समान जिसके स्थूल पत्ते होय और जो सब लोहेका दृढ होय और शिरका त्राण (रक्षा) सहित होय ऊपरको

ऊंचा और शोभित होय ऐसा कवच होता है ॥ ५० ॥

यौवैसुपुष्टसंभारस्तथाषड्गुणमंत्रवित् ।
बह्वस्त्रसंयुतोराजायोद्धुमिच्छेत्सएवहि ५१

भाषार्थ-जिस राजाके भलीप्रकार पुष्ट सामान होय और जो षड्गुण मंत्रको जानता होय और जिसके यहां बहुतसे अस्त्रभी होय वही राजा युद्ध करनेकी इच्छा करे ॥५१॥

अन्यथादुःखमाप्नोतिस्वराज्याद्भ्रश्यतेपिच
शत्रुभावसमापन्नोरुभयोःसंयतात्मनोः ५२

भाषार्थ-अन्यथा दुःखको प्राप्त होता है और अपने राज्यसेभी जाता रहता है जो दोनों शत्रुभावको प्राप्त होगये होय और जिनके मनमें उद्योगभी होय और जिनके मनमें परस्पर लडाईके उद्योग होय ॥ ५२॥

अस्त्राद्यैःस्वार्थसिद्ध्यर्थंव्यापारोयुद्धमुच्यते
मंत्रास्त्रैर्दैविकंयुद्धंनालाद्यस्त्रैस्तथाऽऽसुरं ॥

भाषार्थ-ऐसे दोंका जो अपने प्रयोजनकी सिद्धिके लिये अस्त्र आदिसे परस्पर व्यापार उसको युद्ध कहते हैं मंत्रके अस्त्रोंका जो युद्ध उसे दैविक और तोप आदि अस्त्रोंसे जो युद्ध उसे आसुर कहते हैं ॥ ५३ ॥

शत्रुबाहुसमुत्थंतुमानवंयुद्धमीरितं ।
एकस्यबहुभिःसार्धंबहूनांबहुभिश्चवा ॥५४

भाषार्थ-शत्रुओंकी परस्पर भुजाओंसे जो युद्ध उसे मानव कहते हैं और एकका बहुतोंके संग और बहुतोंका बहुतोंके संग५४

एकस्यैकेनवाद्वाभ्यांद्वयोर्वातद्भवेत्खलु ।
कालंदेशंशत्रुबलंदृष्ट्वास्वीयबलंततः ॥५५॥

भाषार्थ-वा एकका एकके संग वा दोंका दोंके संग जो युद्ध उसे मानव कहते हैं- काल-देश-शत्रुका बल और अपना बल देखकर ॥ ५५ ॥

उपायान्षड्गुणंमंत्रंसंभृत्याद्युद्धकामुकः ।
शरद्धेमंतशिशिरकालोयुद्धेषुचोत्तमः ५६॥

भाषार्थ-छः हैं गुण जिसमें ऐसे मंत्रोंके उपायोंको युद्धकी कामनावाला मनुष्य संग्रह करे युद्धके लिये शरत् हेमंत-शिशिरका समय उत्तम होता है ॥ ५६ ॥

वसंतोमध्यमोज्ञेयोऽधमोग्रीष्मःस्मृतःसदा।
वर्षासुनप्रशंसंतियुद्धंसामस्मृतंतदा॥५७॥

भाषार्थ-वसंत मध्यम जानना और ग्रीष्म सदैव अधम कहा है-वर्षाके समय युद्धकी कोईभी प्रशंसा नहीं करते क्योंकि उस समय शांति करनाही कहाहै ॥ ५७ ॥

युद्धसंभारसंपन्नोयदाधिकबलोनृपः ।
मनोत्साहीसुशकुनोत्पातीकालस्तदाशुभः

भाषार्थ-जब राजा युद्धके सामानसे संपन्न होय अधिक बलवान होय मनमें उत्साही होय अच्छे शकुन होते होय उस कालको शुभ जानना ॥ ५८ ॥

कार्येऽत्यावश्यकेप्राप्तेकालोनोचेद्यदाशुभः
विधायहृदिविश्वेशंगेहेचिन्हमियात्तदा ५९

भाषार्थ-जब अत्यंत आवश्यक कार्य आन पडे और समयभी शुभ न होय तो हृदयमें परमेश्वरको स्थापना करिके और घरमें परमेश्वरके चिह्न बनाकर गमन करे ॥ ५९ ॥

नकालनियमस्तत्रगोस्त्रीविप्रविनाशने ।
यस्मिन्देशेयथाकालंसैन्यव्यायामभूमयः

भाषार्थ-गौ स्त्री ब्राह्मण इनके विनाशमें और पूर्वोक्त कालमें समयका नियम नहीं है जिस देशमें समयके अनुसार अपनी सेनाके कवायदकी अच्छी भूमि होय ॥ ६० ॥

परस्याविपरीतश्चस्मृतोदेशःसउत्तमः ।
आत्मनश्चपरेषांचतुल्यव्यायामभूमयः ६१

भाषार्थ–शत्रुकी इससे विपरीत होय वह देश लडाईके लिये उत्तम कहा है जिस देशमें अपनी और पराई सेनाकी कवायद्के लिये समान भूमि होय ॥ ६१ ॥

यत्तमध्यमउद्दिष्टोदेशःशास्त्रविचिंतकैः ।
आरातिसैन्यव्यायामसुपर्याप्तमहीतलः ॥

भाषार्थ–वह देश शास्त्रकी चिंता करनेवालोंने मध्यम कहा है जिस देशमें शत्रुकी सेनाके लिये कवायद्की भूमि पूरी होय ६२

आत्मनोविपरीतश्चसवैदेशोऽधमःस्मृतः ।
स्वसैन्यात्तुतृतीयांशहीनंशत्रुबलंयदि॥ ६३

भाषार्थ–और अपनी सेनाकी उससे विपरीत होय उस देशको अधम कहा है यदि अपनी सेनासे तीसरा भाग कम शत्रुकी सेना होय ॥ ६३ ॥

अशिक्षितमसारंवासाद्यस्कंस्वजयायन ।
पुत्रवत्पालितंयत्तुदानमानविवर्द्धितं॥ ६४॥

भाषार्थ–और अपनी सेना अशिक्षित होय सारहीन वा नई होय तो अपना जय नहो सकेगा जो सेना पुत्रके समान पाली होय दान और मानसे वढाई होय ॥ ६४ ॥

युद्धसंभारसंपन्नंस्वसैन्यंविजयप्रदं ।
संधिंचविग्रहंयानमासनंचसमाश्रयं ॥६५॥

भाषार्थ–युद्धकी सामग्रीयोंसे युक्त होय ऐसी सेना विजय देनेवाली होती है संधि–विग्रह–यान–(चढाई) आसन–समाश्रय (आधीन होना) ॥ ६५ ॥

द्वैधीभावंचसंविद्यान्मंत्रस्यैतांस्तुषड्गुणान्
याभिःक्रियाभिर्बलवान्मित्रतांयातिवैरिणः

भाषार्थ–द्वैधी भाव (भेद) इन मंत्रके छः गुणोंको राजा भली प्रकार जाने जिन कामोंके करनेसे बलवान्भी वैरी मित्र हो जाय ॥ ६६ ॥

साक्रियासंधिरित्युक्ताविमृशेत्तांतुयत्नतः।
विकर्षितःसनाधीनोभवेच्छत्रुस्तुयेनवै ६७

भाषार्थ–उस क्रिया (कर्म) को संधि–कहते हैं उसको यत्नसे राजा विचारे जिस कामसे भेदन कियाहुआ शत्रु अपने आधीन होजाय ॥ ६७ ॥

कर्मणाविग्रहस्तंतुचिंतयेन्मंत्रिभिर्नृपः ।
शत्रुनाशार्थगमनंयानंस्वाभीष्टसिद्धये ॥ ६८

भाषार्थ–उस विग्रह (लडाई) को मंत्रीयोंके संग राजा विचारे अपने अभीष्ट सिद्धिके लिये शत्रुके नाशार्थ मनुष्यसे यान (चढाई) कहते हैं ॥ ६८ ॥

स्वरक्षणंशत्रुनाशोभवेत्स्थानात्तदासनं ।
यैर्गुप्तोबलवान्भूयाद्दुर्बलोपिसआश्रयः ६९

भाषार्थ–अपनी रक्षा शत्रुका नाश (जिस स्थानसे बैठ रहना) होय और जिनकी रक्षासे दुर्बलभी बलवान् होजाय उसे आश्रय कहते हैं ॥ ६९ ॥

द्वैधीभावःस्वसैन्यानांस्थापनंगुल्मगुल्मतः।
बलीयसाभियुक्तस्तुनृपोनान्यप्रतिक्रियः ॥

भाषार्थ–गुल्म २ (मोका) पर अपनी सेनाओंका टिकाना उसे द्वैधीभाव कहते हैं बलवान्का दवायाहुआ राजा जब अन्य प्रतीकार न करसके तो ॥ ७० ॥

आपन्नःसंधिमन्विच्छेत्कुर्वाणःकालपालनं।
एकएवोपहारस्तुसंधिरेषमतोहिनः ॥७१॥

भाषार्थ–विपत्तिको प्राप्त हुआ और कालको विताता हुआ शत्रुके संग संधि (मेल)की

इच्छा करै और दूसरेको भेट देदेना यह मुख्य संधि हमकोभी संमत है ॥ ७१॥

उपहारस्यभेदास्तुसर्वेन्न्यैमैत्रवर्जिताः ।
अभियोक्तावलीयस्त्वादलब्ध्वाननिवर्तते॥

भाषार्थ–और मित्रताको छोडकर उपहारके अन्यभी भेद वहुतसे होते हैं-जहां अभियोक्ता (चढनेवाला) शत्रु बलवान् होनेसे विना भेट लिये निवृत्त न होय ॥ ७२ ॥

उपहारादृतेयस्मात्संधिरन्योनाविद्यते ।
शत्रोर्बलानुसारेणउपहारंप्रकल्पयेत् ॥७३॥

भाषार्थ–वहांपर उपहारसे दूसरी संधि नही होती किंतु शत्रुके वलानुसार भेटको दे दे ॥ ७३ ॥

सेवांवापिचस्वीकुर्याद्द्यात्कन्यांभुवंधनं ।
स्वसामंतांश्चसंधीयान्मंत्रेणान्यजयायवै ॥

भाषार्थ–अथवा शत्रुकी सेवाका स्वीकार करै वा कन्या–भूमि–धन इनको शत्रुको दे दूसरेकी जयके लिये अपने सामंतो (समीपके राजा) के संग संधि करै ॥ ७४ ॥

संधिःकार्योप्यनार्येणसंप्राप्योत्सादयेद्धिसः
संघातवान्यथावेणुर्निबिडैःकंटकैर्वृतः ॥७५

भाषार्थ–अनार्य्य मनुष्यकी कीहुई संधि शत्रुको उखाड देती है–जैसे सघन कांटोंसे रोका हुआ वेणु समूहवाला होकर ७५ ॥

नशक्यतेसमुच्छेत्तुंवेणुःसंघातवांस्तथा ।
वलिनासहसंधायभयेसाधारणेयदि ॥७६॥

भाषार्थ–छेदनेको शक्य नहीं होता इसी प्रकार संधिवाला राजाभी उखाडनेके अयोग्य होता है–यदि राजाको साधारण भय होय तो वलवानके संग मिलकर ॥ ७६ ॥

आत्मानंगोपयेत्कालेवव्हमित्रेपुबुद्धिमान् ।
वलिनासहयोद्धव्यमितिनास्तिनिदर्शनं ॥

भापार्थ–वहुत शत्रुओंके होनेपर बुद्धिमान् राजा उसकालमें अपने आत्माकी रक्षा करै क्योंकि यह शास्त्रमें नही लिखा कि वलवानके संग युद्ध करना ॥ ७७ ॥

प्रतिवातंहीनघनःकदाचिदपिसर्पति ।
वलीयसिप्रणमतांकालेविक्रमतामपि ॥७८

भापार्थ–क्योंकि छोटा वादल पवनके सामने कदाचित्भी नहीं चलता जो राजा वलवान् शत्रुको नमते है और समयपर पराक्रमभी करते है ॥ ७८ ॥

संपदोनविसर्पतिप्रतीपामिवनिम्नगाः ।
राजानगच्छेद्विश्वासंसंधितोपिहिवुद्धिमान्

भाषार्थ–उनकी संपदा इस प्रकार कहीं नही जाती जैसे ऊंचे परनदी. बुद्धिमान् राजा मेल होनेपरभी शत्रुका विश्वास नकरै ७९

अद्रोहसमयंकृत्वावृत्रमिंद्रःपुराऽवधीत् ।
आपन्नोभ्युदयाकांक्षीपीड्यमानःपरेणवा ॥

भाषार्थ–क्योंकि स्नेहकी प्रतिज्ञा करिकेभी पूर्व कालमें इंद्रने वृत्रासुरको मारादियाथा आपत्तिको प्राप्त हुआ शत्रुसे पीडित राजा अपना उदय चाहे तो ॥ ८० ॥

देशकालवलोपेतःप्रारभेतचविग्रहं ।
प्रहीनवलमित्रंतुदुर्गस्थंह्यंतरागतं॥ ८१ ॥

भाषार्थ–देश–काल –वल –इनसे जव युक्त होय उस समय लडाईका प्रारंभ करै–और जिस शत्रुके वल और मित्रहीन होय दुर्गमें टिका होय दो शत्रुओंके वीच होय ॥ ८१ ॥

अत्यंतविषयासक्तंप्रजाद्रव्यापहारकं ।
भिन्नमंत्रिवलंराजापीडयेत्परिवेष्टयन् ॥८२

भाषार्थ–अत्यंत विषयोंमें आसक्त होय प्रजाके द्रव्यको हरता होय मंत्री और सेना जिससे फटी होय ऐसे शत्रुको चारों तरफसे लपेटकर पीडित (दवाव) करै ८२

विग्रहःसचविज्ञेयोह्यन्यश्चकलहःस्मृतः ।
बलीयसात्यल्पबलःशूरेणनचविग्रहम् ॥८३

भाषार्थ–इसीको विग्रह कहते हैं इससे अन्य कलह कहा है बलवानके संग अल्प बलवाले शूरवीरके संग जी लडाई ॥ ८३ ॥

कुर्याच्चविग्रहेपुंसांसर्वोनाशःप्रजायते ।
एकार्थाभिनिवेशित्वंकारणंकलहस्यवा ८४

भाषार्थ–कर्त्ता है उस लडाईमें पुरुषोंका सर्वनाश होता है एक वस्तुकी अभिलाषा करनी इसीको लडाईका कारण कहते हैं ॥ ८४ ॥

उपायांतरनाशेतुततोविग्रहमाचरेत् ।
विगृह्यसंधायतथासंभूयाथप्रसंगतः॥ ८५॥

भाषार्थ–जब दूसरा कोई उपाय नहोय तो लडाईको करै लडाईके लिये मिलकर इकट्ठा होकर और प्रसंगसे ॥ ८५ ॥

उपेक्षयाचनिपुणैर्यानंपंचविधंस्मृतं ।
विगृह्ययातिहियदासर्वाञ्छत्रुगणान्बलात्

भाषार्थ–उपेक्षासे यह पांच प्रकारका यान (चढाई) विद्वानोंने कहा है जब शत्रुओंके गणके ऊपर बलसे लडाई करिके गमन करै उसको ॥ ८६ ॥

विगृह्ययानंयानज्ञैस्तदाचार्यैःप्रचक्षते ।
अरिमित्राणिसर्वाणिस्वमित्रैःसर्वतोबलात्

भाषार्थ–यानके जाननेवाले आचार्य विगृह्ययान कहते हैं अथवा संपूर्ण शत्रुके मित्रोंको अपने सब मित्रोंके संगबलसे ८७॥

विगृह्यचारिभिर्गंतुंविगृह्यगमनंतुवा ।
संधायान्यत्रयात्रायांपार्ष्णिग्राहेणशत्रुणा ॥

भाषार्थ–लडाकर शत्रुपर जो चढना उसको विगृह्य गमन कहते हैं अन्यपर चढाईके समय पीछेके शत्रुके साथ संधि करिके जो गमन ॥ ८८ ॥

संधायगमनंप्रोक्तंतज्जिगीषोःफलार्थिना ।
एकोभूपोयदैकत्रसामंतैःसांपरायिकैः ॥

भाषार्थ–उसे जीतनेवाले फलके अभिलाषी राजाका संधायगमन कहते हैं जब एक राजा अपने सामंत साथी उन राजाओंके संग ॥ ८९ ॥

शक्तिशौर्ययुतैर्यानंसंभूयगमनंहितत् ।
अन्यत्रप्रस्थितःसंगादन्यत्रैवचगच्छति ॥

भाषार्थ–मिलकर गमन करै जो सामर्थ्य और बलसे युक्त होय उसे संभूय गमन कहते हैं यदि अन्यपर चढाईके लिये प्रस्थित राजा संगसे अन्यत्रही चला जाय ॥ ९० ॥

प्रसंगयानंतत्प्रोक्तंयानविद्भिश्चमंत्रिभिः ।
रिपुंयातस्यबलिनःसंप्राप्यविकृतंफलम् ॥

भाषार्थ–तो यानके ज्ञाता मंत्रीजन उसे प्रसंगयान कहते हैं– जो बलवान राजा शत्रुपर गमन करै वहां विपरीत फल मिल जाय ॥ ९१ ॥

उपेक्ष्यतस्मिन्तद्यानमुपेक्षायानमुच्यते ।
दुर्वृत्तेऽप्यकुलीनेतोबलंदातरिरज्यते ॥९२

भाषार्थ–तो उसकी उपेक्षा (छोडना) करनेको उपेक्षायान कहते हैं–जो दुराचारी कुलहीन होय ऐसे राजापर बल करना अच्छा होता है ॥ ९२ ॥

त्वष्टंकृत्वास्वीयबलंपारितोष्यप्रदानतः ।
नायकःपुरतोयायात्प्रवीरपुरुषावृतः ॥९३

भाषार्थ-अपनी सेनाको प्रसन्न और धन आदि देनेसे उसका संतोष करिके बडे२ वीर पुरुषोंसे युक्त सेनाका नायक (सेनापति) सबसे आगे चले ॥ ९३ ॥

मध्येकलत्रंकोशश्चस्वामीफल्गुचयद्धनं ।
ध्वजिनींचसदोद्युक्तःसंगोपायेद्दिवानिशम्

भाषार्थ-सेनाके बीचमें स्त्री-कोश-स्वामी-और सामान्य धन-इनको रक्खे और रात्रि दिन सदैव बडे यत्नसे अपनी सेनाकी रक्षाकरै ॥ ९४ ॥

नद्यद्रिवनदुर्गेपुयत्रयत्रभयंभवेत् ।
सेनापतिस्तत्रतत्रगच्छेव्द्यूहकृतैर्बलैः ९५॥

भाषार्थ-नदि-पर्वत -वन-दुर्ग -आदिमें जहां २ भय होय वहां २ सेनाके व्यूह बनाकर सेनापति गमन करै ॥ ९५ ॥

यायाव्द्यूहेनमहतामकरेणपुरोभये ।
श्येनेनोभयपक्षेणसूच्यावाधीरवक्त्रया ॥

भाषार्थ-यदि सेनाके आगे भय होय तो बडे मकरके आकारके व्यूहसे सेनापति चले अथवा शिखरेके दोनों पक्षके समान व्यूहसे अथवा बडी पेनी है धार जिसकी ऐसी सूचीके व्यूहसे सेनापति गमन करै ॥ ९६ ॥

पश्चाद्भयेतुशकटंपार्श्वयोर्वज्रसंज्ञिकं ।
सर्वतःसर्वतोभद्रंचक्रंव्यालमथापिवा ॥९७

भाषार्थ-यदि पीछे भय होय तो शकट व्यूहसे पार्श्वोंमें (दोनोतरफ) भय होय तो वज्रव्यूहसे चारों तरफसे भय होय तो सर्वतो भद्रव्यूहसे अथवा सर्पव्यूहसे सेनापति गमन करै ॥ ९७ ॥

यथादेशंकल्पयेद्वाशत्रुसेनाविभेदकं ।
व्यूहरचनसंकेतान्वाद्यभाषासमीरितान् ॥

भाषार्थ-और देशके अनुसार शत्रुकी सेनाके भलीप्रकार भेद (तोडने) का यत्न करै और पूर्वोक्त व्यूहोंकी रचनाके ऐसे संकेत (इसारे) ऐसे जो बाजोंके बजनेसे मालूम होसके ॥ ९८ ॥

स्वसैनिकैर्विनाकोपिनजानातितथाविधान् ।
नियोजयेच्चमतिमान्व्यूहान्नानाविधान्सदा

भाषार्थ-और उन संकेतोंको अपनी सेनाके मनुष्योंसे इतर कोईभी न जाने और बुद्धिमान राजा सदैव अनेक प्रकारके व्यूहोंको नियत करै ॥ ९९ ॥

अश्वानांचगजानांचपदातीनांपृथक्पृथक् ।
उच्चैःसंश्रावयेव्द्यूहसंकेतान्सैनिकान्नृपः ॥

भाषार्थ-सवार-हाथीवान्-पदाति इनको और सेनाके इतर मनुष्योंको राजा व्यूहके संकेतोंको ऊंचे शब्दसे सुनवाइदे ११००॥

वामदक्षिणसंस्थोवामध्यस्थोवाग्रसंस्थितः ।
श्रुत्वातान्सैनिकैःकार्यमनुशिष्टंयथातथा १

भाषार्थ-राजा वाम वा दक्षिण वा मध्य वा अग्र भागमें स्थित रहै सेनाके मनुष्य उन संकेतोंको सुनकर यथार्थ रीतिसे उक्तसंकेतोंके अनुसार राजाकी शिक्षाके अनुसार कामको करै ॥ ११०१ ॥

संमीलनप्रसरणंपरिभ्रमणमेवच ।
आकुंचनंतथायानंप्रयाणमपयानकम् ॥२॥

भाषार्थ-संमीलन (मिलना) प्रसरण (चलना) चारोंतरफ भ्रमना आकुंचन (सकुडना) शनैः २ गमन अच्छी रीतिसे गमन अपयान (उलटा चलना) ॥११०२॥

पर्यायेणचसांमुख्यंसमुत्थानंचलुंठनं।
संस्थानंचाष्टदलवच्चक्रवद्गोलतुल्यकम् ३॥

भापार्थ-पर्य्यायसे गमन सन्मुख गमन खडाहोना, लोटना, आठ दलके समान टिकना अथवा चक्रकी गुलाई तुल्य टिकना ३

सूचीतुल्यंशकटवदर्धचंद्रसमंतुवा।
पृथग्भवनमल्पाल्पैःपर्यायैःपंक्तिवेशनं॥४॥

भापार्थ-सुईके समान वा शकटके समान अथवा थोडी २ सेनाको पृथक् पर्याय क्रमसे पंक्तियोंका वैठाना ॥ ४ ॥

शस्त्रास्त्रयोर्धारणंचसंधानंलक्ष्यभेदनं।
मोक्षणंचतथास्त्राणांशस्त्राणांपरिघातनम् ५

भापार्थ-शस्त्र अस्त्रका धारण संधान (धनुषपरवाण लगाना) निसानेका भेदन अस्त्रोंका छोडना और शस्त्रोंका चलाना ५

द्राक्संधानंपुनःपातोग्रहोमोक्षःपुनःपुनः।
स्वगूहनंप्रतीघातःशस्त्रास्त्रपदविक्रमैः॥६॥

भापार्थ-वाणोंका शीघ्र लगाना छोडना फिर ग्रहण करना वारंवार फिर छोडना शस्त्र और अस्त्र और पैरोंके उठा वसे अपना गूहन छिपना और शत्रुको मारना ॥ ६ ॥

द्वाभ्यांत्रिभिश्चतुर्भिर्वापंक्तितोगमनंततः।
तथाप्राक्भवनंचापसरणंतूपसर्जनम्॥ ७ ॥

भापार्थ-फिर दो २ तीन २ वा चार २की पंक्ति वनाकर गमन करना और कभी सेनासे आगे होना कभी पीछे कभी पृथक् होजाना ॥ ७ ॥

अपसृत्यास्त्रसिध्यर्थमुपसृत्यविमोक्षणे।
प्राक्भूत्वामोचयेदस्त्रंव्यूहस्थःसैनिकःसदा

भापार्थ-और अस्त्रोंकी सिद्धिके लिये पीछे हठना और अस्त्रोंके छोडनेके लिये आगे जाना व्यूहमें टिकाहुआ युद्ध करनेवाला सैनिक सदैव अस्त्रको छोडे ॥ ८ ॥

आसीनःस्याद्विमुक्तास्त्रःप्राग्वाचापसरेत्पुनः
प्रागासीनंतूपसृतोदृष्ट्वास्त्रास्त्रंविमोचयेत् ९

भापार्थ-अस्त्रके छोडनेपर खडा होजाय अथवा फिर सेनाके आगे चला जाय और आगे जाकर अपने सन्मुख खडे हुये शत्रुको देखकर अस्त्रको छोडे ॥ ९ ॥

एकैकशोद्विशोवापिसंघशोवोधितोयथा।
क्रौंचानांखेगतिर्यादृक्पंक्तितःसंप्रजायते॥

भापार्थ-जैसे आकाशमें क्रौञ्च पक्षियोंकी गति एक २ दो दो वा समूह २ से पंक्तिसेहि होती है उसी प्रकार संकेतसे सेनाके मनुष्य चले ॥ १० ॥

तादृक्संरचयेत्क्रौंचव्यूहंदेशवलंयथा।
सूक्ष्मग्रीवंमध्यपुच्छंस्थूलपक्षंतुपंक्तितः ११

भापार्थ-उसी प्रकार देश और वलके अनुसार क्रौंचव्यूहकी रचनाको सेनापति रचै जिसकी ग्रीवा सूक्ष्म होय पूंछ मध्यम और पक्ष मोठे होय ऐसी पंक्ति वनावै ॥ ११ ॥

बृहत्पक्षंमध्यगलपुच्छेश्येनंमुखेतनु।
चतुष्पान्मकरोदीर्घस्थूलवक्राद्विरोष्ठकः १२

भापार्थ-जिसके पक्ष वडे होय गल और पूंछ मध्यम होय मुख सूक्ष्म होय उसे सेना व्यूह कहते हैं जिसके चोपायेका आकार होय लंवा होय स्थूलमुख होय और दो ओष्ठ होय उसव्यूहको मकर कहते हैं १२

सूचीसूक्ष्ममुखोदीर्घसमदंडांतरंध्रयुक्।
चक्रव्यूहश्चैकमार्गोह्यष्टधाकुंडलीकृतः १३

भाषार्थ-जिसका सूक्ष्म मुख होय और समान लंवा विस्तार होय और वीचमें खाली होय उसे सूचीव्यूह कहते हैं जिसका एक-

मार्ग होय और आठ जिसकी कुंडली होय उसे चक्रव्यूह कहते हैं ॥ १३ ॥

चतुर्दिक्ष्वष्टपरिधिःसर्वतोभद्रसंज्ञकः ।
आमार्गश्चाष्टवलयीगोलकःसर्वतोमुखः १४

भाषार्थ—जिसकी परिधी (फेर) चारों दिशाओंमें आठ होय उस व्यूहको सर्वतोभद्र कहते हैं ॥ १४ ॥

शकटःशकटाकारोव्यालोव्यालाकृतिःसदा
सैन्यमल्पंबृहद्वापिदृष्ट्वामार्गंरणस्थलम् १५

भाषार्थ—जिस सेनाका आकार शकट (गाडा) के समान होय उसे शकट और जिसका सर्पके समान होय उसे व्यालव्यूह कहते हैं सेनाकी अल्पता वा अधिकताको और रणभूमिको देखकर ॥ १५ ॥

व्यूहैर्व्यूहेनव्यूहाभ्यांसंकरेणापिकल्पयेत् ।
यंत्रास्त्रैःशत्रुसेनायाभेदोयेभ्यःप्रजायते ॥

भाषार्थ—सेनाके अनेक वा एक वा दोव्यूहोंकी वा संकर (इकट्ठी) की रचनाको करै जहां यंत्रके अस्त्रोंसे शत्रुकी सेनाका भेद (पराजय) होजाय ॥ १६ ॥

स्थलेभ्यस्तेपुसंतिष्ठेत्ससैन्योह्यासनंहितत् ।
तृणान्नजलसंभारायेचान्येशत्रुपोषकाः ॥

भाषार्थ—ऐसे स्थलोंमें जो सेना सहित राजाका टिकना उसको आसन कहते हैं तृण, अन्न, और जलके संभार और जो शत्रुके पोषण करनेवाले पदार्थ हैं ॥ १७ ॥

सम्यङ्निरुध्यतान्यत्नात्परितश्चिरमासनात् ।
विच्छिन्नविविधासारंप्रक्षीणयवसेंधनं १८॥

भाषार्थ—उन सबको चारों तरफसे चिरकालतक आसनमें टिका हुआ राजा भली प्रकार रोके और शत्रुके भार दोनेके वीवध (वहिंगी) इनको और भुसई धनको और मार्गको नष्ट करदे ॥ १८ ॥

विगृह्यमाणप्रकृतिंकालेनैववशंनयेत् ।
अरेश्चविजिगीषोश्चविग्रहेहीयमानयोः ॥

भाषार्थ—और शत्रुकी प्रजामें जिस समय राजाके संग लडाई देखे उस समय शत्रुको वसमें करले जब शत्रु जीतनेवाला ये दोनों लडाईमें हीन होजाय ॥ १९ ॥

संधाययदवस्थानंसंधायासनमुच्यते ।
उच्छिद्यमानोबलिनानिरुपायप्रतिक्रियः ॥

भाषार्थ—उस समय मिलकर जो बैठ रहना उसे संधाया आसन कहते हैं बलवाले शत्रुका उखाडा हुआ उपाय और प्रतीकार करनेमें असमर्थ राजा ॥ २० ॥

कुलोद्भवंसत्यमार्यमाश्रयेतबलोत्कटं ।
विजिगीषोस्तुसाह्यार्थाःसुहृत्संबंधिबांधवाः

भाषार्थ—अपने कुलीन—सत्यवादी—सज्जन और अपनेसे बलमें अधिकके आश्रयले जीतनेवाले राजाकेही मित्र संबंधी बांधव सहायक होते हैं ॥ २१ ॥

प्रदत्तभृतिकाह्यन्यभूपांशप्रकल्पिताः ।
सैवाश्रयस्तुकथितोदुर्गाणिचमहात्मभिः ॥

भाषार्थ—और राजा जिनको राजका कुछ भाग दे रक्खा है अथवा वेतन मिलता है उनका जो आश्रय लेना अथवा किलेमें बैठ रहना उसीको महात्मा लोग आश्रय कहते हैं ॥ २२ ॥

अनिश्चितोपायकार्यःसमयानुचरोनृपः ।
द्वैधीभावेनवर्तेतकाकाक्षिवदलक्षितम् २३॥

भाषार्थ—जब राजाको समयके अनुसार अपने कार्यका उपाय निश्चित नहोय उस

समयका काकके नेत्रसमान द्वैधीभावसे वर्ते और किसीको प्रतीत न होय ॥ २३ ॥

प्रदर्शयेदन्यकार्यमन्यमालंबयेत्त्वा ।
सदुपायैश्चसन्मंत्रैःकार्यसिद्धिरथोद्यमैः ॥

भाषार्थ-अन्य कामको दिखावे और अन्यको ग्रहण करे अच्छे उपाय और अच्छे मंत्र और उद्यमोंसे कार्य्यकी सिद्धि ॥ २४ ॥

भवेदल्पजनस्यापिकिंपुनर्नृपतेर्नहि ।
उद्योगेनैवसिध्यंतिकार्याणिनमनोरथैः ॥

भाषार्थ-तुच्छ जनकीभी होजाती है राजाकी तो क्यों न होगी उद्योगसे कार्य सिद्ध होते हैं मनोरथ करनेसे नहीं ॥ २५॥

नहिसुप्तमृगेंद्रस्यनिपतंतिगजामुखे ।
अयोभेद्यमुपायेनद्रवतामुपनीयते ॥ २६ ॥

भाषार्थ-क्योंकि सोते हुये सिंहके मुखमें हाथी नहीं गिरते जो पदार्थ लोहेसे विंधता है वहभी उपायसे द्रव (गलना) हो जाता है ॥ २६ ॥

लोकप्रसिद्धमेवैतद्वारिवह्नेर्नियामकम् ।
उपायोपगृहीतेनतेनैतत्परिशोप्यते ॥२७॥

भाषार्थ-यह बात जगतमें प्रसिद्ध है कि जलसे अग्निशांति होती है यदि उपाय किया जाय तो अग्निही जलको शोकलेती है ॥ २७ ॥

उपायेनपदंमूर्ध्निन्यस्यतेमत्तहस्तिनाम् ।
उपायेषूत्तमोभेदःषड्गुणेषुसमाश्रयः २८

भाषार्थ-उन्मत्त हाथीयोंके मस्तकपरभी उपायसे चरण रक्खा जाता है सब उपायोंमें उत्तम गुण भेद है और ६ गुणोमें उत्तम गुण समाश्रय है ॥ २८ ॥

कार्यौद्वौसर्वदातौतुनृपेणविजिगीपुणा ।
ताभ्यांविनानैवकुर्याद्युद्धंराजाकदाचन ॥

भाषार्थ-इन दोनोंको विजयकी इच्छा वाला राजा सदैव करे इन दोनोंके विना युद्धको कदाचित्भी न करे ॥ २९ ॥

परस्परंप्रातिकूल्यंरिपुसेनपमंत्रिणाम् ।
भवेद्यथातथाकुर्यात्तत्प्रजायाश्चतत्स्त्रियाः॥

भाषार्थ-जिसप्रकार शत्रुका सेनापति और मंत्री ये परस्पर प्रतिकूल (नामाफक) हो जाय और शत्रुकी प्रजा और स्त्रियोंमें भी प्रतिकूलता हो ऐसे आचरण राजा करे ॥ ३० ॥

उपायान्षड्गुणान्वीक्ष्यशत्रोःस्वस्यापिसर्वदा ।
युद्धंप्राणात्ययेकुर्यात्सर्वस्वहरणेसति ॥३१

भाषार्थ-शत्रुके और अपने उपाय और ६ गुणोंको सदैव देखकर और सर्वस्वके हरनेपर प्राणोंके नाश आनेपर युद्धकूं करे ॥ ३१ ॥

स्त्रीविप्राभ्युपपत्तौचगोविनाशेपिब्राह्मणैः ।
प्राप्तेयुद्धेक्वचिन्नैवभवेदपिपराङ्मुखः ॥ ३२

भाषार्थ-यदि स्त्री ब्राह्मण इनकू विपत्ति हो गौंका नाश हो ब्राह्मणोंका परस्पर युद्ध हो ऐसे समयमें कभीभी युद्धसे न हटे ॥३२॥

युद्धमुत्सृज्ययोयातिसदेवैर्हन्यतेभृशम् ।
समोत्तमाधमैराजात्वाहूतःपालयन्प्रजाः ॥

भाषार्थ-जो राजा युद्धकूं छोडकर भाजता है उसको देवता सदैव नष्ट करते हैं प्रजाओंकी पालना करते हुये राजाकूं यदि युद्धके लिये समान उत्तम अधम बुलामैंतो ॥ ३३ ॥

ननिवर्तेतसंग्रामात्क्षात्रधर्ममनुस्मरन्
राजानंचापयोद्धारंब्राह्मणंचाप्रवासिनम् ३४

भाषार्थ-क्षत्रियोंके धर्मका स्मरण करता-हुआ राजा संग्रामसे न हटे जो राजा होकर युद्ध न करे और ब्राह्मण होकर पर देशमें न जाय ॥ ३४ ॥

निगीलातिभूमिरेतौसर्पोविलशयानिव ।
ब्राह्मणस्यापिचापत्तौक्षत्रधर्मेणवर्त्ततः ॥३५

भाषार्थ-इन दोनोंको भूमि इसप्रकार ग्रसलेती है जैसे सांप विलमें सोनेंवालोंको ब्राह्मणकी आपत्तिमें जो राजा क्षत्रियोंके धर्म (रक्षाकरना) से वर्त्तता है ॥ ३५ ॥

प्रशस्तंजीवितंलोकेक्षत्रंहिब्रह्मसंभवम् ।
अधर्मःक्षत्रियस्यैषयच्छय्यामरणंभवेत् ३६

भाषार्थ-जगत्‌में उसकाही जीवन श्रेष्ठ है क्योंकि ब्राह्मणसेंही क्षत्रियोंकी उत्पत्ति है क्षत्रियका यह महान् अधर्म है कि शय्यापर पडे पडे मरना ॥ ३६ ॥

विसृजन्श्लेष्मपित्तानिकृपणंपरिदेवयन् ।
अविक्षतेनदेहेनप्रलयंयोधिगच्छति ॥ ३७॥

भाषार्थ-जो क्षत्री अपने देहमेंसे कफ और पित्तको गेरता और दीन वचन कहता हुआ देहमें घाव आये विना मर जाता है३७

क्षत्रियेनास्यतत्कर्मप्रशंसंतिपुराविदः ।
नगृहेमरणंशस्तंक्षत्रियाणांविनारणात् ३८

भाषार्थ-पुरातन ऋषि उस क्षत्रीके इस कर्मकी प्रशंसा नहीं करते क्योंकि रणके विना क्षत्रियोंका घरमें मरना अच्छा नहीं३८

शौंडीराणामशौंडीरमधर्मंकृपणंचयत् ।
रणेपुंकदनंकृत्वाज्ञातिभिःपरिवारितः ॥ ३९

भाषार्थ-और शस्त्रमें कुशलोंके मध्यमें अकुशलता करनी अधर्म और कृपणताभी क्षत्रियोंको अच्छा नहीं रणमें शत्रुओंका कदन (हिंसा) करके अपनी जातिके परिवार सहित और ॥ ३९ ॥

शस्त्रास्त्रैःसुविनिर्भिन्नःक्षत्रियोवधमर्हति ।
आहवेषुमिथोन्योन्यंजिघांसंतोमहीक्षितः ॥

भाषार्थ-शस्त्र और अस्त्रोंसे भलीप्रकार विंधाहुआ क्षत्री मरनेके योग्य होता है संग्राममें परस्पर मारते हुये राजा ॥ ४० ॥

युध्यमानाःपरंशक्त्यास्वर्गंयांत्यपराङ्मुखा
भर्तुरर्थेचयःशूरोविक्रमेद्वाहिनीमुखे ॥४१॥

भाषार्थ-और शक्तिके अनुसार युद्धको करते और नहटते हुये स्वर्गमें जाते हैं जो शूरवीर अपने स्वामीके लिये सेनाके मुखपर पराक्रम करता है ॥ ४१ ॥

भयान्नविनिवर्तेततस्यस्वर्गोह्यनंतकः ।
आहवेनिहतंशूरंनशोचेतकदाचन॥ ४२ ॥

भाषार्थ-और भयसे हटता नहीं उसको अनंत स्वर्ग मिलता है संग्राममें मरे हुए शूरवीर को कदाचित्‌भी न सोचे ॥ ४२ ॥

निर्मुक्तःसर्वपापेभ्यःपूतोयातिसलोकतां ।
वराप्सरःसहस्राणिशूरमायोधनेहतम्४३॥

भाषार्थ-क्योंकि सबपापोंसे निवृत्त और पवित्र हुआ वह अच्छे लोकोंमें जाता है और संग्राम हुए शूरवीरके लिये हजारो उत्तमोत्तम अप्सरा ॥ ४३ ॥

त्वरमाणाःप्रधावंतिममभर्ताभवेदिति ।
मुनिभिर्दीर्घतपसाप्राप्यतेयत्पदंमहत्॥४४

भाषार्थ-शीघ्रतासे दोडती हैं कि यह मेरा भर्ता होगा चिरकालतक तपकरनेसे मुनिलोग जिस महान्‌पद को प्राप्त होते हैं ४४

युद्धाभिमुखानिहतेःशूरैस्तद्रागवाप्यते ।
एतत्तपश्चपुण्यंचधर्मश्चैवसनातनः ॥४५॥

भाषार्थ–यही पद युद्धमें सन्मुख हतेहुए शूरवीरको शीघ्र मिलता है यहही तप यहही पुण्य यहही सनातन धर्म है ॥ ४५ ॥

चत्वारआश्रमास्तस्ययोयुद्धेनपलायते ।
नहिशौर्यात्परंकिंचित्त्रिपुलोकेपुविद्यते ४६

भाषार्थ–और उसीके ४ आश्रमहैं जो युद्धमेंसे नही हटता तीनो लोकोमें शूरवीरतासे परे और कोई उत्तम नहीं है ॥ ४६ ॥

शूरःसर्वंपालयतिशूरेसर्वंप्रतिष्ठितं ।
चराणामचराअन्नंअदंष्ट्रादंष्ट्रिणामपि॥४७॥

भाषार्थ–शूरवीरही सबकी पालना करता है और शूरवीरहीके सब आश्रय रहते हैं चरों (मनुष्य) के अन्न स्थावर और दाढवालोंके अन्न विना दाढवाले होते हैं ४७

अपाणयःपाणिमतामन्नंशूरस्यकातराः ।
द्वाविमौपुरुषौलोकेसूर्यमंडलभेदिनौ ॥४८

भाषार्थ–हाथवालोंके अन्न विना हाथवाले और शूरवीरके अन्न कायर होतेहैं ये दो पुरुष सूर्य्यमंडलको भेदन करनेवाले होते हैं कि ॥ ४८ ॥

परिव्राट्योगयुक्तोयोरणेचाभिमुखंहतः ।
आत्मानंगोपयेच्छक्तोवधेनाप्याततायिनः

भाषार्थ–योगसे युक्त संन्यासी और संग्राममें सन्मुख मरा हुआ शूरवीर और समर्थ मनुष्य आततायी (शस्त्रधारी) के मारनेसे अपने आत्माकी रक्षा करै ॥ ४९ ॥

सुविद्योब्राह्मणगुरुर्युधेश्रुतिदर्शनात् ।
आततायित्वमापन्नोब्राह्मणःशूद्रवत्स्मृतः ॥

भाषार्थ–क्योंकि वेदकी आज्ञासे विद्यावान् और ब्राह्मणभी द्रोणाचार्यने युद्ध किया ब्राह्मणभी आततायी शूद्रके समान कहा है ॥ ५० ॥

नाततायिवधेदोषोहंतुर्भवतिकश्चन ।
उद्यम्यशस्त्रमायातंभ्रूणमप्याततायिनं ॥

भाषार्थ–आततायीके मारनेमें मारनेवालेको कोई भी दोष नही होता जो आततायी शस्त्र उठाकर आताहो चाहे वह भ्रूण (बालक) भी हो ॥ ५१ ॥

निहत्यभ्रूणहानस्यादहत्वाभ्रूणहाभवेत् ।
अपसर्पतियोयुद्धाज्जीवितार्थीनराधमः ॥

भाषार्थ–उसको मारकर भ्रूणहत्या नहीं लगती और न मारे तो लगती है जो मनुष्योमें नीच जीनेकेलिये युद्धसे हटता है५२

जीवन्नेवमृतःसोपिभुंक्तेराष्ट्रकृतंत्वघं ।
मित्रंवास्वामिनंत्यक्त्वानिर्गच्छतिरणाच्चयः

भाषार्थ–वह जीवता हुआही मरा है और सब देशके पापको भोगता है जो मनुष्य मित्र वा अपने स्वामीको त्यागकर रणमेंसे भागता है ॥ ५३ ॥

सोंतेनरकमायातिसजीवोनिंद्यतेखिलैः ।
मित्रमापद्गतंदृष्ट्वासहायंनकरोतियः ॥५४

भाषार्थ–जीते हुए उसकी सब निंदा करते हैं और अंत समयमें नरककू जाता है जो मनुष्य अपने मित्रकी आपत्ति देखकर सहायता नहीं करता ॥ ५४ ॥

अकीर्तिंलभतेसोत्रमृतोनरकमृच्छति ।
विस्रंभाच्छरणंप्राप्तंयःसंत्यजतिदुर्मतिः॥

भाषार्थ–वह इसलोकमें अकीर्त्तिको प्राप्त होता है और मरकर नरकमें जाता है जो दुर्मति मनुष्य विश्वाससे शरण आयेकूं त्यागता है ॥ ५५ ॥

स्यातिनरकेघोरेयावदिंद्राश्चतुर्दश ।
सुदुर्वृत्तंयदाक्षत्रंनाशयेयुस्तुब्राह्मणाः॥५६

भाषार्थ-वह चौदह इन्द्रोंके राज्यतक घोर नरकमें जाता है यदि दुराचारी क्षत्रीको ब्राह्मण नष्ट करदे ॥ ५६ ॥

युद्धंकृत्वापिशस्त्रास्त्रैर्नतदापापभाजिनः ।
हीनंयदाक्षत्रकुलंनीचैर्लोकःप्रपीड्यते ॥

भाषार्थ-उस समय शस्त्र और अस्त्रोंसे युद्ध करकेभी ब्राह्मण पापके भागी नहीं होते और जब क्षत्रियोंका कुल हीन (असमर्थ) हो जाय और नीच जगत्को पीडा देते हों ॥ ५७ ॥

तदापिब्राह्मणायुद्धेनाशयेयुस्तुतान्ध्रुवम् ।
उत्तमंमांत्रिकास्त्रेणनालिकास्त्रेणमध्यमम्

भाषार्थ-उस समयमेंभी युद्ध करके ब्राह्मण उन नीचोंको अवश्य नष्ट करै मंत्रके अस्त्रोंसे युद्धको उत्तम और तोपको अस्त्रोंसै युद्धको मध्यम ॥ ५८ ॥

शस्त्रैःकनिष्ठयुद्धंतुबाहुयुद्धंततोऽधमम् ।
मंत्रेरितमहाशक्तिबाणाद्यैःशत्रुनाशनम् ॥

भाषार्थ-और शस्त्रोंके युद्धको कनिष्ठ और भुजाओंके युद्धको अधम मंत्रसे फेंकी हुई महा शक्ति (बरछी) और बाणोंसे जो शत्रुका नाश ॥ ५९ ॥

मांत्रिकास्त्रेणतद्युद्धंसर्वयुद्धोत्तमंस्मृतं ।
नालाग्निचूर्णसंयोगाल्लक्षेगोलनिपातनम् ॥

भाषार्थ-मंत्रके अस्त्रोंसे किये हुए उस उद्यमको सब युद्धोंमें उत्तम कहते हैं तोपमें दारुके संयोगसे जो लक्ष्यपर गोलेका गेरना ॥ ६० ॥

नालिकास्त्रेणतद्युद्धंमहाह्रासकरंरिपोः ।
कुंतादिशस्त्रसंघातैरिपूणांनाशनंचयत् ॥

भाषार्थ-नालिक अस्त्रसे किया हुआ वह युद्ध शत्रुकी बडी हानि करता है कुंत आदि शस्त्रोंकी समूहसे जो शत्रुओंको नष्ट करना ॥ ६१ ॥

शस्त्रयुद्धंतुतज्ज्ञेयंनालास्त्राऽभावतःसदा ।
कर्षणैःसंधिमर्माणांप्रतिलोमानुलोमतः ॥

भाषार्थ-नाल अस्त्रोंके न होने पर किये हुए युद्धको सदैव शस्त्रयुद्ध कहते हैं उलटे पलटे शत्रुकी सन्धिके मर्मोंको जो खींचना ॥ ६२ ॥

बंधनैर्घातनंशत्रोर्युक्त्यातद्बाहुयुद्धकं ।
नालास्त्राणिपुरस्कृत्यलघूनिचमहंतिच ॥

भाषार्थ-और युक्तिसे बाधकर शत्रुको मारना उसे बाहुयुद्ध कहते हैं छोटे और बडे नालास्त्रोंको आगे ॥ ६३ ॥

तत्पृष्ठगांश्चपादातान्गजाश्वान्पार्श्वयोस्थि
तान् ।
कृत्वायुद्धंप्रारभेतभिन्नामात्यबलारिणा ॥

भाषार्थ-उनके पीछे पदातियोंको और दोनों तरफ आसपासमें हाथी और घोडोंको करके ऐसे शत्रुके संग युद्धका प्रारंभ करै जिसके मंत्री फटगये हों ॥ ६४ ॥

सांख्येनसुप्रपातेनपार्श्वाभ्यामपयानतः ।
युद्धानुकूलभूमेस्तुयावल्लाभस्तथाविधम् ॥

भाषार्थ-सांख्य (मोरचा) से और भली प्रकार प्रपाते (फेरे) से और पार्श्वोंकी तरफसे लोटनेसे युद्ध करै-जिस प्रकारकी युद्धके अनुकूल और जितनी भूमि मिले६५

सैन्यार्धांशेनप्रथमंसेनयोर्युद्धमीरितं ।
अमात्यगोपितैःपश्चादमात्यैःसहतद्भवेत् ॥

भाषार्थ-उसमें सेनाके आधे २ भागसे दोनों सेनाओंका युद्ध कहा है और पीछेसे

मंत्रीकी सेना वा मंत्रियोंके संग युद्ध होता है ॥ ६६ ॥

नृपसंगेोपितैःपश्चात्स्वतःप्राणात्ययेचतत् ।
दीर्घाध्वानिपरिश्रांतंक्षुत्पिपासाहितश्रमम् ॥

भाषार्थ-फिर राजाके सेवकोंके संग और पीछेसे प्राणोंका नाश होता दीखें तो स्वयं राजाकोही युद्ध करना कहा है मार्गसे थकित हो अथवा क्षुधा और तृषासे युक्त होय६७॥

व्याधिदुर्भिक्षमरकैःपीडितंदस्युविद्रुतं ।
पंकपांसुजलंस्कंधव्यस्तंवासातुरंतथा ॥ ६८

भाषार्थ-अथवा व्याधि-अकाल-और मरीसे पीडित हो अथवा चारोंका भगाया हुआ हो वा कीच और धूलका जल पीती हो जिसके स्कंध अस्त व्यस्त हों और जिसका वासभी अच्छा न हो ॥ ६८ ॥

प्रसुप्तंभोजनेव्यग्रमभूमिष्ठमसंस्थितं ।
घोराग्निभयवित्रस्तंवृष्टिवातसमाहतम् ६९ ॥

भाषार्थ-सोता हो अथवा भोजन करता हो ऐसी भूमिमें टिका हो बिगडी हो-घोर अग्निसे दुखी हो अधिक वृष्टि वायुवनसे पीडित हो ॥ ६९ ॥

एवमादिषुजातेपुव्यसनैश्चसमाकुलं ।
स्वसैन्यंसाधुरक्षेत्तुपरसैन्यंविनाशयेत् ॥ ७०

भाषार्थ-इत्यादि पूर्वोक्त कारण होनेपर और व्यसनोंसे युक्त अपनी सेनाकी तो राजा रक्षा करै और पराई सेनाको नष्ट करै ॥ ७० ॥

उपायान्षड्गुणान्मंत्रंशत्रोःस्वस्यापिचिंतयेत् ।
धर्मयुद्धैःकूटयुद्धैर्हन्यादेवरिपुंसदा ॥ ७१ ॥

भाषार्थ-शत्रुके और अपने उपाय और छः गुणोंवाले मंत्रोंकी चिंता करै (विचारै) धर्मके अथवा छलके युद्धोंसे सदैव शत्रुको मारै ॥ ७१ ॥

यानेसपादभृत्यातुस्वभृत्यावर्धयन्नृपः ।
स्वदेहंगोपयन्युद्धेचर्मणाकवचेनच ॥ ७२ ॥

भाषार्थ-यानके समयमें योद्धाओंकी भृति (नौकरी) को एक चौथाई बढावे और युद्धके समयमें चर्म (ढाल) और कवचसे अपने देहकीभी रक्षा करै ॥ ७२ ॥

पाययित्वामदंसम्यक्सैनिकाशौर्यवर्धनं ।
नालास्त्रेणचखड्गाद्यैःसैनिकैर्दारयेदरीन् ॥

भाषार्थ-और सेनाके वीरोंकी जिससे शूर वीरता बढै ऐसे मद (मदिरा) को प्याकर-नालास्त्र (तोप) से और खड्ग (तलवार) आदिसे सैनिकों पर शत्रुओंको मरवावे७३

कुंतेनसादिवाणेनरथिनंरथगोपिच ।
गजोगजेनयातव्यस्तुरगेणतुरंगमः ॥ ७४ ॥

भाषार्थ-भालावाला सवारके संमुख और रथवाला रथवान्के-हाथी हाथीके और घोडा घोडेके साह्मने चलै ॥ ७४ ॥

रथेनचरथोयोज्यःपत्तिनापत्तिरेवच ।
एकेनैकश्चशस्त्रेणशस्त्रमस्त्रेणवास्त्रकम् ७५ ॥

भाषार्थ-रथके संग रथको और पदातिके संग पदातिको एकके संग एकको-और शस्त्रके संग शस्त्रको और अस्त्रके संग अस्त्रको मिलावे ॥ ७५ ॥

नचहन्यात्स्थलारूढंनक्लीबंनकृतांजलिं ।
नमुक्तकेशमासीनंनतवास्मीतिवादिनम् ७६

भाषार्थ-स्थल (मेदान) में खडे और नपुंसक-और कृतांजलि (हाथ जोडना) को और जिसके केश खुलेहों-और जो स्वस्थबैठा हो-और जो तेराही मैंहूं ऐसे कहता हो ॥ ७६ ॥

नसुसन्नंविसन्नाहंननग्नंननिरायुधं।
नयुध्यमानंपश्यंतंयुध्यमानंपरेणच ॥७७॥

भाषार्थ-जो सोता हो कवचहीन नग्न आयुधरहित हो जो युद्ध करतेहुए किसी को देखता हो अथवा दूसरेके संग युद्ध करता हो ॥ ७७ ॥

पिबतंनचभुंजानमन्यकार्याकुलंचन।
नभीतंनपरावृत्तंसतांधर्ममनुस्मरन् ॥ ७८

भाषार्थ-और जो जल पीता हो भोजन करता हो अथवा किसी अन्य कार्यमें व्याकुल हो भयभीत हो युद्धसे जो पराङ्मुख (हटा) हो इतने शत्रुओंको सत्पुरुषोंके धर्मको स्मरण करता हुआ राजा कभी न मारे७८॥

वृद्धोबालोनहंतव्योनैवस्त्रीकेवलोनृपः।
यथायोग्यंसंयोज्यनिघ्नन्धर्मोनहीयते ॥७९

भाषार्थ-वृद्ध-बालक-स्त्री-अकेला राजा इनकोभी न मारै योग्यसे योग्यको मिलाकर शत्रुके मारनेमें धर्म नष्ट नहीं होता ॥ ७९॥

धर्मयुद्धेतुकूटेवैनसंतिनियमाअमी।
नयुद्धंकूटसदृशंनाशनंबलवद्रिपोः ॥८०॥

भाषार्थ-ये नियम धर्मयुद्धमें हैं छलके युद्धमें कोई नियम नहीं है बलवान् शत्रुको नष्ट करनेवाले कूटयुद्धके समान और युद्ध नहीं है ॥ ८० ॥

रामकृष्णेंद्रादिदेवैःकूटमेवादृतंपुरा।
कूटेननिहतोबालिर्यवनोनमुचिस्तथा ॥८१

भाषार्थ-पहलेभी राम कृष्ण इन्द्र आदि देवताओंने कूट युद्धकाही आदर किया है बाली कालयवन नमुचि ये सब कूटयुद्धसेही मारे हैं ॥ ८१ ॥

प्रफुल्लवदनेनैवतथाकोमलयागिरा।
क्षुरधारेणमनसारिपोश्छिद्रंसुलक्षयेत्॥८२

भाषार्थ-देहकी प्रफुल्लता और कोमलवानी छुरेकी धारा और मन इनसे शत्रुके छिद्रको भलीप्रकार देखे ॥ ८२ ॥

मंचासीनःशतानीकःसेनाकार्यंविचिंतयन्।
सदैवव्यूहसंकेतवाद्यशब्दांतवर्तिनः॥८३॥

भाषार्थ-मंचपर बैठा हुआ सेनापति सेनाको कार्यको विचारे व्यूहके संकेतोंके जो बाजे उसके भीतरके सैनिक ॥ ८३ ॥

संचरेयुःसैनिकाश्चराजराष्ट्रहितैषिणः।
भेदितांशत्रुणादृष्ट्वास्वसेनांयातयेत्ततां८४

भाषार्थ-राजा और देशके हितको चाहते हुए विचरें शत्रुसे भेदन किई हुई अपनी सेनाको देखकर यत्नसे रक्षाकरे ॥ ८४ ॥

भृत्यग्रेकर्मणिकृतेयोधैर्दद्याद्धनंचतान्।
पारितोष्यंवाधिकारंक्रमेताहैन्नृपःसदा ८५

भाषार्थ-सेनाके योद्धाओंमें यदि कोई योद्धा किसी भारी कामको करै तो उसको धन दे अथवा पारितोषिक वा उत्तम अधिकार क्रमसे सदैव दे ॥ ८५ ॥

जलान्नतृणसंरोधैःशत्रून्संपीड्ययत्नतः।
पुरस्ताद्विषमेदेशेपश्चाद्धन्यात्तुवेगवान् ८६

भाषार्थ-जल अन्न तृण इनके रोकसे यत्नपूर्वक शत्रुओंको दुःखी करके अपने आगे विषमदेशमें टिके शत्रुको पीछेसे सेनाका वेग बढाकर नष्ट करै ॥ ८६ ॥

कूटस्वर्णमहादानैर्भेदयित्वाद्विषद्बलं।
नित्यविस्रंभसंसुप्तंप्रजागरकृतश्रमं ॥८७॥

भाषार्थ-झूठो सोनाका महान् दानदेदेकर शत्रुकी सेनाको तोडे और प्रतिदिन विश्वाससे सोती और जागनेके श्रमसे युक्त ॥ ८७ ॥

विलोभ्यापिपरानीकमप्रमत्तोविनाशयेत् ।
तत्सहायबलंनैवव्यसनात्समपिक्कचित् ॥८८

भाषार्थ-शत्रुकी सेनाको विशेष लोभ देकरभी सावधान राजा नष्ट करै शत्रुके सहायककी सेनाको संकटके समयमें कदाचित्भी न मारै ॥ ८८ ॥

स्वसमीपतरंराज्यंनान्यस्मात्ग्राहयेत्क्वचित्
क्षणंयुद्धायसज्येतक्षणंचापसरेत्पुनः॥८९॥

भाषार्थ-जो राज्य अपने राज्यके अत्यंत समीप हो उसको दूसरे राजाको कदाचित् नलेनेदे क्षणमात्रहीमें युद्धके लिये तैयार होजाय और फिर क्षणमात्रहीमें युद्धसे हटजाय ॥ ८९ ॥

अकस्मान्निपतेद्दूराद्दस्युवत्परितःसदा ।
रूप्यंहेमचकूप्यंचयोयज्जयतितस्यतत् ९०

भाषार्थ-और अचानक दूरसेही चौरके समान चारों तरफ सदैव प्रहार करै चांदी सोना और धन ये सब जिस योधाने जीते हो उसकेही होते हैं ॥ ९० ॥

दद्यात्कार्यानुरूपंचहृष्टोयोधान्प्रहर्षयन् ।
विजित्यैवरिपूनेवंसमादद्यात्करंतथा॥९१॥

भाषार्थ-प्रसन्न हुआ योधाओंकी प्रसन्नताके लिये कामके अनुसार वस्तुओंको दे इस प्रकार राजा शत्रुओंको जीतकर उनसे करका ग्रहण करै ॥ ९१ ॥

राज्यांशंवासर्वराज्यंनंदयीततत:प्रजाः ।
तुर्यमंगलघोषेणस्वकीयंपुरमाविशेत् ९२॥

भाषार्थ-वह कर जो राज्यका भाग अथवा सम्पूर्ण राज्य हो फिर शत्रुकी प्रजाको प्रसन्न करै और मंगलके बाजे बजाता हुआ अपने पुरमें प्रवेशकरै ॥ ९२ ॥

तत्प्रजाःपुत्रवत्सर्वाःपालयीतात्मसात्कृताः
नियोजयेन्मंत्रिगणमपरंमंत्रचिंतने ॥९३॥

भाषार्थ-उस शत्रुकी सम्पूर्ण प्रजाका अपने आधीन करके पुत्रके समान पालनकरे और मंत्रके विचारमें दूसरे मन्त्रिओंके समूहको नियुक्त करे ॥ ९३ ॥

देशेकालेचपात्रेचह्यादिमध्यावसानतः ।
भवेन्मंत्रफलंकीदृगुपायेनकथंत्विति॥९४॥

भाषार्थ-देश काल पात्र आदि मध्य अन्त इनमें उपर किस प्रकार उपाय करनेसे मन्त्रका फल क्या होगा इसको ॥९४ ॥

मंत्र्याद्यधिकृतःकार्यंयुवराजायबोधयेत् ।
पश्चाद्राज्ञेतुतैःसाकंयुवराजानिवेदयेत्॥९५

भाषार्थ-मंत्री आदि अधिकारी इस कार्यको यो राजको कहैं फिर मंत्री आदि सहित युवराजा राजाके प्राति निवेदन करै९५

राजासंशासयेदादौयुवराजंततस्तुसः ।
युवराजोमंत्रिगणान्राजाग्रेतेधिकारिणः ९६

भाषार्थ-राजा प्रथम युवराजको शिक्षा दे फिर युवराज मन्त्री आदि समूहको शिक्षित करै क्योंकी राजाके आगो वेही अधिकारी होते हैं ॥ ९६ ॥

सदसत्कर्मराजानंबोधयेद्धिपुरोहितः ।
ग्रामाद्बहिःसमीपेतुसैनिकान्धारयेत्सदा ॥

भाषार्थ-राजाके सत् असत् कर्मका पुरोहित बोधन करै और ग्रामसे बाहर समीपमेंही सैनिकोंको सदैव टिकावे ॥९७॥

ग्राम्यसैनिकयोर्नस्यादुत्तमर्णाधमर्णता ।
सैनिकार्थंतुपण्यानिसैन्येसंधारयेत्पृथक् ॥

भाषार्थ-ग्रामके निवासी और सैनिकोंका उत्तमर्ण अधमर्ण व्यवहार (लेनदेन)

न होने दे सैनिकोंके लिये सेनामेंही पृथक् बाजार वनवावे ॥ ९८ ॥

नैकत्रवासयेत्सैन्यंवत्सरंतुकदाचन ।
सेनासहस्रंसज्जंस्यात्क्षणात्संशासयेत्तथा ॥

भाषार्थ–एक स्थानपर सेनाको कदाचित् न वसावे जिस प्रकार हजारों सेना एक क्षणमेंही तयार होजाय ऐसी शिक्षादे ९९ ॥

संशासयेत्स्वनियमान्सैनिकानष्टमेदिने ।
चंडत्वमाततायित्वंराजकार्येविलंवनम् ॥

भाषार्थ–और आठमे दिन सैनिकोंको अपने नियमकी शिक्षा देतारहै कि क्रोध आततायी राजाके कार्यमे विलंव॥१२०० ॥

अनिष्टोपेक्षणंराज्ञःस्वधर्मपरिवर्जनं ।
त्यजंतुसैनिकानित्यंसंल्लापमपिवापरैः ॥

भाषार्थ–राजाके अनिष्टकी उपेक्षा अपने धर्मका परित्याग शत्रुओंके संग संभाषण इन सबको सेनाके मनुष्य प्रतिदिन त्यागदे ॥ २०१ ॥

नृपाज्ञयाविनाग्रामंनविशेयुःकदाचन ।
स्वाधिकारिगणस्यापिह्यपराधंदिशंतुनः ॥

भाषार्थ–राजाकी आज्ञाके विना कदाचित् ग्राममें नजाँय और अपने अधिकारी गणका जो अपराध हो उसे हमको कहै १२०२ ॥

मित्रभावेनवर्तध्वंस्वामिकृत्येसदाऽखिलैः ।
सूज्ज्वलानिचरक्षंतुशस्त्रास्त्रवसनानिच ॥

भाषार्थ–और स्वामीके कार्य्यमें संपूर्ण सदैव मित्रभावसे वर्ताव करै और अपने शस्त्र अस्त्र और वस्त्रोंको उज्ज्वल रक्खे और रक्षा करै ॥ ३ ॥

अनंजलंप्रस्थमात्रंपात्रंबह्वन्नसाधकं ।
शासनादन्यथाचारान्विनेष्यामियमालयं

भाषार्थ–अन्न और जल ये प्रस्थभर और जिसमें वहुत अन्न आनाय ऐसा पात्रहो जो मेरी शिक्षाका भंग करेगा उसे यमराजके स्थानपर पहुंचाऊंगा ॥ ४ ॥

भेदायितारिपुधनंगृहीत्वादर्शयंतुमा ।
सैनिकैरभ्यसेन्नित्यंव्यूहाद्यनुकृतिंनृपः ५॥

भाषार्थ–भेदन किये हुए शत्रुके धनको हमें दिखाओं राजाभी सैनिकोंके संग सेनाके व्यूहोंका प्रतिदिन अभ्यास करै॥५॥

तथाऽयनेयनेलक्ष्यमस्त्रपातैर्विभेदयेत् ।
सायंप्रातःसैनिकानांकुर्यात्संगणनंनृपः ॥ ६

भाषार्थ–तिसी प्रकार अयन२ (मोके २) पर अस्त्रोंको फेंककर लक्षको वींधे–और सायंकाल और प्रातःकालके समय राजा सैनिकोंकी गिनती करै ॥ ६ ॥

जात्याकृतिवयोदेशग्रामवासान्विमृश्यच ।
कालंभृत्यवधिंदेयंदत्तंभृत्यस्यलेखयेत्॥७

भाषार्थ–भृत्यकी जाति–आकार–अवस्था देश–ग्रामको वास –और समय भृतिके अवधि–दियाहुआ द्रव्य–देने योग्य और इन सवको–लिखै ७ ॥

कतिदत्तंहिभृत्येभ्योवेतनेपारितोषिकं ।
तत्प्राप्तिपत्रंगृह्णीयाद्द्याद्वेतनपत्रकम्॥८॥

भाषार्थ–वेतनमें भृत्योंको कितना पारितोषिक दिया उसकी प्राप्तिका पत्र (रसीद) ले–और वेतन (नौकरी) का पत्र उसको देदे ॥ ८ ॥

सैनिकाःशिक्षितायेयेतेषुपूर्णाभृतिःस्मृता ।
व्यूहाभ्यासेनियुक्तायेतेष्वर्धाभृतिमावहेत्॥

भाषार्थ–जो सैनिक शिक्षक हैं उन २ की भृति (नौकरी) पूर्ण देनी कही है–और जो

सैनिक व्यूहके अभ्यासमें नियुक्त हैं उनको उनसे आधी भृतिको दे ॥ ९ ॥

असत्कर्त्राश्रितंसैन्यंनाशयेच्छत्रुयोगतः।
नृपस्यासद्गुणरताःकेगुणद्वेषिणोनराः॥१०

भाषार्थ–शत्रुके योग (वहकाना) से जो सेना असत् कामको करै उसको नष्ट करै राजाकी बुराईमें कौन तत्पर हैं और कौन मनुष्य राजाके गुणोंका द्वेष करते हैं ॥ १०॥

असद्गुणोदासीनाःकेहन्यात्तान्विमृशन्नृपः।
सुखासक्तांस्त्यजेद्भृत्यान्गुणिनोपिनृपःसदा

भाषार्थ–कौन असद्गुणी है और कौन उदासीन हैं उन सबको विचार २ कर राजा नष्ट करै जो भृत्य सुखमें आसक्त हों वेचा है गुणवान्भी हों तथापि राजा उनको सदैव त्याग दे ॥ ११ ॥

सुस्वांतलोकविश्वस्तायोज्यास्त्वंतःपुरादिषु
धार्याःसुस्वांतविश्वस्ताधनादिव्ययकर्मणि

भाषार्थ–भली प्रकार स्वयं जाचे और जगत्में विश्वास वाले जो भृत्य उनको अंतःपुर (रणवास) में नियत करै और भलीप्रकार स्वयं जिनका विश्वास करलिया हो उनको धनके व्यय (खर्च) करनेमें नियुक्त करै ॥ १२ ॥

तथाहिलोकोविश्वस्तोबाह्यकृत्येनियुज्यते।
अन्यथायोजितास्तेतुपरीवादायकेवलम् ॥

भाषार्थ–इसी प्रकार जगत्के विश्वासीको वाहिरके कृत्यमें नियुक्त करै यादि इन पूर्वोक्तोंको अन्यथा नियुक्त करै तो केवल अपयशके लियेही होते हैं ॥ १३ ॥

शत्रुसंबंधिनोयेयेभिन्नामंत्रिगणादयः।
नृपदुर्गुणतोनित्यंहृतमानागुणाधिकाः १४

भाषार्थ–जो २ भृत्य शत्रुके संबंधी हों और जो २ मंत्रियोंके भिन्न गण (फटे) हों राजाके दुष्ट गुणोंसे गुणोंमें अधिक भी उनके मान (सत्कार) को हरले ॥ १४ ॥

स्वकार्यसाधकायेतुसुभृत्यापोषयेच्चतान्।
लोभेनासेवनाद्भिन्नास्तेष्वर्धांभृतिमावहेत् ॥

भाषार्थ–जो अच्छे भृत्य अपने कार्यके साधक हों उनका पोषण करै जो लोभसे और सेवा करनेसे भिन्न (विमुख) हों उनके आधी भृति दे ॥ १५ ॥

शत्रुत्यक्तान्सुगुणिनःसुभृत्यान्पालयेन्नृपः।
परराष्ट्रेहृतेदद्याद्भृतिंभिन्नावधितथा १६ ॥

भाषार्थ–जिन अच्छे गुणोंवालोंको शत्रुने त्यागदिया हो उनकी अच्छी भृति देकर पालना करै जिस समय पराया देश लिया जाय उस समय भिन्नावधि (भत्ता) और भृति उसको दे ॥ १६ ॥

दद्यादर्धांतस्यपुत्रेस्त्रियैपादमितांकिल।
हृतराज्यस्यपुत्रादौसद्गुणेपादसंमितम्॥

भाषार्थ–और उसके पुत्रको आधी और उसकी स्त्रीको चौथाई दे–जिसका राज्य हरा हो अच्छे गुणी उसके पुत्र आदिको चौथाई राज्य दे ॥ १७ ॥

दद्याद्वातद्राज्यतस्तुद्वात्रिंशांशंप्रकल्पयेत्।
हृतराज्यस्यनिचितंकोशंभोगार्थमाहरेत् ॥

भाषार्थ–अथवा उसके राज्यमेंसे बत्तीसवां भाग दे और जिसका राज्य हरा हो उसके संचित कोश (खजाना) को भोगनेके लिये लेआवे ॥ १८ ॥

कौसीदंवातद्धनस्यपूर्वोक्तार्धंप्रकल्पयेत्।
तद्धनंद्विगुणंयावन्नतदूर्ध्वंकदाचन ॥१९॥

भाषार्थ-अथवा उसके धनमेंसे आधे धनको व्याजमें पूर्वोक्तसे आधा द्रव्य दे परन्तु इतनेही दे जबतक उसके धनसे दूना व्याज पहुंचे फिर उसके पीछे कदाचित् नदे १९॥

स्वमहत्त्वद्योतनार्थंहृतराज्यान्प्रधारयेत्। प्राङ्मानैर्यदिसद्वृत्तान्दुर्वृत्तांस्तुप्रपीडयेत्

भाषार्थ-अपनी बडाईके जतानेके लिये जिनका राज्य हराहो उनकीभी पालना करै यदि वे मान आदिसे पहिले सदाचारी हों-यदि दुराचारी होंय तो पीडित करै ॥ २० ॥

अष्टधादशधावापिकुर्यात्द्वादशधापिवा। यामिकार्थमहोरात्रंयामिकान्वीक्ष्यनान्यथा

भाषार्थ-आठ वा दश-अथवा बारह यामिको (पहरे दार) को देखकर यामिक (पहरा) के लिये रातदिनमें नियत करै ॥२१॥

आदौप्रकल्पितानंशान्भजेयुर्यामिकास्तथा आद्यःपुनस्त्वंतिमांशःस्वपूर्वांशंततोपरे २२

भाषार्थ-नियत होनेके समय जितना भाग पहरेके लिये नियत हुआ हो उसकी सब यामिक पालना करैं-पहिले भागको पहिला उससे अगले भागको दूसरा और अपनेसे पूर्व अंशको वे लें जो अन्य हैं ॥ २२ ॥

पुनर्वायोजयेत्तद्वदाद्येत्यंचांतिमेततः। स्वपूर्वांशंद्वितीयेह्निद्वितीयादिःक्रमागतम्॥

भाषार्थ-अथवा फिर (बदली) अंत्य (पिछला) को आद्य समयमें और आद्यको अंत्य समयमें दूसरे दिन अपने पूर्व अंशमें द्वितीय आदि क्रमसे नियत करै ॥ २३ ॥

चतुर्भ्यस्त्वधिकान्नित्यंयामिकान्योजयेद्दिने युगपद्योजयेद्दृष्ट्वाबहून्वाकार्यगौरम् ॥२४॥

भाषार्थ-एक दिनमें चारसे अधिक यामिकोंको सदैव नियत करै और कार्यका गौरव (भारी) देखकर एक वारही बहुत यामिकोंको नियत करै ॥ २४ ॥

चतुरूनान्यामिकांस्तुकदानैवनियोजयेत्। यद्रक्ष्यमुपदेक्ष्यंयदादेश्यंयामिकायतत्२५

भाषार्थ-और चारसें कम यामिकोंको तो कदाचित्भी नियुक्त न करै-जिसकी रक्षा करनी हो अथवा जो उपदेशके योग्य हो उसे यामिकोंको बतायदे ॥ २५ ॥

तत्समक्षंहिसर्वंस्याद्यामिकोपिचतत्तथा कीलकोष्ठेतुस्वर्णादिरक्षेन्नियमितावधि २६

भाषार्थ-उसीके साम्नें सवहो और यामिकभी उसै उसी प्रकार करै और जिसमें कील लगी हो ऐसे कोठेमें नियमसे स्वर्ण आदिकी रक्षा करै ॥ २६ ॥

स्वांशांतेदर्शयेदन्ययामिकंतुयथार्थकं। क्षणेक्षणेयामिकानांकार्यंदूरात्सुबोधनम्२७

भाषार्थ-पहिला यामिक अपने भागके अंतमें दूसरे यामिकको यथार्थ रीतिसे दिखादे-क्षण २ में यामिकों कार्यको दूरसेही समझा दे ॥ २७ ॥

सत्कृतान्नियमान्सर्वान्यदासंपालयेन्नृपः तदैवनृपतिःपूज्योभवेत्सर्वेपुनान्यथा २८॥

भाषार्थ-जब राजा अपने किये हुये सबनियमोंकी पालना जब करता है तभी राजा सब मनुष्योंके बीचमें पूजा (बडाई) के योग्य होता है अन्यथा नहीं होता ॥ २८ ॥

यस्यास्तिनियतंकर्मनियतःसद्ग्रहोयदि। नियतोऽसद्ग्रहत्यागोनृपत्वंसोश्नुतेचिरम्॥

भाषार्थ-जिस राजाका काम नियत है और जिसको आग्रहभी अच्छाही नियत है और असत् (बुरा) आग्रहका त्यागभी

नियत है वही राजा चिरकालतक राज्यको भोगता है ॥ २९ ॥

यस्यानियमितंकर्मसाधुत्वंवचनंत्वपि ।
सदैवकुटिलःसस्तुस्वपदाद्राग्विनश्यति३०

भाषार्थ–जिस राजाके कामका नियम नही उसके चांह वचन अच्छेभी हों तोभी वह सदैव कुटिल है और वह अपने पद (राजगद्दी)से शीघ्रही पतित (गिरना) होता है ॥ ३० ॥

नापिव्याघ्रागजाःशक्तामृगेंद्रंशासितुंयथा ।
नतथामंत्रिणःसर्वेनृपंस्वच्छंदगामिनम्३१

भाषार्थ–जैसे भिडा और हाथी सिंहको शिक्षा देनेके लिये समर्थ नहीं होते तिसी प्रकार संपूर्ण मंत्रियोंके गण स्वच्छंदचारी राजाको शिक्षा नही दे सकते ॥ ३१ ॥

निभृताधिकृतास्तेननिःसारत्वंहितेप्वतः ।
गजोनिवध्यतेनैवतूलभारसहस्रकैः ॥ ३२॥

भाषार्थ–वे मंत्री राजासेही पाले हैं और राजानेही उनको अधिकार दिया है इससे उनमें सार (दृढता) नही होता–तूलाके सहस्रों भारोंसेभी हाथी नही बांधा जा सकते ॥ ३२ ॥

उद्धर्तुंद्रागगजःशक्तःपंकलग्नंगजंवली ।
नीतिभ्रष्टनृपंत्वन्यनृपउद्धारणक्षमः ॥३३॥

भाषार्थ–और वलवान् हाथी यंत्र(कीच) में फसे हुये दूसरे हाथीको जैसे शीघ्रही उद्धार सकता है इसी प्रकार नीतिसे भ्रष्ट (हीन) राजाकोभी अन्य राजा उद्धार करनेको समर्थ होता है ॥ ३३ ॥

वलवन्नृपभृत्येऽल्पेऽपिश्रीस्तेजोयथाभवेत् ।
तथानहीननृपतौतन्मंत्रिष्वपिनोतथा ३४॥

भाषार्थ–वलवान् राजाके छोटेभी भृत्यमें जैसे लक्ष्मी और तेज होता है वैसा तेजहीन राजामें और उसके मंत्रियोंमेंभी नहीं होता ॥ ३४ ॥

वहूनामैकमत्यंहिनृपतेर्वलवत्तरं ।
वहुसूत्रकृतोरज्जुःसिंहाद्याकर्पणक्षमः ॥ ३५

भाषार्थ–वहुत मंत्री आदिकी जो एक मति वही राजाका अधिक वल है क्योंकि वहुतसे सूतोंकी वनाई हुयी रज्जु (रस्सी) सिंह आदिकेभी खींचनेमें समर्थ होती है३५

हीनराज्योरिपुभृत्योनसैन्यंधारयेद्वहु ।
कोशवृद्धिंसदाकुर्यात्स्वपुत्राद्यभिवृद्धये ३६

भाषार्थ–जिसका राज्य छिन गया हो और शत्रुकी सेवा करता हो ऐसा राजा अधिक सेनाको न रक्खैं और राजा अपने पुत्र आदिकी वृद्धिके लिये कोश (खजाना) की वृद्धि सदैव करै ॥ ३६ ॥

क्षुधयानिद्रयासर्वमशनंशयनंशुभम् ।
भवेद्यथातथाकुर्यादन्यथाशुदरिद्रकृत्॥ ३७

भाषार्थ–क्षुधा होनेपर भोजन और निद्राके आनेपर भली प्रकार शयन जैसे होय तैसेही करै इससे जो अन्यथा करता है वह शीघ्रही दरिद्री होता है ॥ ३७ ॥

दिशानयाव्ययंकुर्यान्नृपोनित्यंनचान्यथा ।
धर्मनीतिविहीनायेदुर्वलाअपिवैनृपाः ॥ ३८

भाषार्थ–इसी प्रकार राजा सदा व्यय (खर्च)को करै अन्यथा नकरै जो दुर्वल राजा धर्म–और नीतिसे हीन हैं ॥ ३८ ॥

सुधर्मवलयुग्राज्ञादंड्यास्तेचौरवत्सदा ।
सर्वधर्मावनान्नीचनृपोपिश्रेष्ठतामियात् ३९

भाषार्थ-उन सबको उत्तमबल और धर्मस युक्त राजा सदैव चौरके समान दंडदे सबके धर्मकी रक्षा करनेसे नीच राजाभी श्रेष्ठ हो जाता है ॥ ३९ ॥

उत्तमोपिनृपोधर्मनाशनान्नीचतामियात् ।
धर्माधर्मप्रवृत्तौतुनृपएवहिकारणम् ॥ ४० ॥

भाषार्थ-और उत्तमभी राजा सबके धर्म नाश करनेसे नीचताको प्राप्त होता है क्योंकि धर्म और अधर्मकी प्रवृत्तिमें राजा ही कारण होता है ॥ ४० ॥

सहिश्रेष्ठतमोलोकेनृपत्वंयःसमाप्नुयात् ।
मन्वाद्यैरादृतोयोर्थस्तदर्थोभार्गवेणवै ॥ ४१

भाषार्थ-वही जगत्में अत्यंत श्रेष्ठ है जो राज्यको प्राप्त होता है जो अर्थ मनु आदिने माने हैं वेही अर्थ शुक्राचार्यने माने हैं ४१

द्वाविंशतिशतंश्लोकानीतिसारेप्रकीर्तिताः ।
शुक्रोक्तनीतिसारंयश्चिंतयेदनिशंसदा ४२

भाषार्थ-इस नीतिसारमें २२०० बाईस सो श्लोक कहे हैं शुक्रके कहे हुए इस नीतिसारको जो राजा रातदिन चिंता (विचार) करता है ॥ ४२ ॥

व्यवहारधुरंवोढुंसशक्तोनृपतिर्भवेत् ।
नकवेःसदृशानीतिस्त्रिषुलोकेषुविद्यते ॥ ४३

भाषार्थ-वही राजा व्यवहारके भार उठानेमें समर्थ होता है शुक्रनीतिके समान इतर कोई नीति तीनों लोकोंमें नहीं है ॥ ४३ ॥

काव्यैवनीतिरन्यातुकुनीतिर्व्यवहारिणां ।
नाश्रयंतिचयेनीतिंमंदभाग्यास्तुतेनृपाः ४४

भाषार्थ-व्यवहारी मनुष्योंके लिये शुक्रकी नीतिही है और सब कुनीति हैं जो राजा इस नीतिका आश्रय नही लेते वे मन्दभागी जानने ॥ ४४ ॥

कातर्याद्धनलोभाद्वास्युर्वैनरकभाजनाः ।
इतिशुक्रनीतौमिश्रप्रकरणंनामचतुर्थंसमाप्तं

भाषार्थ-और कायरपन और धनके लोभसे वे नरकगामी होते हैं शुक्रनीतिमें यह चौथा मिश्र प्रकरण समाप्त हुआ ४५ ॥

नीतिशेषंखिलेवक्ष्येह्यखिलेशास्त्रसंमतम् ।
सप्तांगानांतुराज्यस्यहितंसर्वजनेपुवै ४६ ॥

भाषार्थ-अब सब शास्त्रोंका सम्मत और सम्पूर्ण नीतिका जो शेष है उसको कहता हूं। जिस प्रकार सब मनुष्योंका हित हो उसी प्रकार राज्यके सातों अङ्गोंको रक्खे ४६

शतसंवत्सरांतेपिकरिष्याम्यात्मसाद्रिपुम् ।
इतिसंचिंत्यमनसारिपोश्छिद्राणिलक्षयेत् ॥

भाषार्थ-और मनसे यह विचार कर शत्रुके छिद्रोंको देखै कि १०० सो वर्षके अंततकभी शत्रुको अपने आधीन (वसमें) करूंगा ॥ ४७ ॥

राष्ट्रभृत्यविशंकीस्याद्धीनमंत्रबलोरिपुः ।
युत्तयातथाप्रकुर्वीतसुमंत्रबलयुक्स्वयं ४८

भाषार्थ-श्रेष्ठ मंत्र और बलसे युक्त राजा युक्तिपूर्वक ऐसा यत्न करै कि शत्रुको राज्य और भृत्योंकी शंका हो और मंत्र और सेनासे रहित हो जाय ॥ ४८ ॥

सेवयावावणिक्वृत्त्यारिपुराष्ट्रंविमृश्यच ।
दत्ताभयंसावधानोव्यसनासक्तचेतसम् ४९

भाषार्थ-सेवा वा व्यापारकी वृत्तिसे शत्रुके देश को विचार (देख) कर और शत्रुको अभयदान देकर सावधान हुआ राजा व्यसनमें लगा है चित्त जिसका ऐसे शत्रुको ॥ ४९ ॥

मार्जारलुब्धकवत्संतिष्ठन्नाशयेदरीम् ।
सेनांयुद्धेनियुंजीतप्रत्यनीकविनाशिनीम् ॥

भाषार्थ-इस प्रकार टिककर शत्रुको नष्ट करै जैसें बिलावको लुब्धक (व्याध) और युद्धमें ऐसी सेनाको नियुक्त करे जो शत्रुकी सेनाको नष्ट कर सके ॥ ५० ॥

नयुंज्याद्रिपुराष्ट्रस्थांमिथःस्वद्वेषिणीन्नच ।
ननाशयेत्स्वसेनांतुसहसायुद्धकामुकः ५१

भाषार्थ-शत्रुकी देशकी और परस्पर वैर करनेवालीको सेनाको नियुक्त न करे युद्धके इच्छावाला राजा विना विचारै अपनी सेनाको नष्ट करै ॥ ५१ ॥

दानमानैर्वियुक्तोपिनभृत्योभूपतिंत्यजेत् ।
समयेशत्रुसान्नैवगच्छेज्जीवधनाशया ५२॥

भाषार्थ-दान और मानसे हीनभी भृत्य अपने राजाको न त्यागै जीव और धनकी इच्छासें समयपर शत्रुके आधीन न होवे ॥ ५२ ॥

मेघोदकैस्तुयापुष्टिःसाकिंनद्यादिवारितः ।
प्रजापुष्टिर्नृपद्रव्यैस्तथाकिंधनिनांधनात् ॥

भाषार्थ-जो पुष्टि मेघके जलोंसे होती है वह पुष्टि क्या नदी आदिके जलसे होती है प्रजाकी जो पुष्टि राजाके द्रव्योंसे होती है क्या वह पुष्टि धनियोंके धनसे होती है ५३

दर्शयन्मार्दवंनित्यंमहावीर्यवलोपिच ।
रिपुराष्ट्रेप्रविश्यादौतत्कार्येसाधकोभवेत् ५४

भाषार्थ-महान् वीर्य और बलवालाभी राजा प्रतिदिन नम्रता दिखाता हुआ प्रथम शत्रुके राज्यमें प्रविष्ट हो कर शत्रुके कार्योंका साधक हो जाय ॥ ५४ ॥

संजातवद्धमूलस्तुतद्राज्यमखिलंहरेत् ।
अथतद्विष्टदायादान्सेनपानंशदानतः ५५

भाषार्थ-और जब वह मूल (जड) बंध जाय तो उसके सब राज्यको हरले फिर शत्रुके वैरी और दायाद (हिस्सेदार) और सेनापति इनको वह कुछ भाग देनेसे ॥ ५५ ॥

तद्राज्यस्यवशीकुर्यान्मूलमुन्मूलयन्बलात् ।
तरोःसंक्षीणमूलस्यशाखाःशुष्यंतिवैयथा ॥

भाषार्थ-वशमें करै जो शत्रुके राज्यका ही हो और बलसे शत्रुके मूलको उखाड दे-जैसे जिसका मूल कटगया हो उस वृक्षके शाखा सूख जाती हैं ॥ ५६ ॥

सद्यःकेचिच्चकालेनसेनयाद्याःपतिंविना ।
राज्यवृक्षस्यनृपतिर्मूलंस्कंधाश्चमंत्रिणः५७

भाषार्थ-इसी प्रकार सेनापति आदि संपूर्ण कोई शीघ्र और समय पाकर राजाके विना सूकजाते हैं-राज्यरूपी वृक्षका मूल राजा होता है और मंत्री स्कंध (डाले) होते हैं ॥ ५७ ॥

शाखाःसेनाधिपाःसेनाःपल्लवाःकुसुमानिच
प्रजाःफलानिभूभागाबीजंभूमिःप्रकल्पिता

भाषार्थ-सेनाके अधिप शाखा-सेना पत्ते प्रजा फूल-और पृथिवीके भाग फल-भूमि बीज होती है ॥ ५८ ॥

विश्वस्तान्यनृपस्यापिनविश्वासंसमाप्नुयात्
नैकांतेनगृहेतस्यगच्छेदल्पसहायवान् ॥५९

भाषार्थ-विश्वासके योग्यभी दूसरे राजा का विश्वास कदाचित् न करै और अल्प सहायक होने पर एकांत समयमें शत्रुके घरमें न जाय ॥ ५९ ॥

स्ववेषरूपसदृशान्निकटेरक्षयेत्सदा ।
विशिष्टचिह्नगुप्तःस्यात्समयेऽन्यादृशोभवेत्

भाषार्थ-अपने समान वेष और रूपवाले भृत्योंकी अपने निकट सदैव रक्षा करै और विशिष्ट (श्रेष्ठ) चिह्नसे अपनी रक्षा करै औ-

र युद्ध आदिके समय अन्य २ रूपोंको धारण करै ॥ ६० ॥

वेश्याभिश्चनटैर्मद्यैर्गायकैर्मोहयेदरीं ।
सुवस्त्राभरणैर्नैवनकुटुंबेनसंयुतः ॥ ६१ ॥

भाषार्थ-और शत्रुको वेश्या-नट-मदिरा गानेवाले इनसे मोहित करै उत्तम वस्त्र आभूषण और कुटुंब इनको लेकर युद्धमें कदाचित् होते हैं ॥ ६१ ॥

विशिष्टचिन्हितोभीतोयुद्धेगच्छेन्नवैक्वचित् ।
क्षणंनासावधानःस्याद्भृत्यस्त्रीपुत्रशत्रुषु ६२

भाषार्थ-विशिष्ट चिह्न (राजा) के धारण किये और डरता हुआ युद्धमें कदाचित्भी न जाय-और भृत्य स्त्री पुत्र और शत्रु इनमें क्षणमात्रभी असावधानी न करै ॥ ६२ ॥

जीवन्सन्स्वामितापुत्रेनदेयाप्यखिलाक्वचित् ।
स्वभावसद्गुणेयस्मान्महाऽनर्थमदावहा ६३

भाषार्थ-जीवता हुआ राजा अपनी स्वामिता पूरी २ अपने पुत्रको कदाचित् न दे क्योंकि स्वभावसे सद्गुणीकोभी स्वामिता महान् अनर्थ और मदको देती है ॥ ६३ ॥

विष्णवाद्यैरपिनोदत्तास्वपुत्रेस्वाधिकारता ।
स्वायुषःस्वल्पशेषेतुसत्पुत्रेस्वाम्यमादिशेत्

भाषार्थ-विष्णु आदिकोंनेभी अपना अधिकार अपने पुत्रको नहीं दिया किन्तु जब अपनी अवस्था अल्प रहै उस समय सज्जन पुत्रको अपनी स्वामिता दे ॥ ६४ ॥

नाराजकंक्षणमपिराष्ट्रंधर्तुंक्षमाःकिल ।
युवराजादयःस्वाम्यलोभंचापलगौरवात् ॥

भाषार्थ-युवराज आदि विना राजाके क्षणमात्रभी राष्ट्र (देश) के धारण (पालन) करनेको समर्थ नहीं होते और स्वामिताका लोभ-चपलता-गौरव (बडाई) से ॥ ६५ ॥

प्राप्योत्तमंपदंपुत्रःसुनीत्यापालयन्प्रजाः ।
पूर्वामात्येषुपितृवद्गौरवंसंप्रधारयेत् ॥ ६६ ॥

भाषार्थ-पुत्र उत्तम पदको प्राप्त होकर और उत्तम नीतिसे प्रजाओंका पालन करता हुआ पहिले मंत्रियोंका पूर्वके समान गौरव (बडाई) माने ॥ ६६ ॥

तस्यापिशासनंतैस्तुप्रधार्यंपूर्वतोधिकं ।
युक्तंचेदन्यथाकार्यंनिषेध्यंकाललंबनैः ६७

भाषार्थ-और मंत्री आदिभी उसकी आज्ञाको पूर्वसेभी अधिक माने-यदि अन्यथा करै तो काल विलंब आदिसे निषेध करैं ६७

तदनीत्यानवर्तेयुस्तेनसाकंधनाशया ।
वर्ततेयदनीत्यातेतेनसाकंपतंत्यरात् ६८

भाषार्थ-और राजाकी अनीतिमें उसके संग मंत्री आदि धन लोभसे न वर्तें यदि वे अनीतिसे वर्ताव करैं तो राजाके संग शीघ्रही नरकमें जाते हैं ॥ ६८ ॥

कुलभक्तांश्चयोद्वेष्टिनवीनंभजतेजनं ।
सगच्छेच्छत्रुसाद्राजाधनप्राणैर्वियुज्यते ॥

भाषार्थ-जो अपने कुलके भक्त (पाले-हुये) हैं उनका जो युवराज वैर करता है और नवीन जनको सेवता है वह राजा शत्रुके आधीन हो जाता है और धन और प्राणोंसे वियुक्त हो जाता है ॥ ६९ ॥

गुणीसुनीतिर्नव्योपिपरिपाल्यस्तुपूर्ववत् ।
प्राचीनैःसहतंकार्येष्वनुभूयनियोजयेत् ७०

भाषार्थ-गुणी और नीतिका ज्ञाताके नवीन जनकोभी पूर्वके समान पालकर प्राचीन मंत्री आदिकोंके संग देख भालकर कार्योंमें नियत करै ॥ ७० ॥

अतिमृदुस्तुतिनातिसेवादानप्रियोक्तिभिः ।
मायिकैःसेव्यतेयावत्कार्यंनित्यंतुसाधुभिः

भाषार्थ–अत्यंत कोमल–स्तुति–नमन–सेवा–दान–और प्रिय वचन–इनसे इतने मायावी सेवैं तितने उस कार्यको करै जिसैं साधु जन कहैं ॥ ७१ ॥

प्रत्यक्षंवापरोक्षंवासत्यवाग्भिर्नृपोपिच ।
याथार्थ्यंतस्तयोरीदृगंतरंखभुवोर्यथा ७२

भाषार्थ–प्रत्यक्ष (सामने) वा परोक्ष (पीछेसे) सत्य वाणियोंसे उनके इस प्रकार अंतर (फरक) को राजाभी जानले जैसे आकाश और भूमिका अंतर होता है ॥ ७२ ॥

माययाजनकाधूर्तजारचौरबहुश्रुताः ।
प्रतिष्ठितोयथाधूर्तोनतथातुबहुश्रुतः॥७३॥

भाषार्थ–मायाके पैदा करनेवाले जार–चौर–और बहुश्रुत (जिसने बहुत बातें सुनी हों) ये होते हैं और जैसा मायावी प्रतिष्ठित धूर्त होता है ऐसा बहुश्रुत नही होता ॥ ७३ ॥

परस्वहरणेलोकेजारचौरौतुनिंदितौ ।
तावप्रत्यक्षंहरतःप्रत्यक्षंधूर्तएवहि ॥ ७४ ॥

भाषार्थ–जगत्में पराये धन हरनेवाले चौर और जार ये दोनों निंदित कहे हैं परन्तु ये दोनों अप्रत्यक्ष (पीछे) हरते हैं धूर्त तो साक्षात्नेही धनको हरता है ॥ ७४ ॥

हितंत्वहितवच्चांतेअहितंहितवत्सदा ।
धूर्ताःसंदर्शयित्वाऽज्ञंस्वकार्यंसाधयंतिते७५

भाषार्थ–धूर्तजन समीप हितकोभी अहितके समान और अहितको हितके समान मूर्खको दर्शा कर अपने कार्यको सिद्ध करते हैं ॥ ७५ ॥

विस्रंभयित्वाचात्यर्थंमाययाघातयंतिते ।
यस्यचाप्रियमन्विच्छेत्तस्यकुर्यात्सदाप्रियं

भाषार्थ–और वे मायासे अत्यंत विश्वास देकर मार देते हैं जिसके अप्रियकी इच्छा करै उसका सदैव प्रिय करै ॥ ७६ ॥

व्याधोमृगवधंकर्तुंगीतंगायतिसुस्वरं ।
मायांविनामहाद्रव्यंद्राङ्नसंपाद्यतेजनैः ॥

भाषार्थ–मृगोंका वध करता हुआ व्याध उत्तम स्वरसे गाता है–और मायाके विना मनुष्योंको अत्यंत धन नही मिलता ॥७७॥

विनापरस्वहरणान्नकश्चित्स्यान्महाधनः ।
मायायातुविनातद्धिनसाध्यंस्याद्यथेप्सितं

भाषार्थ–पराये धनके हरणे विना कोई भी महाधनी नही होता और मायाके विना वह धन अपनी इच्छाके अनुसार मिलभी नही सकता ॥ ७८ ॥

स्वधर्मंपरमंमत्वापरस्वहरणंनृपाः ।
परस्परंमहायुद्धंकृत्वाप्राणांस्त्यजंत्यपि ॥

भाषार्थ–पराये धनके हरणेको अपना परम धर्म मानकर राजा लोग परस्पर महा युद्ध करके प्राणोंकोभी त्याग देते हैं ॥७९॥

राज्ञोयदिनपापंस्याद्दस्यूनामपिनोभवेत् ।
सर्वंपापंधर्मरूपंस्थितमाश्रयभेदतः ॥८०॥

भाषार्थ–यदि राजाको पाप न होय तो चोरोंकोभी न होना चाहिये इससे संपूर्ण पाप आश्रय (कर्ता) के भेदसे धर्मरूपसे स्थित है ॥ ८० ॥

बहुभिर्यस्तुतोधर्मोनिंदितोऽधर्मएवसः ।
धर्मतत्वंहिगहनंज्ञातुंकेनापिनोचितम् ८१॥

भाषार्थ–जिसकी बहुत जन स्तुति करैं वह धर्म और जिसकी निंदा करैं वह अधर्म

ही है-धर्मके गहन (गहरा) तत्वको कोई भी नही जान सकता ॥ ८१ ॥

अतिदानतपःसत्ययोगोदारिद्र्यकृत्त्विह ।
धर्मार्थौयत्रनस्यातांतद्वाकामंनिरर्थकम्८२

भाषार्थ-अत्यंत दानदेना-तप सत्य बोलना ये सब इस जगतमें दरिद्रता करने वाले हैं-जिस काममें धर्म वा अर्थ (धन) नही वह निरर्थक (वृथा) है ॥ ८२ ॥

अर्थस्यपुरुषोदासोदासस्त्वर्थोनकस्यचित्
अतोर्थाययतेतैवसर्वदायत्नमास्थितः८३॥

भाषार्थ-यह पुरुष अर्थका दास हैं और अर्थ किसीकाभी दास नही है इससे यत्नमें टिका हुआ मनुष्य अर्थके लिये अवश्य यत्न करै ॥ ८३ ॥

अर्थाद्धर्मश्चकामश्चमोक्षश्चापिभवेन्नृणां ।
शस्त्रास्त्राभ्यांविनाशौर्यंगार्हस्थ्यंतुस्त्रियंवेना ॥८४॥

भाषार्थ-अर्थसे धर्म काम और मोक्ष ये तीनों मनुष्योको प्राप्त होते हैं शस्त्र और अस्त्रके विना शूरवीरता-और स्त्रीके विना गृहस्थ ॥ ८४ -

एकमत्यंविनायुद्धंकौशल्यंग्राहकंविना ।
दुःखायजायतेनित्यंसुसहायंविनाविपत् ॥

भाषार्थ-एक मतिके विना युद्ध और ग्राहक (कदरदान) के विना कुशलता और पदातियोंके विना अच्छी सहायता ये सब सदर दुःखदायीही होते हैं ॥ ८५ ॥

नविद्यतेतुविपदिसुसहायंसुहृत्समम् ॥
लघोरप्यपमानस्तुमहावैरायजायते ८६॥

भाषार्थ-और विपत्तिके समय मित्रके समान दूसरा सहायक नही होता-तुच्छ मनुष्यकाभी अपमान महान् वैरके लिये होता है ॥ ८६ ॥

दानंमानंसत्यशौर्यंमृदुताहिसुहृत्करं ॥
सर्वानापदिरहसिसमाहूयलघून्गुरून् ८७

भाषार्थ-दान-मान-सत्य-शूरता-मृदुता (कोमलपना) मित्रका कार्य-इन सबको आपत्तिके समय सब लघु गुरु (छोठे बडे) ओंको ॥ ८७ ॥

भ्रातॄन्बंधूंश्चभृत्यांश्चज्ञातीन्सभ्यान्पृथक्पृथक् ।
यथार्हंपूज्यविनतंस्वाभीष्टंयाचयेन्नृपः ॥

भाषार्थ-और भाई बंधु-भृत्य-ज्ञाति-सभासद इन सबको यथायोग्य पृथक्२ पूज कर नम्र हुआ राजा अपने अभीष्ट (मनोरथ) को याचना करै ॥ ८८ ॥

आपदंप्रतरिष्यामोयूयंयुक्त्यावदिष्यथ ।
भवंतोममित्राणिभवत्सुनास्तिभृत्यता ॥

भाषार्थ-जिस प्रकार आपत्तिसे पारहों वह युक्ति आप लोग कहो तुम मेरे मित्रहो और भृत्यपना तुममें नही है ॥ ८९ ॥

नभवत्सदृशास्त्वन्येसाहाय्याःसंतिमेह्यतः ।
तृतीयांशंभृतेर्ग्राह्यमर्धंवाभोजनार्थकम् ९०

भाषार्थ-जिससे तुह्मारे समान अन्य कोई मेरे सहायक नही है अब भोजनके लिये अपनी भृति (नोकरी) का तीसरा वा आधाभाग आपलोग ग्रहण करो ॥ ९० ॥

दास्याम्यापत्समुत्तीर्णःशेषंप्रत्युपकारवित्
भृतिंविनास्वामिकार्यंभृत्यःकुर्यात्समाष्टकं

भाषार्थ-इस आपत्तिसे पार होकर शेष भृतिको उपकारके जाननेवालामें दोंगा-अपने स्वामीके कामको भृतिके विनाभी आठ वर्षतक भृत्य करै ॥ ९१ ॥

षोडशाब्दंधनीयःस्यादितरोर्थानुरूपतः ।
निर्धनैरन्नवस्त्रंतुनृपाद्ग्राह्यंनचान्यथा ९२॥

भाषार्थ-जो भृत्य धनवान् हो वह बारह वर्षतक करै और उससे इतर अपने धनके अनुसार करै और निर्धन भृत्य राजासे अन्न वस्त्रकोही ग्रहण करै अन्यथा न करै ॥ ९२ ॥

यतोभुक्तंसुखंसम्यक्तद्दुःखैर्दुःखितोनचेत्।
विनिंदतिकृतघ्नस्तुस्वामीभृत्योन्यएववा ॥

भाषार्थ-जिससे भली प्रकार सुख भोगा हो उसके दुःखोंसे दुःखी न होय तो उसको स्वामी वा अन्य भृत्य यह निंदा करते हैं कि यह कृतघ्न है ॥ ९३ ॥

सकृत्सुभुक्तंयस्यापितदर्थेजीवितंत्यजेत् ।
भृत्यःसएवसुश्लोकोनापत्तौस्वामिनंत्यजेत्

भाषार्थ-जिसकी एक वारभी खायाहो उसके लियेभी जीवित (प्राण) को त्यागदे वही भृत्य प्रशंसाके योग्य होता है जो आपत्तिके समय स्वामीको न त्यागे॥ ९४ ॥

स्वामीसएवविज्ञेयोभृत्यार्थेजीवितंत्यजेत् ।
नरामसदृशोराजापृथिव्यांनीतिमानभूत् ॥

भाषार्थ-और स्वामीभी वही जानना जो भृत्यके लिये जीवितको त्यागदे रामचंद्रके समान कोईभी राजा पृथिवीमें नीतिवाला नही हुआ ॥ ९५ ॥

सुभृत्यतातुयन्नीत्यावानरैरपिस्वीकृता ।
अपिराष्ट्रविनाशायचोराणामेकचित्तता ९६

भाषार्थ-और उनकी श्रेष्ठ भृत्यताभी नीतिसे वानरोंने स्वीकारकी-जब देशके नष्ट करनेके लिये चोरोंकाभी एकाचित्त होजाता है तो ॥ ९६ ॥

शक्ताभवेन्नकिंशत्रुनाशायनृपभृत्ययोः ।
नकूटनीतिरभवत्श्रीकृष्णसदृशोनृपः ॥९७

भाषार्थ-क्या स्वामी और भृत्यकी एकता शत्रुके नाशार्थ न होगी और कूट (झूटी) नीतिवाला राजा श्रीकृष्णचंद्रके समान कोई नही हुआ ॥ ९७ ॥

अर्जुनात्ग्राहितास्वस्यसुभद्राभगिनीछलात्
नीतिमतांतुयायुक्तिर्याहिस्वश्रेयसेखिला ॥

भाषार्थ-अपनी बहिनभी सुभद्रा जिन्होंने छलसे अर्जुनको विवाहदी-नीतिमान् राजाओंकी जो युक्ति है वही सब अपने कल्याणके लिये होती है ॥ ९८ ॥

नात्मसंगोपनेयुक्तिंचिंतयेत्सपशोर्जडः ।
जारसंगोपनेछद्मसंश्रयंतिस्त्रियोऽपिच॥९९

भाषार्थ-जो मनुष्य अपनी रक्षाकी युक्तिको न विचारै वह जड और पशु है स्त्रीभी जार मनुष्यके छिपानेमें छल करती है ९९॥

युक्तिच्छलात्मिकाप्रायस्तथान्यायोजनात्मिका ।
यच्छद्मचारिभवतितेनछद्मसमाचरेत् ॥

भाषार्थ-और युक्ति प्रायःसब छलरूप होती है और दूसरी युक्ति योजन (मिलाप) रूप होती है जो मनुष्य छल करै उसके संग आपभी छल करै ॥ १३०० ॥

अन्यथाशीलनाशायमहतामपिजायते ।
अस्तिबुद्धिमतांश्रेणिर्नत्वेकोबुद्धिमानतः १

भाषार्थ-अन्यथा छल करना बडोंके भी शीलको नष्ट करता है-और बुद्धिमान् मनुष्योंकोभी श्रेणी (बहुत) होती है-एकही मनुष्य बुद्धिमान् नही होता ॥ १३१ ॥

देशेकालेचपुरुषेनीतिंयुक्तिमनेकधाम् ।
कल्पयंतिचतद्विद्यादृष्ट्वारुद्धांतुमाकृतनाम्२

भाषार्थ-उस बुद्धिके ज्ञाता देश और कालके अनुसार अनेक प्रकारकी उन नीति और युक्तियोंकी देखकर कल्पना करलेते हैं जो पुरानी हैं परंतु छिपी हैं ॥ १३०२ ॥

मंत्रौषधिपृथग्वेषकालवागर्थसंश्रयात् ।
छद्मसंजनयंतीहतद्विद्याकुशलाजनाः ॥ ३॥

भाषार्थ-छलकी विद्यामें कुशल जन मंत्र औषध-पृथक् वेष-काल वाणी अर्थ इनके आश्रयसे छलको पैदा करलेते हैं ॥ ३ ॥

लोकोऽधिकारीप्रत्यक्षंविक्रीतंदत्तमेववा ।
वस्त्रभांडादिकंक्रीतंस्वचिन्हैरंकयेच्चिरम् ४॥

भाषार्थ-जगत्में जो जिसका अधिकारी है वह अपने वेचे और दिये वस्त्र पदार्थको भांड आदि सबके सामने अपने नामके चिह्नोंसे अंकित करदे ॥ ४ ॥

स्तेनकूटानिवृत्त्यर्थंराजज्ञातंसमाचरेत् ।
जडांधबालद्रव्याणांदद्याद्वृद्धिंनृपःसदा ॥

भाषार्थ-चोरीके और छलके पदार्थ जैसे प्रतीत नहीं उस प्रकार राजाकोभी ज्ञात करादे और जड अंध बाल इनके जो द्रव्य उनकी सदैव वृद्धि (व्याज) को राजा दे ॥ ५ ॥

स्वीयातथाचसामान्यापरकीयातुस्त्रीयथा ।
त्रिविधोभृतकस्तद्वदुत्तमोमध्यमोऽधमः ॥

भाषार्थ-जै अपनी पराई और सामान्य-ये तीन प्रकारकी स्त्री होती हैं इसी प्रकार तीन प्रकारका और उत्तम मध्यम अधमरूप तीन प्रकार भृत्य होता है ॥ ६ ॥

स्वामिन्येवानुरक्तोयोभृतकस्तूत्तमःस्मृतः
सेवतेपुष्टभृतिदंप्रकरंसचमध्यमः ॥ ७ ॥

भाषार्थ-जो भृत्य अपने स्वामीमेंही प्रीति रखता हो वह उत्तम कहा है जो उसी समूहकी सेवा करै जो अधिक भृति (नोकरी) दे वह मध्यम होता है ॥ ७ ॥

पुष्टोपिस्वामिनाऽन्यत्कंभजतेन्यंसचाधमः ।
उपकरोत्यपकृतोह्युत्तमोप्यन्यथाधमः॥८॥

भाषार्थ-जो अपने स्वामीने पुष्टभी किया हो तोभी छिपकर दूसरेकी सेवा करै वह अधम होता है-और जो तिरस्कार करने परभी उपकार करै वह उत्तम और अन्य अधम होता है ॥ ८ ॥

मध्यमःसाम्यमन्विच्छेदपरःस्वार्थतत्परः ।
नोपदेशंविनासम्यक्प्रमाणैर्ज्ञायतेखिलम्॥

भाषार्थ-जो अपनी समानताको चाहै वह मध्यम और जो अपने स्वार्थमें तत्पर हो वह अधम होता है-और उपदेशके विना किसी प्रमाणसेभी सबका ज्ञान नहीं होता ॥ ९ ॥

बाल्यंवाप्यथतारुण्यंप्रारंभितसमाप्तिदम्
प्रायोबुद्धिमताज्ञेयंनवार्धक्यंकदाचन ॥

भाषार्थ-बालपन अथवा वृद्धपन ये दोनों प्रारंभ किये कामकी समाप्तिके होनेसे बुद्धिमान् मनुष्यके जानने योग्य होते हैं और वृद्धता कदाचित्भी नहीं होती ॥ १० ॥

आरंभंतस्यकुर्याद्धियत्समाप्तिंसुखंव्रजेत् ।
नारंभोबहुकार्याणामेकदैवसुखावहः ११॥

भाषार्थ-उसी कामका प्रारंभ करै जिसकी सुखसे समाप्ति हो जाय-एकवारही बहुतसे कामोंका प्रारंभ सुखदायी नहीं होता ॥११॥

नारंभितसमाप्तिंतुविनाचान्यंसमाचरेत् ॥
संपाद्यतेनपूर्वंहिनापरंलभ्यतेयतः ॥१२॥

भाषार्थ-प्रारंभ किये हुये कार्योंकी समाप्तिके विना अन्य कामको नकरै क्योंकि

यदि प्रथमही काम न भया तो दूसराभी उसको न होगा ॥ १२ ॥

कृतीतरकुरुतेनित्यंयत्समाप्तिंव्रजेत्सुखं ॥
ईर्ष्यालोभोमदःप्रीतिःक्रोधोभीतिश्चसाहसं।

भाषार्थ–शक्तिके अनुसार प्रारंभ किये कामको नित्य करै जिससे उसकी सुखसे समाप्ति हो–ईर्ष्या–लोभ–मद–प्रीति–क्रोध–भीति–और साहस ॥ १३ ॥

प्रवृत्तिच्छिद्रहेतूनिकार्येसत्सबुधाजगुः ॥
यथाछिद्रंभवेत्कार्यंतथैवेहउमाचरेत् १४ ॥

भाषार्थ–ये सब प्रवृत्तिके छिद्रमें हेतु पंडित जनोंने कहे हैं–इस जगत्में कामको उसी प्रकार–करै जैसे उसमें कोई छिद्र न हो ॥ १४ ॥

अविसंवादिविद्वद्भिःकालेतीतेपिचापदि ॥
दशग्रामीशतानीकौपरिचारकसंयुतौ ॥

भाषार्थ–और सत्यवादी विद्वानोंने कला वीतनेपर आपत्तिके समयमें पूर्वोक्त छिद्रका न होना कहा है–दशग्रामोंका स्वामी और सौ सैनिकोंका सेनापति ये दोनों अपने सेवकों समेत ॥ १५ ॥

अश्वस्थौविचरेयातांग्रामपाद्यपिचाश्वगाः।
साहस्रिकःशतग्रामीएकाश्वरथवाहनौ ॥

भाषार्थ–अस्वस्थ (व्याकुल) हुये और ग्रामके पति (चौधरी) और असवार–नित्य विचार करै–सहस्र मनुष्य और सौ ग्रामोंका स्वामी एक घोडेके यानमें वैठकर चलै ॥ १६ ॥

सहस्रग्रामपोनित्यंनरश्वह्यश्वयानगः ॥
आयुतिकोविंशतिभिःसेवकैर्हस्तिनाव्रजेत्।

भाषार्थ–सहस्र ग्रामोंका स्वामी नरयान (पालकी) वा अश्वयानमें वैठकर–और दश सहस्र सेनाओंका स्वामी वीस सेवकों समेत हाथीपर चढकर–गमन करै ॥ १७ ॥

अयुतग्रामपःसर्वयानैश्चचतुरश्वगैः ॥
पंचायुतीसेनपोपिसंचरेद्बहुसेवकः ॥ १८

भाषार्थ–दश सहस्रग्रामोंका स्वामी चार घोडोंके सवयानोंमें वैठकर गमन करै और पचास सहस्र सेनाओंका स्वामीभी वहुतसे सेवकों सहित विचरै ॥ १८ ॥

यथाधिकाधिपत्यंतुवीक्ष्याधिक्यंप्रकल्पयेत्
कल्पयेच्चयथाधिक्यंधनिकेषुगुणिष्वपि ॥

भाषार्थ–जितना अधिक अधिपति(स्वामी) हो उसको देखकरही यान आदिकी अधिकताको करै इसी प्रकार धनी और गुण वानोंमेंभी धन गुणकी अधिकता देखकर यान आदिकी अधिकता करै ॥ १९ ॥

श्रेष्ठोनमानहीनःस्यान्न्यूनोमानाधिकोपिन
राष्ट्रेनित्यंप्रकुर्वीतश्रेयोर्थीनृपतिस्तथा ॥

भाषार्थ–श्रेष्ठ जन मानसे हीन और न्यून (छोटा) जन अधिक मानवाला न हो यह रीति अपने राज्यमें कल्याणका अभिलाषी राजा करै ॥ २० ॥

हीनमध्योत्तमानांतुग्रामेभूमिंप्रकल्पयेत् ॥
कुटुंबिनांगृहार्थंतुपत्तनेपिनृपःसदा ॥ २१ ॥

भाषार्थ–जो गाममें हीन मध्यम उत्तम हो उनके लिये ग्राममें कुछ भूमि नियत करै और कुटुंबियोंके घरके लिये तो राजा सदैव पत्तन (शहर) ऐसी भूमिको नियत करै २१

द्वात्रिंशद्धस्तैर्हस्तैर्दीर्घार्धाविस्तृताधमा ॥
उत्तमादिगुणामध्यासार्धमानायथार्हतः ॥

भाषार्थ–जो वत्तीस हाथ लंवी और सोलह हाथ चौडी और वही उत्तम कही है और

उससे आधे प्रमाणकी जो हो वह यथायोग्य मध्यम और अधम होती है ॥ २२ ॥

कुटुंबसंस्थितिसमानन्यूनानाधिकापिन ॥
ग्रामाद्बहिर्वसेयुस्तेयेयेत्वधिकृतानृपैः ॥

भाषार्थ-और वह भूमि कुटुंबकी स्थितिके सम (बराबर) हो न उससे न्यूनहो और न कमहो-जिन २ को राजाने अधिकार दिया हो वे सब ग्रामसे बाहिर बसैं ॥ २३॥

नृपकार्यंविनाकश्चिन्नग्रामेसैनिकोविशेत् ॥
तथानपीडयेत्कुत्रकदापिग्रामवासिनः ॥

भाषार्थ-राजाके कार्यके विना कोईभी सैनिक ग्राममें न धसै-और तिसी प्रकार किसीभी ग्राम वासीको पीडा (दुःख) न-दें ॥ २४ ॥

सैनिकैर्नव्यवहरेन्नित्यंग्राम्यजनोपिच ।
श्रावयेत्सैनिकान्नित्यंधर्मंशौर्यविवर्धनम् ॥

भाषार्थ-और ग्रामके जनभी सैनिकोंके संग प्रतिदिन व्यवहार न करैं-और सेनाके मनुष्योंको शूरवीरता बढानेवाले धर्मको नित्य श्रवण करवौव ॥ २५ ॥

सुवाद्यनृत्यगीतानिशौर्यवृद्धिकराण्यपि ।
युद्धक्रियांविनाशौर्यंयोजयेन्नान्यकर्मणि ॥

भाषार्थ-श्रेष्ठ बाजे-नृत्य-गीत इनकोभी ऐसोंकोही सुनावै जिनसे शूरवीरताकी वृद्धि हो-और युद्धके काम विना शूरवीरको किसी अन्य काममें न लगावे ॥ २६ ॥

सत्याचारास्तुधनिकाव्यवहारेहतायदि ।
राजासमुद्धरेत्तांस्तुतथान्यांश्चकृषीवलान्

भाषार्थ-जो सत्य आचरण करनेवाले धनवान् व्यवहारमें बिगडगये हों उनका और अन्य वैसेही किसानोंका राजा उद्धार करै अर्थात् धनदेकर उनकी सहायता करै ॥ २७ ॥

येसैन्यधनिकास्तेभ्योयथार्हांभृतिमावहेत् ।
सारदेश्यंचत्रिंशांशमधिकंतद्धनव्ययात् ॥

भाषार्थ-जो सेनाके मनुष्य धनवान् हों उनसे यथायोग्य भृति ले-जो परदेशी हों उनसे तीसवां भाग वा अधिक धनके व्यय (खर्चा) के अनुसार ले ॥ २८ ॥

धनंसंरक्षयेत्तेषांयत्नतःस्वात्मकोशवत् ।
संहरेद्धनिकात्सर्वंमिथ्याचाराद्धनंनृपः ॥

भाषार्थ-और उनके धनकी अपने कोश-के समान बडे यत्नसे रक्षा करै और जो धनवान् मनुष्य मिथ्याचारी हो राजा उसके सब धनको हरले ॥ २९ ॥

मूलाच्चतुर्गुणावृद्धिर्गृहीताधनिकेनच ।
अधमर्णान्नदातव्यंधनिनेतुधनंतदा ॥ ३० ॥

भाषार्थ-जब धनवान् मनुष्यने अधमर्णसे मूल धनकी अपेक्षा चौगुनी वृद्धि (व्याज) लेली होयतो वह धनीको कुछभी धन न दे ॥ १३३० ॥

इति शुक्रनीतिः समाप्ता ।

पुस्तक मिलनेका ठिकाना-

खेमराज श्रीकृष्णदास-

" श्रीवेङ्कटेश्वर " छापाखाना-मुंबई.